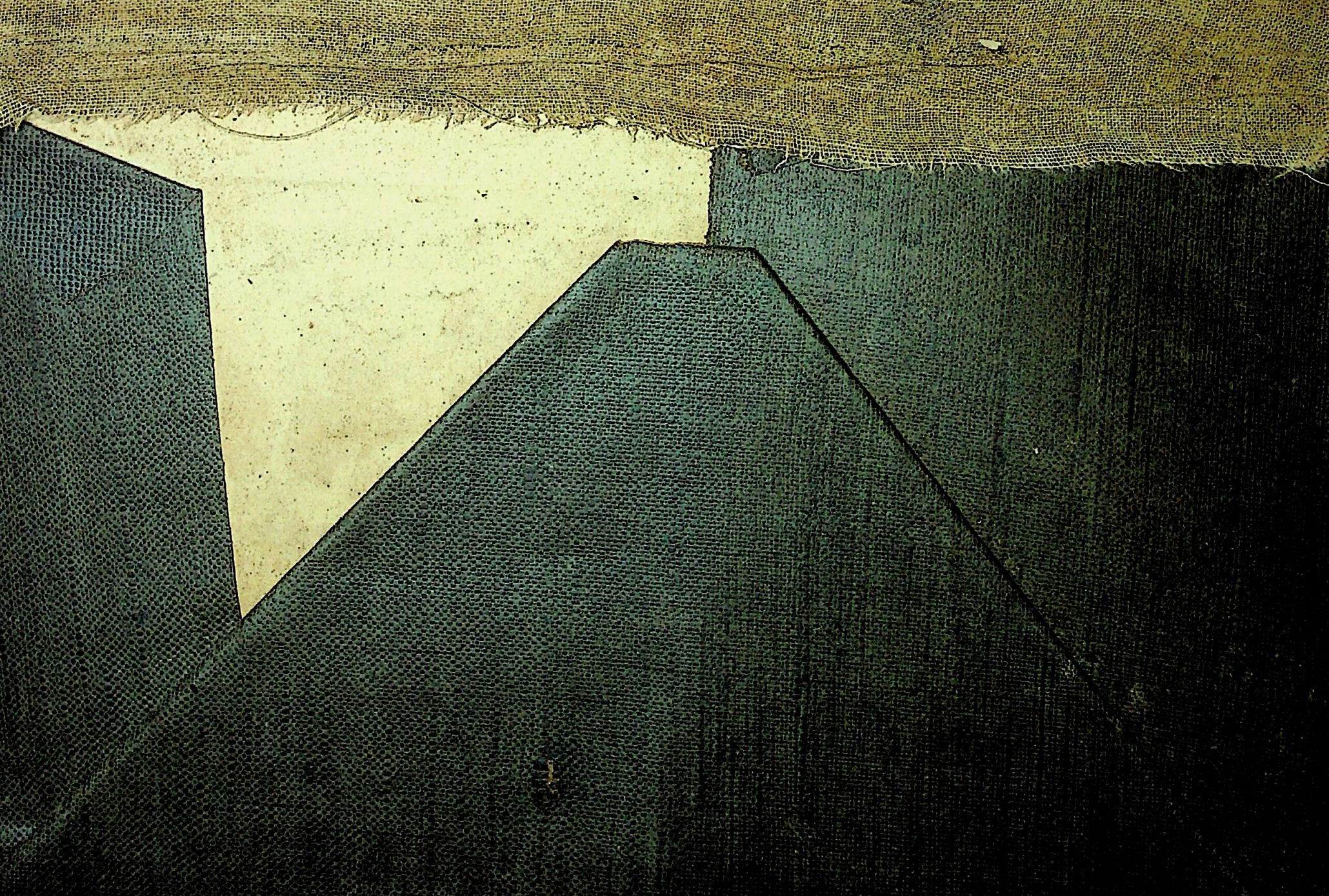

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चन्द्रावती सारस्वत

॥ श्री ॥

श्रीमद्भगवद्गीता ।

श्रीमत्परमहंस-परिव्राजक आनंदगिरि-कृत

भाषाटीका-सहित ।

जिसको

ब्राह्मणवंश विद्वज्जनवंदित श्रीवैष्णवसंप्रदायचंद्रिका परमोदार

जानकीदेवीजीके

मनोरञ्जनार्थ उक्त कविने रचना की,

उसीको

पं० हरिप्रसाद भगीरथजीके

प्राचीन पुस्तकालयके अध्यक्ष,

पं० व्रजवल्लभ हरिप्रसादजीने

बम्बईमें

' नेटिव-ओपिनिअन ' प्रेसमें छपवाकर प्रकाशित किया.

संवत १९७१. सन १९१५.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

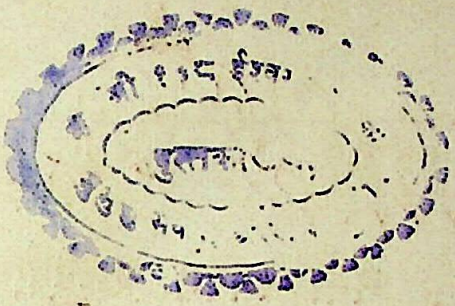

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

नमो भगवते वासुदेवाय ।

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ।
ते प्राप्नुवंति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥

(गीता अ० १२.)

Title printed at Bombay Vaibhav Press, Bombay.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व
चन्द्रावती सारस्वत

भगवद्गीता ।

आनंदगिरिकृत—भाषाटीकासहिता ।

मङ्गलाचरण ।

ॐ तत्सत् १ ॐ तत्सत् २ ॐ तत्सत् ३ ।

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीसच्चिदानन्दस्वरूप, परमानूप, श्रीमहाराजाधिराज श्रीस्वामी, श्रीकृष्णचन्द्रजी महाराजके चरणकमलोंको वारंवार साष्टाङ्ग दण्डवत् नमस्कार करके श्रीमहाराजजीकी कृपा और आज्ञासे परमानन्दकी प्राप्तिके लिये, अपनी बुद्धिके अनुसार ब्रह्मविद्या योगशास्त्र श्रीभगवद्गीता उपनिषदोंका तात्पर्यार्थ, हरद्वार मथुराजीके मध्यस्थ नगरनिवासियोंकी प्राकृत देशभाषामें निरूपण करता हूं। कैसे हैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराज? नित्यमुक्त, पूर्णब्रह्म, सनातन, उत्तम पुरुष, शुद्धात्मा, स्वयंप्रकाश, एकरस, स्वतन्त्र, श्रेष्ठ, परात्पर, परमपुरुष, परमधाम, परमगति, परमपद, परमपवित्र, परमात्मा, निराकार, निर्विकार, निरवयव, निरञ्जन, निर्गुण, अद्वैत, अरूप, अखण्ड, अज, अमर, अचल, अच्युत, अक्षर, अव्यक्त, अगोचर, अप्रमेय, अचिन्त्य अनन्त हैं औरभी विष्णु, शिव, शक्ति, चिति, देवादि अनन्त विशेषण हैं. फिर कैसे हैं श्रीमहाराज? चरण—हस्त—नेत्रादि—अवयव अनुपम महासुन्दर मनोहर हैं जिनके; पीताम्बरादि वस्त्र, धनुष्आदि शस्त्र, वंशी, चकडोर, मुकुट, पंखमोर मकरवत् आकृतिवाले; कल कुण्डल और रविवत् आकृतिवाले; बाले श्वेत रक्त हरित मोतियोंकी सहित जटित पँचरंगी मणि—मोतियोंकी माला और अनेक रंगवाले; फूलोंकी माला, कडे, पैंजनी, जड़ाऊ, तगड़ी, पहुँची, अँगूठी, छल्ले अंगदादि आभूषण धारणकर रक्खे हैं जिन्होंने; बालोंमें अतर, मस्तकपर केसरका प्रातिपदिक चन्द्रवत् तिलक,—जिसके बीचमें सूर्य्यवत् विन्दा चन्दनका लगा रक्खा है—जो किसी समय धूलि भस्म भी अखण्ड धारण रखते हैं; पान, इलायची चाबते रहते हैं; बाल, किशोर, तरुण अवस्था है जिनकी; अकेले व युगलरूप होकर व स्वामी—सखा बनकर वनोंमें और चित्र विचित्र मंदिरोंमें लीला विहार करते रहते हैं; मन्द मुसकान सहित बोलना है जिनका; इस प्रकार अचिन्त्य, अलौकिक, आश्चर्य, अगोचर, अतर्क्य, अप्रमेय, अनन्तप्रभाव, प्रभुता, शक्ति, बल, वीर्य्य, विद्यावान् हैं. जैसे अपने बलके अनुसार आकाशमें पक्षीकी गति है, उसीप्रकार वेद, शास्त्र, ऋषीश्वर, मुनीश्वर, शेष, शारदा, सन्त, महात्मा, साधु, भक्त, पण्डित, असंख्यात कल्पोंमें अबतक परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराज मेरे स्वामीके गुणोंको पूर्वोक्तरीति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके वर्णन करते चले आते हैं, तो भी पार नहीं पाते; परमानन्दस्वरूप होनेसे श्रीमहाराज सबको प्यारे लगते हैं. आनन्दस्वरूपसे किसीका वैर नहीं. किसीको आनन्दकी असूया करता हुआ सुना भी न होगा और जो आनन्द पदार्थको परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराजसे पृथक् एकगुण विलक्षण पदार्थ समझते हैं और श्रीमहाराजको आनन्दजनक और आनन्दगुणक रूपादिमान् पदार्थवत् समझते हैं, तो भी परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराजसे सिवाय श्रेष्ठ और कोई पदार्थ आनन्दगुणक व आनन्दजनक नहीं. श्री, कीर्ति, सत्य, संतोष, समता, शम, दमादि यह सब उसी भगवान्की विभूतियाँ हैं. जो कदाचित् वेद, शास्त्र मूर्तिमान् होकर और शेष, शारदा, ऋषीश्वर, मुनीश्वर, और वर्तमानकाल में जो सन्त, महन्त, पण्डित हैं ये सब मुझसे ऐसा कहैं कि—"परमानन्दस्वरूप, श्रीकृष्णचन्द्र महाराजसे पृथक् श्रेष्ठ स्थावर वा जंगम, सावयव वा निरवयव, प्रमेय व अप्रमेय कोई और पदार्थ है." प्रत्युत प्रत्यक्ष अनुभव भी करा दें तो भी, मुझको उस पदार्थ की चाह नहीं और न मैं जिज्ञासा करता हूं और न कुछ इस बातके निर्णय करनेमें मेरा किसीसे वाक्यवाद है और जो श्रीमहाराज भी यही कहैं तो उनका कहना मेरे माथेपर है. परन्तु मुझमें तो यह सामर्थ्य नहीं कि—परमानन्दस्वरूप श्रीमहाराजसे मैं पृथक् हो जाऊं. जो श्रीमहाराज यह जानें कि किसी प्रकार हमसे पृथक् हो सक्ता है तो श्रीमहाराजमें अनन्त अचिन्त्य शक्ति है. श्रीमहाराजही मुझको आप से पृथक् कर दें. यह मेरी प्रीति (नाता सम्बन्ध) ऐसी है कि जो श्रीमहाराज भी इसको कदाचित् पृथक् किया चाहें तो भी नहीं हो सकता. फिर औरोंकी तो क्या सामर्थ्य है ? क्योंकि—यह सम्बन्ध लौकिक वैदिक नहीं; कि जो शब्द अनुमानादि प्रमाणोंसे जाता रहे. यह अनादि तादात्म्य सम्बन्ध है. जो श्रीमहाराजमें सद्गुण समझकर मेरी प्रीति हुई हो तो, असद्गुण जानकर जाती रहे! मेरी प्रीति स्वाभाविकी सनातन है. प्रमाणजन्य नहीं और जो भगवद्भक्त श्रीमहाराजकी भक्तवत्सलादि सद्गुण कर लौकिक, वैदिक विद्यामें नागर, राजराजेश्वर, सुरेश्वर, ईश्वर, परमेश्वर, महेश्वर, परात्पर, दुःखदरिद्रहर, श्रीमान्, सामर्थ्यवान्, शोभा सुन्दरकी खानि, सुकुमार, परमोदार, दाता जगत्का कर्त्ता, भर्त्ता, अन्तर्यामी, जगत्स्वामी, हिरण्यगर्भ, विराट्, विश्वरूपादि कहकर प्रत्यक्ष, शब्द, अनुमानादि प्रमाणोंकरके सिद्ध करते हैं; ऋषीश्वर मुनीश्वर, शेष, शारदादिकी साक्षी देते हैं सो वे कहो. समझो इसीप्रकार प्रीति करो. उनको इतना सावकाश है; मुझको तो चर्चा करनेका वा आपसे पृथक्पदार्थमें मन लगानेका न सावकाश है, न सामर्थ्य है. मेरी प्रार्थना तो श्रीमहाराजसे यह है कि—जो कुछ अतवक मुझसे मूर्खता हुई सो तो हुई और मेरे भलेके लिये, मेरे निमित्त अबतक जो कुछ आपको मेरी जानमें विक्षेप हुआ सोभी हुआ. परन्तु अब श्रीमहाराजको मेरे निमित्त किंचिन्मात्र भी विक्षेप न हो. मुझको यह बड़ा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आश्चर्य है कि—वे कैसे आपके भक्त थे ? जिन्होंने आपसे सहाय चाही. द्रौपदी गजेन्द्रादिकी ऐसी क्या क्षति होती थी, जो अपने प्यारेको विक्षेप दिया. श्रीरामावतारमें आपने हनुमान्जीसे यह कहा था कि—हे वीर ! जो कुछ तुमने हमारी सहाय भक्ति करी, सो लोकोंमें प्रसिद्ध है. उसके प्रत्युपकारमें मैं तुझे यह वरदान देता हूं कि—ऐसा कोई काल न हो, जो मैं तुम्हारा सहाय करूं. हे भगवन् ! यही मैं भी चाहता हूं और लिख देता हूं कि ऐसाही आपका चिन्तन और निश्चय मेरे लिये हो. अबतक जो जो अनुग्रह आपने मुझपर किये कहां तक कहूं ? अनन्त हैं. जो कुछ आपने मेरा उपकार और उद्धार अपनी तरफ देखकर किया, उसकी तो अवधि हो चुकी और जो कुछ मुझको करना चाहिये था, उसका प्रारम्भ भी न होने पाया. केवल अपनी राज्य करते हुयेही आपने सफल करके मुझको सनाथ और कृतार्थ कर दिया. जब कि यह आपकी महिमा है, तो मैं सिवाय आप के और किसको श्रेष्ठ उत्तर ब्रह्म परमेश्वर मानूं ? इस जगह "कैमुतिकन्याय" है. प्रथम मैं सकाम संसारके दुःखोंमें दुःखी अनेक जंजाल झगडोंमें फँसा हुआ था, एक समय विषयानन्दमें मनको बहलानेके लिये, मैंने आपकी लीलानुकरण व स्वरूपानुकरणको देखा, सो वह अनुकरण आपके स्वरूप और लीलाके सामने लेशमात्र भी नहीं था और प्राकृतभाषामें आपके गुणोंको सुना. अबतक सिवाय आपकी कृपाके नहीं जानता हूं कि—इसमें क्या कारण था. जो अपने आप विना यत्नके आपके गुण—स्वरूपमें प्रीति होने लगी और दुःखोंकी निवृत्ति और आनन्दका आविर्भाव होने लगा. तब तो मैंने केवल आपके चरित्र और गुणोंके श्रवणकोही दुःखोंका दूर करनेवाला और परमानन्दको प्राप्त करनेवाला समझा. फिर ऐसा हुआ कि वेदशास्त्रोंमें और बड़े बड़े महात्मा, सन्त, महन्त, पण्डितोंके मुख से आपकी बड़ाई सुनी. आपका बड़ा प्रभाव सुना. फिर वेद, गीतादि शास्त्र और सुपात्र सज्जन आप के भक्तोंको प्राणोंसे भी प्यारा मैंने जानकर उनमें मन लगाया. शास्त्र और सद्गुरुओंकी कृपा और आपके प्रथम अनुग्रहसे मुझको यह ज्ञान हुआ कि—आपही साक्षात् परमानन्द ज्ञानस्वरूप हैं. जिसके वास्ते सबलोग नानाप्रकारके यत्न करते हैं. आपके जाननेमें कुछ भी यत्न नहीं और न किसी साधनकी इच्छा है. क्योंकि, आप स्वयम्प्रकाश ज्ञानस्वरूप हैं. आपको बुद्धयादि जड़ पदार्थ कैसे प्रकाशित कर सक्ते हैं ? इसप्रकार अपने आप साक्षात् आप मुझको अनुभव अपरोक्ष हुये. अब मैं भला आपसे कैसे पृथक् हो सक्ता हूं ? तात्पर्य—जब गृहस्थाश्रममें अनेक संसारके झगडोंमें और शास्त्रार्थ जाननेके लिये मत-मतान्तरके झगडोंमें लगा हुआ था, तब तो सबको त्यागकर आपके सम्मुख हुआ. फिर अब आपसे कैसे जुदा हो सक्ता हूं ?

॥ मङ्गलाचरण समाप्त ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपोद्घात ।

वक्तव्य अर्थको मनमें रखकर उसकी संगतिके लिये, प्रथम और कथा कहनी उसको उपोद्घात कहते हैं. तात्पर्य्य—गीता और गीतापर टीका जैसे और जिसवास्ते बनी सो कथा लिखते हैं. विना उपोद्घात सुने, तात्पर्यार्थ गीताका समझमें न आवेगा. सोई सुनो. श्रीमत्परमहंस परिव्राजक श्रीस्वामी मलूकगिरिजी महाराज मुझ आनन्दगिरि इस सज्जन मनोरञ्जनी टीकाकारके गुरुदेव हैं. उनके चरणकमलोंका पूजनेवाला अनुचर शिष्य हूं मैं और श्रीपण्डितराज पण्डितजी श्रीमोहनलालजी महाराज रहनेवाले कुरुक्षेत्रान्तर्गत कपिस्थलनगरके मेरे विद्यागुरु हैं. सुयश, कीर्ति और माहात्म्य इन दोनों महामुनीश्वरोंका वर्त्तमानकालके महात्मा सज्जन लोग सबही जानते हैं. मैं क्या लिखूं ? यह दोनों महाराज वर्तमानकालमें साक्षात् श्रीवेदव्यासभगवान् और श्रीभगवत्पूज्यपाद श्रीशंकराचार्य महाराज हैं. इन दोनों महाराज और श्रीकृष्णचन्द्र महाराज और श्रीस्वामी आत्मागिरि महाराज इनकी कृपासहायसे और अन्य महापुरुषोंकी भी सहायसे मुख्य बीबीबीरा ब्राह्मणी प्रसिद्ध बीबी झुनीया देवीके निमित्त यह भाषा टीका बनाई है. जिस बीबीबीराने श्रीवीर विहारीजी महाराज और श्रीवीरेश्वर महादेवजी महाराजका मंदिर सिकन्दराबादमें बनाकर और विधिवत् संवत् १९२७ में प्रतिष्ठा करके जो कुछ द्रव्य उसके पास था, जिस जगह उसका सत्त्व था, जो उसके आश्रय था, समस्त श्रीमहाराजको समर्पण करके उसी दिन विधिवत् सर्वस्वदानका संकल्प कर दिया. एक पुरानी धोती अपने पास रक्खी और कुछ पास नहीं रक्खा, फिर श्रीवृन्दावनमें जाकर वास किया. पहले भी पुष्करादि बहुतसे तीर्थोंका सेवन किया. श्रीजगन्नाथस्वामी, श्रीकेदारनाथ, बदरीनारायणस्वामी, श्रीनाथजीके दर्शन किये. ऐसे ऐसे पुण्य करनेसे उनका अन्तःकरण शुद्ध हुआ और भगवत्तत्त्व जाननेकी उनकी अभिलाषा हुई. सुखपूर्वक उनको ब्रह्मतत्त्व जाननेके लिये मुख्य बीबीबीरा ब्राह्मणीके निमित्त यह टीका बनाई गई है. विशेषकरके शङ्करभाष्य और आनन्दगिरिजीकी टीकानुसार मैंने अर्थ लिखा है और किसी किसी जगह श्रीधरीटीकानुसार और किसी किसी जगह महापुरुषोंके मुखारविन्दका श्रवण किया हुआ अर्थ और किसी किसी जगह अपनी बुद्धिके अनुसार भी लिखा है. श्रीकृष्णचन्द्रका अर्जुनसे जैसे संवाद हुआ प्रथम सो सुनना अवश्य है. इसवास्ते वह प्रसंग लिखते है—

श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीके अर्जुन परम भक्त थे. अर्जुनको विना ब्रह्मज्ञान युद्धके प्रारम्भसमय शोक, मोह हो गया. श्रीमहाराज उससमय अर्जुनके पास थे, जानगये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि अज्ञानसे इसको यह शोक मोह हुआ है. ब्रह्मज्ञान सुनानेसे दूर होगा. यह विचारकर परमकरुणाकी खानि श्रीभगवान्ने समस्त वेदोंका सार ब्रह्मज्ञान साधनोंसहित उपदेश कर स्वधर्म्ममें स्थित कर दिया. क्योंकि, विना स्वधर्मका अनुष्ठान किये और विना अन्तरङ्ग उपासना किये, ब्रम्हज्ञानकी प्राप्ति नहीं. ऐसे विक्षेपसमय श्रीमहाराजने जो यह ब्रह्मज्ञानका अर्जुनको उपदेश किया, इसका तात्पर्य यह है कि—कोई वक्ता तो ऐसी रीतिसे कथा कहते हैं कि, जो श्रोताका चित्त भले प्रकार एकाग्र हो, तब वक्ताका तात्पर्य समझमें आता है और किसी वक्ताकी कथा विक्षेपचित्तको भी एकाग्र कर देती है. सिवाय इसके महत्पुरुषोंके वाक्यमें सामर्थ्य होती है. श्रीमहाराजने अर्जुनको ऐसी रीतिसे उपदेश किया कि विक्षिप्तचित्तभी एकाग्र हो जावे. महात्मा सर्वज्ञजन देश—काल—वस्तु—सहित अधिकार समझकर कहते हैं. वेदोंमें जो विस्तारपूर्वक ब्रह्मविद्याका निरूपण है, वहां देश—काल—वस्तु—सहित अधिकार देखना चाहिये और गीतामें संक्षेपकरके जो ब्रह्मज्ञान निरूपण किया है, वहां भी देश—काल—वस्तु—सहित अधिकार देखना योग्य है. सत्ययुग, द्वापर, त्रेताकालमें ब्राम्हण राजा वनमें वास करके तपसे पापोंको नाश कर ब्रह्मविद्याका विचार करते थे. अवस्था उनकी बहुत होती थी. रोगी कम होते थे. उनके वास्ते वेदोंमें विस्तारसहित ब्रह्मविद्याका उपदेश युक्त है. दूसरे यह कि—वह उपदेश समष्टिके वास्ते है; किसी एक अपने प्यारेके वास्ते नहीं. कि जो विचार २ अर्थ लिखा जावै और यह उपदेश एक अपने प्यारे सखा परमभक्तके वास्ते इस हेतुसे श्रीमहाराजने बहुत विचारसहित यह गीताग्रन्थ कहा है. सिवाय इसके श्रीमहाराजने यहभी समझा कि—अर्जुनसे ऐसी रीतिके साथ कहना चाहिये कि—जो शीघ्र अर्जुनकी समझमें आ जावे. नहीं तो प्रथम हँसी हमारी है. क्योंकि—

वक्तुरेव हि तज्जाड्यं यत्र श्रोता न बुध्यते ।

तात्पर्य्य, कहनेवालेकी भाषा अच्छी नहीं कि जो श्रोता नहीं समझता है. अब भलेप्रकार विचार करना योग्य है कि यह गीताग्रन्थ कैसा उत्तम है. कि जिसके वक्ता श्रीकृष्णचन्द्र महाराज पूर्णब्रह्म और श्रोता अर्जुन और वेदव्यासजी कर्त्ता हैं. इन तीनोंकी महिमा जगत्में प्रसिद्ध है. परमकरुणाकर श्रीवेदव्यास नागरने यह विचार कर कि विशेषकरके कलियुगमें मन्दबुद्धि, आलसी, कुतर्की, मन्दभाग्य, कमअवस्थावाले रोगी होंगे और खेती, वनिज, नौकरी, भिक्षा इन चार प्रकारकी आजीविकाहीमें दिन रात खोवैंगे, उनके उद्धारके वास्ते भी यत्न कर देना योग्य है. क्योंकि—कलियुगमें वेदोंका पढना व सुनना तो पृथक् रहा. वेदोंकी पोथी भी वास्ते प्रमाण देनेके मिलनी कठिन होगी ! जो अर्थ जिसके मनमें आवेगा, संस्कृत या भाषाकी पोथी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बनाकर कह दिया करेगा. कि यह ग्रन्थ अनादि है या वेदोंके अनुसार है, उसी रास्ते पर मूर्ख अनजान चलने लगेंगे. वह समय अब वर्त्तमान हो रहा है. कैसे कि—असंख्यात नाममात्रके पण्डितोंने वेदकी पोथी भी नहीं देखी और बात वेदोंका प्रमाण देकर बोलते हैं; प्रत्युत बहुत लोग वेदोंसेभी परेकी बात कहते हैं! और जो जो झगडे उपाधिजल्प वितण्डा जीवोंके आपसमें परमार्थका निर्णय करनेके लिये फैल रहा है सो प्रसिद्ध है. एक जीवका एकजानी शत्रु हो रहा है और अनेक पुरुषोंकी इन झगड़ोंमें जान जाती रही और परमार्थकी जगह परमार्थ फैल गया ।

तात्पर्य—ऐसी ऐसी व्यवस्था समझकर व्यासजीने श्रद्धावानोंके लिये, उसी अर्थको जो श्रीभगवान्ने युद्धके प्रारम्भसमय अर्जुन को उपदेश किया था, उसीको—सबसे श्रेष्ठ समझकर युक्तिके साथ सातसौ ७०० श्लोकोंमें लिखकर श्रीभगवद्गीता उपनिषद् उन भगवद्गीता मन्त्रोंका नाम रक्खा. अठारह अध्याय किये, प्रत्येक अध्यायके अन्तमें श्री भगवद्गीता उपनिषद् ब्रह्मविद्या योगशास्त्र उस ग्रन्थको लिखा. तात्पर्य्य यह ग्रन्थ योगशास्त्र है, भोगशास्त्र नहीं और इसमें ब्रह्मविद्याका निरूपण है! कर्म्म-उपासना, योग, इस ब्रह्मज्ञानका साधन कहा है और यह श्रीभगवान्के कहे हुये उपनिषद् ह. सब श्लोक इस ग्रन्थके मन्त्र हैं और रक्षाके लिये, इस ग्रन्थको महाभारतमें जमाया. उन सातसौ मन्त्रोंमें बहुत मन्त्र तो साक्षात् श्री कृष्ण-चन्द्र महाराजजीके मुखारविन्दसे प्रकट हुये हैं और कुछ श्लोक व्यासजीके बनाये हुये हैं। इस गीताके श्लोकका चौथा भाग अर्द्धभाग भी मन्त्र है इस हेतुसे मन्त्रशास्त्रवाले इस गीताको मालामन्त्र कहते हैं और मन्त्रशास्त्रकी विधिपूर्वक पाठ करते हैं. जो सकाम पाठ करते हैं उनको तो मनोवाञ्छित फल होता है और जो निष्काम पाठ करते हैं, उनका अन्तःकरण शुद्ध होकर ब्रह्मज्ञानद्वारा उनको परमानन्दकी प्राप्ति होती है. गीतामाहात्म्य-के ग्रन्थ बहुतसे हैं. उनमें एक एक अध्यायके श्रवणपाठ करनेका माहात्म्य और अर्द्ध अर्धार्द्ध श्लोकोंके पढ़ने—सुननेका माहात्म्य जुदा जुदा इतिहासोंसहित लिखा है. उन ग्रन्थोंसे प्रतीत होता है कि—असंख्यात पापी अन्त्यज दुराचारी प्रत्युत पशु, पक्षी, भूत, प्रेत राक्षसादि गीताजीके एकएक अध्याय आधे २ श्लोकोंको पक्षी राक्षसोंके मुखसे अनजानमें अश्रद्धापूर्वक श्रवण करके और गीतापाठीकी चिताके धूम और उसने देहकी भस्मका स्पर्श करके और उसके अस्थिसम्बन्धि जलका स्पर्शकर अन्तकालमें परमपदको प्राप्त हुये! यहां "कैमुतिकन्याय" है. कि जो अधिकारी विधिश्रद्धासहित श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठोंसे पढ़ते सुनते हैं वे मुक्त हो जावें तो इसमें क्या कहना है? जिसको इतिहासोंसहित गीतामाहात्म्य श्रवण करनेकी इच्छा होवै तो पद्मपुराणमें पृथक् पृथक् अठारह अध्यायों के अठारह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माहात्म्य हैं. लक्ष्मी–नारायणका और सदाशिव–पार्वतीजीका संवाद है. उसमें और स्कन्दादिपुराणोंमें भी बहुत हैं. सिवाय इसके प्रत्यक्ष प्रमाणमें किसी और प्रमाणकी कुछ इच्छा नहीं होती. बहुत महात्मा वर्त्तमानकालमें प्रत्यक्ष देख लो कि–जो केवल गीताजीके प्रतापसे महात्मा सन्त, साधु, सज्जन हो गये हैं. इस गीतापर बावन टीका प्रसिद्ध हैं और दो भाष्य हैं. एक तो हनुमानजीका बनाया हुआ और दूसरा श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्रीमत्शंकराचार्य्यजीका बनाया हुआ. जिसपर श्रीस्वामीआनन्दगिरिजीकी टीका है और हनुमान्भाष्यपर श्रीमहाराज पण्डितराज मोहनलालजीकी टीका है और श्रीसम्प्रदाय और माधवीसम्प्रदाय और निम्बार्कसम्प्रदायवाले भी अपने आचार्योंके किये हुये भाष्य गीतापर कहते हैं. सो उन भाष्योंको उनकी सम्प्रदायवाले पढ़ते सुनते हैं. इसीप्रकार बावन टीकासे सिवाय हैं; कम नहीं. और देशभाषा और यामिनी भाषामें भी बहुत हैं और इस ग्रन्थमें किसी प्रकारका संशय नहीं. जैसे कोई, मनुष्यकृत श्लोकोंको श्रुति–स्मृति बता देता है और कोई, श्रुति–स्मृतिको मनुष्यकृत बता देते हैं. जैसे श्रीमद्भागवतको कोई कहते हैं, कि–यही व्यासकृत है और कोई कहते हैं कि–भगवति भागवत व्यासकृत है. यह मनुष्यकृत है. तात्पर्य गीता ऐसा ग्रंथ नहीं. इस ग्रन्थको अन्य द्वीपोंके निवासीभी सब ग्रन्थोंसे श्रेष्ठ बताते हैं. सिवाय इसके बड़े बड़े पण्डित साधु विरक्त षट्शास्त्रोंके पढ़े हुये–कि जो राजलक्ष्मी पुत्रादि पदार्थोंको त्याग करके ब्रह्मलोकादिको तृणकी बराबर समझकर वनवास करते हैं वे भी, एक पुस्तक गीताजीकी अवश्य अपने पास रखते हैं. सदा पाठ करते रहते हैं. तात्पर्य–जितनी स्तुति महिमा श्रीभगवद्गीताजीकी लिखी जावै, वह कमसे भी कम है. जिसको परमानन्दकी इच्छा हो वह श्रद्धाविधिसहित श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठोंसे गीता पढे, सुने, नित्य पाठ करे. " धर्म्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे " इस श्लोकसे पूर्व्व जो नव श्लोक अङ्गकरन्यासादिके जो मन्त्र हैं, वे सातसौ श्लोकोंकी संख्यासे पृथक् सिवाय हैं. उनके सहित पाठ करना योग्य है. " धर्मक्षेत्रे " यहांसे लेकर दूसरे अध्यायके दश श्लोक तक सत्तावन श्लोक कृष्णार्जुनसंवादकी संगतिके लिये हैं. फिर समस्तगीतामें मुक्तिका साक्षात् कारण, केवल ज्ञाननिष्ठाका वर्णन है और ज्ञाननिष्ठाका उपाय कर्म्मनिष्ठाका निरूपण है. समस्त गीताशास्त्रमें ये दो निष्ठा हैं. उपासनाका कर्म्मनिष्ठाहीमें अन्तर्भाव है. प्रथमके छः अध्यायोंमें कर्मकाण्डका वर्णन है, सातवें अध्यायसे बारहतक उपासनाका वर्णन है और तेरहसे अठारहतक ज्ञाननिष्ठाका निरूपण है. जैसे–वेदोंमें कर्म, उपासना और ज्ञान ये तीन काण्ड हैं, ऐसेही गीताजीमें भी तीन काण्ड हैं. ये तीनों काण्ड परस्पर सापेक्ष हैं अर्थात् स्वतन्त्र ये तीनों मुक्तिके कारण नहीं. कर्म तो, उपासना और ज्ञान इसकी अपेक्षा रखता है और उपासना प्रथम कर्मकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और फिर ज्ञानकी अपेक्षा रखता है और ज्ञान, प्रथम कर्म्म-उपासना दोनों की अपेक्षा रखता है; कर्म्म करनेसे अन्तःकरण शुद्ध होता है; उपासना से चित्त एकाग्र होता है फिर ज्ञानद्वारा मुक्ति होती है. इस प्रकार ये तीनों काण्ड परस्पर सापेक्ष हैं. इसको क्रम-समुच्चय कहते हैं. समसमुच्चय इसको समझना न चाहिये. क्योंकि, एककालमें एक पुरुषसे कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठा इन दोनोंका अनुष्ठान नहीं हो सक्ता. इनका स्थितगतिवत् विरोध है. कर्त्ता भी और अकर्त्ता भी एककालमें कैसे समझा जावे ? तात्पर्य यह है कि-प्रथम कर्मनिष्ठा मुख्य रहती है और ज्ञाननिष्ठा गौण । जब कर्मनिष्ठा परिपक्व हो जाती है, तब ज्ञाननिष्ठा मुख्य हो जाती है और कर्मनिष्ठा गौण फिर ज्ञाननिष्ठा परिपक्व होकर समस्त दुःखोंको मूलसहित नाशकरके परमानन्दको प्राप्त कर देती है. सब सन्त-महन्त-महात्मा-वेद-शास्त्रोंका यही सिद्धान्त है। यह नियम है कि महावाक्यार्थ-ज्ञानके विना मुक्ति कभी नहीं होती है और महावाक्यार्थका ज्ञान जब होता है, प्रथम पदार्थका ज्ञान हो जावे. महावाक्यमें "तत् १, त्वम् २, असि ३" ये तीन पद हैं. तत् और त्वम् इन पदोंका अर्थ वाच्य और लक्ष्यभेदसे दो दो प्रकारका है. श्री भगवद्गीतामें विचारना चाहिये कि-महावाक्यार्थ किस प्रकार और कहां निरूपण हुआ ? सुनो, समस्तगीतामें महावाक्यार्थही श्रीमहाराजने निरूपण किया है।

तत्र तु प्रथमे काण्डे कर्म तत्त्यागवर्त्मना। त्वं पदार्थो विशुद्धात्मा सोपपत्तिर्निरूप्यते ॥ १ ॥

अ०-प्रथमकाण्डमें कर्म करना, उसके फलको न चाहना, संग-आसक्तिरहित कर्म करना, इस मार्ग करके त्वंपदका दो प्रकारका वाच्य और लक्ष अर्थ निरूपण किया है. शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप जीवका 'त्वं' पदका लक्ष्यार्थ है और अविद्यामें और अविद्याके कार्य-गुण-कर्म-फलमें जो सक्त सो, 'त्वं' पदका वाच्यार्थ है ॥ १ ॥

द्वितीये भगवद्भक्तिनिष्ठावर्णनवर्त्मना। भगवान् परमानन्दस्तत्पदार्थो विधीयते ॥ २ ॥

अ०-दूसरे काण्डमें भक्तिनिष्ठामार्गकरके तत्पदका अर्थ निरूपण किया, अर्थात् श्रीभगवानको परमानन्दस्वरूपादिमान् जो कहा सो तो तत्पदका लक्ष्यार्थ है और सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् कर्त्ता हर्त्तादि स्वरूप भगवान्का तत्पदका वाच्यार्थ है ॥ २ ॥

तृतीये तु तयोरैक्यं वाक्यार्थो वर्णितः स्फुटः। एवमप्यत्र काण्डानां सम्बन्धोऽस्ति परस्परम्। ३।

अ०-तीसरे काण्डमें दोनों पदोंकी एकता लक्ष्यार्थमें निरूपण करो, सब क्षेत्रोंमें क्षेत्रज्ञ मुझकोही जान तू, इत्यादि श्लोकोंकरके महावाक्यार्थ स्पष्ट निरूपण किया. इसप्रकार तीनों कांडोंका परस्पर सम्बन्ध है ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संकेत।

इस टीकामें जो संकेत हैं, उनको प्रथम कण्ठ कर लेना योग्य है. क्योंकि, हर एक जगह काम पडेगा. सोई लिखते हैं—मू० यह मूलका संकेत है. अ० यह अर्थका संकेत है. सि० यह सिवायका संकेत है. जो अर्थ मूलपदसे सिवाय श्लोकार्थके बीचमें लिखा है, वह इस*फूलके संकेतपर्यन्त होगा. टी० यह टीकाका संकेत है. जिस जगह पदका अर्थ भलेप्रकार नहीं लिखा गया, उसको टीकामें विस्तारसहित लिखा है. पू० यह संकेत पूर्णका है. पदके पूर्ण करनेके लिये चकार एवकारादि श्लोकोंमें प्रायशः लिखे होते हैं. किसी जगह अर्थभी देते हैं. जिस जगह पदपूरणार्थ चकारादि होंगे, वहां अर्थमें पू० यह संकेत लिखा होगा. उ० यह सङ्केत उत्थानिका और उपोद्घातका है. ॥ यह सङ्केत श्लोकके अङ्कका है. पाठ करनेके समय "सि० मू० टी०" इन संकेतोंको मनमेंही समझ लेना, उच्चारण नहीं करना. तात्पर्य—इन संकेतोंको छोडकर शेषका उच्चारण करना योग्य है. अर्थ तो सब पदोंका लिखा जावेगा, परन्तु टीक सब पदोंकी न होगी.

देशभाषाकी स्तुति।

प्रथम देशभाषा सुनकर मुझको बोध हुआ है, इस हेतुसे मुझको देशभाषा प्रिय लगती है. मनुष्यलोकमें देवभाषा तो कोई कोई बोलते समझते हैं. प्रायशः सब प्राकृत देशभाषा बोलते समझते हैं और इसलोकमें यह चाल है कि—जो देशभाषाके ग्रन्थोंको पढ़ाते सुनाते हैं, तो अर्थ उनका देशभाषाहीमें समझाते हैं और प्रसिद्धि है कि असंख्यात सन्त, महात्मा, साधु देशभाषामेंही भगवान्के गुणानुवाद सुनकर भगवान्को प्राप्त हुये और असंख्यात जन वर्तमानकालमें भगवान्के सन्मुख हैं. मैं नहीं जानता कि—"कोई २ मूर्ख भाषाकी निन्दा क्यों करता है और अपनी हंसी कराकर क्यों पापका भागी होता है?" हंसी तो उसकी ऐसी होती है कि—एक आदमी देवभाषामें कथा बांचता हुआ देशभाषामें अर्थ समझता था. वह वक्ता देशभाषामें बोला कि—"देशभाषाका प्रमाण नहीं. उसका पढ़ना सुनना निष्फल है." यह सुन कर समझनेवाले श्रोता सब उठ खड़े हुये और देषभाशामें कहने लगे कि-'वक्ता तो बड़ाही मूर्ख है.' वक्ताको क्रोध आगया. वह सुननेवालोंको नास्तिक, मूर्ख, शूद्र, वर्णसङ्कर यह कहकर देशभाषामें गाली देने लगा. सुननेवालोंने वक्तासे कहा कि 'सुनो, महाराज! हमारे तो देशभाषाप्रमाण सफल है. गालियोंका फल दुःख हमको होता है और तुह्मारे तो देशभाषा प्रमाण नहीं; निष्फल है. तुमने हमारे कहनेको क्यों बुरा माना और हम तो तेरे कहनेमें 'वदतो व्याघात' दोष समझकर और तुझको कृतघ्नी समझकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उठ खड़े हुये. जो बोलता है उसीकी बुराई करता है. जिस देशभाषाकी कृपासे तेरे अनेक व्यवहार सिद्ध होते हैं उसके उपकारको नहीं मानता; प्रत्युत असूया करता है. यह सुनकर वह वक्ता चुप हुआ. फिर सब श्रोता उसकी हंसी करते हुये चले गये; अकेले वक्ताजी बकते रहे. अब पापका भागी ऐसे होता है कि-जिसे देवभाषा समझनेकी तो सामर्थ्य नहीं उसको देशभाषासे भी हटा देना कितना बड़ा अनर्थ है? इसमें संदेह नहीं कि देवभाषा मुमुक्षुलिये अत्यन्त हितकारी है; परन्तु मन्दमति क्या करे? प्रायशः चारों वर्ण जो अपने धर्म्म इष्टदेव मतसे अनजान हो रहे हैं और अन्यद्वीपनिवासियोंके पंजेमें फंसे चले जाते हैं, इसमें यही हेतु है कि वे लोग तो सब अपनी देशभाषामें इष्टउपासना-को सुन पढ़कर शीघ्र समझ लेते हैं और यह वर्णाश्रमी देशभाषाको निष्फल अप्रमाण मुखोंसे सुनकर पशुवत् बने रहते हैं. तात्पर्य, मेरा मत यह है कि-जिसको देवभाषाके पढ़ने-सुनने-समझनेकी सामर्थ्य है, वह तो भूलकर भी देशभाषाकी पोथियोंको न पढ़े, न सुने; और जो असमर्थ हैं वे देशभाषाको परम हितकारी समझें. देशदेश-भाषाभाषामें निन्दा-स्तुति सुनी हुई तो फलदाता है. भगवान्के गुण सुने हुये सफल क्यों न होंगे? तात्पर्य-देशभाषा बेसन्देह प्रमाण सफल है. अब देशभाषामें परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीके गुणोंको सावधान होकर सुनो. जो पुरुष ब्रह्मविद्याकी प्रक्रियाको न जानता हो, वह प्रथम ब्रह्मविद्याकी प्रक्रियाको याद करे, तब गीता-का तात्पर्य सिद्धान्त समझमें आवेगा. क्योंकि, ब्रह्मविद्या वेदान्तशास्त्रमें गीता सिद्धान्त ग्रन्थ है. प्रक्रियाके प्रकरण पृथक् हैं. सज्जनमनोरञ्जनी इस देशभाषाकी टीकासे पृथक् एक ब्रह्मविद्याकी प्रक्रिया देशभाषा में मैंने भी वर्णन करी है जिसका नाम "आनन्दामृत-वर्षिणी" प्रसिद्ध है. उसको इस टीकाका अङ्ग और एक देश पूर्वभाग समझना योग्य है. जब कि 'आनन्दामृतवर्षिणी' प्रक्रिया इस टीकाका पूर्वभाग है इसी हेतुसे वेदान्तसं-ज्ञाका इस टीकामें मैंने निरूपणा नहीं किया. केवल सिद्धान्त पदार्थोंका निरूपण है और इसी हेतुसे सज्जन-विद्वज्जन-साधु-महात्मा-पण्डितोंसे कछु इसमें प्रार्थना नहीं करी; न सम्बन्ध अधिकारी इत्यादिकोंका लक्षण कहा है. 'आनन्दामृतवर्षिणी' में अधिकारी-सम्बन्धादिकोंका लक्षण लिख चुका हूं. सज्जन साधु अपनी सज्जनता साधुताकी तरफ देखकर बिगड़ी अशुद्धकविताको भी शुद्धकर देते हैं और दुष्ट शुद्धमेंभी दोष निकाला करते हैं. इन दोनोंका यह स्वभाव अनादि अभङ्ग है. सज्जन तो यह समझते हैं कि-एक पुरुषसे जो कुछ प्रयत्न हो सका वह उसने किया; सुधार देना हमको चाहिये. निर्दोष कविता सर्वज्ञ जनोंकी होती है; असर्वज्ञके कहनेमें जो दोष प्रतीत होता हो तो उसको

---

१ गुणेषु दोषारोपणमसूया ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्रहण न करना चाहिये. दो एक दोष प्रतीत होनेसे उसके समस्त पुरुषार्थका क्यों नाश करना चाहिये ? सिवाय इसके यह भी समझना चाहिये कि–" मुझको जो यह दोष प्रतीत होता है तो मैं सर्वज्ञ हूं वा अल्पज्ञ हूं " जो–सर्वज्ञ गुण–दोषोंका निर्णय करे तब तो सबको प्रमाण होता है; नहीं तो निन्दक दुष्ट कहलाता है. क्योंकि गुणको गुण और दोषको दोष सर्वज्ञही नियमकरके कह सक्ता है. जो अभाग्य दोष निकालता है, उसके वकनेको मूर्ख मानता है. सज्जन हंसकी सदृश सारग्राही होते हैं. इसी हेतुसे निन्दक दुष्टोंसे भी प्रार्थना करनी व्यर्थ है. सज्जनोंके चरणोंको नमस्कार करके ' सज्जनमनोरञ्जनी ' यह श्रीभगवद्गीता उपनीषदोंकी टीका अर्थात् श्रेष्ठजनोंके मनको रञ्जन आनन्द देनेवाली टीकाका प्रारम्भ करता हूं.

श्रीगणेशाय नमः ।

ओम् १ अस्य २ श्रीभगवद्गीतामालामन्त्रस्य ३ श्रीभगवान् ४ वेद-व्यास ऋषिः ५ अनुष्टुप् छन्दः ६ श्रीकृष्णः ७ परमात्मा ८ देवता ९ ।

अर्थ–यह नाम परमात्मा का है, वास्ते मङ्गलाचरणके प्रथम इसको उच्चारण करते हैं १ इस २ श्रीभगवद्गीता मालामन्त्रके ३ श्रीभगवान् ४ वेदव्यास ऋषि ५ सि० हैं और इस मालामन्त्रका अनुष्टुप् छन्दः ६ सि० है और इस मन्त्रके श्रीकृष्ण ७ परमात्मा ८ देवता ९ सि० हैं*

" अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे " १ इति २ बीजम् ३।

अर्थ–यह मन्त्र है, अर्थ इसका आगे लिखा जावेगा १ यह २ बीज ३ सि० है इस मालामन्त्रका ।

" सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज " १ इति २ शक्तिः ३॥

अर्थ–यह २ । मन्त्र १ । शक्तिः ३ सि० है इसकी*

" अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः " १ इति २ कीलकम्३

अर्थ–यह २ । १ । कीलक ३ सि० है इसका*

" नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः " इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः १ ।

अर्थ–मन्त्र पढकर दोनों हाथकी तर्ज्जनी और अंगुलि इनको दोनों हाथके अंगूठोंका स्पर्श करते है. अंगूठेके पास जो अंगुली है, उसका नाम तर्ज्जनी है १।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः" इति तर्जनीभ्यां नमः १।

अर्थ-यह मन्त्र पढ़कर दोनों अंगूठोंसे दोनों तर्जनी-अंगुलियोंका स्पर्श करते हैं १।

"अच्छेद्योयमदाह्योयमक्लेद्योऽशोष्य एव च" इति मध्यमाभ्यां नमः१।

अर्थ-दोनों अंगूठों से दोनों मध्यमाका स्पर्श करते हैं १।

"नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोयं सनातनः" इत्यनामिकाभ्यां नमः १।

अर्थ-दोनों अंगूठोंसे दोनों अनामिकाका स्पर्श करते है १।

"पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोथ सहस्रशः" इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः१।

अर्थ-दोनों अंगूठोंसे दोनों कनिष्ठिकाका स्पर्श करते हैं।

"नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च" इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः १।

अर्थ-यह मंत्र पढ़कर प्रथम दाहने हाथके नीचे बायां हाथ रखते हैं; फिर बायें हाथके नीचे दाहना हाथ रखते हैं. यह सब विधि गुरुके बतलानेसे अच्छी तरह आ जाती है।

इति करन्यास।

अथ अङ्गन्यास।

"नैनं छिन्दति शस्त्राणि" इति हृदयाय नमः १॥

अर्थ-यह मन्त्र पढकर पांचों अंगुलियोंसे हृदयको स्पर्श करते हैं १।

"न चैनं क्लेदयन्त्यापः" इति शिरसे स्वाहा १।

अर्थ-शिरको स्पर्श करते हैं १।

"अच्छेद्योयमदाह्योयम्" इति शिखायै वषट् १।

अर्थ-चोटीको स्पर्श करते हैं १।

"नित्यः सर्वगतः स्थाणुः" इति कवचाय हुम् १।

अर्थ-यह मन्त्र पढकर दाहने हाथसे बायें खवे का और वाम हाथसे दाहनें खवे का स्पर्श करते हैं १।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

" पश्य मे पार्थ रूपाणि " इति नेत्रत्रयाय वौषट् १ ।

अर्थ-दाहने हाथसे दोनों नत्रोंको छूते हैं १ ।

" नानाविधानि दिव्यानि " इत्यस्त्रायफट् १ ।

अर्थ-यह मन्त्र पढकर दाहने हाथकी तर्ज्जनी और मध्यमा दो अंगुली वाम हाथ की हथेलीपर मारते हैं १ ।

इति अंगन्यास ।

श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः । इति संकल्पः १ ।

अर्थ-यह संकल्प पढकर यह चिन्तन करे कि-यह पाठ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीके प्रसन्न होनेके लिये करता हूं १ ।

ध्यान ।

संकल्पके पीछे श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीका ध्यान करना योग्य है. ध्यान-कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत ज्यातीश्वर तीर्थपर दोनों सेनाके बीचमें रथपर सवार इस स्वरूपसे श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् अर्जुनको ब्रह्मज्ञान सुना रहे हैं कि चरणकमलोंके अंगुठोंमें सोनेके छल्ले पहरे हुये, चरणों में कड़े सोनेकी, पैंजनी चांदी सोनेकी, जिसमें पंचरंगी मणि जड़ीहुई. पीली धोती-जिसमें रक्त किनारी लगी हुई जिसपर अनेक प्रकार और नाना रंगोंके बेल बूटे बने हुये, जिसकी चमकसे चन्द्रसूर्योंकी ज्योति फीकी प्रतीत होती है-पहर रहे हैं. पंचरंगी बेलदार अंगरखा-जिसमें कलाबतून और गोटा पट्टा जगह जगह लगा हुआ है-नीचे उसके रक्त कुरता पहरे हुये, गलेमें पंचरंगी मणि-मोतियोंकी माला और नानारंगके फूलोंकी माला पहर रहे हैं. हाथोंमें सोने-चांदीके छल्ले, अंगूठी, कड़े, पहुँची बाजूबन्द, जड़ाऊ पहर रहे हैं. गुलेनारी डुपट्टेसे कमर कसी हुई. घूंघरवाले बालोंमें अतर फुलेल पड़ा हुआ, शिरसे बसन्ती डुपट्टा किनारीदार बंधा हुआ. कानोंमें तीन तीन बाले रक्त श्वेत हरित मोतियोंसहित लटक रहे हैं. एक हाथमें तो छड़ी शोभित दूसरेमें ज्ञानमुद्रा बनायेहुये १४-१५ वर्षकीसी अवस्था प्रतीत होती है. मन्द मुसकान सहित अर्जुनको समझाते हैं. बिजलीकी तरह दांतोंकी चमक. प्रातःकालके सूर्यवत् होठों पर लाली. कमलवत् बड़े नेत्र हैं जिनके. जिनमें सुरमा लगा हुआ रक्त डोरे खिंचे हुये हैं. भरा हुआ चेहरा. चौडी उभरी हुई छाती है जिनकी. नीलकमल नील नीरधर नीलमणिवत् रंग है जिनका. जिसमें उत्कट लाली झलक रही है. प्रसन्न मुख मस्तकपर प्रातिपदिक चन्द्रवत् तिलक धारन कर रक्खा है जिन्होंने ऐसे श्रीकृष्णचन्द्र महाराज मेरे मनमें वास करैं ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पार्थाय प्रतिबोधितां भगवता नारायणेन स्वयं ।
व्यासेन ग्रथितां पुराणमुनिना मध्ये महाभारते ॥
अद्वैतामृतवर्षिणीं भगवतीमष्टादशाध्यायिनी–
मम्ब ! त्वां मनसा दधामि भगवद्गीते ! भवद्वेषिणीम् ॥ १ ॥

अम्ब ! १ भगवद्गीते ! २ त्वां ३ मनसा ४ दधामि ५ नारायणेन ६ भगवता ७ स्वयम् ८ पार्थाय ९ प्रतिबोधितां १० महाभारते ११ मध्ये १२ पुराणमुनिना १३ व्यासेन १४ ग्रथितां १५ अद्वैतामृतवर्षिणीम् १६ भगवतीम् १७ अष्टादशाध्यायिनीम् १८ भवद्वेषिणीम् १९ । अ० हे मातः १ भगवद्गीते ! २ तुमको ३ मनकरके अर्थात् मनसे ४ धारण करता हूं ५ सि० हृदयमें कैसी हो तुम कि जो* नारागण भगवान्ने ६ । ७ आप ८ अर्जुनसे ९ कही १० सि० और महाभारतके मध्यमें ११ । १२ प्राचीनमुनि व्यासने १३ । १४ गूंथी १५ । तात्पर्य. व्यासजीने महाभारतके छटे भीष्मपर्वमें श्रीभगवद्गीता ब्रह्मविद्या कही है १५ सि० फिर कैसी हो तुम हे भगवद्गीते ! अद्वैतरूप अमृत वर्षता है जिसमें १६ सि० पुनः*भगवती १७ सि० पुनः*अठारह अध्याय हैं जिसमें १८ सि० पुनः*संसारसे द्वेष है जिसका १९ सि० ऐसी तुम हो । टी० भागवान्ने जो कहे उपनिषद्, उनको भगवद्गीता उपनिषद् कहते हैं. व्याकरणकी रीतिसे सम्बोधनमें ऐसा बोलते हैं कि–हे भगवद्गीते ! बहुत जगह इसीप्रकार अक्षरों का बदल हो जाता है. जैसे, माताका हे मातः ! १ । २ पूर्णब्रह्मका नाम नारायण है. भगवान्का विशेषण है ६ ऐश्वर्य, वीर्य, यश, लक्ष्मी, ज्ञान, वैराग्य इन छःका नाम भग है. जिसमें ये पूर्ण हों सो भगवान् और स्त्री हो तो भगवती अथवा उत्पत्ति, नाश, गति, अगति, विद्या-अविद्या इन छःको जो जानता है सो भगवान्, भगवती. यह ग्रन्थ पूर्णब्रह्म भगवान्का कहा हुआ है, इस हेतुसे बहुत प्रमाण है ७ भेदवादी जीव ब्रह्मके भेदको सिद्धान्त कहते हैं. उसका खण्डन करनेके लिये यह विशेषण है १६ उन्नीसवें पदका यह अर्थ प्रतीत होता है कि-गीता और संसार इनका परस्पर वैर है. परन्तु यह प्रतीत नहीं होता था कि– "इन दोनोंमें बलवान् कौन है ?" इस वास्ते यह विशेषण है १७ । तात्पर्य इस श्लोकका यह है कि–गीताजीका पढ़नेवाला व पाठ करनेवाला प्रथम गीताजीका ध्यान और स्तुति करता है. हे गीते ! तुमको साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्रने अर्जुनसे कही और व्यासजीने महाभारतमें लिखी. तुम मातासे भी सिवाय हित चाहनेवाली, दुःखरूप संसारका नाश करनेवाली, ज्ञानवैराग्यऐश्वर्यादिकरके युक्त हो. अठारह विद्यामें जो अर्थ है सोई तुम्हारे अठारह अध्यायोंमें है. उस अर्थके विचारनेसे सब वेदोंका सिद्धान्त अद्वैत जीव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मकी एकता है. उसका अपरोक्ष्य ज्ञान हो जाता है. इस वास्ते हे मातः ! तुमको मैं मनसे अपने हृदय में धारण करता हूं ॥ १ ॥

नमोऽस्तु ते व्यास ! विशालबुद्धे ! फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र ! ॥
येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः ॥ २ ॥

विशालबुद्धे १ व्यास २ फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र ३ ते ४ नमः ५ अस्तु ६ येन ७ त्वया ८ भारततैलपूर्णः ९ ज्ञानयमः १० प्रदीपः ११ प्रज्वालितः १२ । अ० हे विशालबुद्धे १ हे व्यास २ हे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र ३ आपके अर्थ ४ नमस्कार ५ हो ६ जिन ७ आपने ८ भारततैलकरके पूर्ण ९ ज्ञानरूप १० दीपक ११ प्रज्वलित किया जलाया १२। टीका—बड़ी बुद्धि है जिनकी २, फूले कमलके चौड़े पत्रवत् नेत्र हैं जिनके ३ इन दो विशेषणोंका तात्पर्य यह है कि—भूत—भविष्यत्—वर्तमानकालकी व्यवस्था व्यासजी सब देखते समझते हैं. क्योंकि, सर्वज्ञ हैं ॥ २ ॥

प्रपन्नपारिजाताय तोत्रवेत्रैकपाणये ।
ज्ञानमुद्राय कृष्णाय गीतामृतदुहे नमः ॥ ३ ॥

कृष्णाय १ नमः २ प्रपन्नपारिजाताय ३ तोत्रवेत्रैकपाणये ४ ज्ञानमुद्राय ५ गीतामृतदुहे ६ । अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीको १ नमस्कार २ सि० है । कैसे हैं श्रीमहाराज*भक्तोंके लिये कल्पवृक्ष ३ सि० है पुनः*छड़ी एक हाथमें है जिनके ४ सि०* ज्ञानमुद्रा है जिनकी, अर्थात् तर्जनी अंगूली से अंगूठा मिलाये हुये अर्जुनको समझाते हैं ५ गीतारूप अमृत दुहा है जिन्होंने ६ ॥ ३ ॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः ।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥ ४ ॥

सर्वोपनिषदः १ गावः २ दोग्धा ३ गोपालनन्दनः ४ पार्थः ५ वत्सः ६ सुधीः ७ भोक्ता ८ दुग्धम् ९ गीतामृतम् १० महत् ११ । अ० सब उपनिषद् १ गौ अर्थात् गौकी सदृश हैं २ दुहनेवाले ३ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी ४ अर्जुन ५ बच्छा ६ सुन्दर बुद्धिवाला ७ पीनेवाला ८ दूध ९ गीतारूप अमृत १० सि० कैसा है यह* बड़ा ११ । तात्पर्य—श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीने सब उपनिषदोंका सार अर्जुनको निमित्त करके शुद्धान्तःकरणवालोंके लिये कहा है. गीताजीका अर्थ जानकर फिर सन्देह नहीं रहता. इस वास्ते महत् विशेषण है और फिर शरीर धारण नहीं करता गीतापाठी, इसवास्ते अमृत विशेषण है ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् ।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥ ५ ॥

कृष्णम् १ वन्दे २ जगद्गुरुम् ३ वसुदेवसुतम् ४ देवम् ५ कंसचाणूरमर्दनम् ६ देवकीपरमानन्दम् ७ । अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीको १ नमस्कार करता हूं मैं २ सि० कैसे हैं श्रीमहाराज*जगत् के गुरु ३ वसुदेवजी के पुत्र ४ ज्ञानस्वरूप अथवा दीप्तिमान् मूर्तिवाले ५ कंस-चाणूरके मारनेवाले ६ देवकीजीको परमानन्दके देनेवाले ७ । श्लोकमें अवस्थाका ध्यान है ॥ ५ ॥

भीष्मद्रोणतटा जयद्रथजला गान्धारनीलोत्पला ।
शल्यग्राहवती कृपण वहनी कर्णेन वेलाकुला ॥
अश्वत्थामविकर्णघोरमकरा दुर्योधनावर्तिनी ।
सोत्तीर्णा खलु पाण्डवैः कुरुनदी कैवर्तके केशवे ॥ ६ ॥

केशवे १ केवर्त्तके २ खलु ३ पाण्डवैः ४ सा ५ कुरुनदी ६ उत्तीर्णा ७ भीष्म-द्रोणतटा ८ जयद्रथजला ९ गान्धारनीलोत्पला १० शल्यग्राहवती ११ कृपेण १२ वहनी १३ कर्णेन १४ वेलाकुला १५ अश्वत्थामाविकर्णघोरमकरा १६ दुर्योधनावर्तिनी १७ । अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी १ मल्लाहहुये सन्ते २ अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र मल्लाह होने-सेही १ । २ निश्चय ३ पाण्डवोंने ४ सो ५ कुरुनदी ६ उतरी ७ अर्थात् पाण्डवोंने कुरुवंशी दुर्योधनादिको जीता ७ सि० कैसी है वह नदी*भीष्म और द्रोणाचार्य्य किनारे हैं जिसके ८ जयद्रथ है जल जिसमें ९ गांधारीके पुत्र नीले कमल हैं जिसमें १० शल्य-ग्राह है जिसमें ११ कृपाचार्य करके १२ बहनेवाली १३ कर्ण करके १४ वेल व्याप्त हो रही है जिसमें १५ अश्वत्थामा और विकर्ण ये घोर मकर हैं जिसमें १६ दुर्योधन चक्र है जिसमें १७ । तात्पर्य्य, श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी पाण्डवोंके सहाय करनेवाले थे, तब पाण्डवों ने कौरवोंको जीता ॥ ६ ॥

पाराशर्यवचःसरोजममलं गीतार्थगन्धोत्कटं ।
नानाख्यानककेसरं हरिकथासम्बोधनाबोधितम् ॥
लोके सज्जनषट्पदैरहरहः पेपीयमानं मुदा ।
भूयाद्भारतपङ्कजं कलिमलप्रध्वंसि नः श्रेयसे ॥ ७ ॥

भारतपङ्कजम् १ नः २ श्रेयसे ३ भूयात् ४ कलिमलप्रध्वंसि ५ पाराशर्य्यवचःसरो-जम् ६ अमलं ७ गीतार्थगन्धोत्कटं ८ नानाख्यानककेसरम् ९ हरिकथासम्बोधनाबोधितम् १०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोके ११ सज्जनषट्पदैः १२ मुदा १३ अहरहः १४ पेपीयमानम् १५ । अ० भारतरूप कमल १ हमारे २ कल्याण के अर्थ ३ हो ४ अर्थात् हमारा भला करो २ ३ । ४ सि० कैसा है सो भारतकमल * कलियुगके पापोंका नाश करनेवाला ५ व्यासजीके वचनरूप सरमें जमा है ६ सि० पुनः * निर्मल ७ गीताका जो अर्थ सोई उत्कट तीव्र गन्ध है जिसमें ८ नाना भांति भांतिकी तरह तरहकी कथाके सर हैं जिसमें ९ हरिकथा सम्बोधनों करके जाग रहा है १० अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी कथाका जो ज्ञान समझना उस करके खिला हुआ है * जगत्में ११ सज्जनरूप भ्रमर १२ आनन्दपूर्वक १३ दिनदिन प्रति नित्य १४ सि० उस कमलके रसको*पीते हैं १५ । तात्पर्य, जिस महाभारतमें भगवत्सम्बन्धी कथा हैं और जिसके बीचमें श्रीभगवद्गीता विराजमान है, जिसको श्रेष्ठ लोग पढ़ते-सुनते हैं आनन्दसहित, ऐसा निर्दोष महाभारत हमारा भला करो ॥ ७ ॥

मूकं करोति वाचाऽलं पंगुं लङ्घयते गिरिम् ॥
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥ ८ ॥

अहम् १ तम् २ परमानन्दमाधवम् ३ वन्दे ४ यत्कृपा ५ मूकम् ६ वाचा ७ अलम् ८ करोति ९ पंगुम् १० गिरिम् ११ लंघयते १२ अ० मैं १ तिन २ परमानन्दस्वरूप लक्ष्मीजीके पतिको ३ नमस्कार करता हूं ४ जिनकी कृपा ५ गूंगेको ६ वाणी करके ७ पूर्ण ८ कर देती है ९ अर्थात् जिनकी कृपासे गूंगा तरह तरहके शब्द बोलने लगता है, सि० और * पङ्गु १० पहाड़ ११ उल्लंघ जाता १२ अर्थात् जिनकी कृपा लँगडेको पर्वत उल्लंघन करा देती है ॥ ८ ॥

यं ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै-
र्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ॥
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥ ९ ॥

॥ इति ध्यानम् ॥

ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः १ दिव्यैः २ स्तवैः ३ यम् ४ स्तुन्वन्ति ५ सामगाः ६ साङ्गपदक्रमोपनिषदैः ७ वेदैः ८ यम् ९ गायन्ति १० योगिनः ११ ध्यानावस्थिततद्गतेन १२ मनसा १३ यम् १४ पश्यन्ति १५ सुरासुरगणाः १६ यस्य १७ अन्तं १८ न १९ विदुः २० तस्मै २१ देवाय २२ नमः २३ । अ० ब्रह्मा, वरुण,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्द्र, रुद्र, मरुत्, देवता १ दिव्य २ स्तोत्रोंकरके ३ जिसकी ४ स्तुति करते हैं ५ सामवेदके गानेवाले ६ अङ्ग और पद-क्रमके सहित जो उपनिषद् हैं उन उपनिषदों के ७ सहित वेदोंकरके ८ जिनको ९ गाते हैं १० योगी ११ ध्यानमें मनको ठहरायका तद्गत १२ मन करके अर्थात् परमेश्वरमें मन प्राप्त करके अर्थात् लगाकर १३ जिनको १४ देखते हैं १५ देवता और असुरोंके गण १६ जिनके १७ अन्तको १८ नहीं १९ जानते हैं २० उन २१ देवताके अर्थ २२ नमस्कार २३ स्वि० है. जिस देवताको नमस्कार है सो एक है. बहुवचन यहां और आगे पिछेभी आदरार्थ जानना चाहिये ॥ ९ ॥

सब प्रकारकी पुस्तकें मिलनेका पताः—

हरिप्रसाद भगीरथजी,

कालिकादेवी रोड, रामवाडी-मुंबई.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

श्रीमद्भगवद्गीताप्रारंभः ॥

॥ प्रथमोऽध्यायः ॥

धृतराष्ट्रवाउच—

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥ १ ॥

धृतराष्ट्र १ उवाच २ अ० धृतराष्ट्र १ बोलताभया २ अर्थात् राजा धृतराष्ट्र संजयसे यह बोला १ । २ संजय १ मामकाः २ च ३ पाण्डवाः ४ एव ५ धर्मक्षेत्रे ६ कुरुक्षेत्रे ७ समवेताः ८ युयुत्सवः सन्तः ९ किम् १० अकुर्वत ११ ॥ १ ॥ अ० हे संजय १ मेरे पुत्रादि (दुर्योधनादि) २ और ३ पांडुके पुत्रादि पांडु (युधिष्ठिरादि) ४ [पू० ५ पादपूर्णार्थ यह एव पद है] ५ धर्मभूमि ६ कुरुक्षेत्रमें ७ इकट्ठे होकर ८ युद्धकी इच्छा-वाले ९ क्या १० करतेभये ११ अर्थात् लड़ाईहुई वा एकत्री होगई ॥ १०। ११ ॥ तात्पर्य—राजा धृतराष्ट्र नेत्रहीन था इस वास्ते लड़ाई में नहीं गयाथा संजय राजाका सारथी राजा के पास रहा उसको व्यासजी ने यह वरदान दे दियाथा. कि जो व्यवस्था कुरुक्षेत्र में होगी उसकी तुम इसी जगह बैठे हुये साक्षात् देखोगे जो जो व्यवस्था कुरुक्षेत्र में हुई वह सब संजयने राजा धृतराष्ट्र से कही इस हेतु से गीता में राजा धृतराष्ट्र और संजय का भी संवाद है ये दोनों हस्तिनापुर में रहे अर्थात् श्रीकृष्णार्जुन के संवाद को संजय ने धृतराष्ट्र से निरूपण किया है ॥ १ ॥

---

१ राजाकी शंशय अयोग्य थी क्योंकि राजा धृतराष्ट्र जानतेथे कि लड़ाई ही होगी. तौभी धर्मक्षेत्रे इस विशेषणसे जाना जाता है कि कुरुक्षेत्रमें जाकर धर्मसे प्रेरित होकरके दुर्य्योधन उन युधिष्ठिरादिकोंको उनके पिता राज्य प्रसन्नतासे दे दे । इससे राजा धृतराष्ट्रका प्रश्न असंगत नहीं है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संजयउवाच—

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा ।
आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

संजयः १ उवाच २ अ० संजय १ अर्थात् धुतराष्ट्रसे बोला २ तदा १ राजा २ दुर्योधनः ३ व्यूढम् ४ पाण्डवाकम् ५ दृट्वा ६ तु ७ आचार्यम् ८ उपसंगम्य ९ वचनम् १० अब्रवीत् ॥ ११ ॥ २ ॥ अ० सि० जिसकालमें दोनों सेना सजकर युद्धके लिये आमने सामने खड़ी हुई उसीकालमें १ राजा २ दुर्योधन ३ सि० चक्र कमलाकारादि रची हुई ४ पाण्डवोंकी सेनाको ५ देखकर ६ फिर ७ गुरुके ८ पास जाकर ९ सि० यह ❀ वचन १० बोला ११ सि० कि जो आगे नव श्लोकों में अर्थ है ❀ टी० द्रोणाचार्य शस्त्रविद्या के गुरु हैं ८ तात्पर्य—दुर्योधन पाण्डवोंकी सेनाको भले प्रकार सजी हुई देखकर मनमें डरा और यह जाना कि जहां यह रचना है तो फिर ये कैसे जीते जावेंगे, जो हमारे गुरु इससे सिवाय रचना रचे तब भलाई की बात है इस वास्ते राजा गुरुके पास जाकर बोला ॥ २ ॥

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् ।
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥ ३ ॥

आचार्य्य १ पाण्डुपुत्राणाम् २ एताम् ३ महतीम् ४ चमूम् ५ पश्य ६ धीमता ७ तव ८ शिष्येण ९ द्रुपदपुत्रेण १० व्यूढां रचिताम् ११ ॥ ३ ॥ अ० हे गुरो ! १ पांडवोंकी २ इस ३ बड़ी ४ सेनाको ५ देखो ६ बुद्धिमान् ७ आप के ८ शिष्य ९ द्रुपद के पुत्रने १० रची[1] है ११ तात्पर्य्य—आपका शिष्य होकर आपका सामना करताहै यह देखिये ॥ ३ ॥ उ० और इस सेनामें जो शूरवीर हैं उन को भी देख लीजिये क्योंकि यथायोग्य जोड़ी के साथ लड़ना चाहिये ॥

---

१ शकटाकार, पद्माकार, चक्राद्याकार से रची हुई ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः॥ ४॥

अत्र १ शूराः २ महेष्वासाः ३ युधि ४ भीमार्जुनसमाः ५ युयुधानः ६ विराटः ७ च ८ द्रुपदः ९ च १० महारथः ११॥ ४॥ अ० इसमें अर्थात इस सेनामें १ सि० जो ❋ शूर २ सि० है ❋ बड़े बड़े धनुषहैं जिन के ३ युद्धमें ४ भीम अर्जुनकी बराबर ५ सि० नाम उनके यहहैं ❋ युयुधान ६ और विराट ७।८ और द्रुपद ९।१० सि० महारथः यह सबका विशेषण है कैसे है ये ❋ महारथः ११ सि० असंख्यात शस्त्रधारियों से जो युद्ध करे और अस्त्र शस्त्र विद्यामें चतुर हो उसको अतिरथ कहते हैं और जो दश सहस्र से अकेला युद्ध करे उसके महारथ कहतेहैं और जो एकसे एक लड़े उसको रथी करते हैं, इससे कमको अर्द्धरथी कहते हैं ❋ ११॥ ४॥

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्।
पुरुजित कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुंगवः॥ ५॥

धृष्टकेतुः १ चेकितानः २ काशिराजः ३ च ४ वीर्यवान् ५ पुरुजित् ६ कुन्तिभोजः ७ च ८ शैब्यः ९ च १० नरपुङ्गवः ११॥ ५॥ अ० धृष्टकेतु १ चेकितान २ और काशीका राजा ३।४ सि० कैसे हैं ये ❋ बलवान् ५ सि० यह सब का विशेषण है ❋ पुरुजित् ६ कुन्तिभोज ७।८ और शैब्य ९।१० सि० कैसे हैं ये ❋ पुरुषों में उत्तम ११ सि० यह तीनोंका विशेषण है ❋ ११॥ ५॥

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान्।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः॥ ६॥

युद्धामन्युः १ च २ विक्रान्तः ३ उत्तमौजाः ४ च ५ वीर्य्यवान् ६ सौभद्रः ७ द्रौपदेयाः ८ च ९ सर्वे १० एव ११ महारथाः १२॥ ६॥ अ० युधामन्यु १ [पू० २] सि० कैसाहै यह ❋ तेजस्वी सुन्दर ३ और उत्त-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मौजा ४।५ बलवान् ६ अभिमन्यु ७ और द्रौपदी के पांचोपुत्र ८।९ सि० ये❋सब १० ही ११ महारथ १२ सि० हैं❋ ॥ ६ ॥

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम ।
नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥ ७ ॥

द्विजोत्तम १ अस्माकम् २ ये ३ विशिष्टाः ४ मम ५ सैन्यस्य ६ नायकाः ७ तान् ८ तु ९ निबोध १० ते ११ संज्ञार्थम् १२ तान् १३ ब्रवीमि १४ ॥ ७ ॥ अ० हे ब्राह्मणों में उत्तम ! १ हमारी २ सि० सेनामें❋जो ३ श्रेष्ठ ४ सि० हैं और❋मेरी ५ सेनाके ६ सि० जो सरदार अग्रणी ७ तिनको ८ भी ९ देखिये १० आप से ११ भलेप्रकार जान लेने के लिये १२ तिनको १३ अर्थात् तिनके नाम कहता हूं मैं. टी० अगले श्लोक में❋ १४ तात्पर्य्य—युद्ध से प्रथमही भलेप्रकार इनको समझ लेना चाहिये. युद्ध करने के वास्ते ॥ ७ ॥

भवान् भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः ।
अश्वत्थामाविकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ॥ ८ ॥

भवान् १ भीष्मः २ च ३ कर्णः ४ च ५ कृपः ६ च ७ समितिंजयः ८ अश्वत्थामा ९ विकर्णः १० च ११ सौमदत्तिः १२ तथा १३ एव १४ च १५ ॥ ८ ॥ अ० आप १ और भीष्म जी २।३ और कर्ण ४।५ और कृपाचार्य्य ६, ७ समितिंजय ८ अश्वत्थामा ९ और विकर्ण १०।११ सौमदत्ति १२ तैसे १३ ही १४ और १५ सि० भी बहुत शूरवीर हैं❋॥ ८ ॥

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्त जीविताः ।
नाना शस्त्रप्रहरणः सर्वे युद्धविशारदाः ॥ ९ ॥

अन्ये १ च २ बहवः ३ शूराः ४ मदर्थे ५ त्यक्तजीविताः ६ नाना ७ शस्त्रप्रहरणः ८ सर्वे ९ युद्धविशारदाः १० ॥ ९ ॥ अ० सि० जिनके नाम पीछे कहे उन्होंसे सिवाय❋और १ भी २ बहुत ३ शूर ४ सि० हैं हमारी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सेना में जिन्होंने ❋ मेरे वास्ते ५ त्याग दी है आशा जीवने की ६ अनेक प्रकार के ७ शस्त्र चलानेवाले ८ सब ९ युद्ध में चतुर १० सि० हैं ❋ ॥ ९ ॥ उ० इस कथा कहने से राजा दुर्योधन का जो आशय है सो कहता है ॥

अपर्य्याप्तम्तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् ।
पर्याप्तन्त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् ॥ १० ॥

तत् १ अस्माकम् २ बलम् ३ अपर्याप्तम् ४ भीष्माभिरक्षितम् ५ इदम् ६ तु ७ एतेषाम् ८ बलम् ९ पर्य्याप्तम् १० भीमाभिरक्षितम् ११ ॥ १० ॥ अ० सि० पीछे जो कहा ❋ सो १ हमारा २ बल ३ सि० पाण्डवन के साथ लड़नेको ❋ असामर्थ्य है वा बहुत है ४ सि० क्योंकि ❋ भीष्मजी करके रक्षा किया गया है ५ अर्थात् भीष्मजी हमारे बलकी रक्षा करने वाले हैं कैसे हैं भीष्मजी वृद्ध होने से सूक्ष्मबुद्धिवाले (चतुर) हैं ५ सि० और ❋ यह ६ पू० ७ इनका ८ बल ९ अर्थात् पीछे जो कहा पाण्डवोंका बल ९ सि० सो हमारे साथ लड़ने को ❋ असमर्थ वा थोड़ा है १० सि० क्योंकि संख्या में भी कम है और चंचल बुद्धिवाले ❋ भीम करके रक्षित है ११ अथवा हमारा बल पाण्डवनके साथ लड़ने को असमर्थ प्रतीत होता है. क्योंकि भीष्मजी सेनापति वृद्ध हैं और वे उभयपक्षी हैं (दोनों तरफ मिलेहुये हैं) भीष्मजी प्रत्यक्ष तो हमारी तरफ हैं और श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके लिये जय पाण्डवों की चाहते हैं और पाण्डवों का बल हमारे जीतने को समर्थ प्रतीत होता है क्योंकि भीम बलवान् जवान एक पक्षवाला सेना का सरदार है सिवाय इसके श्रीकृष्णचन्द्र उनकी सहाय करने वाले हैं ❋ टी० ४ ।१० इनदोनों पदोंका अर्थ बहुत और थोड़ा वा समर्थ और असमर्थ दोनों प्रकारका होसक्ता है जो पहले पदका अर्थ थोड़ा वा असमर्थ किया जावेगा तो पिछले पदका अर्थ बहुत वा समर्थ किया जावेगा और जो पहले पदका अर्थ बहुत वा समर्थ किया जावेगा तो पिछले पदका अर्थ थोड़ा वा असमर्थ किया जावेगा ४ । १० ॥ १० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः ।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि ॥ ११ ॥

भवन्तः १ सर्वे २ एव ३ हि ४ सर्वेषु ५ च ६ अयनेषु ७ यथाभागम् ८ अवस्थिताः ९ भीष्मम् १० एव ११ अभिरक्षन्तु १२ ॥ ११ ॥ अ० सि० मेरी प्रार्थना आपसे यह है कि ❀ आप १ सब २ [पू० ३] हि ४ सब ५ [पू० ६] मुर्चों में ७ अपने अपने ठिकाने पर ८ खड़ेहुये ९ भीष्मजीकी १० [पू० ११] सब तरफसे रक्षा करते रहिये १२ तात्पर्य—ऐसा न हो कोई भीष्मजीको धोखेसे मारजावे उनके जीते रहनेसे हमारा भला है अथवा ऐसा न हो कि भीष्मजी पांडवोंसे मिलकर हमारी सेना मरवादें क्योंकि भीष्मजी दुपक्षी प्रतीत होते हैं इसवास्ते नित्य उनकी रक्षा करते रहना ॥ ११ ॥ उ० राजा दुर्योधनको द्रोणाचार्यजीसे बात करता हुआ देख भीष्मजीने जाना कि राजाको हमारी तरफसे कुछ खटका प्रतीत होता है. इसवास्ते पांडवोंसे लड़नेके लिये भीष्मजीने उठकर शंख बजादिया ॥

तस्य संजनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः ।
सिंहनादं विनद्योच्चैः शंखं दध्मौ प्रतापवान् ॥१२॥

कुरुवृद्धः १ प्रतापवान् २ पितामहः ३ उच्चैः ४ सिंहनादम् ५ विनद्य ६ तस्य ७ हर्षम् ८ सञ्जनयन् ९ शंखम् १० दध्मौ ११ ॥ १२ ॥ अ० कुरुओं में बड़े १ प्रतापवाले २ भीष्मजी ३ ऊंचा ४ सिंहशब्दवत् ५ शब्द करके अर्थात् बहुत हँसकर ६ तिसको अर्थात् राजाको ७ हर्ष उत्पत्ति करते हुये ८ अर्थात राजाको प्रसन्न करनेके लिये ९ शंख १० बजाते भये ११. टी० प्रतापवत् यदि यह पाठ हो तो शंखकाभी विशेषण हो सक्ता है २ तात्पर्य—प्रथम भीष्मजीने प्रतापवाला शंख बजाया ॥ १२ ॥

ततः शंखाश्च भेर्यश्च पणवानक गोमुखाः ।
सहसैवाभ्यहन्यन्त सशब्दस्तुमुलोऽभवत् ॥ १३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ततः १ शंखा २ च ३ भेर्यः ४ च ५ पणवानकगोमुखाः ६ सहसा ७ एव ८ अभ्यहन्तन्त ९ सः १० शब्दः ११ तुमुलः १२ अभवत ॥ १३ ॥ अ० पीछेउसके १ शंख २ और ३ नगारे ४ और ५ ढोल आनक गोमुख ६ एक वेर ७ ही ८ सि० राजा दुर्योधन की सेना में ❋ सब तरफसे बजते भये ९ सो १० शब्द ११ उस समय बड़ा १२ होता भया १३ तात्पर्य–जिस समय प्रथम भीष्मजीने शंख बजाया पीछे उससे नाना प्रकारके बाजे बाजने लगे ❋ टी० यह बाजोंके नाम हैं ६ ॥ १३ ॥

ततःश्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवःपाण्डवश्चैव दिव्यौ शंखौ प्रदध्मतुः ॥ १४ ॥

ततः १ माधवः २ पाण्डवः ३ च ४ एव ५ दिव्यौ ६ शंखौ ७ प्रदध्मतुः ८ महति ९ स्यन्दने १० स्थितौ ११ श्वेतैः १२ हयैः १३ युक्ते ॥ १४ ॥ १४ ॥ अ० उ० जब राजा दुर्योधन की सेना में शंखादि बाजे बजे पीछे उसके १ सि० राजा युधिष्ठिर की सेना में प्रथम ❋ श्रीकृष्णचन्द्र महाराज २ और अर्जुन ३,४ भी ५ दिव्य अलौकिक ६ शंखोंको ७ बजाते भये ८ सि० कैसे हैं अर्जुन और श्रीमहाराज कि एक ❋ बड़े ९ रथमें १० सवारहैं ११ सि० कैसा है वह रथ ❋ श्वेत १२ घोड़ों करके १३ युक्त १४ सि० है अर्थात् श्वेत घोड़े उस रथमें जुड़े हुये हैं ❋ ॥ १४ ॥

पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनंजयः।
पौण्ड्रं दध्मौ महाशंखं भीमकर्मा वृकोदरः ॥ १५ ॥

हृषीकेशः १ पाञ्चजन्यम् २ धनञ्जयः ३ देवदत्तम् ४ वृकोदरः ५ भीम कर्मा ६ पौण्ड्रम् ७ महाशंखम् ८ दध्मौ ९ ॥ १५ ॥ अ० उ० जिन शंखों को माधवादि ने बजाया उनके नाम कहते हैं ❋ इन्द्रियों के स्वामी श्रीकृष्णचन्द्र महाराज १ पाञ्चजन्य नामवाले २ सि० शंख को बजाते भये ❋ अर्जुन ३ देवदत्त नामा ४ सि० शंखको बजाते भये ❋ भीम ५ भयंकर कर्म है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिसका ६ सि० सो❋पौण्ड्र नाम है जिसका ७ सि० उस महाशंख को ८ बजाता भया ९ तात्पर्य्य—श्रीमहाराज ने पाञ्चजन्य शंख बजाया अर्जुन ने देवदत्त शंख बजाया भीमने पौण्ड्र शंख बजाया ॥ १५ ॥

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ।
नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥

कुन्तीपुत्रः १ राजा २ युधिष्ठिरः ३ अनन्तविजयम् ४ नकुलः ५ च ६ सहदेवः ७ सुघोषमणिपुष्पकौ ८ ॥ १६ ॥ अ० कुन्तीकेपुत्र १ राजा २ युधिष्ठिर ३अनन्तविजयनामा४ सि० शंखको बजातेभये नकुल ५ और ६ सहदेव७ सुघोष और मणिपुष्पक शंख को ८ सि० बजातेभये❋राजा ने अनन्तविजय शंख बजाया. नकुल ने सुघोष शंख बजाया. सहदेवने मणिपुष्पक शंख बजाया ॥ १६ ॥

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः ।
धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥ १७ ॥

काश्यः १ च २ परमेष्वासः ३ शिखण्डी ४ च ५ महारथः ६ धृष्टद्युम्नः ७ विराटः ८ च ९ सात्यकिः १० च ११ अपराजितः १२ ॥ १७ ॥ अ० काशीका राजा १ पू० २ श्रेष्ठ है धनुष जिसका ३ और शिखण्डी ४ । ५ महारथ ६ धृष्टद्युम्न ७ और विराट ८ । ९ और सात्यकी १० । ११ सि० कैसे हैं यह तीनों❋अपराजित १२ सि० हैं❋टी० न जीतसके दूसरा जिसको उसे अपराजित कहते हैं १२ तात्पर्य—ये सब पृथक् २ अपना २ शंख बजाते भये. इस श्लोकका अन्वय अगले श्लोक के साथ है ॥ १७ ॥

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते ।
सौभद्रश्च महाबाहुः शंखान्दध्मुः पृथक् पृथक्॥१८॥

पृथिवीपते १ द्रुपदः २ द्रौपदेयाः ३ च ४ सौभद्रः ५ च ६ महाबाहुः७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वशः ८ पृथक् ९ पृथक् १० शंखान् ११ दध्मुः १२ ॥ १८ ॥ अ० उ० संजय धृतराष्ट्र से कहता है❋हे राजन्! १ द्रुपद २ और द्रौपदीके पांचों पुत्र ३। ४ और अभिमन्यु ५। ६ बड़ी हैं भुजा जिसकी ७ सि० ये सब और जो पीछे कहे❋सब तरफ से ८ पृथक् पृथक् ९। १० सि० अपने अपने❋शंखों को ११ बजाते भये १२ ॥ १८ ॥

सघोषो धार्त्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत्।
नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन्॥ १९ ॥

सः १ घोषः २ धार्तराष्ट्राणाम् ३ हृदयानि ४ व्यदारयत् ५ नभः ६ च ७ पृथिवीं ८ च ९ एव १० तुमुलः ११ व्यनुनादयन् १२ ॥ १९ ॥ अ० सो १ घोष २ दुर्योधनादि के हृदय को ३ फाड़ता भया ४ अर्थात् दुर्योधनादि उस शब्द को सुनकर डरे. मारे डरके उनका हृदय कँपनेलगा, मानो फटनेलगा ५ आकाश ६ और ७ पृथ्वीको व्याप्तकरके अर्थात् आकाश पृथ्वी ८ में व्याप्त होकर❋[पू० ९। १०]बहुत ११ शब्दपर शब्द होता हुआ १२ सि० दुर्योधनादि के हृदय को फाड़ताभया❋तात्पर्य-पृथ्वीसे लेकर आकाशपर्यन्त वह शब्द व्याप्त होगया ॥ १९ ॥

अथ व्यवस्थितान् दृष्ट्वा धार्त्तराष्ट्रान् कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः॥ २० ॥
हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते॥

अर्जुन उवाच—

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत॥ २१ ॥

अथ १ कपिध्वजः २ धार्तराष्ट्रान् ३ व्यवस्थितान् ४ दृष्ट्वा ५ शस्त्रसम्पाते ६ प्रवृत्ते ७ पाण्डवः ८ धनुः ९ उद्यम्य १० ॥ २० ॥ महीपते १ तदा २ हृषीकेशम् ३ इदम् ४ वाक्यम् ५ आह ६ अर्जुनउवाच

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अच्युत ७ मे ८ रथम् ९ उभयोः १० सेनयोः ११ मध्ये १२ स्थापय १३ ॥ २१ ॥ अ० उ० बीसवें श्लोकका इक्कीसवें श्लोकके साथ सम्बन्ध है ❋ शंखादि का शब्द सुनकर जो व्यवस्था दुर्योधनादि की हुई सो तो कही और वोही शब्दसुनकर अर्जुन ने जो किया सो कहता है संजय धृतराष्ट्र से ❋ जब दोनों तरफ बाजा बजने लगा ❋ पीछे उसके १ अर्जुन २ दुर्योधनादि को ३ भलेप्रकार खड़ेहुये ४ देखकर ५ शस्त्रों का चलना ६ प्रवृत्त हुआ चाहता था अर्थात् हथियार चलाही चाहते थे उस समय ७ अर्जुन ८ धनुषको ९ उठाकर १० अर्थात् तीर कमान दुरुस्त करिकै सँवारिकै १० टी० हनुमानजी अर्जुन की ध्वजा में रहते थे इस व्युत्पत्ति से अर्जुन का नाम कपिध्वज है ॥ २० ॥ हे राजन् धृतराष्ट्र ! १ सि० जिस कालमें हथियार चलाने वाले थे ❋ तिस कालमें २ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजसे ३ यह ४ वाक्य ५ बोला ६ अर्जुन बोला ❋ हे अच्युत ! ७ मेरे ८ रथको ९ दोनों १० सेनाके ११ बीचमें १२ खड़ा करो १३ टी० भक्तिका प्रताप देखना चाहिये कि भक्त भगवान्पर आज्ञा करते हैं और जो भक्त चाहते हैं बैसाही श्रीभगवान्, करते हैं १३ ॥ २१ ॥

यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान् ।
कैर्मयासहयोद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे ॥ २२ ॥

एतान् १ योद्धुकामान् २ अवस्थितान् ३ यावत् ४ अहम् ५ निरीक्षे ६ अस्मिन् ७ रणसमुद्यमे ८ मया ९ कैः १० सह ११ योद्धव्यम् १२ ॥ २२ ॥ उ० कब तक वहां रथ खड़ा किया जावे यह शंका करके कहता है अर्जुन कि ❋ अ० ये जो युद्धकी कामना वाले खड़ेहुये हैं इनको १ । २ । ३ जब तक ४ मैं ५ देखूं ६ अर्थात् यह मैं देखा चाहता हूं कि ६ इस रणके प्रारंभ समय ७ । ८ मुझको ९ किनके १० साथ ११ युद्ध करना योग्यहै १२ तात्पर्य—अर्जुन का तमाशा देखने में नहीं है १२ ॥ २२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रिय चिकीर्षवः॥ २३॥

योत्स्यमानान् १ अहम् २ अवेक्ष्य ३ ये ४ एते ५ अत्र ६ युद्धे ७ समागताः ८ दुर्बुद्धेः ९ धार्तराष्ट्रस्य १० प्रियचिकीर्षवः ११ ॥ २३ अ० सि० इन❋युद्धकरनेवालोंको १ मैं २ देखूं ३ सि० तौकि❋ये ४ जो ५ इस युद्धमें ६। ७ आये हैं ८ सि० कैसे हैं ये❋दुर्बुद्धि दुर्योधन की ९। १० जय चाहते हैं ११ ॥ २३ ॥

संजय उवाच—

एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम्॥ २४॥
भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थ पश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति॥ २५॥

भारत १ गुडाकेशेन २ एवम् ३ उक्तः ४ हृषीकेशः ५ उभयोः ६ सेनयोः ७ मध्ये ८ भीष्मद्रोणप्रमुखतः ९ सर्वेषाम् १० च ११ महीक्षिताम् १२ रथोत्तमम् १३ स्थापयित्वा १४ इति १५ उवाच १६ पार्थ १७ एतान् १८ समवेतान् १९ कुरून् २० पश्य २१ ॥ २४ ॥ २५ ॥ अ० सि० इन दोनों श्लोकों का अन्वय एक है❋संजय धृतराष्ट्रसे कहता है❋हे राजन्! १ अर्जुन करके २ इस प्रकार ३ कहे हुये ४ श्रीभगवान् ५ अर्थात् अर्जुन ने श्रीभगवान् से जब यह कहा कि मेरा रथ दोनों सेनाके बीचमें खड़ा कीजिये यह सुनकर श्रीभगवान् ५ दोनों सेनाके ६। ७ बीचमें ८ भीष्म और द्रोणाचार्य्यके सामने ९ और सब राजोंके १०। ११। १२ सि० सामने❋उत्तम रथको १३ खड़ा करके १४ यह १५ बोले हे

---

१ अंगुष्ठ और तर्जनीके योगको गुड़ा कहते हैं। गुड़ाकी समान हों केश (बाल) जिसके वह गुड़ाकेश कहाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्जुन! १७ इन १८ मिलेहुये १९ कौरवों को २० देख २१ तात्पर्य्य—ये सब योद्धा प्रत्यक्ष हैं इनको तू देख ॥ २४ । २५ ॥

तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः पितॄनथ पितामहान्। आचार्यान्मातुलान्भ्रातॄन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा॥२६॥

अथ १ पार्थः २ तत्र ३ पितॄन् ४ स्थितान् ५ अपश्यत् ६ पितामहान् ७ आचार्य्यान् ८ मातुलान् ९ भ्रातॄन् १० पुत्रान् ११ पौत्रान् १२ सखीन् १३ तथा १४ ॥ २६ ॥ अ० सि० ढाई श्लोक तक एक अन्वय है❋ जब श्रीभगवान् ने कहा कि अर्जुन देख इनको❋पीछे उसके १ अर्जुन २ तिस सेनामें ३ चाचा आदिको ५ सि० युद्धकेलिये❋खड़े हुये ४ देखता भया ६ तात्पर्य्य अर्जुन ने चाचा आदिको देखा ६ पितामह को ७ आचार्यों को ८ मामाओं को ९ भाइयों को १० भतीजे आदिकों को ११ पौत्रोंको १२ मित्रोंको १३ सि० जैसे चाचा आदिकों को देखा अर्जुन ने❋तैसेही १४ सि० आचार्यादिकों को देखा❋छठें पदवाली क्रिया का ६ सब कर्मों के साथ सम्बध है ॥ २६ ॥

श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि।
तान्समीक्ष्य स कौन्तेयःसर्वान्बन्धूनवस्थितान् २७
कृपयापरयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत्॥

अर्जुन उवाच—

दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्॥२८॥
सदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते॥२९॥

श्वशुरान् १ सुहृदः २ च ३ एव ४ तान् ५ सर्वान् ६ बन्धून् ७ अवस्थितान् ८ समीक्ष्य ९ उभयोः १० सेनयोः ११ अपि १२ सः १३ कौ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न्तेयः १४ ॥ २७ ॥ परया १ कृपया २ आविष्टः ३ विषीदन् ४ इदम् ५ अब्रवीत् ६ अर्जुनः ७ उवाच ८ कृष्ण ९ इमम् १० स्वजनं ११ युयुत्सुम् १२ समुपस्थितं १३ दृष्ट्वा १४ ॥२८॥ मम १ गात्राणि २ सीदन्ति ३ मुखं ४ च ५ परिशुष्यति ६ वेपथुः ७ च ८ शरीरे ९ मे १० रोमहर्षः ११ च १२ जायते॥२९॥ अ० श्वशुरोंको १ और सुहृदोंको २। ३ भी ४ सि० देखा अर्जुन ने तिन ५ सब ६ सम्बन्धियोंको ७ सि० युद्धमें मरनेके लिये ❀ जमे हुये ८ देख करके ९ सि० वे सब कौनसे हैं इस अपेक्षा में यह कहते हैं कि ❀ दोनों १० ही ११ सेना के १२ सि० सम्बन्धियों को देख करके ❀ सो १३ अर्जुन १४ ॥ २७ ॥ परम कृपा करके १। २ युक्त ३ दुःख में भराहुआ ४ यह ५ बोला ६ सि० जो अध्यायकी समाप्तिपर्य्यंत कहना है ❀ अर्जुन ७ बोलताभया ८ हे कृष्ण ! ९ इन अपने सम्बन्धी युद्धकी इच्छावालोंको १०। ११। १२ सि० रणमें मरने के लिये ❀ स्थित हुये १३ देखकर १४ ॥ २८ ॥ मेरे १ हाथ पांव आदि अङ्ग २ ढीलेहुये जाते हैं ३ और मुख ४। ५ सूखता है ६ मेरे ७ शरीरमें ८ कम्पा ९ और १० रोमावली ११ भी १२ उत्पत्ति होती है १३ ॥ २९ ॥

गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः॥३०॥

हस्तात् १ गाण्डीवम् २ स्रंसते ३ त्वक् ४ च ५ एव ६ परिदह्यते ७ अवस्थातुम् ८ न ९ च १० शक्नोमि ११ मे १२ मनः १३ भ्रमति १४ इव १५ च १६ ॥ ३० ॥ अ० सि० मेरे ❀ हाथ से १ गाण्डीव धनुष २ गिरता है ३ और त्वचा ४। ५ भी ६ सि० मारेशोकके ❀ जलती है ७ सि० इस युद्ध में ❀ खड़ा रहने को नहीं समर्थ हूं मैं ९। १०। ११ मेरा १२ मन १३ सि० ऐसा होरहा है ❀ भ्रमता है १४. तैसे १५। १६ सि० कोई तात्पर्य मेरे मनमें नानाप्रकारके संकल्प विकल्प उत्पन्न होते हैं ॥३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥ ३१ ॥

केशव १ विपरीतानि २ निमित्तानि ३ च ४ पश्यामि ५ आहवे ६ स्वजनम् ७ हत्वा ८ न ९ च १० श्रेयः ११ अनुपश्यामि १२ ॥ ३१ ॥ अ० हे केशव ! १ विपरीत शकुनोंको २ । ३ [पू० ४] देखता हूं मैं ५ सि० इन हेतु से❋युद्ध में ६ अपने सम्बन्धियों को ७ मारकर ८ पीछे कल्याण नहीं देखता हूं मैं ९ । १० । ११ । १२ तात्पर्य्य-अपने सम्बन्धियों को मारकर मुझ को अपना भला नहीं प्रतीत होता है ॥ ३१ ॥

न कांक्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च ।
किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा ॥३२॥

कृष्ण १ विजयं २ न ३ कांक्षे ४ राज्यं ५ सुखानि ६ च ७ न ८ च ९ गोविंद १० राज्येन ११ किं १२ वा १३ भोगैः १४ जीवितेन १५ नः १६ किम १७ ॥३२॥अ० उ० इनको मारकर पीछे तेरी विजय होगी तुझको राज्य मिलेगा सुख होगा यह भला होगा. वा नहीं यह शंका करके कहता है हे कृष्ण! १ विजय २ नहीं ३ चाहताहूं मैं ४ राज्य और सुखको ५ । ६ भी ७ नहीं ८ । ९ सि० चाहताहूं मैं❋हे भगवन् ! १० राज्य करके ११ क्या १२ भोगों करके १३ जीवने करके १४ हमको १५ क्या १६ तात्पर्य-न कुछ राज्य करने में आनन्द है केवल परमानन्दस्वरूप आत्माके यथार्थ जानने में ही परमानन्द है ऐसी समझवाले को विवेकी कहते है ॥ ३२ ॥

येषामर्थे कांक्षितन्नो राज्यं भोगाः सुखानि च ।
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥३३॥

नः १ येषाम् २ अर्थे ३ राज्यम् ४ भोगाः ५ सुखानि ६ च ७ काङ्क्षितम् ८ ते ९ इमे १० युद्धे ११ प्राणान् १२ धनानि १३ च १४ त्यक्त्वा १५ अवस्थिताः १६ ॥ ३३ ॥ अ० हमको १ जिनके २ वास्ते ३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राज्य भोग ४ । ५ सुख की ६ इच्छा है ७ अर्थात् जिनके वास्ते राज्य भोग सुख हम चाहते हैं ८ वे ९ सि० ही ❀ ये १० युद्धमें ११ प्राणों को १२ और धनको १३ । १४ त्यागकर १५ अर्थात् प्राण और धनकी आशा त्याग कर वा प्राण और धन त्यागने के लिये आखड़े हैं १६ ॥ ३३ ॥

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः ।
मातुलाःश्वशुराःपौत्राःश्यालाःसम्बन्धिनस्तथा॥३४॥

आचार्य्याः १ पितरः २ पुत्राः ३ तथा ४ एव ५ च ६ पितामहाः ७ मातुलाः ८ श्वशुराः ९ पौत्राः १० श्यालाः ११ तथा १२ सम्बन्धिनः १३॥ अ० उ० वे ये हैं गुरु १ चाचा आदि २ भतीजे आदि ३ [पू० ४ । ५ । ६] पितामह ७ मामा ८ श्वशुर ९ पौत्र १० साले ११ सि० जैसे ये हैं ❀ तैसेही १२ सि० और ❀ सम्बन्धी १३ सि० हैं ❀॥ ३४ ॥

एतान्नहन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन ।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किन्नु महीकृते ॥ ३५ ॥

एतान् १ घ्नतः २ अपि ३ न ४ हन्तुम् ५ इच्छामि ६ मधुसूदन ७ त्रैलोक्यराज्यस्य ८ हेतोः ९ अपि १० किम् ११ नु १२ महीकृते १३ ॥३५॥ अ० इन मारनेवालों को भी १ । २ । ३ नहीं ४ मारने की ५ इच्छा करता हूं मैं ६ अर्थात् मैं यह जानता हूं कि ये दुर्योधनादि हमको मारैंगे तौ भी इनके मारने की हमको इच्छा नहीं ६ हे कृष्णचन्द्र ! ७ त्रैलोक्यराज्यके ८ हेतुसे ९ भी १० अर्थात् जो इन के मारने में मुझको तीनों लोकोंका राज्य मिले तौ भी इनको नहीं मारूंगा क्या ११ फिर १२ पृथिवी की प्राप्तिके लिये १३ सि० मारूं ? ❀॥ ३५ ॥

निहत्य धार्त्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन ।
पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ॥ ३६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जनार्दन १ धार्तराष्ट्रान् २ निहत्य ३ नः ४ का ५ प्रीतिः ६ स्यात् ७ एतान् ८ आततायिनः ९ हत्वा १० अस्मात् ११ पापम् १२ एव १३ आश्रयेत् १४ ॥ ३६ ॥ अ० हे जनार्दन ! १ दुर्योधनादि को २ मारकर ३ हमको ४ ❋ क्या ५ सुख ६ होगा ७ अर्थात् किंचिन्मात्र भी सुख न होगा ७ सि० प्रत्युत ❋ इन आततायियों को ८ । ९ मारकर १० हमको ११ पापही १२ । १३ आश्रय है १४ अर्थात् उलटा हमको पापही लगेगा १४ टी० अग्निसे जलानेवाला, विष खिलानेवाला, शस्त्र हाथमें लेकर वास्ते मारनेके जो आवे धनका हरनेवाला, खेत मकानादिका हरनेवाला, स्त्रीका हरनेवाला ये छः आततायी कहलाते हैं दुर्योधनादिमें ये सब दोष थे नीतिशास्त्र में लिखा है कि जो आततायी सामने आजावे तो समर्थवान् विना विचार आततायीको मारडाले मारनेवालेको दोष नहीं परन्तु इस वाक्यसे विशेष वाक्य धर्मशास्त्रका यह है कि सदोषको भी नहीं मारना प्रत्युत वाणीसे भी उसको दुःख न देना. न मनमें उसके बुरे करनेका संकल्प करना यही आशय अर्जुनका है ९ ॥ ३६ ॥

तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्त्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान् ।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव ॥ ३७॥

तस्मात् १ स्वबान्धवान् २ धार्त्तराष्ट्रान् ३ हन्तुम् ४ वयम् ५ न ६ अर्हाः ७ माधव ८ स्वजनम् ९ हि १० हत्वा ११ कथम् १२ सुखिनः १३ स्याम १४ ॥ ३७ ॥ अ० उ० किसी जीवमात्रको भी मारना अयोग्य है और यह तो दुर्योधनादि हमारे सम्बन्धी है ❋ तिस कारणसे १ अपने सम्बन्धी दुर्योधनादिके २।३ मारनेको ४ हम ५ नहीं योग्य हैं ६ । अर्थात् इस योग्य हम नहीं कि अपनेही सम्बधियोंको मारैं ७ हे कृष्णचन्द्र ! ८ अपने सम्बधियों ९ ही को १० मारकर ११ किसप्रकार १२ सुखी १३ होंगे १४ अर्थात् अपने सम्बधियोंको मारकर हमको किसी प्रकारभी सुख न होगा १५ ॥ ३७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम् ॥ ३८ ॥
कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्त्तितुम्।
कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन ॥ ३९ ॥

यद्यपि १ एते २ कुलक्षयकृतम् ३ दोषम् ४ मित्रद्रोहे ५ च ६ पातकम् ७ न ८ पश्यन्ति ९ लोभो पहतचेतसः १० ॥ ३८ ॥ जनार्दन १ कुलक्षयकृतम् २ दोषम् ३ प्रपश्यद्भिः ४ अस्माभिः ५ अस्मात् ६ पापात् ७ निवर्तितुम् ८ कथम् ९ न १० ज्ञेयम् ११ ॥ ३६ ॥ अ० उ० जिस पापका तू विचार करताहै यह ज्ञान दुर्योधनादिकोभी है वा नहीं यह शङ्काकरके कहताहै ❋ यद्यपि १ ये २ सि० दुर्योधनादि ❋ कुलके क्षय करने में नाश करने में जो दोषहै उसको ३। ४ और मित्रके द्रोहमें जो पातकहै उसको ५। ६। ७ नहीं ८ देखते हैं ९ सि० क्योंकि ❋ लोभ करके मैला होगया अंतःकरण जिनका १० तात्पर्य—दुर्योधनादिका अंतःकरण लोभ करके मैला होगया इस हेतुमे वे इन दोनों पातकों को नहीं समझते हैं सो वे यद्यपि नहीं समझते हैं तो मत समझो ॥३८॥ सि० परन्तु ❋ हे कृष्णजन्द्र ! कुलक्षयकृत दोषके २। ३ देखनेवाले हमने ४। ५ इस पाप से ६। ७ निवृत्त होनेको ८ किस प्रकार ९ नहीं १० जानना योग्यहै ११ तात्पर्य—कुलके नाश करने में और मित्रके द्रोहमें जो दोषहै उसको हम आपकी कृपासे ज्ञानचक्षु करके देखते समझते हैं हे भगवन् ! देख समझकर भी इस पापसे हम क्यों न बचें अर्थात् इस पापसे निवृत्त होना चाहिये यह हमको जानना योग्यहै ॥ ३९ ॥

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्म्माः सनातनाः।
धर्म्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्म्मोऽभिभवत्युत ॥ ४० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुलक्षये १ सनातनाः २ कुलधर्माः ३ प्रणश्यन्ति ४ धर्मे ५ नष्टे ६ कृत्स्नम् ७ कुलम् ८ अधर्मः ९ अभिभवति १० उत ११ ॥ ४० ॥ अ० कुलके नाश होने में १ सनातन कुलके धर्म्म २ । ३ नाश होजाते हैं ४ धर्म्म नाश होने में ५ । ६ समस्त कुल ७ । ८ अधर्म्मी ९ होजाताहै १० [पू० ११] ॥ ४० ॥

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः ।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥ ४१ ॥

कृष्ण १ अधर्माभिभवात् २ कुलस्त्रियः ३ प्रदुष्यन्ति ४ वार्ष्णेय ५ दुष्टासु ६ स्त्रीषु ७ वर्णसंकरः ८ जायते ९ ॥ ४१ ॥ अ० हे कृष्णचन्द्र ! १ अधर्मके बढ़ने से २ कुलकी स्त्रियां ३ भ्रष्ट होजाती हैं ४ हे भगवन्! ५ दुष्टस्त्रियों के विषय ६।७ वर्णसंकर ८ उत्पन्न होता है ९ टी० वृष्णिवंश में जो उत्पन्नहो उसको वार्ष्णेय कहते हैं यह नाम श्रीकृण भगवान् का है ५ ॥ ४१ ॥

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च ।
पतन्ति पितरोह्येषां लुप्तपिंडोदकक्रियाः ॥ ४२ ॥

कुलघ्नानाम् १ कुलस्य २ च ४ संकरः ३ नरकाय ५ एव ६ एषाम् ७ पितरः ८ हि ९ पतन्ति १० लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ११ ॥ १२ ॥ कुलनाश करने वालों के १ कुलका २ वर्णसंकर ३ भी ४ नरकके वास्ते ५ ही ६ सि० है❀और❀इनके ७ अर्थात् कुलघ्नोंके ७ पितर ८ भी ९ पतित होजावे हैं १० अर्थात् स्वर्गसे वेभी नरक में गिरपड़ते हैं १० सि० क्योंकि❀लोप होगई है पिण्ड और जलकी क्रिया जिनकी ११ अर्थात् न कोई उनका जलदाता रहताहै पिण्डका देनेवाला वर्णसंकर आपभी नरक में जाता है और जिस कुलमें उत्पन्न होता है वह कुल भी नरक में जाता है ११ ॥ ४२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः॥४३॥

वर्णसंकरकारकैः १ एतैः २ दोषैः ३ कुलघ्नानाम् ४ शाश्वताः ५ जातिधर्माः ६ कुलधर्माः ७ च ८ उत्साद्यन्ते ९ ॥ ४३ ॥ अ० वर्णसंकर करनेवाले इन दोषों ने १ । २ । ३ अर्थात् कुलका नाश करना मित्रों से कपट करना आदि जो दोष हैं इन दोषों ने ३ कुलघ्नों के ४ सनातन ५ कुलधर्म ६ और जातिधर्म ७ । ८ लोप किये हैं ९ तात्पर्य—यही दोष जातिधर्म और कुलधर्मों का लोप करते हैं ९ ॥ ४३ ॥

उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन।
नरके नियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम ॥ ४४ ॥

जनार्दन १ उत्सन्नकुलधर्म्माणाम् २ मनुष्याणाम् ३ नरके ४ नियम ६ वासः ६ भवति ७ इति ८ अनुशुश्रुम ९ ॥ ४४ ॥ अ० हे जनार्दन ! १ लोप होजातेहै कुल के धर्म जिनके सि० ऐसे २ मनुष्यों को ३ नरक में ४ सदा ५ वास ६ होता है ७ यह ८ पीछे सुनते रहे है हम ९ सि० पुराणादि में ॥ ४४ ॥

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्।
यद्राज्य सुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः॥ ४५ ॥

अहोबत १ वयम् २ महत्पापम् ३ कर्तुम् ४ व्यवसिताः ५ यम् ६ राज्यसुखलोभेन ७ स्वजनम् ८ हन्तुम् ९ उद्याताः १० ॥ ४५ ॥ अ० उ० सन्ताप करनेसे भी पाप दूर होजाता है जो आगे को पाप न करने का नियम करै यह समझकर अर्जुन सन्ताप करता हैं अर्जुन ने अपने सम्बन्धियो के साथ युद्ध करनेका जो मनोराज्य किया इसको भी पाप समझा ❋बड़ेकष्ट की बात है❋ऐसी जगह अहोबत बोला करते हैं अर्जुन कहते हैं कि अहोबत १ हम २ बड़ा पाप करने को ३ । ४ निश्चय हुये अर्थात् हमने बड़े पाप करने का निश्चयकिया ५ जो ६ राज्य सुखका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लोभ करके ७ अपने सम्बधियों के मारने को ८। ९ उद्यतहुये १० तात्पर्य–अपने सम्बन्धियों के मारने के लिये हमने यत्न किया १० ॥४५॥

यदिमामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः।
धार्त्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥ ४६ ॥

शस्त्रपाणयः १ धार्त्तराष्ट्राः २ यदि ४ माम् ४ अप्रतीकारम् ५ अशस्त्रम् ६ रणे ७ हन्युः ८ तत् ९ मे १० क्षेमतरम् ११ भवेत् १२ ॥ ४६॥ अ० उ० प्राणधारी को प्राण से भी श्रेष्ट परमधर्म अहिंसा है यही समझकर अर्जुन कहता है ❋दुर्योधनादि २ शस्त्र है हाथ में जिनके १ जो ३ मुझ अप्रतीकार अशस्त्र को ४। ५। ६ रण में ७ मारें ८ तो ९ मेरा १० बहुत भला ११ हो १२ टी० जो अपने साथ बुराई करे उसके साथ बुराई न करे उसको अप्रतिकार कहतेहैं ५ धनुष्आदि शस्त्र अर्जुन ने उस समय हाथ में से रखदिये थे इस हेतु से अर्जुन ने अपको अशस्त्र कहा ६। ४६॥

संजय उवाच—

एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्न मानसः ॥ ४७ ॥

संजयः १ उवाच २ अर्जुनः ३ संख्ये ४ एवम् ५ उक्त्वा ६ सशरम् ७ चापम् ८ विसृज्य ९ रथोपस्थे १० उपाविशत् ११ शोकसंविग्नमानसः १२ ॥ ४७ ॥ अ० संजयधृतराष्ट्रसे कहता है १। २ सि० हे राजन्! ❋ अर्जुन ३ रणमें ४ इस प्रकार ५ कहकर ६ सि० जो पीछे कहा ५। ६ और ❋सहित शरके ७ धनुष को ८ विसर्जन करके ९ अर्थात् कमान का चिल्लाउतार और तीर तरकस में रखकर ९ रणके पिछले भाग १० में बैठगया ११ शोक में डूबगया है मन जिसका १२ तात्पर्य–अर्जुन को उस समय शोक मोह हुआ ॥ ४७ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादेऽर्जुनविषादोनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥

संजय उवाच-

तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेऽक्षणम् ।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥ १ ॥

मधुसूदनः१ तं २ इदम् ३ वाक्यम् ४ उवाच ५ तथा ६ कृपया ७ आविष्टम् ८ अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ९ विषीदन्तम् १० ॥१॥अ० उ० संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि हे राजन्! ❀अ० श्रीभगवान् १ तिस २ सि० अर्जुन से ❀यह ३ वाक्य ४ बोलतेभये ५ सि० कैसाहै वह अर्जुन ❀तिस प्रकार ६ कृपाकरके ७ युक्त है ८ अर्थात् जो गति अर्जुन की पिछले अध्याय में कही और ❀आंसूकरके पूर्ण और व्याकुल होरहे हैं नेत्र जिसके ९ अर्थात् अर्जुन के नेत्रों में आंसू भरगये और ❀विषरद को प्राप्त होरहा है १० ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच-

कुतस्त्वाकश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् ।
अनार्य्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥ २ ॥

अर्जुन १ त्वा २ इदम् ३ कश्मलम् ४ विषमे ५ कुतः ६ समुपस्थितम् ७ अनार्यजुष्टम् ८ अस्वर्ग्यम् ९ अकीर्तिकरम् १० ॥ २ ॥ अ० हे अर्जुन! १ तुमको २ यह ३ कायरपना ४ रण में ५ कहांसे ६ प्राप्तहुआ ७ सि० कैसाहै यह कायरपना? ❀नहीं हैं श्रेष्ठ जो जन उन करके सेवन करने योग्य है ८ अर्थात् तू तो उत्तम श्रेष्ठ है यह तेरे योग्य नहीं अश्रेष्ठों के योग्यहै फिर कैसाहै यह काम कायरपना कि ❀स्वर्गको प्राप्त करनेवाला नहीं ९ सि० प्रत्युत ❀अयश करनेवाला है १० ॥ २ ॥

क्लैब्यं मास्मगमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पार्थ १ क्लैब्यं २ मास्मगमः ३ एतत् ४ त्वयि ५ न ६ उपपद्यते ७ परन्तप ८ क्षुद्रं ९ हृदयदौर्बल्यं १० त्यक्त्वा ११ उत्तिष्ठ १२ ॥ ३ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ नपुंसकपने को २ मतप्राप्त हो ३ यह ४ तुझमें ५ नहीं ६ शोभापाता है ७ हे परन्तप अर्जुन ! ८ नीचताको ९ और हृदय की दुर्बलता को १० त्याग करके ११ सि० युद्धके लिये❋खड़ा हो १२ ॥ ३ ॥

अर्जुन उवाच—

कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूदन।
इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥ ४ ॥

मधुसूदन १ संख्ये २ द्रोणं ३ च ३ भीष्मम् ४ प्रति ५ इषुभिः ६ कथं ७ योत्स्यामि ८ अरिसूदन ९ पूजार्हौ १० ॥ ४ ॥ अ० उ० नपुंसकपने से मैं युद्ध नहीं करता हूं यह न समझिये किन्तु मुझको युद्ध करने में अन्याय प्रतीत होता है यह प्रकट करताहै अर्जुन❋हे मधुसूदन १ रण में २ द्रोणाचार्य्य ३ और ३ भीष्मपितामह के ४ प्रति ५ अर्थात् द्रोणाचार्य्य और भीष्मजीके साथ❋बाणों करके ६ कैसे ७ युद्ध करूं ८ हे वैरियोंके मारनेवाले श्रीकृष्णचन्द्र ! ९ सि० भीष्म और द्रोणाचार्य्य दोनों❋पूजा करने के योग्य हैं १० तात्पर्य जिन पर फूल चढ़ने योग्य हैं उनके साथ लड़ना यह वाणी से कहना भी अयोग्य है फिर तीरोंसे उनके साथ कैसे लड़ना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥ ४ ॥

गुरूनहत्वा हि महानुभावाञ्छ्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके। हत्वार्थकामांस्तु गुरूनिहैव भुंजीयभोगान्रुधिरप्रदिग्धान् ॥ ५ ॥

---

१ अर्थात्—ओंकारको धनुष मानकर आत्मा शररूपी जानकर ब्रह्म रूपी निसान ऐसा एकाग्र चित्त होकर शरके तद्वत् वेद्धव्य है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महानुभावान् १ गुरून् २ अहत्वा ३ हि ४ भैक्ष्यं ५ अपि ६ भोक्तुं ७ श्रेयः ८ इह ९ लोक १० अर्थकामान् ११ गुरून् १२ हत्वा १३ तु १४ इह १५ एव १६ रुधिरप्रादिग्धान् १७ भोगान् १८ भुञ्जीय १९ ॥ ५ ॥ अ० बड़ा प्रभाव है जिनका १ सि० ऐसे गुरुको २ न मारकरके ३ ही ४ भिक्षाका अन्न ५ भी ६ भोगना ७ श्रेष्ट है इस लोक में ९ । १० अर्थात् यही बात श्रेष्ट है कि गुरुको कभी न मारना गुरु के न मारने से भीख मांगकर खाना श्रेष्ठ है और❋अर्थ की कामनावाले ११ गुरु को १२ मार करके १३ तो १४ इसकाल में १५ ही १६ रुधिर रक्त के सनेहुये भोगों को १७ । १८ हम भोगेंगे १९ तात्पर्य—वे भोग हम को नरक प्राप्तकरेंगे १९ टी० अर्थकामान् यह भोगोंका भी विशेषण हो सक्ता है ५ ॥

नचैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो यद्वाजयेम यदि वा नो जयेयुः। यानेव हत्वा न जिजीविषामस्तेवऽस्थिताः प्रमुखे धार्त्तराष्ट्राः ॥ ६ ॥

नः १ कतरत् २ गरीयः ३ एतत् ४ न ५ च ६ विद्मः ७ यद्वा ८ जयेम ९ यदि १० वा ११ नो १२ जयेयुः १३ यान् १४ हत्वा १५ न १६ जिजीविषामः १७ ते १८ एव १९ धार्त्तराष्ट्राः २० प्रमुखे २१ अवस्थिताः २२ ॥ ६ ॥ अ० उ० पीछे बहुत जगह और इस अध्याय में भी इसी पिछले श्लोक में अर्जुनको विपर्यय हुवा सो स्पष्ट प्रतीत होताहै और इस छठे श्लोकमें संशय और इससे अगले अठवें श्लोक में अज्ञान स्पष्ट प्रतीत होता है अज्ञान संशय विपर्यय ये तीनों ब्रह्मज्ञानसे जाते हैं ब्रह्मविद्या श्रवण करनेसे, अज्ञान मनन करनेसे, संशय निदिध्यासन करने से विप-

---

१ अकृत्वा परसंतापमगत्वा खलमन्दिरं ॥ अक्लेशायित्वाचात्मानं यदल्पमपि तद्बहु ॥ १ ॥ अर्थ—दूसरेका संतापनकरके दुष्टोंके घरमें न जाकर अत्माको क्लेश न देकर जो स्वल्प भी प्राप्तहो वह बहुत है.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

र्थय का नाश होता है❋अर्जुन कहताहै हे भगवन्! ❋हमको १ सि० भिक्षाका अन्न श्रेष्ठ है वा गुरु आदिको मारकर राज्य भोगना श्रेष्ठ है इन दोनों में❋क्या २ श्रेष्ठ है ३ यह ४ नहीं ५। ६ जान्ते हैं हम ७ सि० और जो इनके साथ हम लड़ेभी तोभी हमको यह संशय है कि❋ यद्वा ८ सि० उनको❋हम जीतेंगे ९ यदि वा १०। ११ हमको १२ वे जीतेंगे? १३ सि० और जो हम उनको जीत भी लेंगे तौभी वह हमारी जीत किसी काम की नहीं क्योंकि❋जिनको १४ मार करके १५ नहीं १६ जीना चाहते हैं हम १७ वे १८ ही १९ दुर्योधनादि २० सन्मुख २१ सि० मरने को❋खड़े हैं २२ ॥ ६ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः। यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥ ७ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः १ धर्मसंमूढचेताः २ त्वाम् ३ पृच्छामि ४ मे ५ यत् ६ निश्चितम् ७ श्रेयः ८ स्यात् ९ तत् १० ब्रूहि ११ अहम् १२ ते १३ शिष्यः १४ त्वाम् १५ प्रपन्नम् १६ माम् १७ शाधि १८ ॥ ७ ॥ अ० उ० अर्जुनको जब अत्यन्त शोक सन्ताप हुआ और कर्त्तव्याकर्तव्य का विचार भी जातारहा तब फिर धैर्य करके मनको सावधान किया और यह बिचारकिया कि वेदोमें महात्माओंके मुख से मैंने यह सुना है कि शोकके समुद्रको आत्माका जाननेवाला तरताहै धन धर्म कर्म पुत्रादि करके मोक्ष नहीं होता है जीव❋"तरतिशोकमाऽऽत्मवित❋ न कर्मणा न प्रजया न धनेन न त्यागेनैकेन अमृतत्वमानशुः"॥ इन श्रुतियोंका अर्थ बेसन्देह सत्य है क्योंकि धर्म कर्म मैं सब जानताहूं धर्मका अवतार साक्षात् मेरेभाई है वेदोक्त कर्मकाण्डके जानने अनुष्ठान करने में मेरे किञ्चित् सन्देह नहीं और भेद उपासना परमेश्वरकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भक्तिका फल साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र महाराज मेरेस्वामी, सखा, भाई मेरेपास हैं तो भी यह मुझको शोक है इसी हेतुसें स्पष्ट यह प्रतीत होता है कि शोक आत्मा के ज्ञानसेही नाशहोता है वही मुझको नहीं यह पूर्वोक्त विचार कर अर्जुन ब्रह्मविद्या श्रवण करने के लिये प्रथम ब्रह्मविद्या में अपना अधिकार प्रकट करताहै दो श्लोकोमें अर्थात् ब्रह्मविद्या के अधिकारों का लक्षण कहता है ❋ दीनतारूप दोषकरके दूषित होगयाहै स्वभाव जिसका १ अर्थात् जो आत्माको नहीं जानता है, उसको कृपण कहतेहैं कृपणता, कृपणपना, दीनता, इन सब पदोंका एक ही अर्थ है "योवाएतदक्षरमविदित्वा गार्ग्यस्माल्लोकात्प्रैतिसकृपणः" यह बृहदारण्य उपनिषद् श्रुति है तात्पर्यार्थ—इसकायह है कि जो विना आत्मज्ञानके मरजाता है वह कृपण दीन है इस पदमें अर्जुनका तात्पर्य यही है कि मैं भी अबतक कृपण अज्ञानी हूं १ सि० और ❋ ब्रह्म में सम्मूढ़ है चित्त जिसका २ सि० सो मैं ❋ आपसे ३ बूझता हूं ४ मुझको ५ जो ६ निश्चत श्रेय ७। ८ हो ९ सो १० कहो ११ सि० शिष्य वा पुत्र से सिवाय और ❋ किसी से ब्रह्मज्ञान नहीं करना यह शङ्का करके कहता है कि ❋ मैं १२ आपका १३ शिष्य १४ सि० हूं वाणी करके ❋ अनन्यगुरुभक्त को गुरुसे ज्ञान सुनाना योग्य है यह शङ्काकरके कहताहै कि ❋ आपकी शरणागत १५। १६ सि० हूं मैं आपही मेरे रक्षाकरनेवाले हैं सब प्रकार मुझको आपकाही आश्रय है आप ❋ मुझको १७ उपदेश कीजिये १८ टी० जो धारण कियाजावे उसको धर्म कहते हैं धारयतीति धर्म्मः इस व्युत्पत्तिसे-धर्म भी एक ब्रह्मका नामहै वेदोक्त धर्म्म को तो अर्जुन भले प्रकार जानताथा. उस धर्म्म में अपने को मूढ़ क्यों कहता? २ एक अनित्य श्रेय होताहै जैसे ब्रह्मणादि आशीर्वाद दिया करते हैं तुह्मारा श्रेय (कल्याण भला) हो ऐसे श्रेयको मैं नहीं बूझताहूं किन्तु जो निश्चय सदा बनारहै तात्पर्य—मेरा मोक्ष से है परमश्रेय मोक्षको ही कहते हैं जिसको दुःखों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति नित्य कहते हैं. उसका साधन मुख्य साक्षात् मुझ से कहो यह मेरा तात्पर्य है ७। ८॥ ७॥

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम्। अवाप्यभूमावसपत्नमृद्धं राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम्॥ ८॥

भूमौ १ असपत्नम् २ ऋद्धम् ३ राज्यम् ४ च ५ सुराणाम् ६ आधिपत्यम् ७ अपि ८ अवाप्य ९ इन्द्रियाणाम् १० उच्छोषणम् ११ यत् १२ शोकम् १३ मम १४ अपनुद्यात् १५ न १६ हि १७ प्रपश्यामि १८॥ ८॥ अ० उ० वेदोंमें यह कथाहै कि नारदजी ने सनकादिकों से यह प्रश्न किया कि महाराज? मुझको सब विद्या सांगोपांग आती हैं और जैसा उनमें कहाहै वैसा मैं अनुष्ठान करताहूं और ब्रह्मलोक के पदार्थों पर्यन्त सब पदार्थ मुझको प्राप्तहैं परन्तु मेरा शोक नही. गया सनकादि महाराजोंने उत्तर दिया कि आत्मविद्या तुमने नहीं पढ़ी होगी. नारद जीने कहा कि यह तो मैंने नामभी नहीं सुना नहीं तो मैं अवश्य पढ़ता सनकादिकों ने नारदजी से यह कहा कि उसी विद्या से शोकका नाश होताहै फिर नारदजीने ब्रह्मविद्या सनकादिको से ब्रह्मजिज्ञासा करके श्रवण करी तब उनका शोक नाशहुआ यही विचार करके अर्जुन कहता है इस मन्त्रमें पृथ्वी १ सि० तो ❀ शत्रुरहित पदार्थों के भरेहुये राज्यको २। ३। ४ सि० प्राप्त होकर ❀ और ५ देवताओं के ६ आधिपत्य को ७ भी ८ प्राप्त होकर ९ सि० परलोकमें ❀ अर्थात् देवताओं का अधिपति स्वामी इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि होकर ९ इन्द्रियों का १० सुखाने वाला सन्ताप करने वाला ११ जो १२ शोक १३ मेरा १४ दूरहो नाशहो १५ सि० यह बात विना ब्रह्मज्ञानके ❀ नहीं देखताहूं मैं १६।१७।१८ सि० क्योंकि नारदजी से वैवष्ण महात्मासे वर्षों अंगों सहित वेद और सब विद्या शास्त्र पढ़े वर्षों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुष्ठान किये भेद भक्तिकारी ब्रह्माजीके साक्षात् पुत्र विष्णुभगवान् के परमप्यारे जब उनकाही विना ब्रह्मविद्या शोकनाश न हुआ तो फिर मेरा कैसेहोगा. इस श्लोक से साफ प्रतीत होता है कि शोक आत्मज्ञानसेही नाश होता है. सिवाय आत्मज्ञानसे और कोई कर्म उपासना योगादि साक्षात् मुख्य उपाय नहीं भेदवादी उपासक जो यह कहते हैं कि केवल मूर्त्तिमान् विष्णु, शिव, राम, कृष्णादि देवताओं के दर्शन करने से शोक दूर होजाता है विचार करना चाहिये कि जैसा दर्शन अर्जुनको था ऐसा तो इस समय भेदवादियों को स्वप्नमें भी होना कठिन है अर्जुनका तो शोक मोह विना ब्रह्मवि । के गयाही नहीं औरों का विना ब्रह्मज्ञान के कैसे नाशहोगा देवताओं का दर्शनादि अन्तःकरण की शुद्धि में हेतु है. फिर ज्ञानद्वारा मोक्षका हेतुहै ॥ ८ ॥

संजय उवाच--

एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परंतप।
न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूवह ॥९॥

संजयः १ उवाच २ परंतपः ३ गुडाकेशः ४ हृषीकेशं ५ एवं ६ उक्त्वा ७ न ८ योत्स्ये ९ इति १० गोविन्दम् ११ उक्त्वा १२ तूष्णीं १३ बभूव १४ ह १५ ॥ ९ ॥ अ० संजय धृतराष्ट्रसे कहताहै १। २ सि० कि हे राजन्! ❀परंतप ३ अर्जुन ४ श्री कृष्णचन्द्रसे ५ इसप्रकार ६ कह ७ सि० कि जैसे पीछे कहा ❀और अभी ❀नहीं ८ युद्ध करूंगा ९ यह १० गोविन्दजीसे ११ कहकर १२ चुप १३ होगया १४ [पू० १५] टी० निद्रा अर्जुनके वशमेंथी इस हेतुसे गुडाकेश अर्जुनका नामहै ४ इन्द्रियों के स्वामी है श्रीकृष्णचन्द्र महाराज इसहेतु से हृषीकेश श्रीमहाराज का नामहै ५ तत्त्वमस्यादि वेदोंके महावाक्यों करकेही श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी प्राप्तिहोती है इस व्युत्पत्ति से श्रीमहाराज का नाम गोविन्दहै

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

११ तात्पर्य–अर्जुनका यह है कि युद्ध से प्रथम ब्रह्मज्ञान मुझको उपदेश करदीजिये क्योंकि जो यह पूर्वोक्त अज्ञान संशय विपर्यय मेरा बनारहा और मैं मारागया तो मैं कृपण दीनहीरहा मेरी परमगति न होगी विचार करना चाहिये कि अर्जुन कैसे संकोच (असावकाश) के समय ब्रह्मज्ञान श्रवण करने के लिये कैसी श्रीमहाराजसे प्रार्थना करताहै मैं आपका चेलाहूं आप की शरणागत हूं मुझको उपदेश कीजिये राज्यादि मुझको नहीं चाहते हैं अब इस समय लाला मुंशी साहूकारादि कहते हैं कि साहब शास्त्रोंको सुननेको किस को सावकाश है यहां मरनेका भी सावकाश नहीं ऐसे कामियों के पास जब यमदूत आवेंगे तब कामकी गति उनको प्रतीत होगी. यमदूतों से भी यही कहना चाहिये कि अजी हमको मरनेक सावकाश कहां है तुमको सूझता नहीं हम अपने काममें लगेहुये हैं जैसे गृहस्थ अतिथि अभ्यागतों से कहते हैं ॥ ९ ॥

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत ।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः ॥ १० ॥

भारत १ उभयोः २ सेनयोः ३ मध्ये ४ विषीदन्तम् ५ तम् ६ प्रहसन् ७ इव ८ हृषीकेशः ९ इदम् १० वचः ११ उवाच १२ ॥ १० ॥ अ० उ० जब अर्जुन चुप होगया पीछे क्या हुआ इस अपेक्षा में संजय कहता है कि❋ हे राजन् ! १ दोनों सेनाके २ । ३ मध्यमें ४ अतिदुःखित तिसको ५ । ६ उपहास करतेहुये ७ जैसे अर्थात् जैसे किसी का उपहास कर रहे हैं ऐसे ८ श्रीभगवान् ९ अतिदुःखित तिसके प्रति ५ अर्थात् अर्जुन से ६ यह १० वचन ११ बोले १२ सि० जो आगे समाप्तिपर्यन्त कहना है टी० विना ब्रह्मज्ञान के बड़े २ लोंगो का उपहास होता है अर्जुन का उपहास श्रीमहाराजने किया तौ इसमें क्या आश्चर्य है ५ । ६ ॥ इतिहास–एकसमय बड़े २ ब्रह्मज्ञानी और बहुतसे भेद-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वादी भक्तभी श्रीरामचन्द्र जी महाराज के पास बैठे थे। हनुमान्जी सेवा में थे श्रीमहाराजने अपनी सेवा भक्तिका माहात्म्य प्रकट करने के लिये हनुमान्जी से यह बूझा कि तुम कौनहो हनुमान्जीने शोचा कि जो यह कहताहूं कि आपका सेवक दास हूं तो यह सब ब्रह्मज्ञानी मुझको अज्ञानी समझकर मेरा उपहास करेंगे और यह समझेंगे कि इनकी सेवा भक्ति कैसी है जो अबतक आत्मज्ञान न हुआ और जो मैं ब्रह्म हूं यह कहताहूं तो यह सब भक्त यह समझेंगे कि इनकी कैसी यह भक्तिहै और श्रीमहाराजमें कैसा यह भाव है कि जो अपनेही को ब्रह्म कहते हैं फिर तात्पर्य—श्रीमहाराज का समझकर यह बोले हनुमान्जी कि देहदृष्टि करके तो आपका दास हूं और जीवबुद्धि करके आपका अंश हूं और वास्तव जो आपहैं शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म सोई मैं हूं ॥ "देहदृष्ट्या तु दासोऽहं जीवबुद्ध्यात्वदंशकः। वस्तुतस्तु तदेवाहमिति मे निश्चितामतिः॥" यह सुनकर सब प्रसन्नहुये समस्त श्रीभगवद्गीताका सारार्थ यहीहै समस्त गीताशास्त्र में इसी का विस्तारार्थ उपाय और उपेय अङ्ग अङ्गीवत कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठा का निरूपण है ॥ १० ॥

श्रीभगवानुवाच—

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।
गतासूनगतासूंश्च नाऽनुशोचन्ति पण्डिताः॥ ११॥

श्रीभगवान् १ उवाच २ त्वम् १ अशोच्यान् २ अन्वशोचः ३ प्रज्ञावादान् ४ च ५ भाषसे ६ पण्डिताः ७ गतासून् ८ अगतासून् ९ च १० न ११ अनुशोचन्ति १२ ॥ ११ अ० उ० परमकृपा की खानि श्रीभगवान् अर्जुनको ब्रह्मज्ञान सुनाते हैं समस्त गीताशास्त्र में केवल एक ज्ञाननिष्ठा काही निरूपण है अष्टाङ्गयोग सांख्ययोग भेद भक्तियोग कर्मयोगादिका जो किसी जगह प्रसंग है वह ज्ञाननिष्ठा का अङ्गही श्रीमहाराज ने कहा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है और जैसे श्रीरामायण में रामचरित्रों के सिवाय और भी अनेक कथा हैं परन्तु मुख्य श्रीरामजीके चरित्रहैं इसीप्रकार इस श्रीभगवद्गीता उपनिषद् ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में ज्ञाननिष्ठाका निरूपण है उसीको मैं आनन्दगिरि नामवाला श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीस्वामी मलूकगिरिजी महाराज अनुचर शिष्य सेवक दास श्रीमहाराज अपने स्वामी गुरुदेवके चरण कमलोंका पूजनेवाला श्रीमहाराजकी कृपा से निरूपण करताहूं श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन !❀१ । २ तू नहीं शोच करने के योग्य जो हैं तिनके निमित्त २ सि० तौ❀शोच करता है ३ और पण्डितों केसे शब्दों को ४ । ५ बोलता है ६ अर्थात् पण्डितों कीसी बातें कहता है राजसुख भोगों करके हमको क्या है इत्यादि ६ पण्डित ७ जो ८ मरेहुओं का ९ । १० नहीं ११ शोच करतेहैं १२ टी० भीष्मद्रोणादि के निमित्त व्यवहारमें भी शोच करना बेयोग्य है क्योंकि सदाचारी हैं मरकर सद्गतिको प्राप्त होंगे और परमार्थमेंभी शोच करना न चाहिये क्योंकि नित्य अविनाशी हैं अर्थात् न वाच्यार्थ में शोच बनता है न लक्ष्यार्थ में २ उन के विना हम कैसे जीवेंगे इनको कैसे सुखहोगा ९ सि० यह सब अज्ञानका धर्म है विद्वानों को यह नहीं होता इस हेतु से प्रतीत होता है कि तू ज्ञानी पण्डित नहीं दोचार बात पण्डितों कीसी सीखकर बोलता है अहिंसा परमधर्म है इत्यादि❀इतिहास—एक पुरुषके दो लड़के जवान बहुत गुणवान् ब्याहेहुये दैवयोगसे एकहीदिन एक ही काल में मरगये नगर के लोग उसको समझानेलगे पण्डितों ने अनेक श्लोक उसको त्याग ज्ञान वैराग्य के सुनाये और इस मन्त्रका उत्तरार्द्ध भी सुनाया वह पुरुष सुनतेही इस आधे श्लोक को प्रसन्नमुख होकर उत्तर दिशा को चला पण्डितोंने बूझा कहाँ जातेहो उसने उत्तरदिया कि मैंने दुःखरूप गृहस्थाश्रमका संन्यास किया विद्वत्संन्यासी होकर विचारूंगा पण्डितोंने कहा कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अभी तुम्हारी तरुण अवस्था है और तुह्मारे घरमें तीन तरुण स्त्री एक तुम्हारी दो तुम्हारे लड़कों की और मा बाप तुम्हारे वृद्ध विद्यमान हैं दोनों लड़के तुम्हारे घर में मरे पड़े हैं यह समय संन्यास का है किंचित् तुमको मरे जीवितोंका शोच नहीं उसने उत्तर दिया कि जो श्लोक तुमने पढ़ा उसका अर्थ विचारकर तुमको भी तो अनुष्ठान करना योग्य है नहीं तो " पर उपदेश कुशल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे " विना अनुष्ठान के पण्डिताई किस कामकी है मरे जीवितों का शोच उसीको है जिसने यह मन्त्र कहाहै मेरा शोच करना निष्फल है और यह वेद की आज्ञा है कि जिससमय वैराग्यहो उसीसमय संन्यास करे " यदहरेववि-रज्येत् तदहरवप्रव्रजेत् " यह कहकर उसीसमय विरक्त होगया विचारना चाहिये कि गीता का सुनना इसको कहते हैं जिस श्लोक का उत्तरार्द्ध सुनकर यह पुरुष कृतार्थ हुआ इसका अर्थ सबही जानते हैं, कहते हैं, सुनते हैं—परन्तु कहना, जानना, सुनना सब निष्फल है. क्योंकि रोटीके जानने, कहने, सुननेसे पेट किसी का नहीं भरता है. खानेसेही पेट भरता है यही आशय गीताके अर्थ का है ऐसा पुरुष कोई होगा, कि सत्य सन्तोष, त्याग, बैराग्य भक्ति, शम, दमादिका अर्थ और फल न जानता होगा. परन्तु सुन समझकर अनुष्ठान नहीं करते हैं इसी हेतुसे भटकते रहते हैं भगवद्वाक्य में विश्वास करके अनुष्ठान करनेके लिये कमर बाँधनी चाहिये और शोचना योग्य है देखो तो श्रीमहाराज अपने मुखारविन्द से यह कहते हैं कि, मरे जीवितों का शोच नहीं करना यह बात भले की है वा नहीं? शोच करने में क्या बुराई हैं? न शोच करने में क्या भलाई है? और शोच वास्तवहै या भ्रान्ति है यह मुझमें कबसे है? इसका क्या स्वरूपहै क्या जीवगत है वा अन्तःकरणगत है अविष्ठानहै एकसर रहताहै? वा घटता, बढ़ता रहताहै? किस बातसे बढ़ताहै, किस साधन से घटताहै क्या इस के समूल निवृत्तिका उपायहै ऐसा २ विचार करके समस्त गीताके अर्थका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुष्ठान करना योग्यहै जब गीता का अर्थ जानना सुनना कहना सफल है ॥ ११ ॥

नत्वेवाहं जातुनासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ।
नचैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥ १२ ॥

जातु १ अहम् २ न ३ आसम् ४ न ५ तु ६ एव ७ त्वम् ८ न ९ इमे १० जनाधिपाः ११ न १२ अतः १३ परम् १४ वयम् १५ सर्वे १६ न १७ भविष्यामः १८ न १९ च २० एव २१ ॥ १२ ॥ अ० उ० आत्मा नित्यहै इसहेतु शोच करना न चाहिये आत्माको अद्वैत नित्य सिद्ध करते-हुये शोच न करने में हेतु कहते हैं❋पीछे क्या कभी १ मैं २ नहीं ३ होता भया ४ सि० यह❋नहीं ५ [पू० ६।७] अर्थात् पीछे मैं था ७ सि० और❋तू ८ सि० क्या पीछे❋नहीं ९ सि० था यह नहीं अर्थात् तू भी पीछे था और❋ये १० राजा ११ सि० क्या पीछे❋नहीं १२ सि० थे यह नहीं अर्थात् यह भी पीछे थे तू और ये सब राजा वर्त्तमान में विद्यमानही हैं और❋इस से १३ पीछे १४ अर्थात् इस स्थूल शरीर त्याग से पीछे १४ हम १५ सब १६ सि० क्या❋नहीं १७ होंगे १८ सि० यह❋नहीं १९ [पू० २०।२१] अर्थात तू और मैं और ये राजा अवश्य आगे को भी होंगे क्योंकि सच्चिदानन्दरूप आत्मा एक नित्य है❋तात्पर्य–तू और ये राजा और मैं सब वास्तव एकही त्रिकालाबाध्य हैं त्वम् पदार्थ को तत्पदार्थ के साथ लक्ष्यार्थ शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप में एकता जाननी योग्य है इस मन्त्रमें जीवोंको नानात्व जो प्रतीत होताहै यह औपाधिक भेदहै वास्तव जीव एकहीहै अथवा समस्त श्लोक का अन्वय करके सर्वे वयम् इन दोनोंपदों को हेतु करदेना अर्थात् जीव एकही है "कुतः कियंतः सर्वे वयम्" अर्थात्–तू और मैं और ये राजा क्या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आगे न होंगे, यह नहीं. अवश्य होंगे "कुतः कियंतः सर्वे वयम्" बहुवचन आदर के लिये है अर्थात् सब जीव आत्माही है ॥ १२ ॥

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥ १३ ॥

देहिनः १ यथा २ अस्मिन् ३ देहे ४ कौमारम् ५ यौवनम् ६ जरा ७ तथा ८ देहान्तरप्राप्तिः ९ धीरः १० तत्र ११ न १२ मुह्यति १३ ॥ १३ ॥ अ० उ० आप अपने को जो नित्य कहतेहो यह तो सत्यहै परन्तु जीव नित्य कैसे होसकताहै ! प्रत्यक्ष जन्मलेताहै मरताहै यह शंकाकर के श्रीमहाराज कहते हैं❀जीवको १ जैसे २ सि० स्थूल❀इस देहमे ३ । ४ कौमार ५ यौवम ६ जरा ७ सि० अवस्था होती हैं❀तैसेही ८ दूसरी देहकी प्राप्ति ९ सि० होजातीहै❀धीरजवाला १० तहां ११ अर्थात् देहोंकी उत्पत्ति नाशमें ११ नहीं १२ मोहको प्राप्तहोताहै १३ अर्थात् जीवको मरा जन्मवान् नहीं मानताहै ११ तत्पर्य जैसे जीव स्थूल शरीरमें प्रथम बालक कहा जाताहै फिर उसीको जवान कहते है फिर उसीको बूढ़ाकहते हैं जीव तीनों अवस्था में वास्तव एकहीरस रहताहै तैसेही दूसरी देहमें एकरस रहताहैं मरना उत्पन्नहोना देहोंका धर्महै जीव सदा एकरस नित्य है यथा "अहम्" और जैसे मुसाफिर एकसराय छोड़कर दूसरी सराय में बसकर अपने को मरा जन्मा नहीं मानता. तैसेही जीव मुसाफिर की तरह और शरीर सराय की तरह है यह समझकर शरीर छूटने का कुछ शोच करना न चाहिये आगे बहुत शरीर मिलेंगे सराय की तरह आत्मा असंख्यात वर्षोंका मुसाफिर है नये शरीरमें जाकर पिछलेकी गति दुःख सुखादि भूल जाताहै और दूसरी अवस्था में जैसे जीव अन्यजात नहीं हो

१ अर्थात् मेरा जन्म हुवा अथवा मैं मरा इसप्रकारस्थूल शरीरके धर्मोंको अपने मेंलाना नहीं इसप्रकार आत्माकी नित्यता रूप सत्यताको जानकर जन्म मरणसे दुःख हो जाताहै ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाता अपने को वही मानता है जो बालक अवस्था में मानता था तैसेही दूसरे शरीरमें भी वही एकरस सच्चिदानन्द आत्माका समझना चाहिये सदाचारी पुण्यात्मा पुरुष तो देहके छूटने से आनन्दको प्राप्त होते हैं क्योंकि इस देहके पीछे सुन्दर दिव्य देह की प्राप्ति होगी. बुरा मकान छूट. कर जो अच्छा मान्दिर मिले तो उसके निमित्त क्या शोक करना चाहिये ? ॥ १३ ॥

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥ १४॥

कौन्तेय १ मात्रास्पर्शाः २ तु ३ शीतोष्णसुखदुःखदाः ४ आगमापायिनः ५ अनित्याः ६ भारत ७ तान् ८ तितिक्षस्व ९ ॥ १४ ॥ अ० उ० न जानिये दूसरा देह कैसा मिलेगा शीतोष्णादि का उसमें आराम होगा वा नहीं इस हेतुसे वर्तमान इष्ट पदार्थों के वियोग में दुःख प्रतीत होताहै इस देहके छूटतेही सब इष्ट पदार्थों का वियोग होजायगा यह शंका करके श्रीमहाराज यह मन्त्र कहते हैं कि ❋हे अर्जुन ! १ इद्रियों की वृत्तियों का शब्दादि विषयोंके साथ जो सम्बधहै इसको मात्रास्पर्शा कहतेहैं २ अर्थात् देखना भोजनादि ये सब शीत उष्ण सुखदुःखके देनेवाले ३।४ सि० हैं किसीकाल में शीत किसीकाल में गरमी कभी ये अनुकूल कभी प्रतिकूल इस हेतुसे कभी दुःख बनाही रहताहै ❋कैसे हैं ये भोजनादि पदार्थ कि दिनरात्रिवत् ❋अने जानेवाले ५ सि० हैं इसी हेतुसे सब पदार्थ ❋अनित्य ६ हे अर्जुन ! ७ तिनको ८ अर्थात् जाग्रत् अवस्था के भोगोंको ८ सि० स्वप्न पदार्थवत् समझकर ❋सहन कर ९ अर्थात् तिनके निमित्त वृथा हर्ष विषाद मत कर हर्ष विषाद के वश मतहो ९ तात्पर्य—इष्ट पदार्थोंका संयोग वियोगादि झूंठी भ्रान्ति है वास्तव आत्माका न किसी के साथ सम्बंध है न वियोग है सिवाय आत्माके और कोई पदार्थ सुखदायी नहीं सो नित्य प्राप्तहै सिवाय इसके विचार कर जो सहन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करताहै उसको दुःख कम होताहै नहीं तो सहना सबकोही पड़ता है, अनित्य पदार्थोंमेंतो क्या हर्षकरना क्या शोक करना. कितने कालकेलिये क्योंकि क्षण पीछे हर्ष क्षण पीछे शोक होताही रहता है. इनको अनित्य समझकर इन के वश नहीं होना यही इनका सहना है इष्ट पदार्थ के लियेतो यत्न नहीं करना और उसके वियोग में कुछ दुःख नहीं मानना और अनिष्ट पदार्थों में उद्वेग नहीं करना. वर्त्तमानमें जैसाहो वही हर्ष शोकरहित भोगना यही एक अनुष्ठान बहुतहैं ॥ १४ ॥

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥ १५ ॥

पुरुषर्षभ १ एते २ यम् ३ पुरुषम् ४ न ५ व्यथयन्ति ६ समदुःखसुखम् ७ धीरम् ८ सः ९ हि १० अमृतत्वाय ११ कल्पते १२ ॥ १५ ॥ अ० उ० प्रयत्नकरके दुःख दूर करदेना चाहिये और सुख सम्पादन करना चाहिये शीतोष्णादिको क्यों सहना यह शंका करके श्रीभगवान्का इस मन्त्र में आशय यह है कि प्रयत्न करने से उनका सहना हजार जगह श्रेष्ठतमहै क्योंकि सहने का बड़ा फलहै सो हमने सुना सिवाय इसके यह नियम नहीं कि प्रयत्न करनेसे अवश्यही दुःख शीतोष्णादि दूरहोजावें प्रत्युत प्रयत्न करना दूने दुःख का हेतु है क्योंकि एक तो प्रथम दुःख था दूसरे यत्नमें महादुःख हुआ और जब वह कार्यसिद्ध न हुआ तब और भी महादुःख हुआ सहनेसे प्रयत्न करने में क्लेशही क्लेश है इस हेतुसे सहनही श्रेष्ठतमहै सोई सुन❋हे अर्जुन ! १ ये २ सि० मत्रास्पर्श शीतोष्णादि❋ जिस पुरुष को ३ । ४ नहिं ५ विषाद के वश करतेहैं ६ सि० कैसाहै वह पुरुष❋समानहैं सुख दुःख जिसके ७ सि० और बुद्धिमान्

१ श्रुतिः-वृक्ष इव तिष्ठासेत् छिद्यमानो न कुप्येत न कंपेत् उपल इव तिष्ठासेत् छिद्यमानो न कुप्यते न कंपेत ॥ इस श्रुतिमेंभी कहा गया है कि वृक्ष और पाषाण की समानस्थित होकर छेदन किये हुये परभी क्रोध करै न कम्पित हो ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

❋धीर ८ सि० है जो❋सो ९ ही १० मुक्तिके वास्ते ११ योग्य है वा समर्थ है १२ अर्थात् जो मानापमानादि को प्रारब्धकर्म का भोग समझकर सहता है निवृत्ति प्राप्तिके लिए यत्न नहीं करता है सोई मुक्तिके योग्यहै वही मुक्त होगा❋तात्पर्य—दुःखादिमें आत्मा की कुछ भी क्षति नहीं समझता है इसमें हेतु यह है कि विचारवान् है. विचारवान् ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानीही अपमानादिको सहसक्ताहै और वही मोक्षका आधिकारी है. इसवास्ते ज्ञान सम्पादन करना योग्य है ॥ १५ ॥

नासतो विद्यतेभावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ १६॥

असतः १ भावः २ न ३ विद्यते ४ सतः ५ अभावः ६ न ७ विद्यते ८ अपि ९ तु १० अनयोः ११ उभयोः १२ अन्तः १३ तत्त्वदर्शिभिः १४ दृष्टः १५ ॥ १६ ॥ अ० उ० परमार्थ दृष्टि करके तो शीतोष्णादि पदार्थ वास्तव तीनोंकालमें नहीं नित्य अखण्ड पूर्ण आत्माही है, उसका अभाव नहीं होता और शीतोष्णादिपदार्थों का भाव नहीं होता यह विचारकर विद्वानों को शीतोष्णादि बाधा नहीं करते जो कोई यह कहे कि शीतोष्णादि का सहना अत्यन्त कठिन है वह कैसे सहाजावे कदाचित् अत्यन्त सहने में आत्माका नाश न होजाय उसके उत्तर में यह कहते हैं❋ असत् की १ सत्ता २ नहीं ३ है ४ सत् की ५ असत्ता ६ नहीं ७ है ८ सि० यह नहीं समझना कि इनका निर्णय किसीने नहीं कियाहै❋ अपि तु ९।१० इन दोनोंका ११।१२ अन्त १३ तत्त्वदर्शी पुरुषोंने १४ देखा है १५ अर्थात् ब्रह्मज्ञानियों ने इन दोनों सत् असत्का तत्त्व यही निर्णय किया है कि सत्स्वरूप आत्मा निर्लेप असंस्पर्श पदार्थ है और असत्स्वरूप शीतोष्णादि की आत्मामें गन्धमात्र भी नहीं सोई वेदों ने भी यह कहा है मन्त्र " ननिरोधोनचोत्पत्तिर्नबद्धोनचसाधकः । नमुमुक्षुर्नवै-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुक्तइत्येषापरमार्थता॥" तात्पर्य—इस मन्त्र का यही है कि सिवाय आत्माके कभी कुछ हुआ ही नहीं फिर निवृत्ति किसकी करनी चाहिये ? और जो किसीको सिवाय आत्मा के कुछ प्रतीत होताहै वह भ्रान्तिहै क्योंकि भलेप्रकार कोई भी किसी पदार्थका करामलकवत् निःसंशय निश्चय नहीं करते हैं. कोई कुछ कहता है कोई कुछ कहताहै सबका सम्मत न होनेसेही स्पष्ट प्रतीत होता है कि वास्तव सिवाय आनन्द स्वरूप आत्मा के और कुछ नहीं सिवाय इसके इस बातको ऐसे समझो कि जैसे दश महल्लों का नाम एक नगर है बीस हबेलियोंका नाम एक महल्लाहै है मृत्तिका पाषाण काष्ठादि का नाम हबेली है पृथ्वीके परमाणुओं का जो संघात है उसको मृत्तिका काष्ठादि कहते हैं ऐसे विचार करते करते परमाणु एक पदार्थ सिद्ध होता है परमाणु उसको कहते हैं जो किनका नेत्रका तो विषय नहीं परन्तु अनुमान द्वारा ऐसे निश्चय करते हैं कि मकान यें पृथ्वी के किनके उड़ते नहीं दीखपड़ते झरोखेकी चांदनी में दीख पड़ते हैं. इसहेतु से प्रतीतहोताहै कि और भी इससे सूक्ष्महोंगे सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म किनके को परमाणु कहते हैं जब यह जीव अनुमान में चतुर होजाता है तब इसको प्रत्यक्षानुमान शब्दादि प्रमाणोंसे आत्माका भाव और जगत् का अभाव साक्षात् प्रतीत होने लगता है. यह विचार बहुत सूक्ष्म है. अवश्य इसका मनन योग्य है जैसे पीछे विचार करते करते सब पदार्थों का अभाव होगया सब कल्पित प्रतीत होनेलगे एक परमाणु रहगया जब भले प्रकार बुद्धि निर्मल होजातीहै तब वहभी कल्पित प्रतीत होने लगता है फिर उस का अत्यन्ताभाव होजाताहै इसवास्ते जबतक यह विषय समझमें न आवे तबतक अन्तःकरण की शुद्धिका उपाय कर्म उपासना करै॥ १६॥

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।
विनाशमव्ययस्याऽस्य न कश्चित्कर्तुमर्हति॥ १७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

येन १ इदम् २ सर्वम् ३ ततम् ४ तत् ५ तु ६ अविनाशि ७ विद्धि ८ अस्य ९ अव्ययस्य १० विनाशम् ११ कर्तुम् १२ कश्चित् १३ न १४ अर्हति १५ ॥ १७ ॥ अ० उ० सामान्य करके तो आत्माको नित्य प्रतिपादन किया अब फिर विशेष करके दूसरे प्रकारसे आत्माको नित्य प्रतिपादन करते हैं जैसे पिछले श्लोक में आत्माको सत् शब्द करके निरूपणकिया तैसेही इस मन्त्रमें अविनाशी शब्द करके निरूपण करते हैं आत्मा अतिसूक्ष्म पदार्थ है. इसवास्ते श्रीमहाराज उस को अनेक शब्दों करके वर्णन करते हैं. पुनरुक्ति समझनी न चाहिये इस प्रकरणमें बहुत जगह तो अर्थमें पुनरुक्ति प्रतीत होतीहै जैसे सत नित्य अविनाशी इन शब्दों का एकही अर्थ है और बहुत जगह एक वही शब्द लिखाहै यह वारंवार अनेक युक्तियों के साथ उपदेश वास्ते जल्द समझने के है पुनरुक्तीदोष नहीं ❋जिस करके १ अर्थात् सत् स्वरूप आत्मा करके परमानन्दस्वरूप आत्मा से १ यह २ सब ३ सि० जगत् ❋व्याप्त ४ सि० है होरहाहै ❋तिसको ५ अर्थात् आत्मा को ५ ही ६ अविनाशी ७ जान तू ८ इसका अर्थात् अविनाशी निर्विकार का ९ ।१० नाश करनेको ११ । १२ कोई १३ नहीं १४ योग्य है वा नहीं समर्थ है १५ अर्थात् ऐसा कोई समर्थ नहीं है कि जो आत्माका नाश करै. वा कमकरै १५ तात्पर्य—यह जगत् आत्मा करके व्याप्त है इसको ऐसे समझना चाहिये कि आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूपहै विचार करो जगत् में ऐसा कोई भी बुरा भला पदार्थ नहीं कि जिसमें कुछ आनन्द करके यह जगत् पूर्ण है और आनन्द करके ही इसकी स्थितिहै वही आनन्द न हो आनन्द अविनाशी है साक्षात् स्वयंप्रकाश है तीनों अवस्था में इस हेतुसे प्रत्यक्ष ज्ञानस्वरूप है ॥ १७ ॥

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः ।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत ॥१८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इमे १ देहाः २ अन्तवन्तः ३ उक्ताः ४ शरीरिणः ५ नित्यस्य ६ अनाशिनः ७ अप्रमेयस्य ८ तस्मात् ९ युध्यस्व १० भारत ११ ॥ १८ ॥ अ० उ० सत् पदार्थ आत्माको तो नित्य सिद्ध किया, अब असत् पदार्थ देहादि अनात्मा को अनित्य सिद्ध करते हैं, अर्थात् असत पदार्थों का अभाव कहते हैं❋ये १ सि० आविद्यक भौतिक कल्पित देह २ अन्तवाले ३ अर्थात् अनित्य कहे हैं ४ देहधारी जीवके ५ अर्थात् अध्यारोप में आत्माको देही शरीरी कहते हैं और विवर्त्तवादमें उसको नित्य कहते हैं वास्तव वह अनिर्वाच्यहै और देहोंका भाव वास्तवहै नहीं देहों को अनित्य कहना जीव को नित्य कहना यह सब विवर्त्तवादहै❋सि० कैसा है वह आत्मा कि❋सदा एकरूप है ६ अर्थात् सदा उसका एक सच्चिदानन्द निर्विकार नित्यमुक्तरूपहै इसी हेतु से सो❋अविनाशी है ७ सि० जो ऐसाहै तो सबको सत्त्वादिपदार्थोंवत् समझ में क्यों नहीं आता है यह शङ्का करके कहते हैं कि सो आत्मा❋अप्रमेयहै ८ अर्थात् बुद्ध्यादि का विषय नहीं क्योंकि बुद्धिका आदि है इसी हेतु से बुद्धिसे परे श्रेष्ठ है बुद्धिका साक्षी है यही उसकी पहँचानहै जैसे कोई यह कहै कि मेरी आंख मुझको दिखाओ उत्तर उसका यहीहै कि जिस करके तू सबको देखताहै वही तेरी आंख है ऐसेही जिस करके बुद्धिका भी ज्ञानहै, वह ज्ञानस्वरूप स्वयं सिद्धहै और जो अब भी इतने विशेषणो से आत्माका स्वरूप तेरी समझमें न आयाहो क्योंकि आत्मा अतिसूक्ष्महै जब कि आत्मा अतिसूक्ष्महै ❋तिस करण से ९ अर्थात् इसी वास्ते ९ युद्धकर तू १० हे अर्जुन! ११ सि० यह मैं तुझसे कहता हूं❋तात्पर्य्य—स्वधर्मका अनुष्ठान करने से अन्तःकरण शुद्धिद्वारा आत्माका स्वरूप समझमें आजाता है चर्चा चतुराईका वहां कुछ काम नहीं अथवा जब कि आत्मा नित्य है न उसका नाशहै न उसको दुःख सुखादि का सम्बन्ध है तिस कारण से हे अर्जुन! स्वधर्म मत त्याग सुख दुःखादि का सहनकर❋नित्यस्य अनाशिनः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अप्रमेयस्य ये तीनों " शरीरिणः " के विशेषण हैं अर्थात् सदा एक रस अविनाशी अप्रमेय देहधारी जीवके शरीर अन्तवाले कहे हैं अविनाशी का जो देहों के साथ आविद्यक सम्बन्ध है, इस हेतु से देह प्रवाहरूप करके नित्य प्रतीत होते हैं वास्तव नित्य अनित्य है नहीं ॥ १८ ॥

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥१९॥

यः १ एनम् २ हन्तारम् ३ वेत्ति ४ यः ५ च ६ एनम् ७ हतम् ८ मन्यते ९ तौ १० उभौ ११ न १२ विजानीतः १३ अयम् १४ न १५ हन्ति १६ न १७ हन्यते १८ ॥ १९ ॥ अ० उ० भीष्मादि के मरने में जो शोक करता था अर्जुन कि ये मरैंगे वह तो श्रीमहाराज ने दूरकिया परन्तु अर्जुन को अपने निमित्त भी यह शोकहै कि भीष्मादि के मारने में मुझको पापहोगा. इसको भी दूर करते हैं अर्थात् श्रीमहाराज अर्जुनसे यह कहते हैं कि जैसे मारना हननरूप क्रियामें कर्म को अर्थात् भीष्मादि को नित्य निर्विकार अविनाशी समझा तैसेही कर्त्ताको अर्थात् अपने को अकर्त्ता समझ तात्पर्य–किसी क्रियामें भी आत्मा कर्त्ता कर्म नहीं यह कहते हैं अब श्रीमहाराज❋ जो १ इस को २ अर्थात् आत्मा को २ सि० हनन क्रियामें❋ मारनेवाला ३ अर्थात् कर्त्ता ३ जानताहै ४ और जो ५।६ इस आत्माको ७ मराहुआ ८ अर्थात् कर्म मानताहै ९ वे १० दोनों ११ नहीं १२ जानते १६ यह १३ आत्मा १४ न १५ मारताहै सि० किसी को❋ १६ न १७ मारता है १८ तात्पर्य–जो आत्मा को किसी क्रियामें भी कर्त्ता कर्म जानते है वे पाप पुण्यके भागी होते है. तू तौ आत्मा को अक्रिय अकर्त्ता जानकर युद्धकर तुझ को पाप न होगा. आत्मा न कर्त्ता है न कर्म है ॥ १९ ॥

---

१ जब भेद बुद्धि मानी जावेगी तभी उत्पत्ति और नाश माना जावेगा. जब भेदबुद्धि नहीं है तब कौन किस का नाश करता है ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः। अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥ २० ॥

अयम् १ कदाचित् २ न ३ जायते ४ न ५ म्रियते ६ वा ७ भूत्वा ८ भूयः ९ भविता १० वा ११ न १२ अयम् १३ अजः १४ नित्यः १५ शाश्वतः १६ पुराणः १७ शरीरे १८ हन्यमाने १९ न २० हन्यते २१ ॥ २० ॥ अ० उ० उत्पन्न होना व्यवहारिक सत्ताको प्राप्तहोना. बढ़ना औरका और रूपहोजाना. घटनेलगना. नाश होजाना. ये छह धर्म देहके हैं आत्मा के नहीं सोई इस श्लोकमें कहते हैं❋यह १ आत्मा १ कभी २ न ३ जन्मताहै ४ न ५ मरताहै ६ और ७ होकर ८ फिर ९ न रहे १० वह ११ सि० ऐसा भी यह आत्मा❋नहीं १२ अर्थात् जिनका जन्म होताहै वे अवश्य मरते हैं आत्माका न जन्म है न नाश है क्योंकि सादिपदार्थों का नाश होताहै आत्मा अनादि है परन्तु छह अनादि पदार्थों में अविद्यादि पदार्थ भी अनादि कहे जाते हैं उनका ज्ञानकालमें नाश सुना जाताहै अर्थात् अविद्या पदार्थोंका भी जन्म नहीं क्योंकि वे अनादि हैं परन्तु होकर अर्थात् हुये फिर नहीं रहते हैं ऐसाभी वह आत्मा नहीं यह अर्थ है नवें पद से लेकर बारहवें पदतक १२ सि० फिर कैसाहै❋ यह (आत्मा) १३ जन्मरहित १४ एकरस १५ नित्य १६ सनातन १७ सि० है❋शरीर के मारेजाने में १८। १९ नहीं २० मारा जाता है २१ अर्थात् शरीरका नाशहोता है २१ ॥ २० ॥

---

१ जैसे घटके नाश हो जानेसे घटाकाश का नाश नहीं होताहै. इसी प्रकार देह का नाश हो जानेसे आत्मा का नाश नहीं होता है । जन्म—दूसरे देहसे आयकर जीव प्रवेश होजावे उसीका नाम जीव है। मृत्यु-श्वास निकल जाना फिर प्रवेश न होवै उसीका नाम मृत्यु है.।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम् ।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम् ॥ २१ ॥

यः १ एनम् २ अविनाशिनम् ३ नित्यम् ४ अजम् ५ अव्ययम् ६ वेद ७ पार्थ ८ सः ९ पुरुषः १० कम् ११ कथम् १२ हन्ति १३ कम् १४ घातयति १५ ॥ २१ ॥ अ० उ० ज्ञानदृष्टि करके सब क्रियामें आत्मा प्रेरक भी निर्विकारहै इस हेतुसे मैं तेरा प्रेरक भी असंगहूं मेरे निमित्त भी तुझको किसी प्रकारका शोच करना न चाहिये अर्थात् यहभी मत समझ कि श्रीभगवान् मुझको हिंसामें प्रेरते हैं कभी ऐसा न हो कि इस पापके यही भागीहों इस श्लोक में यह कहते हैं ❋ जो १ इस २ आत्माको २ अविनाशी ३ नित्य ४ अज ५ निर्विकार ६ जानता है ७ हे अर्जुन ? ८ सो ९ पुरुष १० किसको ११ किसप्रकार १२ मारताहै १३ अर्थात् आत्मा किसीको किसी प्रकार नहीं मारताहै १३ सि० और ❋ किसको १४ सि० किस प्रकार ❋ मरवाताहै १५ अर्थात् किसीको किसी प्रकार भी नहीं मरवाता है आत्मा किसी क्रिया में कर्त्ताका प्रेरक नहीं. तात्पर्य—श्रीमहाराजने जैसे अपनेको निर्विकार अकर्त्ता असङ्ग निरूपण किया वैसेही जीवको भी निर्विकार कहा इस कहने से स्पष्ट जीव ब्रह्मकी एकता सिद्ध है. इस प्रकरणका यही सिद्धान्तहै ॥ २१ ॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि । तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥ २२ ॥

यथा १ नरः २ जीर्णानि ३ वासांसि ४ विहाय ५ अपराणि ६ नवानि ७ गृह्णाति ८ तथा ९ जीर्णानि १० शरीराणि ११ विहाय १२ अन्यानि १३ नवानि १४ संयाति १५ देही १६ ॥ २२ ॥ अ० उ० आत्माको तो अविनाशी निर्विकार समझा मैंने आत्माके निमित्त तो मुझको अब किसी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकारका शोच नहीं अर्थात् आत्मा किसी क्रियामें न कर्त्ता है न प्रेरक न कर्म है आत्मा के नाशकरने में वा कम करने में न कोई साधनहै परन्तु आत्माका शरीर से जो वियोग होताहै[1] इसके निमित्त तो शोच करना चाहिये. यह शंका करके कहते हैं ❋ जैसे[2] १ मनुष्य २ जीर्ण ३ वस्त्रोंको ४ त्याग करके ५ और ६ नये ७ सि० वस्त्रोंको ❋ ग्रहणकरता है ८ तैसेही ९ जीर्ण १० शरीरों को ११ त्याग करके १२ और १३ नये १४ सि० शरीरको ❋ प्राप्त होताहै १५ आत्मा जीव १६ सि० न जानिये दूसरा शरीर कैसा मिलै पहले से अच्छा न मिलै इसके निमित्त भी शोच करना न चाहिये. क्योंकि धर्मात्मा पुरुषों को बेसन्देह उत्तम शरीर मिलते हैं. पापियोंको यह शोच करना चाहिये. धर्मात्मा पुरुषोंको पुण्यकी तारतम्यतासे देवताओं के शरीर मिलते हैं. पापात्मा नरकमें जाते हैं उनको नारकी शरीर मिलते हैं मिलेहुये कर्म करनेवालों को मनुष्यों के शरीर मिलते हैं ज्ञानी महापुरुष मुक्त होते हैं. तात्पर्य—विना ब्रह्मज्ञान के सबको दूसरा शरीर मिलताहै. चौदहवें अध्याय में विशेष निरूपण करेंगे. इस प्रसंग को श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठों के मुखसे श्रवण करने से गरुड़ पुराणादिकी प्रक्रिया भी इसी सिद्धान्तसे मिलजाती है ॥ २२ ॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
नचैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥ २३ ॥

एनम् १ शस्त्राणि २ न ३ छिन्दन्ति ४ पावकः ५ एनम् ६ न ७ दहति ८ आपः ९ एनम् १० न ११ च १२ क्लेदयन्ति १३ मारुतः १४ न १५ शोषयति १६ ॥ २३ ॥ अ० उ० पीछे कहा था कि आत्मा किसी

---

१ जिसप्रकार जीवात्मा स्थूल देहगत जाग्रतके अभिमानको छोड़कर सूक्ष्म देहगत स्वप्नावस्थाके अभिमानको ग्रहण करता है ।

२ पूर्व त्यागे हुवे शरीरोंके अभिमानको छोड़कर नवीन ग्रहण किये हुवे शरीरोंके अभिमानको धारण करता है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकार भी नहीं मारा जाताहै अर्थात् आत्मा किसी साधन करके साध्य सिद्ध होनेके योग्य नहीं उसी को अब स्फुट कहते हैं❀इस आत्माको १ शस्त्र २ नहीं ३ छेदन करते हैं ४ अग्नि ५ इसको ६ नहीं ७ जलाती है ८ जल ९ इसको १० नहीं ११। १२ गलाता है १३ पवन १४ नहीं १५ सुखाता है १६ तात्पर्य—अन्य और भी किसी साधन करके साध्य नहीं आत्मा स्वयं सिद्ध निर्विकारहै निरवयव होने से क्रिया सावयव हैं इसी हेतुसे आत्मा अक्रिय है॥ २३॥

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्यएव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥ २४॥

अयम् १ अच्छेद्यः २ अदाह्यः ३ अक्लेद्यः ४ अशोष्यः ५ एव ६ च ७ नित्यः ८ सर्वगतः ९ स्थाणुः १० अचलः ११ सनातनः १२ अयम् १३॥ २४॥ अ० उ० शस्त्रादि साधनों करके आत्मा इस हेतुसे साध्य नहीं कि आत्मा निर्विकारादि विशेषणो करके विशेषित है यह कहते हैं डेढ श्लोक में❀यह १ आत्मा १ नहीं है छेदन करने के योग्य २ नहींहैं जलाने के योग्य ३ नहीं है लगाने के योग्य ४ नहीं है सुखाने के योग्य ५ अर्थात् आत्मा न छिद सक्ता है. न जल सक्ता है, न गल सक्ता है❀सि० क्योंकि❀नित्य ८ सब जगह व्याप्त ९ स्थाणुवत् स्थिर १० निश्चल ११ सनातन १२ सि० है❀यह १३ सि० आत्मा यहां पदों में पुनरुक्ति प्रतीत होती है. इसका उत्तर प्रथमही हम लिख आये हैं॥ २४॥

अव्यक्तोयमचिन्त्योयमविकार्य्योयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि॥ २५॥

अयम् १ अव्यक्तः २ अयम् ३ अचिन्त्यः ४ अयम् ५ अविकार्य्यः ६ उच्यते ७ तस्मात् ८ एवम् ९ एनम् १० विदित्वा ११ अनुशोचितुम् १२ न १३ अर्हसि १४॥ २५॥ अ० यह आत्मा १ अव्यक्त २ मूर्तिरहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२ सि० हैं❋यह आत्मा ३ अचिन्त्य ४ सि० है अर्थात् चिन्तन करने में नहीं आता है अन्तःकरण का विषय नहीं❋यह आत्मा ५ अविकारी ६ कहा है ७ सि० इस क्रिया का नित्यादि सब पदोंकेसाथ सम्बन्धहै❋ जब कि यह आत्मा ऐसाहै❋तिसकारण से ८ इस प्रकार ९ इस आत्माको १० जानकर ११ पीछे शोच करने को १२ नहीं १३ योग्य है तू १४ तात्पर्य—जो लक्षण आत्मा का पीछे निरूपण किया उसको जान समझकर शोक नहीं रहता है ॥ २५ ॥

अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम्।
तथापि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि ॥ २६ ॥

अथ १ च २ एनम् ३ नित्यजातम् ४ मन्यसे ५ वा ६ नित्यम् ७ मृतम् ८ महाबाहो ९ तथा१० अपि ११ एवम् १२ न १३ शोचितुम् १४ त्वम् १५ अर्हसि १६ ॥ २६ ॥ अ० उ० जो कदाचित् देहोके साथ आत्मा का जन्म मरण तू समझताहो तो भी शोच करना न चाहिये यह कहते हैं❋और जो १। २ सि० कदाचित्❋इस आत्मा को ३ नित्यजात ४ मानता है ५ अर्थात् जीव का देहों के साथ सदा जन्म होताहै ५ वा ६ सदा ७ मरताहै ८ सि० देहों के साथ❋हे अर्जुन !९ तोभी १०। ११ सि० जैसे अगले श्लोक में कहताहूं इस प्रकार १२ नहीं १३ शोच करने को १४ तू १५ योग्य है १६ ॥ २६ ॥

जातस्य हि ध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजान्ममृतस्य च।
तस्मादपरिहार्य्येर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ २७ ॥

हि १ जातस्य २ मृत्युः ३ ध्रुवः ४ मृतस्य ५ च ६ जन्म ७ ध्रुवम् ८ तस्मात् ९ अपरिहार्य्ये १० अर्थे ११ त्वम् १२ शोचितुम् १३ न १४

---

१ क्योंकि जलके बबूलोंकी समान अथवा स्वप्नके विषयोंकी समान नियम पूर्वक आगमापायी देहों का नाश होताही है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्हसि १५ ॥ २७ ॥ ❋अ० जब कि १ जन्मवाले का २ मरण ३ निश्चय ४ सि० है अर्थात् जो उत्पन्न हुआहै वह अवश्य मरेगा इसमें प्रमाण प्रत्यक्ष व्यवहार है ❋और जो मरेहुये का ५ । ६ जन्म ७ निश्चय ८ सि० है अर्थात् जो मरता है उसका जन्म अवश्य होताहै. क्योंकि कर्ता होकर मरा है अपने कियेहुये कर्मोंका भोग करने के लिये अवश्य जन्म लेगा विना भोग वा विना ज्ञान कर्मों का कभी नाश नहीं होताहै ❋तिसकारण से ९ अवश्यभावि काम में १० । ११ तू १२ शोच करने को १३ नहीं १४ योग्यहै १५ टी० जो काम अवश्य होनेवाला है जिसका कुछ इलाज यत्न परिहार प्रतीकार नहीं. उसमें क्या शोच करना चाहिये जो होनी है वह अवश्यहोगी और जो न होनी है वह कभी न होगी. "यदभावि न तद्भावि भाविचेन्नतदन्यथा । अवश्यंभाविभावानां प्रतीकारोभवेद्यदि ॥ तदादुःखैर्नलिम्पेरन्नलरामयुधिष्ठिराः" जो भावि का प्रतीकार होता तो राजा नल, राम, युधिष्ठिरादि को क्यों दुःख होता १०।१२ तात्पर्य—भीष्मादि का इन देहों से एक दिन अवश्य वियोगहोना है तू क्यों शोच करताहै वियोग अवश्य भाविहै और राज्यधनादिके निमित्तभी शोच मतकर क्योंकि क्या तो भीष्मादि धनको छोडकर मर जावेंगें अथवा पहिले धनही उनको छोड देगा. इस हेतु से तू मत शोचकर ॥ २७ ॥

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ।
अव्यक्त निधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥ २८ ॥

भारत १ भूतानि २ अव्यक्तादीनि ३ व्यक्तमध्यानि ४ अव्यक्तनिधनानि ५ एव ६ तत्र ७ का ८ परिदेवना ९ ॥ २८ ॥ अ० उ० जैसे सीपी में चांदी रस्सी में सर्पकी भ्रान्तिहै इसी प्रकार यह जगत् प्रतीत होताहै फिर क्यों शोच करताहै. यह कहते हैं ❋हे अर्जुन ! १ सि० पृथिवी आदि अपने कार्य अन्तःकारणादि शरीर पुत्रादिके साहित ये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब पंच❋भूत २ सि० ऐसे हैं कि❋अव्यक्त अदर्शन अनुपलब्धि आदिहै जिनका अर्थात् आदिमें ये भूत अदर्शनरूप थे इनका दर्शनमात्र भी नहीं था ३ सि० और❋व्यक्त है मध्य जिनका ४ अर्थात् उत्पत्ति से पीछे नाश से पहले बीचमें प्रतीत होते हैं शक्ति में रजतवत् ४ सि० और अव्यक्तही है मरण जिनका ५ अर्थात् इनका जो अदर्शन है वही इनका मरण है नाशहुये पीछे भी ये नहीं दीखते है यह अभिप्रायहै ५ निश्चय निस्सन्देह यह जगत् अविद्या भ्रान्तिसे प्रतीत होताहै. वास्तव नहीं ६ तहां ७ अर्थात् ऐसे पदार्थों के निमित्त जिनकी गति पीछे कही ७ क्या ८ शोक प्रलाप विलाप ९ सि० करना चाहिये. भ्रान्तिके सर्प का काटा हुआ कोई नहीं मरताहै जो आदि अन्तमें नहीं वही वर्त्तमानमें भी नहीं श्रुति यही कहै है "आदावन्तेच यन्नास्ति वर्त्तमानेऽपि तत्तथा" तात्पर्य—यह संसार स्वप्नवत्है इस संसारमें ये भीष्मादि और यह सब सेना और इनके साथ युद्ध करना राज्य भोगना ये सब स्वप्नके पदार्थ हैं इनके निमित्त वृथा विलाप मत कर❋ "शोकानिमित्तस्य प्रलापस्य नावकाशोऽस्तीत्यर्थः कःशोकनिमित्तो विलापः प्रतिबुद्धस्य स्वप्नदृष्टबन्धुषुइव शोको न युज्यते इत्यर्थः" ॥ २८ ॥

आश्चर्यवत् पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः । आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति श्रुत्वाऽप्येनं वेद नचैव कश्चित् ॥ २९ ॥

कश्चित् १ एनम् २ आश्चर्यवत् ३ पश्यति ४ तथा ५ एव ६ च ७ अन्यः ८ आश्चर्यवत् ९ वदति १० अन्यः ११ एनम् १२ आश्चर्यवत् १३ च १४ शृणोति १५ कश्चित् १६ श्रुत्वा १७ अपि १८ एनम् १९ न २० च २१ एव २२ वेद २३ ॥ २९ ॥ अ० उ० आत्मा का जानना एक आश्चर्य अलौकिक अद्भुत बात है आत्माके जानने में बहुत प्रयत्न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करना चाहिये ❋ कोई १ इस आत्मा को २ सि० शमदमादि साधनसम्पन्न हुआ ज्ञानचक्षु करके असंख्यात पुरुषों में जो देखताहै सो ❋ आश्चर्यवत् ३ देखता है ४ अर्थात् लौकिक पदार्थों की तरह आत्माका देखना नहीं बन सक्ताहै ❋ और तैसेही ५ । ६ । ७ अन्य और कोई एक महात्मा ८ आश्चर्यवत् ९ कहता है १० सि० आत्माको अन्य और कोई महात्मा ११ इस आत्माको ११ आश्चर्यवत् १३ ही १४ सुनता है १५ कोई १६ सि० साधनरहित पुरुष तत्त्वमसि, अहम्ब्रह्मास्मि—इत्यादि महावाक्यों को सुनकर १७ भी १८ इस आत्माको १९ नहीं २० । २१ भी २२ जानता है २३ तात्पर्य—त्रिलोक वा चौदहोंलोक वा चौदह से भी सिवाय जिस के मतमें कोई और ऊंचा वैकुंठादि लोक हो उनमें जितने नाम रूपवाले इन्द्रिय अन्तःकरणका विषय जितने पदार्थ हैं उन सब पदार्थों को लौकिक कहते हैं पुरुष आत्मा को लौकिक पदार्थवत् सुना चाहताहै वा देखा चाहताहै वा कहा चाहताहै यह कभी नहीं होसक्ता. क्योंकि आत्मा लौकिक पदार्थवत् नहीं अलौकिक आश्चर्यवत् है जो इन्द्रिय अन्तःकरण का विषय तो है नहीं और सुनाजावे, कहाजावे, देखजावे, जानाजावे, अनुभव कियाजावे करामलकवत् यही आश्चर्य है ॥ २६ ॥

देहीनित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत ।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥३०॥

भारत १ अयम् २ देही ३ सर्वस्य ४ देहे ५ नित्यम् ६ अवध्यः ७ तस्मात् ८ सर्वाणि ९ भूतानि १० त्वम् ११ शोचितुम् १२ न १३ अर्हसि १४ ॥ ३० ॥ अ० उ० ग्यारहवें श्लोक से आत्मा और आनात्मा का जो विवेक निरूपण करते हुये चले आते हैं इस प्रकरण को अब समाप्त करते हैं ❋ हे अर्जुन ! यह २ सि० शुद्ध सच्चिदानन्द ❋ आत्मा ३ सबके ४ देहमें ५ सि० ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्य्यन्त ❋ नित्य ६ अवध्य ७ सि०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है अर्थात् इसका वध नहीं होसक्ता. मर नहीं सक्ता. तात्पर्य—किसी क्रिया का विषय नहीं अविकारी अक्रियहै ❋ तिस कारणसे ८ सब भूतों को ९। १० अर्थात् कर्त्ता कर्मादि रूप भूतों के निमित्त १० तू ११ शोच करने-को १२ नहीं १३ योग्य है १४. तात्पर्य—मरे जीवितों के निमित्त तू शोच मतकर. जो पण्डितोंकीसी बातें करता है तो फिर सच्चाही पण्डित होना चाहिये. पण्डित ब्रह्मज्ञानी का नाम है सो होना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥३०॥

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।
धर्म्याद्धियुद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्यनविद्यते ॥३१॥

स्वधर्मम् १ अपि २ च ३ अवेक्ष्य ४ विकम्पितुम् ५ न ६ अर्हसि ७ हि ८ धर्म्यात् ९ युद्धात् १० अन्यत् ११ श्रेयः १२ क्षत्रियस्य १३ न १४ विद्यते १५ ॥ ३१ ॥ अ० उ० लौकिक रीति से अब श्रीमहाराज अर्जुनको समझाते हैं आठ श्लोकों में अर्जुनने पीछे कहा था कि महाराज अपने सम्बन्धियोंको युद्धमें मरता हुआ समझ कर मेरा शरीर कम्पता है. उस वाक्य का स्मरण करके श्रीमहाराज कहते हैं कि प्रथम तो विचारदृष्टि करके मुझको घबराना न चाहिये. सिवाय इसके अपने धर्मका स्मरण करके भी तुझको घबराना योग्य नहीं. क्योंकि परमार्थदृष्टि करके तो कम्पन का सावकाश है ही नहीं ❋ और अपने धर्म को भी १। २। ३ देखकर ४ कम्पा करनेको ५ नहीं योग्य है [तू] ६। ७ सि० और यह जो तूने पीछे कहा कि रणमें अपने सम्बन्धियोंको मारकर अपना भला नहीं देखताहूं यह मत समझ ❋ क्योंकि ८ धर्मयुक्तयुद्धसे ९। १० सि० सिवाय पृथक् अन्यत् ११ सि० भिक्षाटनादि में क्षत्रिय का १२ कल्याण भला १३ नहीं है १४ । १५ सि० इन आठों श्लोकों में (इकतीसवें से अड़तीसवें तक) प्रकरण का अर्थ तो वही है जो अक्षरार्थ है. परंतु तात्पर्य—इन आठों श्लोकों का परमार्थ भी है उसको ऐसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समझो कि क्षत्रिय अर्जुनकी जगह तो मुमुक्षु वा ज्ञानी और युद्धकीजगह अन्तःकरण इन्द्रियादि का विरोध श्रीमहाराज विद्वानोंको समझातेहैं कि, विचारदृष्टि करके भी शरीरादिकों का निरोध करना चाहिये. घबराना योग्य नहीं और अपने धर्मको भी देखकर इन्द्रियादिकों का विषयोंसे निरोध करना योग्य है. क्योंकि शास्त्र का तात्पर्य—बहिर्मुखता में नहीं और जो पुरुष ज्ञाननिष्ठ नहीं पूर्वमीमांसा वा उपासना को इष्टधर्म समझताहै तौ भी अन्तःकरणादि के निरोधरूप धर्म्म से पृथक् अन्यत् बहिर्मुख होना आदि उनका भला करने वाला नहीं ॥ ३१ ॥

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् ।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥३२॥

पार्थ १ ईदृशम् २ युद्धम् ३ सुखिनः ४ क्षत्रियाः ५ लभन्ते ६ अपावृत्तम् ७ स्वर्गद्वारम् ८ यदृच्छया ९ च १० उपपन्नम् ११ ॥ ३२ ॥ अ० उ० आनन्दका मार्ग अपने आप तुझको प्राप्त हुआहै तू तो बड़ा भागीहै. शोच क्यों करता है❋हे अर्जुन ! १ ऐसे युद्धको २ । ३ सुखी क्षत्रिय ४ । ५ अर्थात् स्वर्गादिजन्य सुखके भोगनेवाले ५ प्राप्त होते हैं ६ अर्थात् ऐसा युद्ध भाग्यवान् क्षत्रियोंको प्राप्त होताहै ६ ।सि० कैसा है यह युद्ध कि❋खुला स्वर्गका दरवाजाहै ७ । ८ और यदृच्छा करके ९ । १० प्राप्त हुआ है ११ अर्थात् विना बुलाये विना प्रार्थना (इच्छाकिये) अपनेआप प्राप्तहुआ है ११ ।सि० परमार्थ यह है कि यह मनुष्यशरीर सुरदुर्लभ बड़े भाग्यसे अपने आप ईश्वरकी कृपा करके प्राप्त हुआहै. इस में अन्तःकरणादिकों का निरोध करना कैसाहै कि खुलाहुआ मोक्षद्वार है परमानन्द जीवन्मुक्तिके भोगने वाले महात्मा संघातका निरोध करतेहैं इस शरीर के प्राप्त होने का फल शब्दादि भोग नहीं और परलोक के भोग भी अनित्य होने से दुःख देने वाले हैं इस शरीर से मोक्षमार्ग में ही प्रयत्न करना योग्यहै ❋॥ ३२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि।
यतः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥३३॥

अथ १ चेत् २ त्वम् ३ इमम् ४ धर्म्यम् ५ संग्रामम् ६ न ७ करिष्यसि ८ ततः ९ स्वधर्मम् १० कीर्तिम् ११ च १२ हित्वा १३ पापं १४ अवाप्स्यसि १५ ॥ ३३ ॥ अ० उ० व्यतिरेक मुखकरिके पक्षान्तर यह कहतेहैं कि जो तू युद्ध न करेगा. तो तेरी बड़ी क्षति होगी❋और १ जो २ तू ३ इस ४ धर्मयुक्त संग्राम को ४ । ५ । ६ न करेगा ७ । ८ सि० तो❋तिस कारण से ९ अपने धर्मको १० और कीर्तिको ११ । १२ त्यागकर १३ पापको १४ प्राप्त होगा १५ सि० परमार्थ यहहै कि जो इन्द्रियादिकों का निरोधरूप अपने धर्म को न करोगे तौ तुम्हारा धर्म जाता रहने से तुम्हारी कीर्ति भी नाश होजायगी. ऐसा पाप करने से नरक को प्राप्त होगे. तात्पर्य—धर्मात्मा वही हैं जिनका संघात निरोध है और जिनका यश सज्जनों में होवे वेही सुयशवाले हैं नहीं तो अपने अपने पेशे जाती में कोई न कोई एक प्रधान कहलाताहै ॥ ३३ ॥

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम्।
संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥ ३४ ॥

भूतानि १ ते २ अकीर्तिम् ३ च ४ कथयिष्यन्ति ५ अव्ययाम् ६ सम्भावितस्य ७ च ८ अकीर्तिः ९ मरणात् १० अपि ११ अतिरिच्यते १२ ॥ ३४ ॥ अ० उ० यह नहीं समझना कि अकीर्ति होनेसे मेरी क्या क्षति होगी. दो चार वर्ष कहकर सब चुप होजावेंगे अपितु तेरी अकीर्ति सदा बनी रहेगी यह कहते हैं❋छोटे बड़े सब स्त्री पुरुष प्राणीमात्र १ तेरी २ अकीर्ति को ३ भी ४ कहेंगे ५ सि० और तुझको नरक भी होगा❋कैसे है वह अकीर्ति ।कि❋सदा बनी रहेगी. यह तात्पर्य—है ६ सि० फिर इससे मेरी क्या क्षति होगी. यह शंका करके कहते हैं कि अकीर्त्ति सब के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वास्तेही बुरी है❋और प्रतिष्ठावाले पुरुष की ७।८ अकीर्ति ९ सि० तो ❋मरने से १० भी ११ सिवाय है १२ सि० परमार्थ यहहै कि जिस कीर्त्ति के वास्ते तुम दिन रात प्रयत्न करते हो यह चाहते हो कि हमारा नाम बना रहे सो परमधर्म जो संघात का निरोध करना इसके न करने से सदा जीते जी और मरकर दूसरे जन्ममें इस प्रकार सदा अकीर्ति बनी रहेगी. जीते जी तो लोगोंकी निन्दा सहनी पड़ेगी और मरकर यमराज के सामने दुर्दशा होवेगी. वह क्लेश मरने से भी अधिक है ॥ ३४ ॥

भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम्॥३५॥

महारथाः १ त्वाम् २ भयात् ३ मरणात् ४ उपरतम् ५ मंस्यन्ते ६ येषाम् ७ च ८ त्वम् ९ बहुमतः १० भूत्वा ११ लाघवम् १२ यास्यसि १३ ॥ ३५ ॥ अ० उ० लोग यह नहीं समझेंगे कि अर्जुन युद्धमें हिंसा पाप समझकर उपराम हुआ है यह नहीं समझेंगे तो फिर क्या समझेंगे यह शंका करके श्रीमहाराज यह कहते है❋शूरवीर दुर्योधनादि १ तुझ को २ सि० मरने के❋ भय से ३ रण से ४ हटाहुआ ५ मानेंगे ६ अर्थात् यह समझेंगे कि मरने का भय करके अर्जुन रणमें से भागगया (हटगया) सि० जो वे ऐसाही समझेंगे तो मेरी इसमें क्या क्षति होगी. यह शंका करके श्रीमहाराज यह कहते हैं❋जिनको ७ अर्थात् दुर्योधनादि को ७ और ८ सि० सिवाय उनके अन्य बहुत पुरुषों का❋तू ९ बड़ा १० सि० कहलाता है दुर्योधनादि मुझको बहुत गुणवाला मानते हैं ऐसा❋ होकर ११ छुटाई को १२ प्राप्त होगा १३ अर्थात् वेही दुर्योधनादि कि जो तुझको बहुतगुण वाला शूरवीर मानते हैं तुझको कातर नपुंसक मूर्ख बतावैंगे यह तेरी क्षति होगी. जिनके बीच में तू बहुगुणवाला माना जाता है उनकेही बीच में छुटाई को प्राप्त होगा १३ परमार्थ यह है कि जितेन्द्रिय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महात्मा महापुरुष अजितेन्द्रिय बहिर्मुखों को ऐसा समझेंगे कि शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण का निरोध करना तो कठिन समझ रक्खा है। रोचक वाक्यों का आश्रय लेकर भोग हैं धन्य समझ और धन्य साधन किंचितमात्र भी शास्त्र का तात्पर्य न समझा. अग्निको अग्नि से बुझाते हैं अन्तःकरणादि के निरोध को बखेड़ा बताते हैं महात्मालोग ऐसे पुरुषों को आलसी, प्रमादि, विषयी, बहिर्मुख मानते हैं ज्ञान भक्ति कर्म का आश्रय लेकर जो बहिर्मुख अजितेद्रिन्य होंगे तो नीचता को प्राप्त हो जावेंगे॥३५॥

अवाच्यवादांश्च बहून्वदिष्यन्ति तवाहिताः।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम्॥३६॥

तव १ सामर्थ्यम् २ निन्दन्तः ३ तव ४ अहिताः ५ बहून् ६ अवाच्यवादान् ७ च ८ वादिष्यन्ति ९ दुःखतरम् १० किम् ११ नु १२ ॥ ३६ ॥

अ० उ० तुझको छोटा भी समझेंगे और❋ तेरे १ पराक्रम की निन्दा करते हुये २।३ तेरे ४ वैरी ५ सि० तेरे निमित्त❋ बहुत अवाच्य वचनोंको ६।७ भी ८ अर्थात् न कहनेके योग्य जो वचन तिनको भी ८ कहेंगे ९ सि० इससे मेरी क्या क्षति होगी. यह शङ्का करके कहतेहैं❋ तिससे १० अर्थात् समर्थ होकर दुर्वाक्य सुनने से सिवाय और १० विशेष दुःख ११ क्या? १२ सि० होगा ❋यह शब्द वितर्क में बोला जाताहै जैसे कोई किसी को ताना धिक्कार देकर बोले कि और इसको कर्मसे सिवाय क्या होगा? ऐसेही अर्जुन को ताना देकर श्रीमहाराज कहते हैं कि दुर्वाक्य सहने से सिवाय और क्या दुःख होगा? यह इस 'नु' शब्द का तात्पर्यार्थ हैं १३ परमार्थ यह है कि, संसार मे जो अजितेन्द्रिय बहिर्मुख है और दैवयोग से उनको धन प्राप्त होगया है वा राज्यादि अधिकार मिलगयाहै उनको कोई बुरा न कहै उनके अवगुण समझकर चुप रहै यह नहीं समझना किन्तु वेद वेदान्त पातञ्जलि शास्त्र उनकी निन्दा करते हैं सिवाय उनके सज्जन साधु-लोग निःस्पृही सब उनको बुरा समझतेहैं प्रसङ्गसे कह भी देते है और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो गृहस्थलोग मुखपर नहीं कहते तो पीछे बुरा कहते हैं विचारो इससे सिवाय उन विभागों को और विशेष दुःख क्या होगा. और उनके सिवाय और कौन बुराहै जिनकी वेद शास्त्र महात्मा बुराई करै ॥ ३६ ॥

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥ ३७ ॥

हतः १ वा २ स्वर्गम् ३ प्राप्स्यसि ४ वा ५ जित्वा ६ महीम् ७ भोक्ष्यसे ८ कौन्तेय ९ तस्मात १० उत्तिष्ठ ११ युद्धाय १२ कृतिनिश्चयः १३ अ० उ० पीछे अर्जुन ने कहाथा कि न जानिये मुझको जीतेंगे वा मैं इनको जीतूंगा उस वाक्यका स्मरण करके श्रीमहाराज यह कहते हैं कि तेरा दोनों प्रकार भलाहोगा ❋ सि० युद्ध में ❋ जो मरगया १ । २ सि० तू तो मरकर स्वर्गको ३ प्राप्त होगा ४ और ५ सि० जो जीतगया तौ ❋ जीतकर पृथिवी को ६ भोगेगा ७ अर्थात् राज्य करेगा ८ हे अर्जुन ! ९ तिस कारण से १० उठखड़ा हो ११ अर्थात् दोनों प्रकार अपनी भलाई समझकर युद्धकर १२ सि० कैसाहै तू ❋ युद्धके लिये १२ किया है निश्चय जिसने १३ अर्थात् युद्ध करने का निश्चय करके तो तू यहां आयाहै अब क्यों कायरपन करताहै तात्पर्य—पहलेही अर्जुनने युद्ध करने का निश्चय करलिया है कुछ श्रीमहाराज का तात्पर्य युद्ध कराने में नहीं तू युद्धकर खड़ाहो यह प्रासंगिक लौकिक रीतिहै अभिप्राय श्रीमहाराजका परमार्थ में ही है ❋ परमार्थ यहहै कि, श्रीमहाराज भक्तों से कहते हैं जो तुम शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण का निरोध करते करते मरगये इस परमधर्म में तो बड़े २ लोक को प्राप्त होगे और जो अन्तः करणादि को तुमने जीतलिया वशमें करालिया तो ज्ञानद्वारा जीवतेही जीवन्मुक्ति का आनन्द भोगोगे ऐसा विचारकर सावधान होके इन्द्रियादिकों का निरोध करो दोनों पक्ष में आनन्द है नरशरीर दुर्लभहै " नरतनु पाय विषय मन देहीं । पलटि सुधा ते शठ विष लेहीं " ॥ ३७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥ ३८॥

सुखदुःखे १ समे २ कृत्वा ३ लाभालाभौ ४ जयाजयौ ५ ततः ६ युद्धाय ७ युज्यस्व ८ एवम् ९ पापम् १० न ११ अवाप्स्यसि १२ ॥३८॥ अ० उ० पीछे अर्जुन ने कहा था कि युद्ध करने में मुझे पाप होगा उस वाक्यका स्मरण करके श्रीमहाराज यह कहते हैं❀सुखदुःख को १ समान २ करके ३ अर्थात् इन दोनों को फलमें बराबर समझकर लाभ अलाभको ४ जय अजयको ५ सि० भी समान समझकर❀पीछे उसके ६ युद्धके वास्ते ७ चेष्टा कर ८ अर्थात् युद्ध कर ८ इसप्रकार ९ पापको १० नहीं ११ प्राप्त होगा (तू) १२ तात्पर्य—सुखः दुःख का कारण लाभ अलाभ है लाभालाभका कारण जय अजय है इन सब में रागद्वेष रहित होकर युद्धकर कभी पाप न होगा❀परमार्थ यह है कि अन्तःकरणादिके निरोध कालमें सुख दुःखको इष्ट अनिष्टकी प्राप्तिको बराबर समझना चाहिये. हर्ष शोक न करना प्रथम अन्तःकरणादि के निरोधकाल में विघ्न दुःख अपमानादि बहुत होते हैं और फिर सुख सन्मानादि भी बहुत होते हैं दोनोंमें हर्ष, शोक त्याग करके अन्तःकरण का निरोध करताहीरहे. इस प्रकार बन्धनको नहीं प्राप्त होंगे और जो दुःख सुख विघ्न सन्मानादि के झपट्टे में आगये वा स्वर्गादि फलमें फँस गये तो फिर बन्धन से छूटना कठिन है. तात्पर्य—अन्तःकरणादिका निरोध निष्काम होकर करना योग्य है इस प्रकार बहिरङ्ग कर्मोंके त्यागमें पाप न होगा ॥३८॥

एषा तेऽभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगेत्विमां शृणु।
बुद्ध्यायुक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि ॥ ३९॥

एषा १ सांख्ये २ बुद्धिः ३ ते ४ अभिहिता ५ योगे ६ तु ७ इमाम् ८ शृणु ९ पार्थ १० यया ११ बुद्ध्या १२ युक्तः १३ कर्मबन्धम् १४ प्रहा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्यसि १५ ॥ ३९ ॥ अ० उ० ग्यारहवें श्लोकसे लेकर तीसके श्लोक तक बीस श्लोकोंमें अर्जुनका शोक मोह दूर करनेके लिये ब्रह्मज्ञान उपदेश किया फिर आठ श्लोकोंमें लौकिक न्याय करके अर्जुनको समझाया अब उस लौकिक न्यायको समाप्त करके ज्ञागनिष्ठामें अर्जुनको तत्पर करनेके लिये ज्ञाननिष्ठाका जो साधन भगवद्भक्ति आदि निष्कामकर्म योग उसको फलके सहित निरूपण करते हैं❀हे अर्जुन! ग्यारहवें श्लोकसे लेकर तीसवें श्लोक तक बीस श्लोकोंमें जो तुझको ज्ञान उपदेश किया❀यह १ आत्मा तत्त्वके विषय २ ज्ञान ३ तेरे अर्थ ४ तुझसे कहा ५ सि० मैंने अर्थात् यह तो मैंने ब्रह्मज्ञान उपदेश किया परन्तु यह अत्यन्त सूक्ष्म अलौकिक आश्चर्य पदार्थ है जो तेरी समझ में न आया हो तो इसकी प्राप्ति और समझके लिये इसका साधन भगवद्भक्ति आदि निष्काम कर्म❀योग विषय ६ भी ७ सि० ज्ञानमें अब कहता हूं❀इसको ८ सुन तू ९ हे अर्जुन! १० सि० यह वह ज्ञान तुझको सुनना हूं❀कि जिस ज्ञान करके ११।१२ युक्त १३ सि० हुआ तू अर्थात् जिस ज्ञान का अनुष्ठान करके अन्तःकरण शुद्धिद्वारा❀कर्मरूप बन्धन को अर्थात् धर्माधर्मरूप बन्धन को १४ भलेप्रकार त्याग देगा १५ अर्थात् बन्धन से छूट जायगा (मुक्तहो जायगा) १५ ॥ ३९ ॥

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥४०॥

इह १ अभिक्रमनाशः २ न ३ अस्ति ४ प्रत्यवायः ५ न ६ विद्यते ७ अस्य ८ धर्म्यस्य ९ स्वल्पम् १० अपि ११ महतः १२ भयात् १३ त्रयाते १४ ॥ ४० ॥ अ० उ० जैसे खेती आदि में फलपर्यन्त अनेक विघ्न होते हैं ऐसेही इस भगवत आराधनादि निष्काम कर्म योगमें भी होंगे तो फिर अन्तः करण शुद्धिद्वारा ज्ञान की प्राप्ति कठिन प्रतीत होतीहै. तात्पर्य-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फलकी प्राप्तिपर्यन्त निर्विघ्न समाप्त होना, निष्काम कर्मयोग का कठिन प्रतीत होता है, यह शंका करके कहते हैं ❋ निष्काम कर्मयोग में १ सि० किसी प्रकारका बीचमें विघ्नभी हो जावे तोभी ❋ प्रारम्भ का नाश २ नहीं है ३ । ४ सि० जैसे किसी ने माघमास में प्रातःकाल स्नान करनेका प्रारम्भ किया और दो चार दिनके पीछे उस महीनेके बीच में कुछ विघ्न होगया कि जिस करके वह निष्काम पुरुष महीनाभर स्नान न कर सका तो उस थोड़ेही काल में स्नान करने का अर्थात् प्रारम्भमात्र का भी नाश नहीं होताहै. तात्पर्य—वह सकाम कर्मवत् और खेती आदि कर्मवत् निष्फल नहीं जाता है. एक न एक दिन अवश्यही निष्काम पुरुष को निष्काम कर्मयोगके फिर सन्मुखकरके अन्तःकरणशुद्धिद्वारा ज्ञाननिष्ठा करके मोक्ष करेगा ❋ द्वितीय शंका यह है कि जैसे मन्त्रका जप वा पाठ विधिवत् न होसके तो उसमें उलटा पाप होता है. अथवा रोग दूर करनेके लिये औषध खाते हैं जो कदाचित् वैद्यकी समझ में रोग न आवे तो उलटा औषध खाने सेही प्राणी मरजाता है. यह निष्काम कर्म भी ऐसाही होगा. क्योंकि प्रथम तो धर्म, कर्म, भक्ति आदिका स्वरूप यथार्थही जानना कठिन है. सब पण्डित आचार्य्यों का एक सिद्धान्त नहीं और जो किसी एक मतमे निश्चय भी किया तो उस कर्मका अनुष्ठान विधिवत् होना कठिनहै, और जो दूसरे के वाक्य में विश्वास करके अनुष्ठान किया और बतलानेवालेने बुद्धिके भ्रमसे वा मत मतान्तर की खैंचसे यथार्थ न बतलाया तो फल देना तो पृथक् रहा, उलटा पाप लगने से डर लगताहै. यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि ये दोष सकाम कर्मयोगमें हैं निष्काम कर्मयोग में ❋ प्रत्यवाय (पाप) ५ नहीं है ६ । ७ इस धर्मका ८ । ९ थोड़ा १० भी ११ सि० अनुष्ठान किया हुआ प्रारम्भमात्रभी ❋ बड़े भयसे १२ । १३ अर्थात् दुःख आलय संसार से १३ रक्षा करताहै १४. तात्पर्य—भगवत् आराधनादि निष्काम कर्मयोग थोड़ा भी अपनी शक्तिके अनुसार किया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुआ अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञाननिष्ठा को प्राप्त करके जन्म मरण दुःख-रूप संसार से छुटाकर पूर्ण ब्रह्म परमानन्दस्वरूप आत्मा को प्राप्त करता है. पिछले पूर्वपक्ष में कहेहुये दोष सब सकाम कर्मों में हैं निष्काम कर्म और सकाम कर्मोंका बड़ा भेदहै ॥ ४० ॥

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाखाह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्॥ ४१॥

कुरुनन्दन १ इह २ व्यवसायात्मिका ३ बुद्धिः ४ एका ५ अव्यवसायिनाम् ६ बुद्धयः ७ अनन्ताः ८ च ९ बहुशाखाः १० हि ११ ॥ ४१ ॥

अ० उ० जब कि निष्काम कर्मयोगका यह अद्भुत माहात्म्य आप कहते हो तो सबलोग इसीका अनुष्ठान क्यों नहीं करते ? मूर्त्तिमान् परमेश्वरका दर्शन वैकुण्ठ स्वर्गादि फल क्यों चाहतेहै ? यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं यह ❋ हे अर्जुन ! १ इस मोक्षमार्ग में २ सि० मुमुक्षु अन्तर्मुख व्यवसायी पुरुषों के बिषय ❋ निश्चय स्वरूप वाली ३ अर्थात् निश्चय करनेवाली आत्माकी ३ बुद्धि ४ अर्थात् ज्ञान ४ एक ५ सि० ही है ❋ तात्पर्य इस अर्थमें जिस शुद्धिका निश्चय है अर्थात् निश्चल है जो बुद्धि इस अर्थ में कि निष्काम भगवत् आराधनादि कर्मयोग करके अन्तःकरण की शुद्धि होती है तब शुद्धान्तःकरण होय निस्सन्देह परात्पर परमानन्द पूर्णब्रह्म आत्माको कि जिसको परमगति कहते हैं. प्राप्त होताहै. जीव इसका नाम व्यवसायात्मिका बुद्धि है. सो यह मोक्षमार्ग में एकही है. अर्थात् इस एक ज्ञानके सिवाय और दूसरा कोई ६ ज्ञान मोक्षका हेतु नहीं और जिनके यह निश्चय नहीं उनको ❋ अव्यवसायी बहिर्मुख प्रमाणजनित विवेकबुद्धिरहित कहते हैं. उनके ६ ज्ञान ७ अनन्त ८ और ९ बहुत शाखाभेद वाले १० भी ११ सि० हैं. तात्पर्य–वैदिक मार्ग तो सनातन से एकही चला आता है. कि जो पूर्व निरूपण किया स्मार्तमत से उसका विरोध नहीं और कल्पितमत अनन्त है और एक एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में भी नानाभेद हैं जिस वास्ते नये मत लोगों ने कल्पित किये हैं श्रौत स्मार्तमार्ग सनातन को छोड़ दियाहै इसका हेतु तेंतालीसलवे श्लोक में श्रीमहाराज कहेंगे ॥ ४१ ॥

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः ।
वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः ॥ ४२ ॥

याम् १ वाचम् २ पुष्पिताम् ३ प्रवदन्ति ४ इमाम् ५ पार्थ ६ वेदवादरताः ७ अविपश्चितः ८ न ९ अस्ति १० अन्यत् ११ इति १२ वादिनः १३ ॥ ४२ ॥ अ० उ० प्रमाणजनित विवेकबुद्धिरहित बहिर्मुख अव्यवसायी जिनको आप कहते हैं वे क्या विना प्रमाण के कर्म उपासना करते हैं. यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं. यह कि उनके प्रमाणों को सुन❋सि० वेदों का सिद्धान्त. तात्पर्य—जाननेवाले महात्मा व्यवसायिनः❋जिस वाणी को १ । २ पुष्पिता ३ कहते हैं ४. तात्पर्य—जैसे किसी वृक्ष में फूल तो बहुत सुन्दर दीखै परन्तु फल उसमें नहीं लगता है वा लगता है तो कडुवा ऐसेही वेदों में रोचक वाक्य हैं. अर्थात् अर्थवाद वाली श्रुति हैं सुनने में तो वे बहुत प्रिय प्रतीत होती हैं, फल उनका कुछ नहीं, अर्थात् जो फल उसका अव्यवसायी कहते हैं वह फल उस श्रुतिका नहीं, जैसे व्रत तीर्थादिका महात्म्य अर्थवाद है. तात्पर्य—उनका अन्तःकरणकी शुद्धि और चित्त की एकाग्रता में है स्वर्ग वैकुण्ठ पुत्रादिमें नहीं ऐसी ऐसी वाणीको कि जिसको वेद पुष्पिता कहते हैं❋हे अर्जुन ! इसको ५ सि० ही अव्यवसायिनः मोक्षका साधन सिद्धान्त कहते हैं❋कैसे हैं वे अव्यवसायिनः ❋ ६ वेदवाद में है प्रीति जिनकी ७ अर्थात् वेदों में अर्थवाद (रोचक वाक्य) हैं वे उनको प्रिय लगते हैं, और वास्ते चर्चा करने के अपनी पण्डिताई दिखाने के लिये उन अर्थवादोंको कण्ठकर लेते हैं, ऐसे❋७ अविवेकी मन्दमति बहिर्मुख ८ सि० फिर कैसे हैं ये लोग कि आप अ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानी बने ब्रह्मज्ञान को भी खण्डन करतेहुये ब्रह्मज्ञानियों को अज्ञानी बताते हैं. तात्पर्य—वे यह कहते हैं कि जो हमारा मतहै अर्थात् भेद सि. द्धान्तहै इससे सिवाय❋नहीं ९ है १० अन्यत् ११ सि० और कोई मत सिद्धान्त अद्वैत ब्रह्मज्ञान ज्ञाननिष्ठा संन्यास जो हम कहते हैं यही सिद्धान्त है। यह १२ कहने का स्वभाव है जिनका १३. तात्पर्य—वेदान्तमें दोष निकालने यही बकनेका स्वभाव है जिनका और भी इनके विशेषण अगले श्लोक में हैं ॥ ४२ ॥

कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्।
क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति ॥ ४३ ॥

कामात्मानः १ स्वर्गपरा २ जन्मकर्मफलप्रदाम् ३ भोगैश्वर्यगतिम् ४ प्रति ५ क्रियाविशेषबहुलाम् ६ ॥ ४३ ॥ अ० उ० ऐसा अनर्थ वे क्यों करते हैं इस अपेक्षामें श्रीमहाराज यह कहते हैं कि वे❋कम भी विषयी बहिर्मुख १ सि० हैं फिर कैसे हैं कि❋स्वर्गही है परा पुरुषार्थ अवधि जिनके २ सि० इस विशेषण से स्पष्ट यह प्रतीत होताहै कि यज्ञ, दान, व्रत, तीर्थ, भगवत् आराधनादि जो करते हैं ये तो कैवल्य मोक्ष के लिये नहीं करते किन्तु भोगों के लिये करते हैं❋स्वर्गपद तो उपलक्षण है. अर्थात् वैकुण्ठ गोलोकादि सावयवलोक सब आगये❋पिछले श्लोक में जो कहाथा कि वे इस पुष्पिता वाणीको सिद्धान्त कहते हैं उस वाणी के विशेषण और भी सुन❋कैसी है वह वाणी❋जन्मकर्म फलकी देनेवाली ३ सि० है अर्थात् उस वाणीके अनुसार जो कर्म कियाजाताहै. उस कर्म का यही फल है कि वारंवार संसार में जन्म होना. जन्मही उस कर्म का फल है❋फिर कैसी है❋भोग ऐश्वर्य की प्राप्ति के प्रति ४। ५ सि० तात्पर्य—भोग ऐश्वर्य की प्राप्तिके लिये साधन है वह वाणी❋उस वाणी के अनुसार अनुष्ठान करने से भोग ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है❋

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर कैसी है वह वाणी ❋ क्रियाविशेष बहुत हैं जिस में ६ सि० अर्थात् उस वाणी में नानाप्रकार की क्रिया हैं और एक एक क्रियाका अन्त नहीं प्रतीत होताहै. क्योंकि अनन्त बहुतहैं. हे अर्जुन! उन अव्यवसायियों के ऐसे ऐसे वाक्यों का प्रमाण है ऐसी ऐसी वाणी बकते हुये संसार में भ्रमते रहते हैं. ऐसे पुरुषों के साक्षात् मोक्षकी साधनरूप व्यवसायात्मिका बुद्धि नहीं उत्पन्न होती है. अगले श्लोक के साथ इसका अन्वयहै ॥ ४३ ॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम्।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते॥४४॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानाम् १ तया २ अपहृतचेतसाम् ३ समाधौ ४ व्यवसायात्मिका ५ बुद्धिः ६ न ७ विधीयते ८ ॥ ४४ ॥ अ० उ० भेदवादी सदा ब्रह्मज्ञान से विमुख रहकर संसार में भ्रमते हैं. यह कहते हैं श्रीमहाराज ❋ भोग ऐश्वर्य में जो आसक्त हैं १ सि० और ❋ तिस करके अर्थात् उस पुष्पिता वाणी करके २ हरा गयाहै चित्त जिनका ३ अर्थात् उस पुष्पिता वाणी करके उनकी विवेक बुद्धि आच्छादित होगई याने ढकगई है उनके ३ अन्तःकरण में ४ व्यवसायात्मिका बुद्धिः ५। ६ नहीं ७ उत्पन्न होती है ८ वा नहीं स्थिर होती ८ तात्पर्य—उनका चित्त शान्त नहीं होता. क्योंकि सदा इसलोक परलोक के विषयों में तत्पर रहते हैं ❋ टी० जो समाधान किया जावे उसको भी समाधि कहते हैं, इस व्युत्पत्ति से यहां समाधि का अर्थ अन्तःकरणहै ॥ ४४ ॥

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्॥४५॥

त्रैगुण्यविषयाः १ वेदाः २ अर्जुन ३ निस्त्रैगुण्यः ४ भव ५ निर्द्वन्द्वः ६ नित्यः सत्त्वस्थः ७ निर्योगक्षेमः ८ आत्मवान् ९ ॥ ४५ ॥ अ० उ० जब कि वेदोंही में पुष्पिता वाणी रोचक निष्फल वाक्य है तो उन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाक्यों के कहनेवाले का और उन वाक्यों के अनुसार अनुष्ठान करनेवाले का क्या दोष है यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि, क्या वेदों में केवल पुष्पिता वाणीही है साक्षात् मोक्ष का साधन क्या उसमें नहीं अर्थात् वेदों में रोचक वाक्य भी हैं और साक्षात् मोक्ष के साधन मन्त्रभी हैं प्रत्युत मारण उच्चाटनादि मन्त्र बहुत हैं. परन्तु मुमुक्षको सिवाय साक्षात् मोक्ष साधने के और वाक्योंसे कुछ काम नहीं. इस गीताशास्त्रमें ब्रह्मविद्या मैं साक्षात् मोक्षका साधन निरूपण करता हूं. समस्त वेद वाक्योंसे यहां कुछ प्रयोजन नहीं, जो उनका प्रमाण दिया जावे. मुमुक्षुका प्रयोजन केवल मोक्षके साधनों से है, सोई सुन ❋ सतोगुणी, रजोगुणी, तमोगुणी कामना. वाले पुरुषोंका विषय १ सि० भी है ❋ वेद २ अर्थात् जैसे को तैसा फलके देनेवाले भी हैं और साक्षात् मोक्ष का साधन भी है वेद २ हे अर्जुन! ३ सि० परन्तु तुझको तो मैं ब्रह्मविद्या साक्षात् मोक्षका साधन सुनाताहूं, इस समय तू तो ❋ गुणातीत निष्काम ४ हो ५ सि० रोचक वाक्यों की तरफ दृष्टि मतकर. गुणातीत होनेके साधन यह हैं द्वन्द्वरहित ६ सि० हो. अर्थात् प्रारब्धवश जो सुखदुःख इष्टानिष्टादि प्राप्तहों सबको सहनकर सुखदुःखादिकी प्राप्तिमें हर्षविषाद के वश मतहो निर्द्वन्द्व होने में हेतु यह साधन है कि ❋ नित्यसत्त्व जो आत्मा उसमें स्थित ७ सि० हो अर्थात आत्मनिष्ठ हो अथवा सदा सत्वगुण में दीर्घकाल स्थिति हो सक्ती है. इसीवास्ते यह कहते हैं कि ❋ योग क्षेमरहित ८ सि० हो अर्थात् जो पदार्थ लौकिक प्राप्त नहीं उसकी प्राप्ति का तो उपाय मतकर और जो प्राप्त है उसकी रक्षामें प्रयत्न मतकर ❋ पूर्वोक्त साधनोंका हेतु यह साधन है कि ❋ अप्रमत्त ९ सि० हो अर्थात् प्रमादी प्रमत्त मत हो. सदा चैतन्य अनालस्य रहना योग्य है. विषयोंसे विमुख होकर आत्मा के सन्मुख होना चाहिये. पूर्वोक्त साधन जिसके नहीं उससे मोक्षमार्गमें प्रयत्न होना कठिन है ॥ ४५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके।
तावान् सर्वेषु देवेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥ ४६॥

यावान् १ अर्थः २ उदपाने ३ सर्वतः ४ संप्लुतोदके ५ तावान् ६ सर्वेषु ७ वेदेषु ८ विजानतः ९ ब्राह्मणस्य १० ॥ ४६ ॥ अ० उ० इस लोक परलोकके सुन्दर भोगों से हटाकर निष्काम गुणातीत होना आप कहते हो इसमें क्या आनन्द है? यह तो रूखी सूखी शिला प्रतीत होतीहै, सुन्दर कर्म उपासना करके स्वर्ग वैकुण्ठादि में जाकर आनन्द भोगना योग्य है. यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि ❋ सि० जैसे ❋ जितना १ प्रयोजन २ उदपानमें ३ सि० जगह जगह यत्र कुत्र भ्रमने से सिद्ध होता है. अर्थात् जलपान किया जावे जिसमें उसको उदपान कहते हैं कूपसरसरितादिकों का नाम उदपान है. कूपादि के जलोंमें स्नान तिरना नावका चलना इत्यादि प्रयोजन एक जगह सिद्ध नहीं हो सक्ता. जहां तहां भ्रमने से सिद्ध होता है. तात्पर्य—जितना प्रयोजन उदपान में जहां तहां भ्रमने से सिद्ध होता है वह ❋ समस्त ४ समुद्रमें ५ सि० एक जगहही सिद्ध होजाता है. तात्पर्य—जैसे समुद्र में सब प्रयोजन उदपानों का सिद्ध हो जाता है तैसेही जितना ❋ सब वेदों में ६।७ सि० जो फल है. अर्थात् समस्त वेदोक्त कर्म उपासना योगादि के अनुष्ठान करनेसे जो फल आनन्द जगह २ स्वर्ग वैकुण्ठादि में भ्रमने से परिच्छिन्न आनन्द प्राप्त होताहै ❋ उतनाही ८ अर्थात् वह सब फल प्रत्युत उससे भी विशेष पूर्ण निरतिशयानन्द फल ८ परमार्थ तत्त्वके जाननेवाले परमहंस ब्रह्मविज्ञानी ब्राह्मण को ९।१० सि० प्राप्त होताहै. तात्पर्य—स्वर्ग वैकुण्ठादि साधन हैं आनन्द के मुख्य फल परमानन्दहै सोई गुणातीत निष्काम ब्रह्मज्ञानी का स्वरूप है. पूर्ण परमानन्द विद्वानों को ही प्राप्त होताहै, सिवाय ब्रह्मविदोंके औरों को पूर्ण परमानन्द नहीं प्राप्त होताहै. जैसे कूपादि जलों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से सब प्रयोजन नहीं सिद्ध होता है. इस हेतुसे गुणातीत निष्काम ब्रह्म-निष्ठ होनाही सबसे श्रेष्ठहै ॥ ४६ ॥

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषुकदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥ ४७ ॥

ते १ अधिकारः २ कर्मणि ३ एव ४ मा ५ फलेषु ६ कदाचन ७ कर्मफलहेतुः ८ मा ९ भूः १० ते अकर्मणि १२ संग १३ मा १४ अस्तु १५ ॥ ४७ ॥ अ० उ० जो ब्रह्मज्ञानी को सब फलकी प्राप्ति होती है तो ब्रह्मज्ञान काही अनुष्ठान करके इसलोक परलोकके सब भोगोंको भोगना योग है, अल्पफलदायक कर्म उपासना योगादिका अनुष्ठान करना कुछ आवश्यक नहीं प्रयोजन तो हमारा फलसे है, सो ज्ञाननिष्ठासे ही प्राप्त होजायगा, यह शंका करके श्रीमहाराज कहते है कि❋तेरा १ अधिकार २ सि० तो❋कर्म में ३ हो ४ सि० है और❋नहीं है ५ फलमें ६ कभी ७ सि० तेरा अधिकार अर्थात् साधन अवस्था वा सिद्ध अवस्थामें भी तेरा अधिकार स्वर्ग वैकुण्ठादि फल भोगों में नहीं, क्योंकि तू मुमुक्षु है तू ने परमश्रेय का साधन मुझसे बूझाहै. हे अर्जुन ! मुमुक्षु का अधिकार अन्तःकरणकी शुद्धि के लिये कर्मों में है तो परन्तु स्वर्ग वैकुण्ठादि के भोगों में अधिकार नहीं, क्योंकि प्रथम तो वे अनित्यादि दोषों करके दूषित हैं, और मोक्ष में प्रतिबन्ध हैं, इस हेतुसे❋कर्मों के फल में हेतु ८ मत ९ हो १० अर्थात् मनमें कर्मोंके फलकी तृष्णा मतरख कि जिससे कर्मों के फलकी प्राप्तिका हेतु तुझको होनापड़े. तात्पर्य—कर्मोंके फलकी प्राप्ति में हेतु तृष्णाहै उसको त्याग और १० तेरा ११ अकर्म में १२ संग प्रीति निष्ठा १३ मत १४ हो अर्थात् जब तक अन्तःकरण शुद्धहोवे तबतक कर्म में तेरी निष्ठा रहे. यह उपदेश भी है और आशीर्वादभी है. वास्ते निर्विघ्नताके ॥ ४७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥४८॥

धनञ्जय १ योगस्थः २ सङ्गं ३ त्यक्त्वा ४ सिद्ध्यसिद्ध्योः ५ समः ६ भूत्वा ७ कर्माणि ८ कुरु ९ समत्वम् १० योगः ११ उच्यते १२ ॥ ४८॥ अ० उ० कर्म करनेकी विधि कहते हैं❋हे अर्जुन ! १ योगमें स्थित हुआ २ सि० कर्मों में और कर्मों के फलमें❋आसक्ति को ३ त्याग करके ४ सि० और कर्मों कि❋सिद्धि असिद्धि में ५ समहोकर ६। ७ कर्मों को ८ कर ९ योग १० समताको ११ कहते हैं १२ तात्पर्य—समता में स्थित होकर कर्म कर ॥ ४८ ॥

दूरेणह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ॥ ४९ ॥

धनञ्जय १ बुद्धियोगात् २ कर्म ३ दूरेण ४ हि ५ अवरम् ६ बुद्धौ ७ शरणम् ८ अन्विच्छ ९ फलहेतवः १० कृपणाः ॥ ११ ॥ ४९ ॥ अ० हे धनंजय ! १ ज्ञानयोग से २ कर्म ३ अत्यन्त ४। ५ निकृष्ट ६ सि० हैं अर्थात् श्रेष्ठ नहीं इस वास्ते ज्ञान में ७ रक्षाकरनेवाले की ८ प्रार्थनाकर ९ तात्पर्य—अभयप्राप्तिका जो कारण परमार्थज्ञान उसकी प्रार्थना जिज्ञासा-कर उसकी शरणहो परमार्थ ज्ञान का आश्रय ले❋कामनावाले फलको तृष्णावाले १० दीन अज्ञानी ११ सि० होते हैं तात्पर्य—कर्मों से अन्तः-करण शुद्ध करके ज्ञाननिष्ठ होनाचाहिये. स्वर्गादिकी इच्छा नहीं रखना ॥४९॥

बुद्धियुक्तो जहातीह उभेसुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसुकौशलम् ॥ ५० ॥

बुद्धियुक्तः १ इह २ सुकृतदुष्कृते ३ उभे ४ जहाति ५ तस्मात् ६ योगाय ७ युज्यस्व ८ योगः ९ कर्मसु १० कौशलम् ११ ॥ ५० ॥ अ०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानयुक्त १ जातेही २ पुण्य पाप दोनों को ३ । ४ त्यागदेताहै ५ तिस कारण से ६ ज्ञानयोग के वास्ते ७ प्रयत्नकर ८ ज्ञानयोग ९ कर्मों में १० चतुरता ११ सि० है तात्पर्य--कर्म करने में चतुरता क्याहै कि बन्धनरूप कर्मों में से ज्ञानको प्राप्त होजाना. अर्थात् कर्म करके अकर्म होजाना यही कर्म करने में चतुरताहै नहीं तो जो कर्म करने से इसी जन्म में ब्रह्मज्ञान न हुआ तो कर्मोंका करना निष्फल हुआ ॥ ५० ॥

कर्मजं बुद्धियुक्ताहि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदंगच्छन्त्यनामयम् ॥५१॥

बुद्धियुक्ताः १ हि २ मनीषिणः ३ कर्मजम् ४ फलम् ५ त्यक्त्वा ६ जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः ७ अनामयम् ८ पदम् ९ गच्छन्ति १० ॥ ५१ ॥ अ० ज्ञानयुक्त १ ही २ पण्डित ३ कर्मजम् ४ फलको ५ त्याग करके ६ जन्मरूप बन्धन से छूटेहुये ७ समस्त उपद्रवरहित पदको ८ । ९ प्राप्त होते हैं १० तात्पर्य्य--कर्मों से उत्पन्न होते हैं प्राप्तहोते हैं जो स्वर्ग वैकुण्ठादि फलविशेष उनको त्याग करके ज्ञानीही पण्डित मोक्ष होते हैं कर्मी उपासक योगी पण्डित अपने किये हुये कर्म्मों के फलको प्राप्त होते हैं. मोक्षको नहीं प्राप्त होते ॥ ५१ ॥

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति ।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥५२॥

यदा १ ते २ बुद्धिः ३ मोहकलिलम् ४ व्यतितरिष्यति ५ तदा ६ श्रोतव्यस्य ७ श्रुतस्य ८ च ९ निर्वेदम् १० गन्तासि ११ ॥ ५२ ॥ अ० उ० यह कर्म करते २ मैं किस कालमें ब्रह्मज्ञानका अधिकारी हूंगा और मेरा

---

१ अहंकार प्रत्यय एकता की प्रतीतिरूप करिकै किये हुये कर्मों में आश्रित जो भ्रान्ति तज्जनित तादात्म्य तिस्का और पूर्वार्जित कर्म्मोंमें आश्रय है जिस्का ऐसा जो आवरणातस्का ज्ञान कालमें नाश है जैसे--जलमें २ हताहुवा भी कमलपत्र निर्लेप रहता है इसी प्रकार ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्त शान्त होकर आत्मा में कब आत्माकर होगा. इस अपेक्षा में श्रीमहाराज अर्जुनके प्रति २ श्लोकों में यह कहते हैं ❋ जिसकाल में १ तेरी २ बुद्धि ३ मोहरूपी कीचको ४ भलेप्रकार तरेगी ५ तात्पर्य—देहादि पदार्थों में जो तेरी आत्मबुद्धि है देहादि पदार्थोंको जो तू अपना आपा समझता है वा उनमें ममता करनी वा उनके साथ आत्मा की एकता करनी वा तादाम्य अध्यास करना इसीको मोहरूप कीच कहते हैं यह अविवेक तेरा जब दूर होगा ❋ तिसकाल में ६ श्रुत और श्रोतव्यके ७।८।९ वैराग्य को १० प्राप्तहोगा (तू) ११ अर्थात् पीछे जो जो सुना हुआहै और आगे को जो २ सुनने के योग्य समझ रक्खा है. इन सब से तुझको वैराग्य होजायगा. न कुछ सुनने की इच्छा करेगा और न पिछले सुने में कुछ संशय रहेगा इसप्रकार शुभाशुभ कर्मों से उपराम होकर जब फिर ब्रह्मज्ञान को प्राप्तहोगा ❋ उक्तं च "ग्रन्थमभ्यस्य मेधावी विचार्यचपुनःपुनः॥ पलालमिवधान्यार्थी त्यजेद्ग्रन्थमशेषतः" अर्थात् मुमुक्षु प्रथम ग्रन्थों का भलेप्रकार अभ्यास करके वारंवार विचार करै फिर अपने स्वरूप को प्राप्त होकर ग्रन्थोंको त्याग देताहैं. जैसे धानकी इच्छावाला पयालको त्याग देताहै. धान ग्रहण करलेता है, श्रुत श्रोतव्य से वैराग्य होना इसको कहते हैं ॥ ५२ ॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि॥ ५३॥

यदा १ ते २ बुद्धिः ३ समाधौ ४ निश्चला ५ अचला ६ स्थास्यति ७ तदा ८ योगम् ९ अवाप्स्यसि १० श्रुतिविप्रतिपन्ना ११ ॥ ५३ ॥ अ० सि० और जिस कालमें १, तेरी २ बुद्धि ३ आत्मा में ४ विक्षेपरहित ५ विकल्प रहित ६ स्थित होगी ७ तिसकालमें ८ समाधियोग को ९ प्राप्तहोगा (तू) १० सि० अबतक कैसी है वह तेरीबुद्धि कि अनेक शास्त्र पुराण इतिहासादि और श्रुति स्मृति आदिकों का ❋ श्रवण करने से विशेष को प्राप्त हुई है ११ तात्पर्य—जबतक पूर्वापर वाक्यों का अविरोध समन्वय नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समझेगा. तबतक चित्तकी शान्ति कभी न होगी और न वेदशास्त्र में अवश्य श्रद्धा विश्वास करके आत्मनिष्ठ होना योग्यहै. रोचक वाक्यों में नहीं अटकना यही इस प्रकरणका अभिप्राय है ॥ ५३ ॥

अर्जुन उवाच—

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ॥५४॥

केशव १ समाधिस्थस्य २ स्थितप्रज्ञस्य ३ का ४ भाषा ५ स्थितधीः ६ किम् ७ प्रभाषेत ८ किम् ९ आसीत १० किम् ११ व्रजेत १२ ॥ ५४ ॥ अ० उ० ब्रह्मज्ञानी के लक्षण जानने की इच्छा करके अर्जुन श्रीभगवान् से प्रश्नकरता है❋हे केशव ! १ सि० स्वभावसेही जो निर्विकल्प समाधी में स्थित है २ सि० और (अहं ब्रह्मास्मि) इस महावाक्यार्थ में दृढ़❋ स्थित है बुद्धि जिसकी तिसकी ३ क्या ४ भाषा ५ सि० है अर्थात् और लोग उसको कैसा कहते है. कहाजावे अन्य करके उसको भाषा कहते हैं तात्पर्य—उनका लक्षण क्या है और आत्मस्वरूपमें ही निश्चलहैं बुद्धि जिसकी सो ६ कैसे ७ बोलताहै ८ कैसे ९ बैठता है १० कैसे ११ चलताहै १२ अर्थात् उस ज्ञानीका बोलना बैठना चलना किस प्रकारका है, यह तीन प्रश्न उस ज्ञानी के प्रतिहै कि जो सविकल्प समाधि में स्थित है और पहला प्रश्न निर्विकल्प समाधिवाले ज्ञानी के प्रति हैं. तात्पर्य—ब्रह्मज्ञानी की किसीसमय निर्विकल्प समाधि स्वाभाविक बनी रहती है, किसी समय प्रयत्न से और किसी समय सविकल्प अन्तःकरण की वृत्ति होजाती है. अर्जुन दोनों प्रकारके ज्ञानियों का लक्षण बूझता है ॥ ५४ ॥

श्रीभगवानुवाच—

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥५५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पार्थ १ यदा २ सर्वान् ३ कामान् ४ प्रजहाति ५ मनोगतान् ६ आत्मना ७ आत्मनि ८ एव ९ तुष्टः १० तदा ११ स्थितप्रज्ञः १२ उच्यते १३ ॥ ५५ ॥ अ० उ० साधकके लिये जो ज्ञानके साधन हैं वेही सिद्ध के स्वाभाविक लक्षण है. अर्जुन के प्रश्नके अनुसार ज्ञानीका लक्षण श्रीमहाराज निरूपण करते हैं और साधक के लिये यही अन्तरङ्गज्ञान के साधन है. अध्याय का समाप्ति पर्यन्त प्रथम प्रश्न का उत्तर कहते हैं. दो श्लोकोंमें ❋ हे अर्नुन ! १ जिसकालमें २ सब कामनाको ३ । ४ त्याग देताहै ५ सि० जो महापुरुष ❋ कैसी हैं वे कामना कि इसलोक परलोक के पदार्थोंकी सूक्ष्म वासना ❋ मनमें प्रवेश हो रही हैं ६ तात्पर्य—जिस काल में सूक्ष्म वासनासहित समस्त इसलोक परकोक की वासना त्याग देता है और पूर्णानन्द स्वरूप ❋ आत्मा करके ७ आत्मा में ८ ही ९ तृप्त १० सि० है कालमें जो महापुरुष उसको ❋ तिस कालमें ११ स्थितप्रज्ञ १२ कहते है १३ तात्पर्य—ब्रह्माकार वृत्तिमें निश्चल होरही है बुद्धि जिसकी उसको ब्रह्मज्ञानी कहते है. महात्मा और निर्विकल्प समाधि ब्रह्मज्ञान का साधन समस्त वासना का त्याग सार है ॥ "वासनासम्परित्यागः" ॥ यही वसिष्ठ ने भी कहाहै ॥ ५५ ॥

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥ ५६ ॥

दुःखेषु १ अनुद्विग्नमनाः २ सुखेषु ३ विगतस्पृहः ४ वीतरागभयक्रोधः ५ स्थितधीः ६ मुनिः ७ उच्यते ८ ॥ ५६ ॥ अ० दुःखों में १

---

१ स्थितप्रज्ञज्ञानीका लक्षण कहते है. स्वतः सिद्ध नित्य कूटस्थ असंग चिद्रूप (नेत्रोंको रूपकीसमान) सर्वत्र उपलभ्यमान आनंदैकरस आत्मस्वरूपमें क्रीडाकरताहुवा अपनी अनुभूति करकै तृप्ति संतुष्टि को प्राप्तकरके विषयजन्य सुख को न अपेक्षाकरै ॥ जैसे—अमृत पानकी इच्छा करने वाला तुच्छ लवणसमुद्रको नही चाहता. तिसीप्रकार विषयजन्य सुखोंसे विरक्त ज्ञानी स्थित प्रज्ञ कहा जाताहै ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं होताहै उद्विग्न क्षोभित विक्षिप्त मन जिसका २ सुखों में ३ नाश होगई है इच्छा जिसकी ४ जाते रहे हैं राग, भय, क्रोध जिसके ५ सि० ऐसे महात्माको ❋ ब्रह्मज्ञानी ६ परमहंस संन्यासी ७ कहते हैं ८ सि० विद्वान् पण्डित और दुःख सुखादि में सम होना. यही ब्रह्मज्ञान के साधन हैं ॥ ५६ ॥

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ५७ ॥

यः १ सर्वत्र २ अनभिस्नेहः ३ तत् ४ तत् ५ शुभाशुभम् ६ प्राप्य ७ न ८ अभिनन्दति ९ । १० द्वेष्टि ११ तस्य १२ प्रज्ञा १३ प्रतिष्ठिता १४ ॥ ५७ ॥ अ० उ० कैसे बोलताहै ज्ञानी इस दूसरे प्रश्नका उत्तर कहते हैं ❋ जो १ सर्वत्र २ सि० पुत्र पोथी देहादि पदार्थों में स्नेह प्रीति रहित ३ सि० है ❋ और ❋ तिस तिस ४ । ५ शुभ अशुभ को ६ प्राप्त होकर ७ अर्थात् जो शुभपदार्थ हैं अपने को इष्ट प्रिय अनुकूल हैं तिनको प्राप्त होकर तो ❋ नहीं ८ हर्ष[1] करता है ९ सि० और जो अशुभ पदार्थ है अपने को अनिष्ट प्रतिकूल है तिसको प्राप्त होकर ❋ नहीं १० द्वेष करताहै ११ सि० जो महापुरुष ❋ तिसकी १२ बुद्धि १३ निश्चल १४ सि० है ब्रह्मस्वरूप में और जो पूर्वोक्त साधन करेगा उसकी वृत्ति ब्रह्माकार हो जायगी. तात्पर्य—बोलने से राग द्वेष आदि गुण दोष सबके प्रतीत होजाते हैं यह बात प्रसिद्ध है. परन्तु ज्ञानी के नहीं प्रतीत होते हैं. क्योंकि ज्ञानी हर्ष द्वेषादि के कारण हुये सन्ते भी उदासीन हुआ बोलता है. यह उदासीनवत् बोलनाही ज्ञानी का लक्षण है. इत्यभिप्रायः ॥५७॥

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५८॥

१ प्राप्त हुये जितने विषय सुख उनमें आनन्दित होनेसे गर्वरूप विक्षेप होगा. २ पीडाकारक क्षतोंमें अग्नि दाहकी समान प्राप्त दुःखोंके कथनसे उद्वेगरूप विघ्न होता है.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदा १ अयम् २ सर्वशः ३ इन्द्रियाणि ४ इन्द्रियार्थेभ्यः ५ संहरते ६ च ७ तस्य ८ प्रज्ञा ९ प्रतिष्ठिता १० कूर्म्मः ११ अङ्गानि १२ इव १३ ॥ ५८ ॥ अ० जिस काल में १ यह २ सि० मुमुक्षु ❋ सब तरफ से ३ इन्द्रियों को ४ इन्द्रियों के अर्थों से ५ संकोच करलेता है ६ और ७ सि० चित्तमें स्मरण भी नहीं करता है तिस काल में ❋ तिस विद्वान् की ८ बुद्धि ९ निश्चल १० सि० सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा में और इसी साधन से मुमुक्षु की होजायगी. इन्द्रियों के निरोधमें विद्वान् को अनायास दुःख नहीं होता है. इस बात को दृष्टान्त से स्पष्ट करते हैं, श्रीमहाराज ❋ कछुवा ११ सि० अपने हाथ पांव ❋ अङ्गों को १२ जैसे १३ सि० स्वाभाविक संकोच करलेताहै. इसीप्रकार विद्वान् स्वभाविक विषयोंसे इन्द्रियोंको निरोध कर लेताहै ॥ ५८ ॥

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥ ५९ ॥

निराहारस्य १ देहिनः २ विषयाः ३ विनिवर्तन्ते ४ रसवर्जम् ५ अस्य ६ परम् ७ दृष्ट्वा ८ रसः ९ अपि १० निवर्तते ११ ॥ ५६ अ० उ० इन्द्रियोंका विषयो में प्रवर्तन होना यह लक्षण जो ब्रह्मज्ञानी का श्रीमहाराज कहते हैं इसमें तो अतिव्याप्ति दोष आता है क्योंकि ऐसे तो निराहारी रोगी भी होते हैं. यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि ❋ निराहारी[1] जीवके १।२ सि० भी ❋ विषय ३ निवृत्त होजाते है.४ सि० यह तो सत्य हैं परन्तु ❋ रसवर्जित ५ सि० निवृत्त होते हैं. अर्थात् विषयों से राग उसका नहीं दूर होता है. तात्पर्य–विषयो में उसकी तृष्णा और सूक्ष्म कामना बनी रहती है. और ❋ इस ब्रह्मज्ञानी का ६ पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द आत्मा को

---

१ आहरण किये जावैं विषय जिन करिकै वे आहार कहे जातेहैं. अर्थात् इन्द्रियोंको आहार कहते हैं. विषयाकर्षक इन्द्रियोंसे जो निर्गत हो वह निराहार है.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७ देख करके ८ अर्थात् आनन्दस्वरूप आत्मा को प्राप्त होकर ज्ञानी का ❋रस ९ भी १० निवृत्त होजाता है ११ सि० इस प्रकार समझने से पूर्वोक्त लक्षण में अतिव्याप्ति दोष नहीं ॥ ५९ ॥

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः॥ ६० ॥

कौन्तेय १ यततः २ हि ३ विपश्चितः ४ पुरुषस्य ५ अपि ६ इन्द्रियाणि ७ प्रमाथीनि ८ प्रसभम् ९ मनः १० हरन्ति ११ ॥ ६० ॥ अ० उ० विना इन्द्रियों के संयम कियेहुये ज्ञान होना दुर्लभ है इस वास्ते साधन अवस्था में तो इन्द्रियों के निरोध करने में अत्यन्त प्रयत्न करना योग्य है, यह कहते हैं दो श्लोकोंमें ❋हे अर्जुन ! १ सि० मोक्षमें ❋प्रयत्न करनेवाले की २ सि० इन्द्रिय ❋भी ३ सि० और ❋विद्वान् विवेकी पुरुष की ४। ५ भी ६ इन्द्रिय ७ प्रमथन स्वभाववाली क्षोभ करने वाली ८ बल करके ९ मनको १० हरलेती हैं ११ अर्थात् जबरदस्ती से मनको विषयों में विक्षिप्त करदेती हैं जब कि विद्वान् की इन्द्रिय भी विद्वान्के मनको विषयों में विक्षिप्त करदेती हैं तो फिर मुमुक्षु साधक को तो साधन अवस्थामें भलेप्रकार चैतन्य रहकर प्रयत्न करना योग्यहै. इतिहास—एक समय व्यासजी जैमिनि अपने शिष्य को यही श्लोक सुनारहे थे. जैमिनिजी ने कहा कि आपका कहना तो सब सत्यहै परन्तु यह नहीं होसक्ता कि जो इन्द्रिय विद्वान् के मनको भी विषयों में विक्षिप्त करदेवें, अविद्वान् के मनको विक्षिप्तकर सक्ती हैं. व्यासजी ने बहुत उसको समझाया. परन्तु व्यासजी के इस वाक्यमें उन को विश्वास न आया. व्यासजी ने कहा कि इस श्लोक का अर्थ फिर किसीकाल में तुमको समझावेंगे यह कहकर चल दिये उसी दिन दोघड़ी दिन रहे ऐसी माया रची कि दश ग्यारह स्त्री तरुण माया की रचकर और आपभी एक सुन्दर स्वरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्त्री का बनकर जैमिनि की कुटीके सामने जाकर हँसी चोहल खेल विहार का प्रारम्भ करादिया. जिसकाल में बारीक वस्त्र उन स्त्रियोंका पवन से जो उड़ा और गेंद उछालते हुये जो हाथ उन स्त्रियों ने ऊपरको किये उस कालमें उदर जंघा स्तनादि अंग उन स्त्रियोंके जैमिनिजी को दीखगये. फिर उसी कालमें ऐसा बादल होगया जैसा भादों में होताहै, अन्धेरा होगया, मन्द मन्द बरसने लगा, पवन चलने लगी, वे सब स्त्री माया की तो लोप होगई, व्यासजी का जो स्वरूप स्त्रीका बनाहुआ था वही एक रहगया. सो वह स्त्री जैमिनिजी के पासगई और कहा कि महाराज मेरे संग की सहेली न जानिये कहां गई मैं अकेली रहगई अब रात्रि को कहां जाऊं आप आज्ञा करो तो रातभर एक मकानमें मैं भी पड़ी रहूंगी. प्रथम तो जैमिनिजीने उसको रात्रिके समय अपने पास रखने से बहुत मना किया. फिर उसकी दीन बोली सुनकर कुछ दया आगई. उस स्त्री से यह कहा कि इस दूसरे मकान में जाकर भीतर से सांकल लगाले. यहां एक भूत रात्रि के समय आया करता है. मेरीसी बोली बोलेगा उसके कहने से किवाड़ मत खोलियो नहीं तो वह भूत तुझको खाजायगा, व्यासजीने मनमें कहा कि विद्वान् होने में तो इसके सन्देह नहीं यत्न तो बड़ा किया है. जैमिनिजी का वह वाक्य सुन कर मकान के भीतर जाकर भीतरसे सांकल लगा ली उस स्त्रीने जो व्यासजीका स्वरूप था. फिर निज स्वरूप होकर ध्यानमें बैठगये. जैमिनिजी जब ध्यान करने बैठे तब वह स्त्री याद आगई वारंवार मनको निरोध करैं मन शान्तहो नहीं. जैमिनिजी ध्यान जप छोड़कर उठे उस मन्दिरके द्वारपर जाकर कहा कि हे प्रिये! मैं जैमिनि हूं तुझसे बचने के लिये भूतकी झूठी कथा तुझको सुनादी थी अब तू बेसन्देह कपाट खोलदे तेरे विना मुझको निद्रा नहीं आतीहै. इसी प्रकार प्रार्थना करते करते हारगये मारे काम और विरह के कोठे पर जाकर छत उखाड़ कर भीतर कूद पड़े व्यासजीने एक थप्पड़ जैमिनिजीके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुखपर मारकर कहा कि तू विद्वान् वा अविद्वान्? जैमिनिजी लज्जाको प्राप्त हुये व्यासजीने कहा कि तुम्हारी विद्वत्ता साधुता में सन्देह नहीं जो चाहिये था वही तुमने किया कदाचित् इस प्रकार विद्वान् धोखा खाकर अनर्थ कर बैठे उसको कभी प्रत्यवाय पातक नहीं❋थोड़े दिन हुये ऐसीही एक व्यवस्था दक्षिणदेश में हुये उसको भी सुनो. दैवयोग से एक स्त्री भूली हुई रात्रिके समय किसी महात्मा की कुटीपर चली आई महात्मा ने इसीप्रकार भूतकी कथा सुनाकर दूसरे मकान में सुलादी रात्रि के समय थोड़ी रातरहे वे महात्मा भी छत उखाड़कर कूदे सो उनके शरीरमें एक लकड़ी घुसगई उससे बड़ाभारी घाव होगया. वह स्त्री इनको पहँचानकर घबराई पछताई हुई कहने लगी कि मुझसे बड़ा अपराध हुआ जो किवाड़ न खोले महात्माने उसको समझा दिया और यह कहा कि तू शोच मत कर और जो मैं मर जाऊं तो यह लिखाहुआ मेरा लोगों को दिखा देना. यह कह उसी समय महात्माने अपने रक्त से वह सब व्यवस्था संस्कृत श्लोकों में लिखदी. नाम उस व्यवस्था का रक्तगीता. लिखकर परमधाम को प्राप्त हुये. सो वह रक्तगीता प्रसिद्ध है. संसार से उपराम करनेवाली है. तात्पर्य—सारार्थ उसका यहीहै कि जो इस श्लोक का अर्थ है ॥ ६० ॥

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥६१॥

तानि १ सर्वाणि २ संयम्य ३ युक्तः ४ मत्परः ५ आसीत ६ यस्य ७ इन्द्रियाणि ८ वशे ९ तस्य १० हि ११ प्रज्ञा १२ प्रतिष्ठिता १३ ॥ ६१॥

अ० उ० जब कि इन्द्रिय यह अनर्थ करती हैं इसीवास्ते❋तिन सब इन्द्रियों को १। २ सि० विषयों से❋रोककरके ३ सावधान हुआ ४ मुझे सच्चिदानन्दपरायण ५ सि० हुआ अर्थात् मैं सच्चिदानन्दस्वरूप अद्वैत हूं. सिवाय मुझ सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्मसे और कुछ पदार्थ तीनों कालमें नहीं इस ध्यान में तत्परहुआ❋बैठताहै ६ जिसकी ७ इन्द्रिय ८ वशमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

९ सि० हैं आत्माके ❋ तिसकी १० ही ११ बुद्धि १२ निश्चल १३ सि० है सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म में वह ज्ञानी कैसे बैठताहै इस प्रश्नका उत्तर इस मन्त्रमें कहा. तात्पर्य—ज्ञानी सब इन्द्रियों को निरोध करके आत्मा में मग्न हुआ बैठा रहता है॥ ६१॥

ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात्संजाते कामः कामात्क्रोधोभिजायते॥६२॥
क्रोधाद्भवतिसंमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥६३॥

विषयान् १ ध्यायतः २ पुंसः ३ तेषु ४ सङ्गः ५ उपजायते ६ सङ्गात् ७ कामः ८ संजायते ९ कामात् १० क्रोधः ११ अभिजायते १२॥ ६२॥ क्रोधात् १ संमोहः २ भवति ३ संमोहात् ४ स्मृतिविभ्रमः ५ स्मृति भ्रंशात् ६ बुद्धिनाशः ७ बद्धिनाशात् ८ प्रणश्यति ९॥ ६३॥ अ० उ० इन्द्रियों के निरोधन करने में जो अर्थ होताहै. उसको तो निरूपण किया अब अन्तःकरण के निरोध न करने में जो अनर्थ होता है सो कहते हैं. दो श्लोकों में ❋ सि० गुण बुद्धिकरके ❋ विषयों का ध्यान करने से १। २ पुरुषका ३ तिनमें ४ अर्थात् स्त्री शब्दादि विषयों में ४ असक्ति ५ होजाती है ६ आसक्ति होजाने से ७ सि० फिर अधिक ❋ कामना ८ होजाती है ९ कामनासे १० क्रोध ११ सि० उत्पन्न होआता है॥ ६२॥ क्रोधसे १ अविवेक २ होजाता है ३ अर्थात् मुझको यह करना योग्य है वा नहीं इस विचारका अभाव होजाताहै ❋ अविवेक होनेसे ४ स्मृतिका विभ्रम ५ सि० होजाता है अर्थात् जो कुछ शास्त्र आचार्योंसे सुन रक्खा था उस अर्थ की स्मृतिका अभाव होजाता है. उसमय कुछ नहीं स्मरण होताहै. सिवाय उस विषयके कि जिसका चिन्तन करने से जिस विषय में चित्त आसक्त होगया है फिर ❋ स्मृतिका अभाव होजाने से ६ वा विचल जानेसे वा भ्रंश होजानेसे ६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बुद्धिका नाश ७ सि० होजाता है. अर्थात् समझकर फिरभी चैतन्य होजावे यह बुद्धि नहीं रहती है ❋ बुद्धिका नाश होने से ८ नाश होजाता है १ सि० वही पुरुष जिसका विषयों में चिन्तन करने से सूक्ष्म संग होगया था अर्थात् वह पुरुष मोक्षमार्ग से भ्रष्ट होता है. उस तरफ से तो मानो मर गया ऐसे आदमी को मुरदे की बराबर समझना चाहिये कि जो सच्चिदानन्द स्वरूप से विमुख होकर विषयों के संमुख है. वह जीता हुआ ही मुरदा है. क्योंकि परमपुरुषार्थ जो मोक्ष है उसके योग्य नहीं. तात्पर्य-सब अनर्थोंकी और पाप दुःखोंकी मूल मनोराज्य है क्योंकि प्रथम स्त्री शब्दादि पदार्थों में गुण समझकर अर्थात् स्त्रीआदिको किसी एक अंश में सुख देनेवाला समझ कर जो पुरुष उन विषयों का मन में ध्यान करता रहता है. फिर चिन्तन करते करते पदार्थों में सूक्ष्म आसक्ति होकर अधिक कामना होजाती है. फिर उसकी प्राप्तिके प्रयत्नो में नानाप्रकार के उपद्रव होजाते हैं उपाधि बढ़ते बढ़ते पशुवत् मनुष्य होजाताहै. इन दोनों श्लोकोंका अर्थ आनन्दामृतवर्षिणी के नवें अध्याय में और भी स्पष्ट लिखा है ॥ ६३ ॥

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥ ६४ ॥

विधेयात्मा१इन्द्रियैः२ विषयान् ३ चरन् ४ तु ५ प्रसादम् ६ अधिगच्छति ७ रागद्वेषवियुक्तैः ८ आत्मवश्यैः ९ ॥ ६४ ॥ अ० उ० श्रोत्रादि इन्द्रियों करके शब्दादि विषयों को न भोगता हो ऐसा तो कोई भी ब्रह्मज्ञानी भगवद्भक्त उपासक योगी कर्मी इत्यादिक नहीं दीखता है और इन्द्रियों के असंयम आप अनर्थ कहते हो तो फिर ब्रह्मज्ञानी और अज्ञानी पुरुषों में क्या भेद हुआ. यह शंकाकरके श्रीमहाराज दो श्लोकोंमें ज्ञानीके भोगनेकी रीति फलके साहित निरूपण करते हैं ❋ विवेकी ब्रह्मज्ञानी आत्मोपासक

१ लक्षसेच्युत हुवा गेंद (कन्दुक) जिसप्रकार सोपानपंक्ति में क्रमशः नीचे गिरता जाताहै उसी प्रकार विषयोंके ध्यानसे क्रमशः ज्ञानी भ्रष्ट होता है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१ इन्द्रियों करके २ विषयों को ३ भोगताहुआ ४ भी ५ निजानन्द को ६ प्राप्त होता है ७ सि० कैसी है वे इन्द्रिय कि जिन करके विषयोंको भोगता हुआ मोक्ष होजाता है❋रागद्वेषरहित ८ सि० हैं अर्थात् भोग समय ज्ञानी का विषयो में रागद्वेष नहीं एक तो ज्ञानी और अज्ञानी में यह भेद है और दूसरे ज्ञानी की इन्द्रिय❋मनके वशमें है ९ टी० ८ वां ९ वां ये दोनों पद "इन्द्रियैः" इस दूसरे पद के विशेषण है ८। ९ ॥६४॥

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥ ६५ ॥

प्रसादे १ अस्य २ सर्वदुःखानाम् ३ हानिः ४ उपजायते ५ प्रसन्नचेतसः ६ हि ७ बुद्धिः ८ आशु ९ पर्यवतिष्ठते १० ॥ ६५ ॥ अ० उ० निजानन्द को प्राप्त होने से क्या होता है. इस आपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं❋निजानन्द को प्राप्त होने से १ इसके २ अर्थात् परमहंस ज्ञानी महापुरुष के २ दुःखों की ३ हानि ४ होजाती है ५ अर्थात् अध्यात्मिकादि सब दुःख नाश होजाते है ५ सि० और❋निजानन्द को प्राप्त हुआहै अन्तःकरण जिसका अर्थात् आत्मा में स्थित हुआ है चित्त जिसका उसकी ६ ही ७ बुद्धि ८ शीघ्र जल्दी ९ निश्चल होती है १० सि० उसी आत्मा में❋टी० प्रसाद प्रसन्नता सुख आनन्द आत्मा इन शब्दोंका एकही अर्थहै. इस जगह विषयानन्दकी प्रसन्नतासे तात्पर्यार्थ नहीं ॥१॥६५॥

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥६६॥

अयुक्तस्य १ बुद्धिः २ न ३ अस्ति ४ अयुक्तस्य ५ भावना ६ न ७ च ८ अभावयतः ९ शान्तिः १० न ११ च १२ अशान्तस्य १३ सुखम् १४ कुतः १५ ॥ ६६ ॥ अ० उ० यति अन्तर्मुख ज्ञानी को जो आनन्द पीछे निरूपण किया याने वह अयति बहिर्मुख अज्ञानी को नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होता है. यह कहते हैं श्रीमहाराज इस मन्त्र में ❀ सि० प्रथम तो ❀ अयति को १ बुद्धि २ सि० ही ❀ नहीं ३ है ४ अर्थात् प्रथम तो आत्मा की निश्चय करनेवाली व्यवसायात्मिका बुद्धि बहिर्मुख अज्ञानी के नहीं उदय होती है. इसी हेतु से अज्ञानी को ५ आत्माका ध्यान ६ नहीं ७ अर्थात् जब कि वह आत्माको जानताही नहीं तो फिर आत्मा का ध्यान वह कैसे करे इसी हेतु से वह आत्मध्यानरहित है और ८ ध्यानरहित को ९ शान्ति १० नहीं ११ फिर १२ विक्षिप्त चित्तवाले को १३ सुख १४ कहां से १५ अर्थात् किस प्रकार होसक्ता है. तात्पर्य—विना ब्रह्मज्ञानके परमानन्दकी प्राप्ति नहीं ॥ ६६ ॥

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते ॥
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥ ६७ ॥

चरताम् १ इन्द्रियाणाम् २ यत् ३ मनः ४ हि ५ अनुविधीयते ६ तत् ७ अस्य ८ प्रज्ञाम् ९ हरति १० अम्भसि ११ वायुः १२ नावम् १३ इव १४ ॥ ६७ ॥ अ० उ० अयुक्त पुरुषकी बुद्धि आत्मामें निश्चल क्यों नहीं होती ? इस आपेक्षामें श्री महाराज यह कहते हैं. सि० अज्ञानीकी इन्द्रियोंका विषयोंके साथ जिससमय सम्बन्ध है. अर्थात् श्रोत्र इन्द्रिय जब शब्दको सुनता है नेत्र जिससमय रूपको देखता है. इसी प्रकार सब इन्द्रियोंको समझ लेना. उस सम्बन्ध समय ❀ विषयसम्बन्धी १ इन्द्रियोंके २ सि० साथ ❀ जो ३ मन ४ भी ५ सि० कभी एकही इन्द्रियके साथ भी उसी विषयमें प्रवृत्त हो जावे ६ अर्थात् जिस रूपादि विषयमें चक्षुआदि इन्द्रिय प्रवृत्त हो रही हों उस कालमें जो मन भी उसी विषयमें उस इन्द्रियके साथ प्रवृत्त हो जावे तो ❀ सो ७ सि० इन्द्रिय कि जिसका साथी

१ आत्मविषयक ध्यान होनेसे भावकी उत्पत्ति होती है. जिसको भाव नहीं है उसीको अभाव है. अभावसे अशांति होती है. (अशांतस्य कुतः सुखम्) शांति नहीं तो सुख कहांसे प्राप्त होवै.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मन हुआ है वोही इन्द्रिय❋इस अज्ञाकी ८ बुद्धिको ९ हर लेता है १० अर्थात् विषयोंमें विक्षिप्तकर देती है १० सि० इसमें दृष्टांन्त यह है कि❋जलमें ११ पवन १२ नावको १३ जैसे १४ सि० उलट पुलट करता झकोले देता है❋और जिससमय नाव को मल्लाह सँभालता है. इसीप्रकार ज्ञानी मनको सावधान करते हैं. अज्ञानी की सामर्थ्य नहीं. तात्पर्य—जब कि यह व्यवस्था है कि एक इन्द्रियों के साथ मिलकर मन अनर्थ करावे. मृग, हस्ती, पतङ्ग, मच्छी, भ्रमर ये पांचों शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, विषयों में से क्रमसे एक एक विषय ये मारे हुये मरते हैं. अज्ञानी जीव मनुष्य के तो पांचों प्रबल हो रही हैं इस कारण से अज्ञानी की बुद्धि आत्मा में निश्चल नहीं होती है. इत्यभिप्रायः ॥ ६७ ॥

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥६८॥

महाबाहो १ यस्य २ इन्द्रियाणि ३ इन्द्रियार्थेभ्यः ४ सर्वशः ५ निगृहीतानि ६ तस्मात् ७ तस्य ८ प्रज्ञा ९ प्रतिष्ठिता १० ॥ ६८ ॥ अ० उ० शरीर प्राणइन्द्रिय अन्तःकरण का जो निरोध संयम वश करना है यही मोक्ष का अन्तरङ्ग साधन है और यही मुक्तपुरुषों का लक्षण है. स्थितप्रक्ष के प्रकरण में पीछे जितने मन्त्र कहे और आगे जो और मन्त्र कहने रहे हैं सबका तात्पर्य्य यही है सोई श्रीमहाराज सबका तास्पर्य्य इस मन्त्र में कहते हैं❋हे अर्जुन ! १ जिसकी २ इन्द्रिय ३ शब्दादि विषयोंसे ४ सबप्रकार करके ५ निरोधहै ६ जिस कारणसे ७ जिसकी ८ अर्थात् परमहंस विद्वान् ब्रह्मज्ञानी की ८ बुद्धि ९ निश्चल १० सि० हैं परमानन्द स्वरूपमें वा ज्ञानी की बुद्धि श्रेष्ठ सर्व्वोकृत्ष्ट है यह जानना योग्य है. और साधक पक्षमें जिज्ञासु मुमुक्षु की बुद्धि निश्चल होती है ब्रह्ममें इन्द्रियादिकोंका निरोध करनेसे इत्यभिप्रायः ॥ ६८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्त्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥६९॥

सर्वभूताम् १ या २ निशा ३ तस्याम् ४ संयमी ५ जागर्ती ६ यस्याम् ७ भूतानि ८ जाग्रति ९ सा १० निशा ११ पश्यतः १२ मुनेः १३ ॥ ६९ ॥ अ० उ० सब प्रकार करके इन्द्रियोंका निरोध होना अर्थात् नैष्कर्म होना. यह पूर्वोक्त लक्षण तो असंभावित प्रतीत होता है. यह शंका करके श्रीमहाराज यह मंत्र कहते हैं. तात्पर्य—इस मंत्रका यह है कि ज्ञाननिष्ठा जो ज्ञानीकी है वहां क्रिया कारक की गन्धमात्र भी नहीं. निष्क्रिय ब्रह्मज्ञानी को कोई ज्ञानीही ज्ञान सक्ता है. कर्मनिष्ठ पुरुष नैष्कर्म ज्ञाननिष्ठा को क्या जानै. क्योंकि कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठाका दिन रात्रिवत् अन्तर है इस से अज्ञानी जीव कर्मनिष्ठों को यह असम्भावित लक्षण प्रतीत होताहै. सोई दिखाते हैं इस मन्त्रमें ❋ सब भूतो की १ अर्थात् अज्ञानी जीव कर्मनिष्ठों की जो २ सि० रात्रिवत् ज्ञान-निष्ठा ❋ रात्रि ३ सि० है ❋ तिसमें ४ अर्थात् ज्ञाननिष्ठा में ४ ब्रह्मज्ञानी सर्वकर्मसंन्यासी ५ जागता है ६ तात्पर्य—ज्ञाननिष्ठा अज्ञानी कर्मनिष्ठो के लिये दिन रात्रिवत् है. क्योंकि ज्ञाननिष्ठा की व्यवस्था अज्ञानी नहीं जानते है. और न उनका उसमें कुछ व्यापार होता है. और वही क्षाननिष्ठा ज्ञानियों के दिनवत् है क्योंकि ज्ञानी उसमेंही विचरते हैं और ❋ जिसमें ७ अर्थात् कर्मनिष्ठा में ७ अज्ञानी कर्मनिष्ठ प्राणी ८ जागते हैं ९ अर्थात् जिस कर्मनिष्ठ व्यापार करते हैं कर्मों का अनुष्ठान करते हैं ❋ सो १० अर्थात् कर्मनिष्ठा १० सि० रात्रिवत् ❋ रात्रि ११ सि० है किसके ब्रह्मतत्वको ❋ देखतेहुये ज्ञानी संन्यसी के १२। १३ तात्पर्य—ज्ञानी का कर्मनिष्ठा में किंचित् लेशमात्रभी व्यापार नहीं, इस हेतुसे कर्मनिष्ठा विद्वान् की रात्रिहै इस मन्त्रमें समुच्चय का भी खण्डन स्पष्ट प्रतीत होता है ॥ ६९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्। तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥ ७० ॥

यद्वत् १ आपः २ समुद्रम् ३ प्रविशन्ति ४ आपूर्यमाणम् ५ अचलप्रतिष्ठम् ६ तद्वत् ७ सर्वे ८ कामाः ९ यम् १० प्रविशन्ति ११ सः १२ शान्तिम् १३ आप्नोति १४ कामकामी १५ न १६ ॥ ७० ॥ अ० उ० ऐसे कर्मसंन्यासी कि जिन के कर्मनिष्ठा रात्रिवत् हैं उनके शरीरका निर्वाह कैसे होताहै. इस अपेक्षा में यह मन्त्र भी कहते हैं और चौंसठवें मन्त्र में इस शंका का उत्तर अन्यप्रकार से दे भी चुके हैं. इस मन्त्रका तात्पर्य—यह है कि, विना इच्छा कियेहुये संसारके तुच्छ पदार्थ प्राप्त होजावे तो कितनी बातहै प्रत्युत सब सिद्धि ऋद्धि महात्मा के सामने हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं. सदा यह इच्छा रखती हैं की जिनके वास्ते परमेश्वरने हम को रचाहै कभी कृपा करके वे भी तो हमको सफल करै दृष्टान्तके साहित इसबात को कहते हैं श्रीमहाराज इस मन्त्र में❀जैसे १ सि० विना बुलाये नदी सरोबरादि के❀जल २ समुद्र में ३ प्रवेश होते है ४ सि० कैसा है वह समुद्र❀सब तरफसे भराहुआ पूर्णहै ५ सि० और❀अचल है प्रतिष्ठा मर्याद जिसकी ६ सि० यह तो दृष्टान्तहै❀तैसेही ७ सब ८ भोग ९ सि० प्रारब्धके प्रेरेहुये❀जिसको १० अर्थात् निष्काम ज्ञानीको १० प्राप्त होते हैं ११ सि० कैसा है❀सो १२ सि० ज्ञानी❀शान्तिको १३ प्राप्त है १४ भोगोंकी कामनावाला १५ नहीं १६ अथवा जो भोगों की कामनावाला है सो शान्ति ब्रह्मानन्द को नहीं प्राप्त होताहै ॥ ७० ॥

विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निःस्पृहः। निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥ ७१ ॥

१ जिसप्रकार गंगादि नदियों का जल नाम रूप गुण कर्मको याग समुद्र में प्रवेश करते हैं. समुद्र परिपूर्ण विषाद हर्ष रहित रहै है तैसेही ज्ञानी विषे पारब्धागत भोगप्रवेश पाते हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यः १ पुमान् २ सर्वान् ३ कामान् ४ विहाय ५ निःस्पृहः ६ निर्ममः ७ निरहंकारः ८ चरति ९ सः १० शान्तिम् ११ अधिगच्छति १२ ॥ ७१ ॥ अ० उ० चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञानानिष्ठा से ही मोक्ष को प्राप्त होता है. पुरुष गृहस्थी कर्मनिष्ठ मोक्ष के भोगी नहीं शुभकर्म करने से शुभ लोकों को प्राप्त होते हैं यह नियमविधि है और जो कदाचित् कोई कहे कि, कर्मनिष्ठ गृहस्थ भी विना संन्यास कियेहुये मोक्ष होजाते हैं, तो चतुर्थ आश्रम का माहात्म्य वृथाही वेदों में प्रतिपादन किया है. क्या काम है शीतोष्णादि सहने का क्यों? संन्यास करना चाहिये? और जनकादिकी कथा का तात्पर्य में है स्वार्थ में नहीं. अर्जुन ने बूझाथा ज्ञानी कैसे चलता फिरता है. इस चौथे प्रश्नका उत्तर इस मन्त्रमें कहतेहुये. चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा का माहात्म्य और लक्षण निरूपण करते हैं. श्रीमहाराज ❀ जो १ पुरुष २ सब भोगोंको ३ । ४ त्याग करके ५ इच्छा[1]-रहित ६ ममता[2]रहित ७ अहंकार[3] ८ विचरता है ९ सो १० शान्ति को ११ अर्थात् मोक्षको ११ प्राप्त होता है १२ अर्थात् जिस में ये लक्षण नहीं वह मोक्षकी आशा न रक्खे. यह नियमविधि है. तात्पर्य—कोई ज्ञानरहित त्यागी ऐसे होते हैं कि उनको त्यागने के पीछे फिर उस त्यागे हुये पदार्थ की इच्छा हो आती हैं. ज्ञानी देहादिक पदार्थों के रहनेकी भी इच्छा नहीं रखते. पीछे त्यागने के त्यागेहुये पदार्थ की इच्छा तो क्यों करनेलगे गे इस वास्ते उसको " निःस्पृहः " विशेषण है. और कोई ऐसे होते हैं कि,

---

१ सर्वान्-एषणात्रया कांक्षित स्त्री सुत वित्त बैकुंठादि लोक ॥

२ निस्पृह-इच्छारहित अर्थात् क्षुधा, तृषा, पिपासा, सुश्रूषादिदृक्षा, जिघृक्षा, विविदिषा, जिहासा, उपरिरंसा, चिकीर्षा, भूंख, प्यास, गमन की इच्छा, सुननेकी इच्छा, देखनेकी इच्छा, सूंघनेकी इच्छा, जाननेकी इच्छा, त्यागनेकी इच्छा, उपरति होनेकी इच्छा, कार्यकरनेकी इच्छा, इन कांक्षाओंसे रहित ॥

३ निर्मम-अर्थात् देहके जो धर्म कर्म अवस्था तिनसे निर्गतहै ममतावंधनजिस्का ॥

४ निरहंकार-विद्वानता धनाढ्यतादि निमित्तोंसे आत्म (स्व) सम्भावना रहित ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनके पास त्यागने के पीछे आपही आप पदार्थ विना इच्छा प्राप्त होते है. परन्तु उनमें उनकी ममता होजाती है. और ज्ञानी के पास जो विना इच्छा पदार्थ प्राप्त होते हैं उनमें ज्ञानी की ममता नहीं होती है इस वास्ते " निर्मनः " ज्ञानीका विशेषणहै. और कोई ऐसे त्यागी होते हैं. कि न तो उनकी इच्छा होती है. और जो पराई इच्छा से पदार्थ आजावे उसमें ममता भी नहीं होती, परंतु इन तीनों बातों का अहंकार बना रहता है. ज्ञानी के अहंकार भी नहीं होता. यह ज्ञानी का लक्षण है. इसको ज्ञान-निष्ठा कहते हैं ॥ ७१ ॥

एषां ब्राह्मीस्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वाऽस्यामन्तकलेऽपि ब्रह्म निर्वाणमृच्छति॥७२॥

पार्थ १ एषा २ ब्राह्मीस्थितिः ३ एनाम् ४ प्राप्य; ५ न ६ विमुह्यति ७ अन्तकाले ८ अपि ९ अस्थाम् १० स्थित्वा ११ निर्वाणम् १२ ब्रह्म १३ ऋच्छति १४ ॥ ७२ ॥ अ० उ० ज्ञाननिष्ठा की महिमा वर्णन करतेहुये इस स्थितप्रज्ञ के प्रकरणको समाप्त करते हैं श्रीभगवान् ❋ हे अर्जुन ! १ यह २ सि० जो पूर्वोक्त सर्वकर्मसंन्यासपूर्वक ❋ ब्रह्मज्ञाननिष्ठा में स्थिति ३ सि० है ❋ इसको ४ प्राप्त होकर ५ सि० कोई संन्यासी ❋ नहीं ६ मोहको प्राप्त होताहै ७ सि० ब्रह्मचर्य आश्रम से ही जो संन्यास आश्रम ग्रहण करके ज्ञाननिष्ठा में स्थित रहते हैं. वे महात्मा मोक्षको प्राप्त होवे तो इसमें क्या कहना है ❋ अन्तकाल में ८ भी ९ अर्थात् अवस्था के चौथेभाग में भी ९ इसमें १० अर्थात् ब्रह्मनिष्ठा में चतुर्थाश्रम संन्यासपूर्वक ❋ स्थित होकर ११ निर्वाण ब्रह्मको १२ । १३ अर्थात् समस्त अनर्थों की निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्ति है. लक्षण जिस मोक्षका उसको ❋ प्राप्त होता है १४ ॥ ७२ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ अथ तृतीयोऽध्यायः ॥

अर्जुन उवाच—

ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मताबुद्धिर्जनार्दन ।
तत्किङ्कर्मणि घोरे मां नियोऽजयसि केशव ॥ १ ॥

केशव १ चेत् २ कर्मणः ३ बुद्धिः ४ ज्यायसी ५ ते ६ मता ७ ज. नार्दन ८ तत् ९ माम् १० घोरे ११ कर्माणि १२ किम् १३ नियोजयसि १४ ॥ १ ॥ अ० उ० अर्जुन ने समझा कि श्रीभगवान् को ज्ञाननिष्ठा संमत है क्योंकि द्वितीय अध्याय में ज्ञाननिष्ठाकी बहुत प्रशंसाकरी और यह भी कहा कि चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठाही मोक्षका हेतु है. जो श्रीमहाराज को ज्ञाननिष्ठा श्रेष्ठ प्रियहै तो मुझको क्यों लगाते हैं यह विचारकर अर्जुन कहता है❀हे केशव ! १ जो २ कर्म से ३ ज्ञान ४ श्रेष्ठ ५ आपको ६ सम्मत ७ सि० है❀हे जनार्दन ! ८ तो ९ मुझको १० हिंसात्मक ११ कर्ममें १२ क्यों १३ प्रेरते हो १४ अर्थात् जब कि आप ज्ञाननिष्ठाकोही मोक्षकी हेतु समझते हो तो फिर मुझ से यह क्यों कहते हो कि तू तो कर्महीं कर तेरा तो कर्ममेंही अधिकार है ॥ १ ॥

व्यामिश्रेणैव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे ।
तदेकं वद निश्चित्य येनश्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥ २ ॥

व्यामिश्रेण १ इव २ वाक्येन ३ मे ४ बुद्धिम् ५ मोहयसि ६ इव ७ तत् ८ एकम् ९ निश्चित्य १० वद ११ येन १२ अहम् १३ श्रेयः १४ आप्नुयाम् १५ ॥ २ ॥ अ० उ० किसी जगह तो श्रीमहाराज ज्ञानकी महिमा कहते हैं और किसी जगह कर्मकी इस मिलेहुये वाक्य में स्पष्ट नहीं प्रतीत होता कि, इन दोनोंमें श्रेष्ठ क्या है. यह विचारकर अब अर्जुन यह कहता है❀मिले हुयेवत् वाक्य करके १ । २ । ३ मेरी ४ बुद्धि को ५ मानों भ्रान्त करतेहो ६ । ७ अर्थात् मुझको ऐसे प्रतीत होता है.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि मानों जैसे कोई मिलेहुये वाक्य करके मोहको प्राप्त करता है वास्तव न आप मुझको मोह करते हो और न आपका वाक्य मिलाहुआ न सन्देहजनकहै क्योंकि आप परमकरुणा दया कृपाकी खानि हैं. हे करुणाकर! मेरे इस अज्ञान दूर करनेके लिये इन दोनों ज्ञाननिष्ठा, कर्मनिष्ठामें एक जो श्रेष्ठहो❋तिस एक को ८। ९ निश्चय करके १० कहो. आप ११ जिस करके १२ अर्थात् ज्ञान करके वा कर्म करके १२ मैं १३ कल्याण को १४ प्राप्त हूं १५ ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच—

लोकेऽस्मिन् द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ।
ज्ञानयोगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥ ३ ॥

अनघ १ अस्मिन् २ लोके ३ द्विविधा ४ निष्ठा ५ मया ६ पुरा ७ प्रोक्ता ८ सांख्यानाम् ९ ज्ञानयोगेन १० योगिनाम् ११ कर्मयोगेन १२ ॥ ३ ॥ अ० उ० इस मन्त्र में तात्पर्य्य—श्रीमहाराजका यह है कि—हे अर्जुन! जो मैंने स्वतन्त्र पृथक् पृथक् दो निष्ठा स्वतन्त्र दो पुरुषोंके निमित्त कही हों तो यह तेरा प्रश्न वनसक्ताहै कि कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठामें से एक श्रेष्ठ मुझसे कहो और जबकि मैंने एक निष्ठाकोही दोनप्रकार की (एकपुरुषके निमित्त अधिकार भेद से उत्तरोत्तर) कही है और एकपुरुषकोही अधिकार भेद से दो प्रकारका अधिकारी कहाहै तो इस हेतुसे यह प्रश्न तुम्हारा वे जोग है क्योंकि स्वतन्त्र एकनिष्ठा से कल्याण नहीं होसक्ता और न दोनों के सम समुच्चयसे कल्याण होता है. यह मैंने पीछे कहा है मिला हुआ वाक्य नहीं कहा फिरभी अब भलेप्रकार स्पष्ट कहताहूं. सावधान होकर सुन. अर्जुन १ इस जनके विषय २। ३ अर्थात् मुमुक्षु दोनों निष्ठाका अधिकारी एकही पुरुषके निमित्त दो हैं प्रकार जिसके ४ सि० ऐसी एक ❋निष्ठा ५ मैंने ६ पहिले ७ अर्थात् द्वितीयाध्यायमें वा बेदों में❋कही है ८ सि० वे दो प्रकार यह हैं❋विरक्त संन्यासी परमहंस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शुद्धान्तःकरण वालोंको ९ ज्ञानयोग करके १० अर्थात् विरक्तों के लिये ज्ञाननिष्ठा कही है और ज्ञानकी प्रथम भूमिकावाले ❋ कर्मयोगियों को ११ कर्मयोग करके १२ अर्थात् मलिन अन्तःकरणवालों को कर्मनिष्ठा कही है, क्योंकि कर्म करने से ही अन्तःकरण शुद्ध होकर ज्ञान होताहै. तात्पर्य—दोनों निष्ठाका केवल एक ब्रह्मनिष्ठाही में है जबतक अन्तःकरण शुद्ध होकर उपरति वैराग्य न होवे तबतक कर्म करना योग्य है. और जब अन्तःकरण शुद्ध होकर वैराग्यादिकका आविर्भाव होजावे तब कर्मोंका संन्यास करके ज्ञाननिष्ठ होजावे ❋ टी० "लोकस्तु भुवने जने" इत्यमरः श्रीधरजीने भी यही अर्थ कियाहै ॥ ३ ॥

न कर्मणा मनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।
न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥ ४ ॥

कर्मणाम् १ अनारम्भात् २ पुरुषः ३ नैष्कर्म्यम् ४ न ५ अश्नुते ६ संन्यसनात् ७ एव ८ सिद्धिम् ९ च १० न ११ समधिगच्छति १२ ॥ ४ ॥ अ० उ० दोनिष्ठा आप कहतेहो एकमें तो कर्मोंका अनुष्ठान करना पड़ता है और एकमें कर्म नहीं करने पड़ते मेरीजानमें पहलेही से वह एक निष्ठा श्रेष्ठहै कि जिसमें कर्म करना न पड़े. यह शङ्काकरके कहते हैं ❋ सि० विना अन्तःकरण शुद्धहुये ❋ कर्मों के १ अनारम्भ से २ अर्थात् कर्मों के न करने से २ मनुष्य ३ ज्ञाननिष्ठा को ४ नहीं ५ प्राप्त होताहै ६ सि० विना ज्ञान हुये ❋ मोक्षको ९ भी १० नहीं ११ प्राप्त होताहै १२ अथवा विना अन्तःकरण शुद्ध हुये केवल चतुर्थाश्रम संन्यास ग्रहण करने से ज्ञान वा मोक्षको नहीं प्राप्त होता है. कोई भी ❋ तात्पर्य—विना अन्तःकरण शुद्धहुये जो कर्म त्याग देताहै. उसको न इसलोक में सुख न परलोकमें और उसको न स्वर्ग न मोक्ष न ज्ञान प्राप्त होता है. इस वास्ते जबतक अन्तःकरण भलेप्रकार शुद्ध न हो, तबतक भगवदाराधनादि कर्मों का अनुष्ठान करता रहे फिर ज्ञाननिष्ठाका अधिकारी हो जायगा ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वैः प्रकृतिजैर्गुणैः॥ ५॥

जातु १ कश्चित् २ हि ३ क्षणम् ४ अपि ५ अकर्मकृत् ६ न ७ तिष्ठति ८ हि ९ सर्वैः १० प्रकृतिजैः ११ गुणैः १२ अवशः १३ कर्म १४ कार्यते १५॥ ५॥ अ० उ० अन्तरङ्ग कर्मों को अज्ञानी नहीं त्यागसक्ता है. आनीही उसके त्यागने में समर्थ है. क्योंकि उनका त्याग स्वरूप से नहीं होसक्ता. विचारदृष्टि करके उनमें आसक्त न होना. उसको मिथ्या कल्पित मायिक अनात्मधर्म समझना यही उनका त्यागहै. यह अज्ञानी से नहीं होसक्ता सोई कहते हैं❋कभी १ कोई २ भी ३ अर्थात् ब्रह्म-अनरहित कोई अज्ञानी❋पलमात्र ४ भी अकर्मकृत् ६ नहीं ७ ठहरताहै ८ अर्थात् अज्ञानी कर्म न करताहुआ अक्रिय हुआ पल भर भी किसी कालमें नहीं रहता. तात्पर्य—सदा कुछ न कुछ करताही रहताहै❋ क्योंकि ९ सब १० अर्थात् अज्ञानी प्राणीमात्र १० प्रकृति से उत्पत्ति हैं जिनकी तिन सत्त्व, रज, तम गुण करके ११। १२ सि० प्रेरा हुआ❋ अवश हुआ १३ अर्थात् पररतन्त्र हुआ गुणों के वशहुआ अज्ञानी जीव ❋कर्म१४ करता है १५ तात्पर्य—अज्ञानी जीव से सत्त्वादि गुण बल करके कर्म करते है मायाप्ररित परवश हुआ कर्म करता यह मायाकी प्रबलता आनसे ही दूर होतीहै॥ ५॥

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥६॥

कर्मेन्द्रियाणि १ संयम्य २ मनसा ३ इन्द्रियार्थान् ४ स्मरन् ५ यः ३ आस्ते

---

१ सत्व, रज, तमो गुणात्मिका जो मूल प्रकृति तिससे उत्पन्न जो महात्तत्वादि सप्तविकृति तिनसे उत्पन्न जो अहंकारादि षोडशविकार तिससे जाय मान जो द्रव्यवासना गुणवासना कर्म-वासना जातिवासना रागद्वेषादि तिनसे प्रेरित हुवा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७ सः ८ विमूढात्मा ९ मिथ्याचारः १० उच्यते ११ ॥ ६ ॥ अ० उ० मलिन अन्तःकरणवाला जो कर्म त्याग देताहै. श्रीभगवान् उसकी बुराई कहते हैं ❋ कर्मेन्द्रियोंका १ रोंक करके २ सि० और ❋ मनसे ३ शब्दादि विषयोंका ४ स्मरण करता हुआ ५ जो ६ बैठाहै ७ अर्थात् कर्मोंका अनुष्ठान नहीं करता ❋ सो ८ मलिन अन्तःकरणवाला ९ सि० कर्मत्यागी ❋ मिथ्याचारी १० कहाहै ११ अर्थात् ऐसे त्यागी की दम्भी कपटी कहते हैं. और झूंठा है मौन आसनादि आचार जिसका ॥ ११ ॥ ६ ॥

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमशक्तः स विशिष्यते ॥ ७ ॥

यः १ तु २ इन्द्रियाणि ३ मनसा ४ नियम्य ५ अर्जुन ६ कर्मेन्द्रियैः ७ कर्मयोगम् ८ अशक्तः ९ आरभते १० सः ११ विशिष्यते १२ ॥ ७ ॥ अ० उ० मलिन अन्तःकरणवाले कर्मत्यागी से कर्म करनेवाला श्रेष्ठहै यह कहते हैं ❋ सि० मलिन मनवाला तो कपटी है ❋ और जो १ । २ ज्ञानेन्द्रियों को ३ मन करके ४ सि० विषयों से ❋ रोंककर ५ हे अर्जुन ! ६ कर्म इन्द्रियों करके ७ कर्मयोग को ८ अशक्तहुआ ९ करता है १० सो ११ विशेष है १२ सि० पूर्वोक्त से ❋ तात्पर्य—फलकी इच्छासे जो रहित है. और कर्मों में जो अशक्तहै. सो अन्तःकरण शुद्धि द्वारा ब्रह्मज्ञान को प्राप्त होकर मोक्ष होगा. इस हेतुसे विशेषहै ॥ ७ ॥

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ।
शरीर यात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥ ८ ॥

हि १ अकर्मणः २ कर्म ३ ज्यायः ४ नियतम् ५ कर्म ६ त्वम् ७ कुरु ८ ते ९ अकर्मणः १० देहयात्रा ११ अपि १२ च १३ न १४ प्रसिद्ध्येत् १५ ॥ ८ ॥ अ० उ० जब कि १ न करनेसे २ कर्म ३ श्रेष्ठ ४ सि० है इस हेतुसे ❋ वेदोक्त ५ निष्कामकर्म को ६ तू ७ कर ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasj Collection. Digitized by eGangotri

सि० नहीं तो❋तुझ अकर्मीको ९। १० देह यात्रा ११ भी और १३ सि० मोक्ष भी❋नहीं १४ सिद्ध होगी १५ टी० कर्मों का अनुष्ठान न करने से करना श्रेष्ठ है २। ३ जो तू अपना स्वधर्म कर्म युद्ध न करेगा तो तुझको भोजन वस्त्रादि भी देहकी रक्षा के लिये नहीं मिलेंगे और विना अन्तःअरण शुद्ध हुये तुझको ज्ञानका अभाव होने से तू मुक्त भी नहीं होगा. इत्यभिप्रायः ९। १०॥ ८॥

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर॥ ९॥

यज्ञार्थात् १ कर्मणः २ अन्यत्र ३ कर्मबन्धनः: ४ अयम् ५ लोकः ६ कौन्तेय ७ मुक्तसङ्गः ८ तदर्थम् ९ कर्म १० समाचर ११॥ ९॥ अ० उ० इसलोक वा परलोक के पदार्थों की कामना करके जो कर्म किया जाताहै. वह बन्ध का हेतु है. यह कहते है सि० "यज्ञो वै विष्णुः" यह श्रुतिहै. यज्ञनाम विष्णुका है. विष्णु सच्चिदानन्द व्यापकको कहते हैं. तात्पर्यार्थ—यज्ञ शब्दका तत् त्वम् पदों के लक्ष्यार्थ में हैं❋यज्ञ नारायणार्थ १ कर्म से २ पृथक् ३ सि० जो और सकाम कर्म हैं तिन❋ कर्म करके बन्धनको प्राप्त होताहै ४ यह ५ जीव ६ हे अर्जुन! ७ सि० तू तो❋ निष्काम असंग हुआ ८ परमेश्वरार्थ ९ कर्म १० कर ११ अर्थात् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्दस्वरूप जो आत्मा है. उसकी प्राप्ति के लिये. तात्पर्य—अज्ञानकी निवृत्ति के लिये कर्मोंका अनुष्ठान कर. अज्ञानकी जो निवृत्ति है यही आत्माकी प्राप्ति है॥ ९॥

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥ १०॥

प्रजापतिः १ सहयज्ञाः २ प्रजाः ३ सृष्ट्वा ४ पुरा ५ उवाच ६ अनेन ७ प्रसविष्यध्वम् ८ एषः ९ वः १० इष्ट कामधुक् ११ अस्तु १२॥ १०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अ० उ० सर्वथा न करने से सकाम कर्म करना श्रेष्ठहै. अब यह कहते है. चार श्लोकोंमें ब्रह्माजी का वाक्य इसमें प्रमाणहै ❋ ब्रह्माजी १ सहित यज्ञों के प्रजाको २। ३ रचकर ४ अर्थात् यज्ञ और प्रजाको रचकर ❋ पहले ५ सि० प्रजासे यज्ञ ❋ बोले ६ सि० कि हे कर्मनिष्ठावाली प्रजा! ❋ इस करके ७ अर्थात् कर्मयज्ञ करके उत्तरोत्तर बढ़ोगे तुम ८ यह यज्ञ ९ तुमको १० इष्ट कामधुक् ११ हो १२ अर्थात् वाञ्छित फल देनेवाली हो. यह मेरा आशीर्वाद है ॥ १० ॥

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥ ११ ॥

अनेन १ देवान् २ भावयता ३ ते ४ देवाः ५ वः ६ भावयन्तु ७ परस्परम् ८ गावयन्तः ९ परम् १० श्रेयः ११ अवाप्स्यथ १२ ॥ ११ ॥ अ० उ० कहनेका प्रकार निरूपण करते हैं ❋ इस यज्ञ करके १ देवताओं को बढ़ावो २ तुम ३ तात्पर्य—देवता यज्ञ करने से बढ़ते हैं. उनका भोजन यज्ञही है. और यज्ञका भाग पानेवाले ४ वे देवता ५ तुमको ६ बढ़ावैंगे ७ सि० इस प्रकार ❋ परस्पर आपसमें ८ बढ़ते हुये ९ सि० तुम और देवता ❋ परमकल्याण को १०। ११ अर्थात् स्वर्गजन्य सुखको ११ प्राप्त होगे १२ टी० यज्ञ करने से देवता तुम को वाञ्छित फल देंगे ॥ ७ ॥ ११ ॥

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥ १२ ॥

यज्ञभाविताः १ देवाः २ वः ३ इष्टान् ४ भोगान् ५ हि ६ दास्यन्ते ७ तैः ८ दत्तान् ९ एभ्यः १० अप्रदाय ११ यः १२ भुंक्ते १३ सः १४ स्तेन १५ एव १६ ॥ १२ ॥ अ० उ० यज्ञ करके बढ़े हुये वा प्रसन्न हुये १ देवता २ तुमको ३ सि० स्त्री पुत्र अन्न वस्त्रादि ❋ प्यारे ४ भोगों को ५ हि ६ देंगे ७ तात्पर्य—देवता मोक्ष नहीं दे सक्ते हैं. मोक्षकी प्राप्ति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो सर्वकर्मसंन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठासेही होती है ❋ तिन करके ८ दिये-हुओं को ९ अर्थात् देवताओं के दिये भोगोंको ❋ इनके अर्थ १० तात्पर्य—उन्हीं देवतों के अर्थ ❋ न देकर अर्थात् साधुको भोजन कराना इत्यादि पांच यज्ञ न करके ११ जो १२ भोजन करता है १३ सो १४ चोर १५ सि० हैं ❋ निश्चय १६ तात्पर्य—नित्य विना पञ्चयज्ञ किये भोग भोगना अनर्थका हेतु है ॥ १२ ॥

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥ १३ ॥

यज्ञशिष्टाशिनः १ सन्तः २ सर्वकिल्बिषैः ३ मुच्यन्ते ४ ये ५ तु ६ आत्मकारणात् ७ पचन्ति ८ ते ९ पापाः १० अघम् ११ भुञ्जते १२॥१३ अ० उ० गृहस्थोंको नित्य नियमकरके पांच यज्ञ करने योग्यहैं. जो करते हैं उनकी स्तुति करते हैं. श्रीमहाराज और जो नहीं करते उनकी निन्दा करते हैं ❋ यज्ञ में का बचाहुआ अन्न भोजन करतेहुये १ । २ सब पापोंसे ३ लूटजाते हैं ४ और जो ५ । ६ आत्मा के वास्ते ७ अर्थात् केवल अपनाही और अपने कुटुम्बका पेट भरने के वास्ते ही ❋ पाक करतेहैं " पचति " यह क्रिया उपलक्षणमात्र है. तात्पर्य—जो केवल कुटुम्ब के लिये रसोई मन्दिरादि बनाते हैं, वस्त्रादिकोंका भोग भोगते हैं. साधु परमेश्वरका उन पदार्थों में नाममात्र भी नहीं वे ९ पापी १० पापको ११ भोजन करते हैं १२ सि० " कण्डनी पेषणी चुल्ही उदकुम्भी च मार्जनी । पञ्चसूनागृहस्थस्य ताभिः स्वर्गं न विन्दति " ❋ अ० उ० ओखली, चक्की, चूल्हा, जल रखनेकी जगह, बुहारी, जिसको सोहरनी सोहनी याने झाड़ू भी कहते हैं इन पांचमें दिनप्रति अनेक हत्या पांच प्रकारसे होती रहती हैं. इस हेतुसेही गृहस्थोंका अन्तःकरण मलिन रहताहै और स्वर्ग नहीं मिलताहै ❋ " स्वाध्यायो ब्रह्मयज्ञश्च पितृयज्ञस्तु तर्पणम् । होमो देवो बलिर्यज्ञो नृयज्ञोऽतिथि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पूजनम् "❋अ० वेद शास्त्रादिका पढ़ना वा पाठ करना इसको ब्रह्मयज्ञ कहते हैं. तर्पण को पितृयज्ञ कहते हैं. हवन करना और बलिवैश्वकर्म करना. इन दोनों को देवयज्ञ कहते हैं, अतिथि अभ्यागतोंका पूजन करके उनको भोजनकराना वस्त्रादि देना, इसको नरयज्ञ कहते हैं. तात्पर्य—पठन, पाठन, पाठ, तर्पण, होम, बलिवैश्वकर्म, विरक्त साधुओं को भोजन कराना इन पांच यज्ञ करने से नित्यकी नित्य पांचों हत्या दूर होती हैं. जो नहीं करते उनकी बढ़ती रहती हैं ॥ १३ ॥

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥

अन्नात् १ भूतानि २ भवन्ति ३ पर्जन्यात् ४ अन्नसंभवः ५ यज्ञात् ६ पर्जन्यः ७ भवति ८ यज्ञः ९ कर्मसमुद्भवः १० ॥ १४ ॥ अ० कर्म करने से ही दृष्टिद्वारा अन्नादि पदार्थों की प्राप्ति होती है. इस हेतुसे भी कर्म करना योग्य है. यह कहते हैं तीन श्लोकों में अन्नसे १ मनुष्य प्राणी २ होते हैं ३ अर्थात् अन्नका परिणाम शुक्र शोणित स्त्रीपुरुष का जो वीर्य ये दोनों मिलकर मनुष्यादि प्राणी उत्पन्न होते हैं. वर्षा से ४ अन्न होता है. यज्ञ से ६ वर्षा ७ होती है. ८ यज्ञ ९ कर्म से होता है १० सि० ऋत्विक् और यजमान का जो व्यापारहै वही कर्म है. उससे यह सिद्ध होता है ॥ १४ ॥

कर्मब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥१५॥

कर्म १ ब्रह्मोद्भवम् २ विद्धि ३ ब्रह्म ४ अक्षरसमुद्भवम् ५ ब्रह्म ६ सर्वगतम् ७ तस्मात् ८ यज्ञे ९ नित्यम् १० प्रतिष्ठितम् ११ ॥ १५ ॥ अ० कर्म को १ वेद से उत्पन्न हुआ २ जान वेद को ४ मायोपहित ब्रह्म उत्पन्न हुआ ५ सि० जान माया मिथ्या है ब्रह्म ६ पूर्ण है ७ तिस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारण से ८ यज्ञमें ९ नित्य १० स्थित है ११ सि० भूतादि पदार्थ जितने पीछे कहे सबका कारण मायोपहित ब्रह्म है. सो पूर्ण है. तिसकारण से यज्ञमें भी स्थित है. तात्पर्य-यद्यपि ब्रह्म पूर्ण हैं परन्तु उसकी प्राप्ति निष्काम कर्म करनेसे अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ब्रह्मज्ञान होकर होती है इस वास्ते यज्ञमें ब्रह्म स्थितहै यह कहा ॥ १५ ॥

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥१६॥

एवम् १ चक्रम् २ प्रवर्तितम् ३ यः ४ न ५ अनुवर्तयति ६ पार्थ ७ सः ८ इह ९ मोघम् १० जीवति ११ अघायुः १२ इन्द्रियारामः॥१६॥अ० उ०ईश्वर से वेद, वेदसे कर्म, कर्म से मेघ, मेघसे अन्न, अन्नसे प्राणी और प्राणी जब वेदोक्त कर्म करते हैं. तब फिर मेघादि होते है. फिर करते हैं. फिर होते हैं ❀इस प्रकार १ चक्र २ सि० परमेश्वर ने लोगोंके पुरुषार्थ की सिद्धिके लिये ❀प्रवृत्त कियाहै ३ जो ४ सि०कर्म का अधिकारी इसमें ❀नहीं ५ प्रवृत्त होता ६ अर्थात् कर्मोंका अनुष्ठान नहीं करता ६. हे अर्जुन! ७ सो ८ इस संसारमें ९ वृथा १० जीवताहै ११ सि० कैसाहै सो ❀पापरूप अवस्थाहै उसकी १२ सि०और ❀इन्द्रियों करके विषयों में विहारहै जिसका १३ सि० सो पृथिवीपर भारहै आप डूबा और औरों को डुबाता है ॥ १६ ॥

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः।
आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते॥१७॥

यः १ तु २ मानवः ३ आत्मरतिः ४ एव ५ तृप्तः ६ च ७ आत्मनि ८ एव ९ च १० सन्तुष्टः ११ स्यात् १२ तस्य १३ कार्यम् १४ न १५ विद्यते १६ ॥ १७ ॥ अ० उ० अज्ञानियों को अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये निष्काम कर्म योग कहकर और सर्वथा न करनेसे सकाम करनाही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अच्छाहै. यह कहकर अब ज्ञानी को कर्म का अनुपयोग कहते है. दो श्लोकों में अर्थात् ज्ञानीको कर्म करना कुछ आवश्यक नहीं सि० जो आत्माको यथार्थ पूर्णानन्द ब्रह्मस्वरूप नहीं जानता है. उसको तो अज्ञानकी निवृत्ति के लिये अवश्यही निष्काम कर्म करना योग्य है❋और जो १।२ मनुष्य ३ सि० ऐसा है कि❋आत्माही में है प्रीति जिसकी ५।५ अर्थात् आत्मा से पृथक् पदार्थ में जिसकी प्रीति नहीं❋और आत्माही में तृप्ति है ६।७ अर्थात् इस लोक और परलोक के पदार्थों की प्राप्ति से तृप्ति नहीं जानता है❋और आत्मामें ही ८।९।१० सन्तुष्ट ११ है १२ अर्थात् आत्मासे पृथक् पदार्थ की न इच्छा रखता है. और न उसकी दृष्टि में आत्मा से सिवाय श्रेष्ठ पदार्थ है. ऐसा जो विरक्त ज्ञानी संन्यासी है❋तिसको १३ करने योग्य १४ सि० कुछ भी कर्म❋नहीं १५ है १६

तात्पर्य—जो कोई कदाचित् कर्मकाण्डी ब्राह्मणादिक यह कहै संन्यासी से कि, जैसे भिक्षाटनादि कर्म तुम करतेहो ऐसेही तीर्थयात्रा देवपूजादि कर्म करने में तुम्हारी क्या क्षति है ? उत्तर इसका प्रसिद्ध स्पष्टहै कि, जिसकी जहां प्रीति होती है. वह उस जगह तत्पर रहताहै. इस हेतुसे ज्ञानी आत्मामें परायण रहते हैं. उनको देवपूजादि कर्म करनेका सावकाशही नहीं और भिक्षाटनादि विद्वान्का गौण कर्म है. बाल्य भोजनवत् और उसके विना तो शरीर की स्थिति नहीं होसक्ती. देवपूजादि कर्म के विना विद्वान् की क्या क्षतिहोती है. जो सुन्दर सच्चिदानन्द देवको छोड़ जड़ पाषाणादि देवताका आराधन करे. तात्पर्य—सिवाय आत्मनिष्ठाके विद्वानको और कुछ कर्तव्य नहीं सो वह निष्ठा ज्ञानी की स्वाभाविक है. कर्त्तव्य नहीं. ज्ञानी शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द नित्यमुक्त नित्य निर्विकार पूर्ण ब्रह्महै. "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" ॥ १७ ॥

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन।
न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥ १८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्य १ कृतेन २ एव ३ अर्थः ४ न ५ अकृतेन ६ इह ७ कश्चम ८ न ९ सर्वभूतेषु १० अस्य ११ कश्चिद् १२ अर्थव्यपाश्रयः १३ च १४ न १५ ॥ १८ ॥ अ० उ० वेद में लिखा है कि, जब ज्ञानमार्ग में देवता विघ्न करते हैं यह सत्य है परन्तु ज्ञान से पहिले विघ्न करते है. ज्ञानमार्ग में प्रवृत्त नहीं होनेदेते मत मतान्तर के पण्डितोंकी बुद्धि में बैठकर और राजादि के मन में स्थित होकर प्राणीको कर्मोंमें प्रेरते हैं और अनेक नाना-विघ्न करते है. और ज्ञानहुये पीछे तो वही देवता ज्ञानी को आपना आत्मा जानते हैं, चाहते हैं, आत्माकी बराबर यह भी तो वेदमेंही लिखाहै. श्रीभगवान् भी सातवें अध्याय में कहेंगे " ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् " तात्पर्य कोई यह शंकाकरे कि देवताओं का भय करके वा कुछ देवताओं से आशा करके तो ज्ञानी को कर्म करना योग्य है इस शंकाके दूर करने के लिये यह मन्त्र करते हैं श्रीमहाराज, जब कि ज्ञानी देवताओं को भी जीतचुका फिर अब उसको कर्म करने और न करने से क्या प्रयोजनहै ? यह कहते हैं ? इत्यभिप्रायः तिसको अर्थात् ज्ञानी को १ सि० कर्म किये करके २ भी ३ सि० किसी से इस लोक वा परलोक में कुछ ❋ प्रयोजन ४ नहीं ५ सि० और ❋ न किये से ६ सि० भी ❋ इस लोक में ७ कुछ ८ सि० उस ज्ञानी को पाप प्रायश्चित्त ❋ नहीं ९ सि० होता और ब्रह्माजी से लेकर चीटीपर्यन्त ❋ सब भूतों में १० इसका ११ अर्थात् ज्ञानी का ११ कोई १२ अर्थ में आसरा १३ भी १४ नहीं १५ तात्पर्य—देवता मनुष्यादि से ज्ञानी को व्योहार में वा परमार्थ में कुछ प्रयोजन नहीं, क्योंकि ज्ञानी के शरीर का निर्वाह तो प्रारब्धवशात् हुये चला जाता है. उसके कोई अधिक न्यून नहीं करसक्ता और न उसके स्वरूप को कोई अधिक न्यून करसक्ता फिर कर्म करने में क्या तो उसकी क्षति और क्या उसको लाभ ॥ १८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मादसक्तः सततं कार्य्यं कर्म समाचर।
आसक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः॥ १९॥

तस्मात् १ सततम् २ असक्तः ३ कार्यम् ४ कर्म ५ समाचर ६ असक्तः ७ पूरुषः ८ हि ९ कर्म १० आचरन् ११ परम् १२ आप्नोति १३ ॥ १९ ॥ अ० उ० विरक्त ज्ञानी को ही कर्मका अनुपयोग है. अज्ञानी वा गृहस्थ ज्ञानी को मैं नहीं कहता हूं. हे अर्जुन! तिस कारण से १ निरन्तर २ असंग हुआ ३ करने के योग्य ४ कर्मका ५ कर [तू] ६ असक्त ७ पुरुष ८ ही ९ कर्म को १० करता हुआ ११ सि० अन्तःकरण शुद्धि द्वारा ज्ञानी होकर ❋ मोक्षको १२ प्राप्त होता है १३ ॥ १९ ॥

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि॥ २०॥

जनकादयः १ कर्मणा २ हि ३ एव ४ संसिद्धिम् ५ अस्थिताः ६ लोकसंग्रहम् ७ अपि ८ सम्पश्यन् ९ कर्तुम् १० अर्हसि ११ एव १२ ॥ २० ॥ अ० उ० सदा से कर्म करकेही बड़े बड़े महात्मा मुमुक्षु अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञान को प्राप्त हुये हैं. यह कहते हैं. जनकादि १ कर्म करके २ ही ३ निश्चय ४ सि० अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञान को ५ प्राप्तहुये हैं ६ सि० और जो कदाचित् तू यह मानता हो कि, मैं तो पहलेही ज्ञानी हूं. फिर अब कर्म क्यों करूं. उत्तर इसका यह कि, लोकसंग्रह को ७ ही ८ देखता हुआ ९ अर्थात् वह विचारकर कि अज्ञानी जन भी महात्मा की देखा देखी आचरण करते हैं, ज्ञानियोंके छोड़ देनेसे आज्ञानी भी कर्म छोडकर कुमार्ग में प्रवृत्त होंगे, उनसे कर्म कराने के लिये कर्म करना योग्य है इस प्रयोजनको स्मरण करता हुआ ❋ कर्म करने को १० योग्य है तू ११ निश्चय १२ तात्पर्य—श्रीभगवान्का यह है कि, हे अर्जुन! जो तू अज्ञानी हैं तब तो अन्तःकरण की शुद्धि के लिये कर्मकर और जो तू ज्ञानी है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो लोकसंग्रह के लिये कर्म कर. गृहस्थाश्रम की शोभा कर्म सेही है. इसी वास्ते जानकादि करते रहे सर्वथा कर्मको अनुपयोग मैनें विरक्त संन्यासियों के वास्ते कहा है ॥ २० ॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ २१ ॥

श्रेष्ठः १ यद् २ यद् ३ आचरति ४ तत् ५ तत् ६ एव ७ इतरः ८ जनः ९ स १० यत् ११ प्रमाणम् १२ कुरुते १३ लोकः १४ तद् १५ अनुवर्तते १६ ॥ २१ ॥ अ० उ० अनजान बड़ोंकी देखा देखी जो जो कर्म पाप वा पुण्य करते हैं. उन कर्मों के भोगी होते है. ये लोग कौन कि धनवाले और हुकुमवाले और पण्डित और जाति में जो प्रधान इत्यादि बड़े बड़े आदमी जो कहलाते हैं वे भोगी होते हैं. क्योंकि इसनेही बुरे भले कर्मोंका प्रचार जगमें होताहै. सोई कहते हैं. इस मन्त्रमें श्रेष्ठ १ सि० पुरुष❀जो २ जो ३ आचरण करताहै ४ सोही सो ५।६।७ अन्य जन ८।९ सि० कर्म करता है❀और सो १० सि० प्रतिष्ठित जन❀ जिसको ११ अर्थात् कर्मयोग को वा ज्ञानयोगको ११ प्रमाण १२ करता है १३ सि० अनजान❀जन १४ तिसकेही अनुसार वर्तता है १५। १६ ॥ २१ ॥

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन ।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥ २२ ॥

पार्थ १ त्रिषु २ लोकेषु ३ मे ४ किञ्चन ५ कर्तव्यम् ६ न ७ अस्ति ८ अवाप्तव्यम् ९ अनवाप्तम् १० न ११ एव १२ च १३ कर्मणि १४ वर्ते १५ ॥ २२ ॥ अ० उ० लोकसंग्रह के लिये ज्ञानी होकर किसीने कर्म किया है इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं कि, प्रथम तो मैं ही ऐसाहूं हे अर्जुन ! १ तीन लोक में २। ३ मुझको ४ कुछ भी ५ कर्तव्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

६ नहीं ७ है ८ सि० और प्राप्त होने के योग्य ९ सि० वस्तु जो चाहिये वह मुझको सब क्या नहीं प्राप्तहै १०।११ तो भी १२।१३ कर्म में १४ वर्तताहूं मैं १५ तात्पर्य—मोक्षपर्यन्त मुझको सब पदार्थ प्राप्त है और मुझको न किसीका खटकाहै न मुझपर किसीकी आज्ञाहै तो भी मैं कर्म करताहूं लोक संग्रहके लिये कर्म न करना यह केवल विरक्तसाधुओंके वास्ते विधिहै ॥ २२ ॥

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः ।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥ २३ ॥

यदि १ जातु २ अतन्द्रितः ३ अहम् ४ हि ५ कर्माणि ६ न ७ वर्तेयम् ८ पार्थ ९ सर्वशः १० मनुष्याः ११ मम १२ वर्त्म १३ अनुवर्तन्ते १४ ॥ २३ ॥ अ० उ० आप अपनी इच्छा से कर्म करते हो जो न करो तो क्या हो. यह शंका करके कहते हैं जो १ कभी २ अनालस्य हुआ ३ अर्थात् आलस्यरहित होकर ३ मैं ४ ही ५ कर्म में ६ न ७ बर्तूं ८ अर्थात् जो मैंही कर्म न करूं तो हे अर्जुन ! ९ सबप्रकार करके १० मनुष्य ११ मेरे १२ मार्गको १३ पीछे बर्तेंगे १४ अर्थात् सब लोग कर्म छोड़देंगे जिस रस्ते मैं चलूंगा. उसी रस्ते सब चलेंगे ॥ २३ ॥

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम् ।
संकरस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः ॥ २४ ॥

चेद् १ अहम् २ कर्म ३ न ४ कुर्याम् ५ इमे ६ लोकाः ७ उत्सीदेयुः ८ संकरस्य ९ च १० कर्ता ११ स्याम् १२ इमाः १३ प्रजाः १४ उपहन्याम् १५ ॥ २४ ॥ अ० उ० जो मनुष्य आपके देखादेखी कर्म छोड़देंगे तो उसमें आपने क्या किया और आपकी क्या क्षति है. यह शंका करके कहते हैं जो १ मैं २ कर्म ३ न ४ करूं ५ सि० तो ये ६ सि० अज्ञानी जीव ७ सि० मेरे देखा देखी कर्म न करने से भ्रष्ट होजावें ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् वर्णसंकर होजावे इस हेतु से मैंनेही प्रजाको भ्रष्टकिया और वर्णसंकरका ९ भी १० कर्ता ११ सि० मैंही ❀ हुआ १२ सि० मेरा अवतार वास्ते धर्म की रक्षाके था. मैंने धर्मकी रक्षा क्या करी? उलटा मनुष्योंको वर्णसंकर किया. और इसी हेतुसे इस प्रजाको १३ । १४ भ्रष्ट करनेवाला मैं हुआ १५ अर्थात् उलटा प्रजाका अन्तःकरण मैला करनेवाला मैं हुआ. मैंने ही यह प्रजा मैलीकरी इत्यर्थः ॥ २४ ॥

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥ २५ ॥

भारत १ यथा २ अविद्वांसः ३ कर्मणि ४ सक्ताः ५ कुर्वन्ति ६ तथा ७ विद्वान् ८ असक्तः ९ कुर्याद् १० लोकसंग्रहम् ११ चिकीर्षुः १२ ॥ २५ ॥ अ० उ० अज्ञानी जीवोंपर कृपा करके लोकसंग्रह के लिये गृहस्थ ज्ञानी होकर भी कर्म करे यह कहते हैं. हे अर्जुन ! १ जैसे २ अज्ञानी ३ कर्म में ४ सक्तहुये ५ सि० कर्म करते हैं तैसे ७ ज्ञानी ८ असक्त हुआ ९ करे १० सि० कैसा है वह ज्ञानी लोगों की रक्षा ११ करने की इच्छावाला १२ सि० है. वह ज्ञानी यह समझता है कि ये कर्म और लोगों के भले के वास्ते मैं करताहूं ॥ २५ ॥

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम्।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन् ॥ २६ ॥

अज्ञानाम् १ कर्मसङ्गिनाम् २ बुद्धिभेदम् ३ न ४ जनयेत् ५ विद्वान् ६ युक्तः ७ सर्वकर्माणि ८ समाचरन् ९ जोषयेत् १० ॥ २६ ॥ अ० उ० अज्ञानियों पर जब कृपाकरनीही ठहरी तो फिर उनको कर्म में क्यों प्रवृत्त करना चाहिये ? उनको भी ब्रह्मतत्त्वका उपदेश करना योग्य है. यह शंका करके श्रीभगवान् कहते हैं कि, कर्मसंगी अज्ञानियों को कभी भूलकर भी ब्रह्मज्ञान सिखाना न चाहिये. ब्रह्मज्ञान के अधिकारी औरही मुमुक्षु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शुद्धान्तःकरणवाले हैं. पुत्र स्त्री धनमें जो आसक्त हैं वे नहीं. अज्ञानी १ कर्मसंगियों की २ बुद्धिकाभेद ३ न ४ उत्पन्नकरे ५ विद्वान् ६ सावधान-हुआ ७ सि० अपने स्वरूप में ❀ सबकर्मोंको ८ करताहुआ ९ सि० अज्ञा-नियोंको कर्ममें ❀ प्रेरे १० अर्थात् आपभी करे और उनसे भी करावै. तात्पर्य—कर्मों में पुत्रादि पदार्थों में देहादि में जो आसक्त हैं. उनकी बुद्धि को ज्ञानी कर्मों में से न हटावे अर्थात् उनसे यह न कहै कि आत्मा अकर्ता अद्वैत अभोक्ता स्वतन्त्र शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकारहै तुम कर्म क्यों करतेहो ? कर्म तो जड़है. इसप्रकार उनकी बुद्धिका भेद न करे क्योंकि उनका रागद्वेषादि सहित अन्तःकरण होने से उनको आत्माका ज्ञान न होगा. और कर्म छोड़ने से उनको इसलोक में सुख न होगा, न परलो-कमें, न उनके अन्तःकरणमें से तम, रज, काम, क्रोधादि दूर होंगे. इस हेतु से अज्ञानी जन कर्म न करने से उभय भ्रष्ट होजावेंगे ॥ २६ ॥

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहंकार विमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥ २७ ॥

सर्वशः १ कर्माणि २ प्रकृतेः ३ गुणैः ४ क्रियमाणानि ५ अहंकारवि-मूढात्मा ६ इति ७ मन्यते ८ अहम् ९ कर्ता १० ॥ २७ ॥ अ० उ० अज्ञानी कर्मों में मन से आरक्त होजाता है. यह कहते हैं सब प्रकार करके १ कर्म २ प्रकृति के ३ गुणों करके ४ कियेजाते हैं ५ अर्थात् गुणही करता है. अहंकार करके विमूढ़है अन्तःकरण जिसका ६ सि० वह यह ७ मानताहै ८ सि० कि मैं ९ करता १० सि० हूं इसी हेतुसे कर्मोंमें आसक्त होजा-ता है. टी० अहंकार करके अर्थात् इन्द्रियादिकों में आत्मा का अध्यास करके अर्थात् मैं देखताहूं, खाताहूं, समझताहूं. इसप्रकार इन्द्रियादिकों के साथ आत्मा की एकता करके भ्रान्ति को प्राप्तहुई है बुद्धि जिसकी वह मानताहै कि, मैं कहताहूं ॥ २७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः।
गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते॥ २८॥

महाबाहो १ गुणकर्मविभागयोः २ तत्त्ववित् ३ तु ४ इति ५ मत्वा ६ न ७ सज्जते ८ गुणाः ९ गुणेषु १० वर्तन्ते ११ ॥ २८ ॥ अ० उ० ज्ञानी कर्मों में मन से नहीं आसक्त होताहै. यह कहते हैं. हे अर्जुन! १ गुण और कर्मों के विभाग का २ तत्त्व जाननेवाला ३ तो ४ यह ५ मानकर ६ नहीं ७ आसक्त होता है ८ सि० कर्मोंमें क्या मानताहै. वह इस अपेक्षा में कहते हैं कि इन्द्रिय ९ विषयों में १० ❋ वर्तती हैं ११ सि० आत्मा निर्विकार शुद्ध है, ज्ञानी यह मानता है १० टी० मैं गुणात्मक नहीं हूं. अर्थात् गुणरूप मैं नहीं इस प्रकार तो गुणों से आत्माको पृथक् समझताहै और ये कर्म मेरे नहीं. इस प्रकार कर्मों से आत्माको पृथक् समझताहै२॥२८॥

प्रकृतेर्गुणसंमूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु।
तानकृत्स्नविदो मन्दान् कृत्स्नविन्न विचालयेत्२९॥

प्रकृतेः १ गुणसंमूढाः २ गुणकर्मसु ३ सज्जन्ते ४ तान् ५ अकृत्स्नविदः ६ मन्दान् ७ कृत्स्नवित् ८ न ९ विचालयेत् १० ॥ २६ ॥ अ० उ० कर्मसंगी मन्द मति हैं इस हेतु से भी उनको ब्रह्मज्ञान उपदेश नहीं करना यह कहते हैं, प्रकृति के १ सि० सत्त्वादि ❋ गुणों करके भ्रान्त हुये २ गुणों के कर्मोंमें ३ आसक्तहैं ४ सि० जो ❋ तिन अल्पज्ञ मन्दमति पुरुषों को ५। ६। ७ सर्वज्ञ ज्ञानी ८ न ९ विचाले १० सि० कर्ता से अर्थात् उनको ब्रह्मतत्त्व उपदेश नहीं करना वे ब्रह्मज्ञान के अभी अधिकारी नहीं जब वे आप जिज्ञासा करें तब उनको उपदेश करना योग्यहै ❋ इत्यभिप्रायः ॥ २९ ॥

मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्याध्यात्मचेतसा।
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युद्ध्यस्व विगतज्वरः॥३०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मयि १ अध्यात्मचेतसा २ सर्वाणि ३ कर्माणि ४ संन्यस्य ५ निराशीः ६ निर्ममः ७ विगतज्वरः ८ भूत्वा ९ युद्ध्यस्व १० ॥ ३० ॥ अ० उ० मुमुक्षुको जिस प्रकार कर्म करना चाहिये. सो कहते हैं❋मुझ सर्वज्ञादि-गुणविशिष्ट सर्वात्मा में १ विवेकबुद्धि करके २ अर्थात् अन्तर्यामी के आधीन हुआ यह कर्म करताहूं. मैं यह कर्म परमेश्वरार्थ है मुझको फल की इच्छा नहीं इस बुद्धि करके सर्व कर्मों को ३ । ४ अर्थात् सब कर्मोंके फलको❋परमेश्वर में अर्पण करके ५ आशारहित ६ ममतारहित ७ सन्तापरहित ८ होकर ९ युद्ध कर १० सि० क्षत्रियों का युद्धही स्वधर्म कर्महै सो इसप्रकार कर जैसे ऊपर कहा टी० कर्म करने के समय किसीप्रकार फलकी इच्छा आशा नहीं रखनी ६ कर्मों के फलमें ममता रहित इसवास्ते होना चाहिये कि, उनका फल परमेश्वर को अर्पण होचुका. अभाव पदार्थ में ममता नहीं बनसक्ती है ७ कर्म करने के समय धीरज उत्साह चाहिये ॥ ३० ॥

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः ।
श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः॥३१॥

ये १ श्रद्धावन्तः २ अनसूयन्तः ३ मानवाः ४ मे ५ इदम् ६ मतम् ८ अनुतिष्ठन्ति ९ ते १० अपि ११ कर्मभिः १२ मुच्यन्ते १३ ॥ ३१ ॥ अ० उ० प्रमाणों के सहित मैंने यह उपदेश कियाहै. इसके अनुष्ठान करने में बड़ागुणहै यह कहते हैं श्रीमहाराज जो १ श्रद्धावाले २ असूयारहित ३ मनुष्य ४ सि० मैंने जो पीछे उपदेश किया❋मेरे ५ इस ६ मतको ७ नित्य ८ अनुष्ठान करेंगे अर्थात् जबतक भलेप्रकार अन्तःकरण में से रागद्वेषादि दूर न होवें तबतक जो कर्म मेरी आज्ञा से करेंगे ९ वे कर्माधिकारी कर्मसंगी १० भी ११ कर्मोंकरके १२ अर्थात् कर्मों से छूटजावेंगे १३ अर्थात् कर्म करने से उनका अन्तःकरण शुद्ध होजायगा.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर वे अपने आप कर्मों को त्यागकर ज्ञाननिष्ठ होजावेंगे. टी० जो श्रीमहाराज कहते हैं सो सत्यहै बे सन्देह भगवत् आराधनादि कर्मोंका अनुष्ठान करने से अन्तःकरण शुद्ध होकर ज्ञानद्वारा मुक्ति होती है. इसको श्रद्धा कहते हैं. २ गुणों में दोष निकालना उसको असूया कहते हैं. भगवत्के उपदेश में यह दोष नहीं निकालते हैं कि परमेश्वर फलका तो त्याग करवाते हैं और कर्म करनेको कहते हैं ऐसे दोषरहित पुरुषोंको अनसूयन्तः कहते हैं ३ ॥ ३१ ॥

ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम् ।
सर्वज्ञानविमूढांस्तान् विद्धि नष्टानचेतसः ॥ ३२ ॥

ये १ तु २ मे ३ एतत् ४ मतम् ५ न ६ अनुतिष्ठन्ति ७ अभ्यसूयन्तः ८ तान् ९ अचेतसः १० नष्टान् ११ सर्वज्ञानविमूढान् १२ विद्धि १३ ॥ ३२ ॥ अ० उ० गुण में जो दोष की कल्पना करते हैं वे महानीच हैं सोई कहते हैं जो मेरे मतका अनुष्ठान करते हैं वे तो विद्वान् है❀और जो १ । २ मेरे ३ इस मतको ४ । ५ नहीं अनुष्ठान करते हैं ७ सि० प्रत्युत❀असूया करते हैं ८ तिन अल्पज्ञ मुर्दों को ९।१०।११ सब ज्ञानके विषय मूढ़ हैं १२ सि० यह❀जान तू १३ टी० मोक्षमार्ग में मुर्दे की तुल्य हैं इसवास्ते उनको नष्ट कहा ११ कर्म से अन्तःकरण शुद्ध होता है. तमोगुण दूर होता है, उपासना से चित्त एकाग्र होता है, रजोगुण दूर होता है, यही कर्मउपासना व अष्टाङ्गयोगादिकों का परमप्रयोजनहै, फिर ज्ञानसे मोक्ष होता है यह मेरा मत है, इससे पृथक् जो किसी का पंथमत सम्प्रदाय है उस सबको सर्वरूप ब्रह्मज्ञानके विषय मूर्ख जान तू १२।१३ गुणों में जो अपगुणों की कल्पना करते हैं उनको "अभ्यसूयन्तः" कहते हैं. कल्पना ऐसे करते हैं कि, जो शुभ उपदेश करैं उनको वाक्यवादि कहते है. जो मौन रहैं उनको पाखण्डी मूर्ख अभिमानी कहते हैं. संतोष से बैठा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहे उसको आलसी बतावें. जो उद्यम करै उसको लोभी कहैं. तात्पर्य—मैंने बहुत यह विचार किया है कि, कोई ऐसा गुण विद्वानोंका नहीं कि जिसके दुष्टोंने दूषित न किया हो. अक्षरों का अर्थ फेरकर अनर्थ करें तो फिर इसमें क्या आश्चर्य है ? ॥ ३२ ॥

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति॥३३॥

भूतानि १ प्रकृतिम् २ यान्ति ३ स्वस्याः ४ प्रकृतेः ५ सदृशम् ६ ज्ञानवान् ७ अपि ८ चेष्टसे ९ निग्रहः १० किम् ११ करिष्यति १२ ॥ ३३ ॥ अ० उ० सबही मनुष्य प्रथम कर्मोंका अनुष्ठान करके अन्तःकरण शुद्ध करके ज्ञाननिष्ठा क्यों नहीं होते हैं कि, जिससें पूर्ण परमानन्द निर्विकारकी प्राप्ति होती है. इससीधे रस्ते पर प्राणी क्यों नहीं चलते हैं. नानाप्रकारके अर्थोंकी कल्पनाकरके आपकी आज्ञा को क्यों नहीं मानते हैं इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं कि, सब प्राणी १ सि० अपनी २ प्रकृतिको ३ प्राप्त होरहे हैं ४ अपनी प्रकृतिके ५ सदृश ६ ज्ञानवान् ७ भी ८ चेष्टा करताहै ९ सि० जो अज्ञानी जीव अपने स्वभाव के अनुसार बर्तें तो इसमें क्या कहना है फिर मेरा वा किसीका ❋ निग्रह १० क्या ११ करैंगे १२ तात्पर्य—पूर्व कर्मोंके संस्कारों से जो स्वभाव जीवों का होरहा है (रजोगुणी वा तमोगुणी वा सत्त्वगुणी) उसी स्वभाव को सब प्राप्त होरहे हैं. वैसेही वैसे कर्म करते हैं. जो पुरुष अपने स्वभावके अनुसार कुमार्ग में प्राप्त होरहा है, उस को किसीका उपदेश क्या फल देगा ? क्योंकि स्वभाव बलवान् है इस हेतु से मेरा उपदेश भी नहीं मानते हैं ॥ ३३ ॥

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।
तयोर्नवशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ ॥ ३४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्द्रियस्य १ इन्द्रियस्य २ अर्थे ३ रागद्वेषौ ४ व्यवस्थितौ ५ तयोः ६ वशम् ७ न ८ आगच्छेत् ९ तौ १० हि ११ अस्य १२ परिपन्थिनौ १३ ॥ ३४ ॥ अ० उ० जब कि आप स्वभाव को ही बलवान् कहते हो तो वेदादिकों की विधि निषेध वृथाही है. यह शंका करके कहते हैं. इन्द्रिय का १।२ सि० अर्थात् सब इन्द्रियोंका अपने अपने ❋अर्थ में ३ अर्थात् शब्दादि पदार्थों में ३ रागद्वेष ४ स्थित हैं ५ अर्थात् सब इन्द्रियों के विषय में राग भी है द्वेष भी है ५ तिनके ६ अर्थात् रागद्वेष वश को ७ नहीं ८ प्राप्तहो ९ अर्थात् रागद्वेष के वश में न होजावे क्योंकि वे १० ही ११ अर्थात् रागद्वेषही ११ इसके १२ अर्थात् मुमुक्षु के मोक्षमार्ग में चोर हैं १३ सि० लूटनेवाले हैं ❋तात्पर्य—सब इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थ में तो राग है और प्रतिकूल में द्वेष है यह बात ज्ञानी के भी होती है और अज्ञानी के भी यहांतक तो स्वभाव बलवान् है और रागद्वेष के वश होजाना यह अज्ञानी का काम है. वश में न होना यह ज्ञानी का कामहै. जैसे निर्मल गम्भीर जल में एक मणि पड़ी है उसको देखकर ज्ञानी का भी मन चला और अज्ञानी का भी यहांतक तो स्वभाव की प्रबलता है क्योंकि रजोगुण के प्रभाव से मणिमें दोनों का राग होगया. तृष्णा इच्छा उत्पन्न होगई. परन्तु ज्ञानी ने तो यह समझा कि जल बहुत है जो मैं इसमें कूदा तो डूब जाऊंगा. अज्ञानी को यह समझ न थी कि बहुत जल में डूब जाते हैं. वह रजोगुण के वश से तृष्णा रागादि का दबाया हुआ कूदकर डूब गया. इस जगह ज्ञानी, अज्ञानी शब्दों का तात्पर्य्य समझवाले और वेसमझवाले इन दो शब्दों में है ब्रह्मज्ञानी का प्रसंग नहीं. इसी प्रकार स्त्रियादि पदार्थों में सबका रागद्वेष है. परन्तु जिन्होंने शास्त्र गुरुद्वारा यह निश्चय कर रक्खा है कि, कांचन कान्तादि पदार्थ मोक्षमार्ग के वैरी हैं. वे तो रागादि हुये सन्तेभी प्रवृत्त नहीं होते और जिन्होंने शास्त्र नहीं श्रवण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किया वे धोखा (धक्के) खाते हैं. इस हेतु से शास्त्रकी विधि निषेध स्वभाव से बलवान् है. शास्त्र का श्रवण करना. तात्पर्य–अनुष्ठान करने से है नहीं तो दिन में हजारो श्रवण करते हैं रात्रि को भूलकर फिर वोही खोटा काम करते हैं. तात्पर्य–यह है कि पदार्थ में रागद्वेष होना यह तो स्वभाव की प्रबलता हैं. शास्त्रदृष्टि करके उसमें प्रवृत्त होना वा न होना यह शास्त्र करता हैं, शीतादि के सहनमें प्रवृत्ति स्त्रीधनआदि पदार्थों से निवृत्ति शास्त्र करताहै ॥ ३४ ॥

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥ ३५ ॥

स्वनुष्ठितात १ परधर्मात् २ स्वधर्मः ३ विगुणः ४ श्रेयान् ५ स्वधर्मे ६ निधनम् ७ श्रेयः ८ परधर्मः ९ भयावहः १० ॥ ३५ ॥ अ० उ० जब कि स्वभाव के वशहोकर ही मनुष्य डूबता है. इस वास्ते स्वभावको जीतना योग्यहै. वेदोक्त कर्मोंका अनुष्ठान करने से स्वभाव जीता जाता हैं. सोई कहते हैं सद्गुणों करके युक्त ऐसे पराये धर्म से १ । २ अपना धर्म ३ किसी गुणकरके रहित ४ सि० भी❀श्रेष्ठ ५ सि० है❀अपने धर्म में मरना ७ श्रेष्ठ ८ सि० है❀पराया धर्म ९ भय को प्राप्त करनेवाला है १० तात्पर्य–जो अपना निवृत्तिधर्म है वा प्रवृत्ति, वही श्रेष्ठ है. निवृत्तिधर्मवाले को तो प्रवृत्तिधर्म का अनुष्ठान करना न चाहिये और प्रवृत्तिधर्म वाले को निवृत्तिधर्म का अनुष्ठान करना चाहिये. जो जो अपने वर्ण आश्रमका धर्म है वही बर्तना योग्य है. अपने धर्मका अनुष्ठान करने से स्वभाव जीता जाता है. अथवा अपना धर्म जो सच्चिदानन्दरूप निर्विकार विगुण भी है अर्थात् सत्त्व, रज, तम गुण उसमें नहीं वह निर्गुण भी है तौ भी गुणों-वाले परधर्म से अर्थात् सत्त्वादि गुणों के धर्म इन्द्रिय शब्दादि विषयों से श्रेष्ठ है. इन्द्रियादिकोंका जो धर्म है वह आत्मा का धर्म नहीं. परधर्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहलाता हैं. उस परधर्म में करना अर्थात् कर्ता होकर इन्द्रियादिकोंके साथ मिलकर जो देहका त्याग करनाहै. वह संसार को प्राप्त करनेवाला है. भय नाम संसारकाही है और अपने धर्म में मरना अर्थात् ज्ञाननिष्ठा ब्रह्माकार-वृत्ति स्वरूप में जो देहका त्यागहै. वह श्रेष्ठ है. क्योंकि मुक्ति का हेतु है यहां श्रुति प्रमाण है. " काश्यांतुमरणान्मुक्तिः । काशः ब्रह्मतत्त्वप्रकाशाः यस्यामवस्थायां सा काशी " काशी उस अवस्था का नामहै कि, जिसमें ब्रह्मतत्त्व का प्रकाश होता हे. उस काशी में मरने से मुक्त होती है ॥ ३५ ॥

अर्जुन उवाच—

अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः ।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः ॥ ३६ ॥

अथ १ वार्ष्णेय २ अनिच्छन् ३ अपि ४ अयम् ५ पूरुषः ६ केन ७ प्रयुक्तः ८ पापम् ९ चरति १० बलात् ११ इव १२ नियोजितः १३ ॥ ३६ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् कहते हैं कि रागद्वेष के वश नहीं होना पाप नहीं करना अर्थात् परधर्म का अनुष्ठान नहीं करना. अपनेही धर्मका करना वेदोक्त मार्ग पर चलना यह सब सत्य कहतेहैं. परन्तु जीव तो परतन्त्र प्रतीत होताहै. जो स्वतन्त्र हो तो सब कुछ कर सक्ता है. कोई ऐसा प्रबल प्रतीत होताहै कि जीवसे बल करके जबरदस्ती पाप कराता है यह विचार करके अर्जुन श्रीमहाराज से प्रश्न करता है कि, हे महाराज ! वह कौन है जिसके वश होकर जीव पाप करताहै अथ यह शब्द प्रश्नमें आता है १ हे कृष्णचन्द्र ! २ नहीं इच्छा करताहुआ ३ भी ४ यह ५ जीव ६ किस करके ७ प्रेरा हुआ ८ पाप को ९ करता है १० सि० ऐसे प्रतीत होता है कि, किसी ने ❋ बल से ११ जैसे १२ सि० पाप में ❋ जोड़ दिया है सि० जैसे बैलको जबरदस्ती गाड़ीमें जोड़ देते हैं प्रतीत होताहै कि, ऐसेही जीवसे कोई जबरदस्ती पाप कराताहै. तात्पर्य—पाप करनेमें क्या हेतु है, यह अर्जुनका प्रश्नहै ॥ ३६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीभगवानुवाच—

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥ ३७॥

एषः १ कामः २ एषः ३ क्रोधः ४ रजोगुणसमुद्भवः ५ महाशनः ६ महापाप्मा ७ एनम् ८ इह ९ वैरिणम् १० विद्धि ११ ॥ ३७ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् कहते हैं कि, हे अर्जुन! तुमने जो बूझा, कि पाप करनेमें क्या हेतु है सो सुन यह १ काम २ सि० और यह ३ क्रोध ४ सि० दोनों यही पाप करने में हेतु हैं यही जबरदस्ती जीव से पाप कराते हैं. इस लोक परलोक के पदार्थों की जो कामनाहै ❋ यही पापकी जड़ है यही काम क्रोधाकार होजाता है. कैसा है यह काम रजोगुण से उत्पत्ति है जिसकी ५ अर्थात् कामकी भी जड़ रजोगुण है इस विशेषण का यह तात्पर्य है कि, रजोगुण के जीतने से काम भी जीता जाता है. और काम के जीतने से क्रोध जीता है सतोगुण बढाने से रजोगुण कम होताहै फिर कैसा है वह काम? बड़ा भोजन है जिसका६ अर्थात् कितनाही भोग भोगो कभी इच्छा पूर्ण न होवै प्रत्युत दूनी आग लगे. इस हेतु से वह काम महापापी ७ सि० है काम करकेही यह जीव पाप करता है और सदा यह पापी पाप करता है ❋ इस को ८ अर्थात् कामको ८ मोक्षमार्ग में ९ वैरी १० जान तू ११ तात्पर्य—कामना को वैरी (विष से भी सिवाय) समझकर इसलोक परलोक की कामना त्याग करना यही मोक्ष का हेतु है ॥ ३७ ॥

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च।
यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥ ३८॥

यथा १ धूमेन २ वह्निः ३ आव्रियते ४ यथा ५ च ६ आदर्शः ७ मलेन ८ उल्वेन ९ गर्भः १० आवृतः ११ तथा १२ तेन १३ इदम् १४ आवृतम् १५ ॥ ३८ ॥ अ० उ० कामका वैरीपना यह जैसे १ धूमकरके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२ अग्नि ३ ढकी है ४ और जैसे ५। ६ शीशा ७ मलकरके ८ सि० मैला होरहा है और जैसे ❋ जेर करके ९ गर्भ १० ढका रहता है ११ तैसेही १२ तिस करके १३ अर्थात् काम करके १३ यह १४ अर्थात् विवेक ज्ञान आत्मा १४ ढका हुआ है १५ तात्पर्य—जैसे धूमादिने अग्नि आदि को ढककर रक्खा है. तैसेही कामने विचार विवेक और ज्ञान को ढक रक्खाहै. ये तीन दृष्टान्त उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ अधिकारियों के वास्ते हैं. जेर के भीतर जो बच्चा होता है उसका नाम गर्भ है बच्चे के ऊपर से जेर दूर करने में थोड़ाही यत्न चाहता है. यह दृष्टान्त उत्तम के वास्ते है. बीच का मध्यम के वास्ते और शेष कनिष्ठ के वास्ते है ॥ ३८ ॥

आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा।
कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानले च ॥ ३९ ॥

कोन्तेय १ एतेन २ कामरूपेण ३ ज्ञानम् ४ आवृतम् ५ ज्ञानिनः ६ नित्यवैरिणा ७ दुष्पूरेण ८ अनलेन ९ च १० ॥ ३६ ॥ अ० हे अर्जुन! १ इस कामरूप ने २। ३ ज्ञान ४ ढक रक्खा है ५ सि० अर्थात् इसलोक परलोक के पदार्थोंकी कामना ज्ञान नहीं होने देता है कैसा है यह काम ? कि अज्ञानियों को तो फल भोगों की प्राप्तिको प्रयत्न करने में और प्राप्त हुये ऐसे भोगों के नाश करने में यह काम वैरीसा प्रतीत होताहै. और ज्ञानी को तो भोग समय भी वैरी प्रतीत होताहै. इस हेतुसे ❋ ज्ञानी का ६ नित्य वैरी है ७ सि० ज्ञानी यह समझता है कि इन भोगों ने ही परमानन्दस्वरूप परमात्मा से विमुख कर रक्खा है. इस वास्ते सब काममें ज्ञानी को भोग वैरी प्रतीत होते हैं फिर कैसा है यह काम ❋ भोगों करके कभी पूर्ण नहीं होताहै ८ और अग्नि के सदृश स्वभाव है जिसका ९। १० सि० जैसे अग्निमें जितना घी और इन्धन डाला जावे उतनाही सियाय प्रचण्ड होती है यह कामकी गति है जितनी प्राप्ति भोगोंकी होवे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उतनीही तृष्णा और कामना बढ़ती जावे ❋ सातवां आठवां नवां ये तीनों पद "कामरूपेण" इस पदके विशेषण हैं ॥ ३९ ॥

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ।
एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ॥ ४० ॥

अस्य १ अधिष्ठानम् २ इन्द्रियाणि ३ मनः ४ बुद्धिः ५ उच्यते ६ एषः ७ ज्ञानम् ८ आवृत्य ९ एतैः १० देहिनम् ११ विमोहयति १२ ॥ ४० ॥ अ० उ० कामके जीतनेके वास्ते कामका अधिष्ठान बताते हैं अर्थात् काम जहां रहता है उन स्थानों को बताते हैं. क्योंकि जबतक वैरीका घर न जाना जावे तबतक कैसे जीता जावे. इसका १ अर्थात् कामका अधिष्ठान रहने की जगह २ इन्द्रिय ३ मन ४ बुद्धि ५ कहते हैं ६ अर्थात् महात्मा यह कहते हैं कि इन्द्रिय, मन, बुद्धि, काम के रहने की जगह हैं क्योंकि प्रथम विषयों को देखा सुना फिर यह संकल्प विकल्प किया कि इस पदार्थ को भोगना योग्य है वा नहीं फिर यह निश्चय कर लिया कि अवश्य इस पदार्थ को प्राप्त करके भोगेंगे ६ सो यह ७ सि० काम ❋ ज्ञानको ८ ढककर ९ इन करके १० अर्थात् इन्द्रियादि करके १० जीवको ११ भ्रान्त कर देताहै १२ अर्थात् काम करके जीव अन्धासा होजाताहै. कामना के वश होकर बुरे भलेकी सुधि नहीं रहती है॥१२॥४०॥

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ।
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥ ४१ ॥

तस्मात् १ भरतर्षभ २ आदौ ३ इन्द्रियाणि ४ नियम्य ५ एनम् ६ पाप्मानम् ७ त्वम् ८ प्रजहि ९ हि १० ज्ञानविज्ञाननाशनम् ११ ॥ ४१ ॥ अ० उ० जब कि यह काम इन्द्रियादिकों में रहता है, जिस कारणसे १ हे अर्जुन ! २ सि० मोह होनेसे ❋ प्रथम (आदिमें) ३ सि० ही ❋ इन्द्रियों को ४ रोककर ५ इस पापी को ६ । ७ अर्थात् कामको ७ तू ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मार त्याग (दूरकर) ९ क्योंकि सि० यही ❋ ज्ञान विज्ञान का नाश करनेवाला है ११ टी० शास्त्र आचार्यों से जो सुन समझ रक्खा है. उसको इस जगह ज्ञान कहते हैं और विशेष युक्तियों करके जो उसी ज्ञान को निश्चय कियाहै. उसको इस जगह विज्ञान कहते है. ब्रह्मज्ञान और अनुभव विज्ञानका नाम यहां ज्ञान विज्ञान नहीं. क्योंकि उनको कोई नाश नहीं करसक्ताहै. तात्पर्य—ज्ञानविज्ञानके पीछे कामादि का उदय विद्वान् के अन्तःकरण में होताही नहीं और जो अज्ञानी को प्रतीत होता हो तो उसका कमाभास समझना योग्यहै " रागोलिङ्गमबोधस्य सन्तु रागादयो बुधे " तात्पर्य—रागाभास विद्वानमें रहै ज्ञान विज्ञानकी उससे कुछ क्षति नहीं. रागादिक अज्ञानके चिह्न हैं. रागादि ज्ञान विज्ञान को उदय और परिपाक नहीं होने देते है. यह अभिप्रायहै. आनन्दामृतवर्षिणी के तीसरे अध्याय में ज्ञान विज्ञान का लक्षण भलेप्रकार निरूपण कियाहै ११ जबतक इन्द्रिय और विषयका सम्बन्ध नहीं हुआ है उससे पहिले विचार करके इन्द्रियों का निरोध करना चाहिये. जब विषयका सम्बन्ध होजाता है तब फिर इंद्रिय नहीं रुकसक्ती हैं और इन्द्रियों के रोकनेसेही मन बुद्धिमें से भी काम जाता रहताहै ॥ ४१ ॥

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः।
मनसस्तु पराबुद्धिर्योबुद्धेः परतस्तु सः ॥ ४२ ॥

इन्द्रियाणि १ पराणि २ आहुः ३ इन्द्रियेभ्यः ४ मनः ५ परम् ६ बुद्धि ७ मनसः ८ तु ९ परा १० यः ११ बुद्धेः १२ तु १३ परतः १४ सः १५ ॥ ४२ ॥ अ० उ० कुछ अश्रय भी चाहिये कि जिस करके इन्द्रियों से रोका जावे कामको जीताजावे इस अपेक्षामें श्रीमहाराज आश्रय बताते हैं (स्थूल देहसे) इन्द्रियोंको १ श्रेष्ठ २ कहतेहैं ३ सि० विद्वान् क्योंकि सूक्ष्म हैं और प्रकाशक है ❋ इन्द्रियोंसे ४ मनको ५ श्रेष्ठ ६ सि० कहते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं. क्योंकि इद्रियों का प्रेरक है और ❋बुद्धि ७ मनसे ८ भी ९ श्रेष्ठ १० सि० है क्योंकि मनकी मालिक है बुद्धिको मनीषा कहते हैं❋जो ११ बुद्धिसे १२ भी १३ श्रेष्ठ १४ सि० है अर्थात् सबका जो परमप्रकाशक है❋सो १५ सि० आश्रयरक्षक आत्माहै इसीको परमपुरुष, उत्तमपुरुष, पूर्णब्रह्म, परमगति, परमधाम, राम ऐसा कहते हैं. इससे परे पृथक् श्रेष्ठ पदार्थ कुछ नहीं. " पुरुषान्न परं किञ्चित्सा काष्ठा सा परागतिः " यह श्रुति है। " सबकर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधपति सोई " ॥ ४२ ॥

एवं बुद्धेःपरं बुद्ध्या संस्तभ्यात्मानमात्मना।
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् ॥ ४३ ॥

महाबाहो १ एवम् २ बुद्धेः ३ परम् ४ बुद्ध्वा ५ आत्मना ६ आत्मानम् ७ संस्तभ्य ८ कामरूपम् ९ शत्रुम् १० जहि ११ दुरासदम् १२ ॥ ४३ ॥ अ० उ० सि० आत्मा बुद्धि आदिकोंका साक्षी, प्रेरक और वास्तव अक्रिय, निर्विकार, बुद्धि आदि पदार्थों से विलक्षणहै❋हे अर्जुन! १ इसप्रकार २ बुद्धिसे ३ परमश्रेष्ठ ४ सि० परमानन्दस्वरूप परमात्माको❋ जानकर ५ सि० और फिर उसी❋बुद्धिसे ६ मनको ७ सि० आत्मामें ❋निश्चल करके ८ कामरूप वैरी को ९। १० मार, त्यागकर, दूरकर ११ सि० कैसाहै यह काम❋दुःख करके प्राप्तिहै जिसकी १२ अर्थात् बडे २ दुःखों करके कामभोग प्राप्त होते हैं ॥ ४३ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन-संवादे कर्मयोगोनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥

श्रीभगवानुवाच—

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इमम् १ अव्ययम् २ योगम् ३ विवस्वते ४ अहम् ५ प्रोक्तवान् ६ विवस्वान् ७ मनवे ८ प्राह ८ मनुः १० इक्ष्वाकवे ११ अब्रवीत् १२ ॥ १ ॥ अ० उ० पीछे दो अध्यायों में जो निरूपण किया कर्म संन्यासयोग अर्थात् ज्ञानयोग ज्ञाननिष्ठा और उसका साधन उपाय कर्मयोग इसी में सब वेदोंका अर्थ होगया. प्रवृत्तिलक्षण और निवृत्ति यही दोप्रकारका धर्म समस्त वेदार्थ है सोई श्रीभगवान्ने गीतामें कहाहै. ये दोनों धर्म अनादि है सोई श्रीभगवान् कहते हैं सि० और ❋ इस फूल के बीच में पद से सिवाय अर्थ लिखतेहैं हम अब यहां से सि० यह संकेत नहीं लिखेंगे अकेले फूलके बनाने सेही सिवाय अर्थ की पहिचान हो सक्ती हैं ❋ इस अव्ययोग को १ । २ । ३ प्रथम सृष्टि के आदि में आदित्य के अर्थ ४ मैं ५ कहता भया ६ अर्थात् यह ज्ञानयोग साधनसहित पहले मैंने आदित्य से कहा आदित्य ७ मनुके अर्थ ८ कहते भये ९ अर्थात् आदित्य ने मनु से कहा ❋ मनु १० इक्ष्वाकु के अर्थ ११ कहतेभये १२ अर्थात् मनु ने इक्ष्वाकु से कहा कर्मयोग और ज्ञानयोग को पृथक् पृथक् स्वतन्त्र मोक्षके साधन दो योग नहीं समझना किन्तु केवल एक ज्ञानयोगही मोक्षका साधन है. कर्मयोग साधन उनका अंग है. इसीवास्ते श्रीभगवान् ने योग शब्दके विषय एक वचन कहा द्विवचन वाला प्रयोग नहीं क्योंकि मोक्षमार्ग दो नहीं ❋ इस ज्ञानयोग का अव्यय अविनाशी फल है. इसवास्ते योगको भी अव्यय कहा नवें बारहवें पद में एकवचनका प्रयोगहै. अर्थ में बहुवचन आदरार्थ है ॥ १ ॥

एवम्परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप ॥ २ ॥

एवम् १ परम्पराप्राप्तम् २ इमम् ३ राजर्षयः ४ विदुः ५ परन्तप ६ महता ७ कालेन ८ इह ९ सः १० योगः ११ नष्टः १२ ॥ २ ॥ अ०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ० पिछले मन्त्र में जैसे कहा इसप्रकार १ परम्परा से प्राप्तहै २ यह ज्ञान-योग❀इसको ३ पहले से ही बड़े बड़े❀राजर्षि ४जानते हैं ५ तात्पर्य—तू भी क्षत्रिय है तुझको भी यह ज्ञानयोग उपाय समेत जानकर अनुष्ठान करना योग्य है. इस ज्ञानयोग का❀हे अर्जुन ! ६ बहुत ७ कालकरके ८ (बहुत कालसे ७। ८) इस लोकमें ९ से १० योग ११ अर्थात् ज्ञानयोग ११ छिपगया है १२ तात्पर्य—भेदवादियों का राज बल होजाने से और भेदवादी पण्डितों के अनर्थ करने से यह ज्ञानयोग साक्षात् वेदोक्त मोक्ष का साधन लोप होगया है. कुछ जाता नहीं रहा नष्ट नहीं हुआ. क्योंकि उसका उपदेश करनेवाला अविनाशी अच्युत मैं विद्यमानहूं. इसी हेतुसे वह ज्ञानयोग भी अव्यय नित्य है ॥ २ ॥

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ॥ ३॥

सः १ एव २ पुरातनः ३ अयम् ४ योगः ५ मया ६ ते ७ अद्य ८ प्रोक्तः ९ मे १० भक्तः ११ सखा १२ च १३ असि १४ इति १५ हि १६ एतद् १७ उत्तमम् १८ रहस्यम् १९ ॥ ३ ॥ अ० उ० जो ज्ञान मैंने आदित्य से कहा सोई १। २ पहिला अनादि ३ यह ४ योग ५ मैंने ६ तेरे अर्थ ७ (तुझसे ७) अब ८ कहा है ९ मेरा १० भक्त ११ और सखा १२। १३ है तू १४ यह १५ निश्चय १६ रख इसीवास्ते❀यह १७ उत्तम १८ रहस्य १९ अर्थात् ज्ञानयोग मैंने तुझ से कहा अथवा यह ज्ञानयोगही श्रेष्ठ निश्चित श्रेय है. इसी वास्ते मैंने तुझसे कहा. तू ने द्वितीय अध्याय में मुझसे कहाथा कि जो निश्चित श्रेय हो सो मुझसे कहो ॥ ३ ॥

अर्जुन उवाच—

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः ।
कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भवतः १ जन्म २ अपरम् ३ विवस्वतः ४ जन्म ५ परम् ६ एतद् ७ कथम् ८ विजानीयाम् ९ त्वम् १० आदौ ११ प्रोक्तवान् १२ इति १३ ॥ ४ ॥ अ० उ० श्रीभगवान्के कहनेको असंभव मानता हुआ अर्जुन कहताहै कि हे महाराज ! ❋ आपका १ जन्म २ पीछे ३ द्वापरके अन्तमें अब हुआ ❋ आदित्यका ४ जन्म ५ पहले ६ सतयुगमें हुआ ❋ यह ७ कैसे ८ जानूं मैं ९ आप १० सृष्टिके ❋ आदित्यमें ११ आदित्य से ❋ कहतेभये १२ अर्थात् पहले आपने आदित्य से किसप्रकार कहा ❋ यह १३ मेरा प्रश्न है अर्जुनको इस प्रश्नसे स्पष्ट प्रतीत होताहै कि, अर्जुन को ब्रह्मका ज्ञान नहीं, क्योंकि पूर्णब्रह्म अनादि अज अमरको अबतक वसुदेवजी का पुत्रही समझता है ॥ ४ ॥

श्रीभगवानुवाच—

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद्मि सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप ॥ ५ ॥

अर्जुन १ मे २ बहूनि ३ जन्मानि ४ व्यतीतानि ५ तव ६ च ७ तानि ८ सर्वाणि ९ अहम् १० वेद ११ परन्तप १२ त्वम् १३ न १४ वेत्थ १५ ॥ ५ ॥ अ० उ० अर्जुनके प्रश्नका अभिप्राय समझकर श्रीभगवान् कहते हैं ❋ हे अर्जुन ! १ मेरे २ बहुत ३ जन्म ४ व्यतीतहुवे हैं ५ और ❋ तेरे ६ भी ७ तिन सबको ८ । ९ मैं १० जानताहूं ११ शुद्ध सत्त्वप्रधान मायोपहित होनेसे हे अर्जुन ! १२ तू १३ नहीं १४ जानताहै १५ सि० मलिनसत्त्वप्रधान अविद्योपहित होनेसे ❋ तात्पर्य—आदित्य को मैंने और रूपकरके उपदेश कियाहै. पहले जन्ममें यह समझ तू ॥ ५ ॥

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया ॥ ६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अव्ययात्मा १ अजः २ अपि ३ सन् ४ भूतानाम् ५ ईश्वरः ६ अपि ७ सन् ८ स्वाम् ९ प्रकृतिम् १० अधिष्ठाय ११ आत्ममायया १२ सम्भवामि १३ ॥ ६ ॥ अ० उ० जब कि ईश्वर निर्विकार जन्मादि रहितहैं उसका वारंवार जन्म कैसे होसक्ताहै. यह शंका करके कहतेहैं ❋ निर्विकार है आत्मा जिसका अर्थात मेरा १ सो मैं निर्विकार ❋ जन्मरहित २ भी ३ हुआ ४ भूतोंका ५ ईश्वर ६ भी ७ हुआ ८ अपनी ९ मायाका १० आश्रय करके ११ अपनी शक्ति सामर्थ्य करके १२ प्रकट होताहूं १३ टी० त्रिगुणात्मक त्रिगुणवाली शुद्धसत्त्वप्रधान मायाको अपने आधीन करके मायाके सम्बन्ध से मायोपहित होकर अवतार लेताहूं ९ । १० । ११ ज्ञान, बल, वीर्य आदि अलौकिक अचिन्त्यशक्ति अरके अपनी इच्छापूर्वक अवतार लेता हूं. वास्तव जीववत् मैं देहधारी नहीं. यद्यपि जन्मरहित, निर्विकार, ईश्वर भी मैं हूं तौ भी मायामात्र मेरे जन्महैं वास्तव मैं अज हूं ॥ ६ ॥

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥७॥

भारत १ यदा २ यदा ३ धर्मस्य ४ ग्लानिः ५ भवति ६ अधर्मस्य ७ अभ्युत्थानम् ८ तदा ९ हि १० आत्मानम् ११ सृजामि १२ अहम् १३ ॥ ७ ॥ अ० उ० किसकालमें आपका जन्म होताहै. इस अपेक्षामें कहतेहैं ❋ हे अर्जुन ! १ जिस जिस काल में २ । ३ धर्मकी ४ हानि ५ होती है ६ और ❋ अधर्मकी ७ अधिकता ८ होती है ❋ तिस कालमें ९ हि १० आत्मा को ११ प्रकट करताहूं १२ मैं १३ अवतार लेताहूं मैं १२ । १३ टी० ज्ञानयोगकी साधनके सहित जबकभी हानि होती है, तबहीं मैं अवतार लेताहूं. मेरे अवतार दो प्रकारके हैं. एक नित्य अवतार और दूसरा निमित्त अवतार. ज्ञानी विरक्त महात्मा साधु मेरे नित्य अव-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तार हैं और रामकृष्णादि निमित्त अवतार हैं. ४ मनुष्योंके कल्पित पाखण्ड पन्थ संप्रदायों की जब वृद्धि होती है. तबहीं नित्य वा निमित्त अवतार लेताहूं ॥ ७ ॥

परित्राणायसाधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥ ८ ॥

साधूनाम् १ परित्राणाय २ दुष्कृताम् ३ च ४ विनाशाय ५ धर्मसंस्थापनार्थाय ६ युगे युगे ७ । ८ सम्भवामि ६ ॥ ८ ॥ अ० उ० आप अवतार क्यों लेतेहो इस अपेक्षामें कहते हैं❋साधु महात्माओं की १ रक्षा (सहाय) के लिये २ और दुष्टोंके ३ । ४ नाश करने के वास्ते ५ इस प्रकार❋धर्म के स्थिर करने के वास्ते ६ अथवा ज्ञानयोग को साधनोंके सहित स्थिर करने के वास्ते युग युग में ७ । ८ अर्थात् सत्ययुगादि हरएक युगमें जब जब दुष्टलोग साधु लोगों से वैर विरोध करते हैं, तब मैं उसीकाल में❋अवतार लेताहूं ९. तात्पर्य—साधुजनों की रक्षा करनेसे धर्मकी रक्षा होती है. धर्मके स्थिर रहने से अर्थ, काम, मोक्षकी प्राप्ति होती है. दुष्टों को जो दण्ड देनाहै यह भी नारायण की उनपर कृपा है. क्योंकि जैसे माता पिता जबतक बालक को ताड़ना नहीं करते तबतक वह नहीं सुधरता जैसे माता पिताकी ताड़ना निर्दयता करके नहीं, ऐसेही महेश्वरकी ताड़ना दया करकेही होती है. जो लोग वासनादिको त्यागकर केवल ब्रह्मपरायण हैं सिवाय परमेश्वर के और किसी राजा, मित्र, पुत्र, धनादि का आश्रय नहीं रखते ऐसे साधु महात्माओं के वास्ते अवतार होता है ॥ ८ ॥

---

१ निजकर्मसे सुख पाने योग्य जो मेरे भक्त और दुःख पाने योग्य जो दुष्ट तिनके पुण्य पाप निमित्तसे जिस प्रकार जाग्रत अवस्थाके द्रष्ट श्रुत विषयों करिकै स्वप्नशरीर जीव रचता है उसी प्रकार माया शक्ति करिकै मैं भी शरीर को रचताहू ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जन्म कर्म्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥ ९॥

दिव्यम् १ मे २ जन्म ३ कर्म ४ च ५ एवं ६ यः ७ तत्त्वतः ८ वेत्ति ९ अर्जुन १० सः ११ देहम् १२ त्यक्त्वा १३ पुनः १४ जन्म १५ न १६ एति १७ माम् १८ एति १९॥ ९॥ अ० उ० परमेश्वर के जन्म कर्मोंको जो यथार्थ जानता है. वह परमपद मोक्षको प्राप्त होताहै सोई कहते हैं❋मायामात्र अलौकिक १ मेरे २ जन्म ३ और कर्म को ४। ५ इसप्रकार अर्थात् जब धर्म का नाश होने लगता है तब धर्म और धर्मप्रचारक साधुलोंगोकी रक्षा करने के लिये और दुष्टोंके नाश करने के लिये अवतार लेताहूं. इसप्रकार ६ जो ७ यथार्थ परमार्थ दृष्टि से ८ जानता है ९ हे अर्जुन! १० सो ११ देहको १२ त्यागकर १३ फिर १४ जन्मको १५ नहीं १६ प्राप्त होताहै १७ वह❋मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्माको १८ प्राप्त होताहै १९ तात्पर्य—वास्तव न परमेश्वरका जन्म होना बन सक्ताहै और न उन में कर्मका करना बन सक्ताहै क्योंकि परमेश्वर निर्विकार है. अध्यारोप में व्यवहारमात्र दृष्टि करके तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के लिये भगवत् के जन्म कर्म विद्वानों ने निरूपण किये हैं और जो सिद्धान्त में भी यह कहते हैं कि भगवत्के जन्म कर्म वास्तव सत्य हैं ईश्वर अपनी अचिन्त्य शक्तियों करके अपने आधीन हुआ अपनी इच्छासेही जन्म लेता है और कर्म करता है. औरोंके भले के लिये वह आप्तकाम है. प्रथम तो इस अर्थ में यह शङ्का है कि ईश्वर नित्य निर्विकार न रहा ऐसा प्रतीत होताहै कि, किसीकाल में प्रलयादि काल में ईश्वर निर्विकार कहा जाता होगा. सो ईश्वर अब तो विकारवान् स्पष्ट प्रतीत होता है. रक्षादि कर्म करने से और प्रलय समय में तो जीव भी निर्विकार

१ जिसप्रकार स्वप्नप्राप्त देहकर्मादिक प्रबोधावस्था में मिथ्या है उसीप्रकार मायाशक्ति सेरचित असंग निष्क्रिय निर्विकारके शरीर व्यवहार मात्रके लिये है वास्तवमें नहीं हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होताहैं. इस प्रकार जीवको भी निर्विकार कहना चाहिये ❀ दूसरी शंका यह है कि यह कौन नहीं जानता है कि, ईश्वर के जन्म कर्म अपने वास्ते हैं, ईश्वर आप्तकाम अचिन्त्यशक्तिमान् स्वतन्त्र स्वाधीन है, यह बात सब जानते हैं परन्तु केवल इतने जानने से कोई परमेश्वर को प्राप्त नहीं होता. क्योंकि यह ज्ञान ऐसा है कि बालको भी है सबकाही मोक्ष होजाना चाहिये. श्रीमहाराज के कहने से स्पष्ट प्रतीत होताहै कि प्राप्ति केवल ईश्वर के ज्ञानसेही होतीहै. तात्पर्य—जिस ज्ञानसे परमेश्वरकी प्राप्ति होती है, वह ईश्वरका ज्ञान यह है कि परमेश्वर को नित्य, शुद्ध, सच्चिदानन्द, आत्मासे अभिन्न जानना योग्य हैं, और जन्म कर्म परमेश्वर के वास्तव नहीं माया-मात्र तत्त्वज्ञानकी प्राप्तिके लिये अध्यारोप में कहेजाते है, यही तात्पर्य वेदोंका और विद्वानों का अनुभव है ॥ ९ ॥

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः ॥ १० ॥

ज्ञानतपसा १ पूता २ माम् ३ उपाश्रिताः ४ मन्मया ५ वीतरागभय-क्रोधाः ६ बहवः ७ मद्भावम् ८ आगताः ९ ॥ १० ॥ अ० उ० ब्रह्मज्ञानसे पृथक् किसी साधककी भी अपेक्षा न रखकर केवल ब्रह्मज्ञान-सेही असंख्यात जीव मुक्त होगये. ब्रह्मज्ञान ही सनातन से मोक्षमार्ग है सोई कहतें हैं ❀ ज्ञानरूप तप करके १ अर्थात् ब्रह्मज्ञान करके १ पवित्र हुये २ मुझे शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको ३ आश्रय कियेहुये ४ अर्थात् केवल ज्ञाननिष्ठ हुये ❀ ब्रह्मस्वरूपहुये ५ दूर होगये है राग क्रोध जिनके ६ ऐसे ब्रह्मज्ञानी ❀ बहुत ७ मोक्षको ८ प्राप्तहुये ९ टी० तप नाम विचारका है ' तप विमर्षणे ' इति धातुपाठे द्रष्टव्यम् ब्रह्मज्ञान और ब्रह्मविचार ये दोनों एकही बातहै. ज्ञान शब्द और तप शब्दका अर्थ एक करने से अभिप्राय यहहै कि, ज्ञान स्वतन्त्र मोक्षका हेतुहै किसी और साधन की इच्छा नहीं रखता, शास्त्र में जो यह सुनाजाता हैं कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तप करके ज्ञान होता है. तात्पर्यार्थ इसका यहीहै कि ब्रह्मविचार करके ज्ञान होता है. विचार का स्वरूप यह है ऐसे विचार करके कि वह ब्रह्म निर्गुण है वा सगुण है विकारवान् है वा निर्विकार है मुझसे भिन्नहै वा अभिन्न है साकार है वा निराकार है इस प्रकार मन नकरनेका नाम विचार है. इस विचार से निराकार, निर्गुण, ब्रह्मस्वरूप, आत्मा से अभिन्न जानकर पवित्र होकर ब्रह्मको प्राप्त हुये ज्ञानकी बराबर कोई साधन पवित्र नहीं पवित्रसेही पवित्र होसक्ता है. इस हेतुसे ज्ञानही मोक्षका हेतुहै. पढ़ना, सुनना, साधनहै कर्म उपासना अन्य प्रकार है ॥ १० ॥

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।
ममवर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥ ११ ॥

ये १ माम् २ यथा ३ प्रपद्यन्ते ४ तान् ५ तथा ६ एव ७ भजामि ८ अहम् ९ पार्थ १० सर्वशः ११ मनुष्याः १२ मम १३ वर्त्म १४ अनुवर्तन्ते १५ ॥ ११ ॥ अ० उ० अष्टाङ्गयोग संख्या कर्म भेदभक्ति अभेद भक्ति ब्रह्मज्ञान पर्यन्त ये सब क्रमसे मोक्षमार्ग हैं. परन्तु साक्षात् स्वतन्त्र मुक्ति ब्रह्मज्ञानियों को ही प्राप्त होतीहै और लोग पीछे क्रमसे ज्ञानद्वारा मुक्त होते हैं. सोई कहते हैं❀जो १ मुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द को २ जैसे ३ भजते हैं ४ तिनको ५ तैसेही ६ । ७ भजताहूं ८ मैं ९ अर्थात् जैसे फलकी मनमें भावना करके मेरी उपासना करते हैं उनको मैं बैसाही फल देताहूं. अर्थात् जो मुक्ति चाहते हैं उनको मैं मुक्त करताहूं और जो वृन्दावनके वृक्ष गीदड बना चाहते हैं मुक्ति नहीं चाहते उनको मैं वही फल देताहूं परन्तु❀हे अर्जुन ! १० सब प्रकार के ११ मनुष्य १२ मेरे १३ ही मार्गमें १४ अर्थात् ज्ञानमार्ग में १४ पीछे वर्तते हैं १५ तब मुक्त होते हैं. अर्थात योग, कर्म, भक्ति, तप आदि साधनोंका अनुष्ठान करके पीछे सब ज्ाननिष्ठाका अनुष्ठान करते हैं, तब मुक्त होते हैं ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कांक्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा॥ १२॥

कर्मणाम् १ सिद्धिम् २ काक्षन्तः ३ इह ४ देवताः ५ यजन्ते ६ मानुषे ७ लोके ८ क्षिप्रम् ९ हि १० सिद्धिः ११ भवति १२ कर्मजा १३॥ १२॥ अ० उ० मोक्षके वास्ते जो सब भजन नहीं करते उसमें यह कारण है अर्थात् ज्ञानमें निष्ठा और श्रद्धा लोगोंको जिसवास्ते नहीं होती और जिस हेतुसे ज्ञानको थोथा और तुषों का कूटना कहते हैं. वह हेतु यहहै. कर्मों की सिद्धिको १। २ चाहनेवाले ३ अर्थात शब्दादि भोग और स्त्री पुत्रादि के चाहनेवाले ३ इस लोकमें ४ साकार देवताओं का ५ पूजन करते हैं ६ सक्षात् पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मा की उपासना नहीं करते जिससे साक्षात् परमपद की प्राप्ति होतीहै. मनुष्यलोक में ७। ८ शीघ्र ९ ही १० सिद्धि ११ होती हैं १२ कर्मजा अर्थात कर्मों से उत्पत्ति है जिस सिद्धिकी १३ अर्थात कर्मों का फल मनुष्यलोकमेंही शीघ्र प्राप्त होजाता है स्त्रीपुत्र धनादि ❋ तात्पर्य कर्मों के करने में धन पुत्रादि फलकी प्राप्ति शीघ्र हो जाती है. ज्ञानका फल परमपद तितिक्षा, वैराग्य, त्याग चाहता है. अर्थात परमपद की प्राप्ति शब्दादि भोगोंके त्यागनेसे होती है. इस हेतुसे उनको ज्ञानमें निष्ठा नहीं होती और को थोथा भूसेका कूटन बताते हैं. सिवाय इसके ब्रह्मज्ञान विना विद्या के मूर्खोंकी समझमें भी नहीं आता. उसका अनुष्ठान करना तो दूररहा. तात्पर्य—मूर्ख, आलसी, विषयी, ज्ञानमें श्रद्धा नहीं रखते. अनित्य पदार्थों में निष्ठा करके नित्य फलकोही प्राप्तहोते हैं. और ज्ञाननिष्ठावाले परमपद मोक्षको प्राप्तहोते हैं॥ १२॥

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्त्तारमव्ययम्॥ १३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुणकर्मविभागशः १ चातुर्वर्ण्यम् २ मया ३ सृष्टम् ४ तस्य ५ कर्तारम् ६ अपि ७ माम् ८ विद्धि ९ अकर्तारम् १० अव्ययम् ११ ॥ १३ ॥

अ० उ० जो निष्काम वेदोक्त अनुष्ठान करतेहैं और जो सकाम भजन करते हैं. ये चारों वर्ण आप के ही रचेहुये हैं इन चारों वर्ण में जो विषमता आपने करदी है. इसी हेतु से कोई सकाम है कोई निष्काम है और इस दोष के कारण आपही है. मनुष्यों का कुछ दोष नहीं यह शंका करके कहते है❀सत्त्वादि गुणों के विभाग से कर्मों का विभाग करके १ टी० ' गुणविभागेन कर्मविभागः तेन इति समासः ' अर्थात् जिसमें जैसा गुण देखा उसी के अनुसार उसके कर्मों का विभाग कर दिया. जैसे एक जीवको सतोगुण प्रधान देखा तो उसी सतोगुण के अनुसार शमदमादि उसके कर्मोंका विभाग करदिया और एक नाम ब्राह्मण उसका प्रसिद्ध करदिया इसीप्रकार❀चारो वर्ण मैंने ३ रचेहैं ४ अध्यारोपमें मायामात्र तिनका ५ कर्ता ६ भी ७ मुझको ८ जान तू ९ और वास्तव परमार्थमें❀अकर्ता १० निर्विकार ११ मुझको जान तू पीछे भी इसी अध्यायमें परमेश्वर को निर्विकार सिद्ध करचुके और पञ्चमादि अध्यायों में भलेप्रकार सिद्ध किया है. और चारोंवर्णों का भेद अठारहवे अध्यायमें स्पष्ट लिखा है ॥ १३ ॥

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा ।
इति मां योऽभि जानाति कर्मभिर्न स बध्यते ॥१४॥

कर्माणि १ माम् २ न ३ लिम्पन्ति ४ न ५ मे ६ कर्मफले ७ स्पृहा ८ यः९ माम् १० इति ११ अभिजानाति १२ सः १३ कर्मभिः १४ न १५ बध्यते

---

१ सतोगुण प्रधानतासे और शमदमादिक कर्मोंसे ब्राह्मणको रजोगुणकी प्रधानता सतोगुणकी अप्रधानता से क्षत्रियको शूरता और तेज और धृति इन कर्मोंको तमोगुणकी अप्रधानता और रजोगुणकी प्रधानतासे वैश्यको और कृष्यादिक कर्मोंको रजोगुणकी अप्रधानता और तमोगुणकी प्रधानतासे शूद्रको और सेवादिक कर्मोंको ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१६ ॥ १४ ॥ अ० वास्तव अकर्ता होनेसेही ❋कर्म १ मुझको २ नहीं ३ स्पर्श[1] करते ४ सि० और ❋न ५ मुझको ६ कर्मों के फलमें ७ चाह[2] ८ है ❋जो ९ मुझ सच्चिदानन्द स्वरूप आत्माको १० ऐसे ११ जानता है १२ सो १३ कर्मों करके १४ नहीं १५ बन्धनको प्राप्तहोता हैं १६ ॥ टी० जैसे ईश्वर वास्तव अकर्त्ता है ऐसेही जीवात्मा को समझना चाहिये नहीं तो ईश्वरको तो कोई भी विकारवान् नहीं जानता. ईश्वर को अकर्ता निर्विकार जानने से जीव मोक्षको नहीं प्राप्त होता. आत्माको वास्तव अकर्ता निर्विकार[2] जाननेसे मोक्ष होताहै ॥ १४ ॥

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपिमुमुक्षुभिः ।
कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् ॥ १५ ॥

एवम् १ ज्ञात्वा २ पूर्वैः ३ मुमुक्षुभिः ४ अपि ५ कर्म ६ कृतम् ७ पूर्वैः ८ पूर्वतरम् ९ कृतम् १० तस्मात् ११ त्वम १२ एवं १३ कर्म १४ कुरु १५ ॥ १५ ॥ अ० उ० अहंकारादि रहित होकर कियाहुआ कर्मबन्धका हेतु नहीं आत्मा वास्तव अकर्ता है ❋इसप्रकार १ जानकर २ पहले जनकादि मुक्तिको इच्छावालोंने ३ । ४ भी ५ कर्म ६ कियाहै ७ अन्तःकरण की शुद्धिके लिये कुछ अभी नया यह कर्मयोग तुझको मैं उपदेश नहीं करताहूं जब कि ❋जनकादि ने ८ पहले त्रेतादि युगो में ९

---

१ स्पृहा बुद्धिका धर्म है और मैं बुद्ध्यादि का साक्षी हूं इसालिये साक्ष्यके धर्म साक्षीको स्पर्श नहीं करते अतएव मेरेको कर्मलिप्त नहीं करते ।

२ जीव जिस प्रकारकी कामना करताहै उसी प्रकार के कर्म करता है. इस कारणसे कामनावाले पुरुषों को ही कर्मका संकल्प होता है. मैंतो अकाम अक्रिय असंगहूं. मुझे कोई संकल्प विकल्प नहीं. मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आदिको धर्म मुझको संबंध नहीं पावते. क्योंकि फलकी प्राप्तिकी इच्छावाले जीव जो कर्म करते हैं. वे उसी कर्म करिकै लिप्त होते हैं, औरोंके किये कर्मसे और कोई लिप्त नही होता. इसप्रकार से कर्मफलेच्छा रहित कर्मोंका अकर्ता, अभोक्ता, असंग, अविकारि आकाशवत् अखंड सर्वगत बुद्धि तद्धर्म तत्कर्म तदवस्थादि का साक्षी परमात्म स्वरूप मुझको जो स्वस्वरूप करिकै जो जानताहै सो कर्मोंसे बद्ध नहीं होता और मोक्ष पाताहै ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

किया है १० तिस कारण से ११ तू १२ भी १३ कर्मको १४ कर १५ टी० पहलों ने अर्थात् प्रथम सत्यादि युगो में जो मुक्तिकी इच्छा-वाले हुये है, उन्होंने भी कियाहै जो तुझको ब्रह्मज्ञान है. तो लोकसंग्रह के लिये कर्म कर और जो ज्ञान नहींहै. तो अन्तःकरणकी शुद्धि के लिये कर्मकर यह तात्पर्य—श्रीमहाराज का है ॥ १५ ॥

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्॥ १६ ॥

कर्म १ किम् २ अकर्म ३ किम् ४ इति ५ अत्र ६ कवयः ७ अपि ८ मोहिताः ९ तत् १० कर्म ११ ते १२ प्रवक्ष्यामि १३ यत् १४ ज्ञात्वा १५ अशुभात् १६ मोक्ष्यसे १७ ॥ १६ ॥ अ० उ० स्नान, सन्ध्या, पाठ, पूजा, जप, साधुसेवा आदि कर्म कहलाते है जिसविधि से इनको पूर्व मीमांसावाले करते हैं उसी विधि से मैं भी कह-ताहूं. कर्म करने में और क्या विचित्रता विशेषता है कि जो वारंवार आप मुझसे कहतेहो कि, जैसे पहले लोग कर्म करते आये हैं उसप्रकार तू कर्मकर यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि, लोकप्रसिद्ध परम्प-रामात्र करके कर्म मुक्तिके हेतु नहीं विद्वान् ज्ञानी जैसे उपदेशकरैं उस-प्रकार कर्म करनेसे मुक्तिके हेतुहैं. कर्मका स्वरूप समझना कठिनहै मैं तुझको समझाऊंगा. कर्म १ क्या २ है और❀अकर्म ३ क्या ४ है यह ५ जो बातहै❀इसमें ६ कवि पण्डित ७ भी ८ भ्रान्त होगये हैं ९ तिस कर्मको १०। ११ तुझसे १२ कहूंगा मैं १३ जिसको १४ जानकरके १५ संसार से १६ मोक्ष होजायगा [तू] तात्पर्य—क्या कर्म करना चाहिये, कौनसा कर्म न करना चाहिये, इसबातके समझने में पण्डितभी सन्देह और विपर्य्यय को प्राप्त होजाते हैं. दृष्टान्त—से इसबात को स्पष्ट करते हैं जैसे एक औषध गरमीको दूर करती है, तबभी उसके खानेकी रीति तोल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समय बुद्धिमान् वैद्यसे बूझनी योग्यहै. क्योंकि बुद्धिमान वैद्य देशकाल वस्तुका विचारकर कहेगा❋प्रसिद्धहै कि एकही दवा किसी देशमें फल करतीहै किसी में नहीं वा दूसरे देशमें उलटाफल करदेती है❋इसी प्रकार काल वस्तु में समझलेना. दवाके साथ जलादि मिलजाने से और का फल और होजाता है इसीप्रकार कर्मों की व्यवस्थाहै. शास्त्र में जो यह वारंवार उपदेश है कि, गुरु किये विना सर्व धर्म कर्म निष्फलहैं यह सत्य है. क्योंकि देशकाल वस्तुका विचारकरना ऐसी २ बहुत बात केवल शास्त्रके पढ़ने सुननेसे नहीं मिलती हैं. सद्गुरु महापुरुषों से एकान्तमें मिलती हैं और सत् पुरुषोंका यह नियमहै कि, अपने अनन्यभक्त को बतातेहैं नहीं तो संसारमें यह कहानी सच्चीहै कि, " जैसे जिसका गाना वैसाही दूसरेका बजाना " अर्थात् जैसे दुनियां के लोग चतुरहैं उन्हों से सिवाय विद्वान् हैं ॥ १६ ॥

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥ १७॥

कर्मणः १ अपि २ बोद्धव्यम् ३ विकर्मणः ४ च ५ बोद्धव्यम् ६ अकर्मणः ७ च ८ बोद्धव्यम् ९ हि १० कर्मणः ११ गतिः १२ गहना १३ ॥ १७ ॥ अ० उ० कर्म का स्वरूप यथार्थ जानकर कर्म करना चाहिये भेड़कैसी चाल अच्छी नहीं यह समझाते हैं श्रीमहाराज❋कर्म का १ तत्त्व❋भी २ जानना योग्य है ३ और विकर्मका ४ । ५ तत्त्वभी❋ जानना योग्यहै ६ और अकर्मका ७ । ८ तत्त्वभी❋जानना योग्यहै ९ क्योंकि १० कर्म की ११ गति १२ गहना १३ अर्थात् कर्म अकर्म विकर्म तीनोंकी व्यवस्था गंभीर (कठिन विषम) है. टी० वेदोक्त विधि को कर्म कहते हैं १ वेदोक्त निषेध को विकर्म कहते हैं ४ कुछ न करनेको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अकर्म कहते हैं ७ तात्पर्य--भलेप्रकार समझकर कर्मोंका करना योग्यहै॥१७॥

कर्मण्यकर्मयः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
सबुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्॥१८॥

यः १ कर्मणि २ अकर्म ३ पश्येत् ४ यः ५ च ६ अकर्मणि ७ कर्म ८ सः ९ मनुष्येषु १० बुद्धिमान् ११ सन् १२ कृत्स्नकर्मकृत् १३ युक्तः १४ ॥ १८॥ अ० उ० जिस कर्मको जानकर संसारसे मुक्त होजायगा तू वह कर्म तुझसे कहूंगा मैं श्रीभगवान्ने पीछे यह प्रतिज्ञाकी थी सो अब कहते हैं❋जो १ कर्म में २ अकर्म[२] ३ देखताहै ४ और जो ५। ६ अकर्म[३] में ७ कर्म देखताहै❋सो ९ मनुष्यों में १० ज्ञानी ११ है क्योंकि ❋सो १२ समस्त कर्म करताहुआ १३ भी❋युक्त १५ रहताहै. अर्थात् समाहित सावधान रहताहै आत्माको अकर्ता जानता हुआ समाधिनिष्ठ रहताहै टी० शरीर प्राण इन्द्रिय अन्तःकरणके व्यापार कर्म में २ आ-

---

१ वर्णाश्रमादिकों करिकै अनुष्ठेय जो कर्म उस्का यथार्थज्ञान होने से उस कर्मको शास्त्रोक्त विधिपुरःसर करनेमें सामर्थ्य होतीहै। और न जाननेसे उन कर्म्मोंका विधिवत् अनुष्ठान नहीं होसकता क्योंकि शास्त्रअनेक हैं और शास्त्र प्रवर्तकभी अनेक प्रकार के हैं इससे देशकाल वर्णाश्रमावस्थाके अनुसार कर्मविधिभी अनेक प्रकारकी है तिससे भलीप्रकार समझकर कर्म करना।

२ संशय यहहै कि कर्ममें अकर्म किसप्रकार हो सकताहै और अकर्ममें कर्म किस प्रकारसे होसकताहै तहांपर प्रथम कर्म किसको कहतेहैं। देहादि इन्द्रियों करिकै जो किया जाय वह कर्म है लौकिक और अलौकिक औपाधिक चेष्टामात्र कर्म्मोंसे याथात्म्यज्ञ बिद्वान् अभावके देखै जैसे कि स्वयम् कर्म न करनेवाला भी दूसरेके कर्मोंसे कर्मी होताहै यथामेघकी चलनादि क्रियाद्वारा तदावृतचन्द्रभी क्रियावान कहा जाताहै जैसे अपनी गमनादि क्रियाद्वारा आतपभी क्रियावान् कहाजाताहै तिसी प्रकार देहादिकोंकी क्रियासे तादात्म्यभावसे अध्यास्तजन्तुभी क्रियावानहै. परन्तु ब्रह्मवित् ब्रह्मात्मैकत्व विज्ञानसे देहादिकोंके संबन्धाभावसे तत्तत्कृतकर्महीं देखताहै।

३ अकर्ममें कर्म किसप्रकार जैसे कि हांथकी मुट्ठी बांधनेमें यद्यपि बाह्यदृष्टिसे हांथकी क्रियाका निरोधहै तथापि अन्तःकरणमें स्थितजो अहंकारवृत्ति (अर्थात् हमहमारे हांथसे कुछ भी नहीं करते) तिस निरोधवृत्तिरूप क्रियासे अकर्ममेंभी कर्मदेखताहै।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्माको कर्मरहित अकर्ता अकर्म ३ जो जानता है और अकर्मरूपब्रह्ममें संसार कर्मको कल्पित जो जानता है सोई ज्ञानी है. सोई समस्त कर्मों का करताहै. सोई सावधानहै. स्वरूपमें ❀ अथवा निष्काम कर्ममें जो अकर्म देखताहै. अन्तःकरण शुद्धिद्वारा और ज्ञानद्वारा मुक्तिका हेतु होनेसे और अकर्म में अर्थात् विना ज्ञान कर्म न करने में जो कर्म को अर्थात् संसारको देखताहै अन्तःकरण शुद्ध न होने से और ब्रह्मज्ञान न होने से कर्मोंका न करना संसार बन्धनका हेतु है ऐसे जो समझताहै सो मनुष्यों में चतुरहै सो समस्त कर्म करताहुआभी युक्त योगी है ❀ तात्पर्य—ज्ञान अवस्था में आत्माको अकर्ता समझना इसमें तो कुछ संदेह है नहीं. परन्तु अज्ञान अवस्था में भी आत्माको अकर्ता समझना योग्य है. अर्थात् कर्मोंका अनुष्ठान करने के समयभी आत्मा अकर्ता निर्विकारहै यह समझना चाहिये. और जबतक ज्ञान न हो तबतक निष्काम असंग होकर आसक्ति रहित कर्मोंका अनुष्ठान करना योग्यहै. और ज्ञानकालमें ज्ञानीकी दृष्टि में कर्म, अकर्म, विकर्म सब सम हैं यह अभिप्राय है. इस मन्त्रका ❀ और इसी अर्थ को अगले पांच श्लोकों में और दूसरे प्रकारकरके स्पष्ट निरूपण करेंगे ॥ १८ ॥

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः।
ज्ञानाऽग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥१९॥

यस्य १ सर्वे २ समारंभाः ३ कामसंकल्पवर्जिताः ४ तम् ५ बुधाः ६ पण्डितम् ७ आहुः ८ ज्ञानाग्निदग्धकर्माणम् ९ ॥ १९ ॥ अ० जिसके १ समस्त २ कर्म ३ काम संकल्प करके वर्जित अर्थात् विना कामना और संकल्पके ४ आभासमात्र होतेहै अर्थात् ज्ञानी जो कर्म करताहै वह कर्म न कुछ दृढ़ इच्छाकरके करता हैं और न कुछ संकल्प करके किसी फल भोगकी कामना कल्पना करके करताहै, स्वाभाविक जिसके सवकर्म होते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं ❀ तिसको ५ विद्वान् लोग ६ विद्वान् ७ कहते हैं ८ कैसाहै सो विद्वान् ❀ ज्ञानरूप अग्निकरके भस्मकरदिये है कर्म जिसने ९ अर्थात् ज्ञानी के कर्म भी अकर्महै टी० जिनका प्रारम्भ कियाजावे तिनकोही कर्म कहते है ३ इच्छा और इस इच्छा का कारण संकल्प इन दोनों करके रहित विद्वान् के कर्म हैं. इसी हेतुसे वे अकर्म हैं ॥ १९ ॥

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति सः॥२०॥

कर्मफलासंगत् १ त्यक्त्वा २ नित्यतृप्तः ३ निराश्रयः ४ सः ५ कर्माणि ६ अभिप्रवृतः ६ अपि ८ किंचित् ९ एव १० न ११ करोति १२ ॥ २० ॥ अ० उ० तस्मात् कर्मों का त्याग स्वरूप से होना असंभवहै उसमें असक्ति और फल का त्याग करदेना यही अकर्म त्याग कहलाता है. और इसप्रकार कर्म करनेवाले त्यागी संन्यासी कहलाते हैं. सोई कहते है ❀ कर्मोंमें और कर्मोंके फलमें आसक्ति को १ त्यागकरके २ नित्य स्वरूप करके तृप्त अर्थात् नित्य जो आत्मा हैं उस नित्य निजानन्द करके तृप्त ३ आश्रयरहित अर्थात् सिवाय आत्मानन्द के और किसी विषयका नहीं है आलम्बन (आसरा) जिसके ४ सो ५ कर्म में ६ सब तरफ से भलेप्रकार प्रवृत्त ७ भी ८ हैं अर्थात् दिन रात कर्मोंका कर्त्ता भी है ७ परन्तु ❀ कुछ ९ भी १० नहीं ११ करता १२ टी० लोकवासनादिकरके रहित ४ शरीर प्राण इन्द्रिय अन्तःकरण से यथायोग्य कर्मों को करताभी ७ आत्मा के साथ उन कर्मोंका लेशमात्र भी सम्बन्ध नहीं विद्वान् यह समझता है. इसहेतु से ऐसे कर्मकर्त्ता महात्मा को ज्ञानी कहते हैं ॥ २० ॥

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्त सर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥२१॥

निराशीः १ यतचित्तात्मा २ त्यक्तसर्वपरिग्रहः ३ केवलम् ४ शारीरम् ५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्म ६ कुर्वन् ७ किल्बिषम् ८ न ९ आप्नोति १० ॥ २१ ॥ अ० आशारहित १ जीता है अन्तःकरण और शरीर जिसने २ त्याग दियाहै सब परिग्रह जिसने ३ सि० सो ❋ केवल ४ शरीरके निर्वाहमात्र ५ कर्मको ६ करताहुआ ७ पापको ८ नहीं ९ प्राप्तहोताहै १० टी० इसलोक परलोक के पदार्थों की कोई आशा नहीं है. जिसको क्योंकि, उसने इन्द्रियादि को वश करलिया देहयात्रा से सिवाय सब बखेडाहै फटापुराना वस्त्र, रूखासूखा अन्न इसके विना तो निर्वाह निर्विक्षेप होना कठिन है. अन्न वस्त्रका ग्रहणभी विक्षेप दूर करने के लिये है. क्योंकि जो शीतकाल में शीतनिवारण वस्त्र न हो वा अन्न न खावे तो अतिविक्षेप होताहै. विचार नहीं होसक्ता. देहयात्रा मात्र अन्न वस्त्र विक्षेप के हेतु नहीं इससे सिवाय सब परिग्रह कहलाताहै वह त्यागदियाहै जिसने सो पदार्थों में इष्ट अनिष्ट बुद्धिरहित होकर केवल शरीरका निर्वाह करताहुआ कर्म अकर्म करके बन्धनको नहीं प्राप्त होता. वेदकी विधिका भी तात्पर्य निवृत्ति में है. सो निवृत्ति विद्वानका बाना है वेद को विधि निषेध भी प्रवृत्तों के वास्ते है निष्काम निवृत्त पुरुषोंपर किसी का विधि निषेध नहीं ॥ २१ ॥

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समःसिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥२२॥

यदृच्छालाभसन्तुष्टः १ द्वन्द्वातीतः २ विमत्सरः ३ सिद्धौ ४ असिद्धौ ५ च ६ समः ७ कृत्वा ८ अपि ९ न १० निबध्यते ११ ॥ २२ ॥ अ० विना इच्छाकिये विना संकल्प विना मांगे जो पदार्थ प्राप्तहो उसको यदृच्छालाभ कहते हैं. यदृच्छालाभ करके तृप्त १ द्वन्द्वरहित २ निर्वैर ३ कर्मों की ❋ सिद्धि और असिद्धिमें ४ । ५ । ६ सम ७ जो है ऐसा महापुरुष कर्म विकर्म अकर्म ❋ करके ८ भी ९ नहीं १० बन्धनको प्राप्त होता है ११ टी० हर्ष, विषाद, शीतोष्ण, मानापमान, सुख, दुःखादि के जोडों को द्वन्द्व कहते हैं २ ॥ २२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थित चेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥ २३ ॥

गतसंगस्य १ मुक्तस्य २ ज्ञानवस्थितचेतसः ३ यज्ञाय ४ आचरतः ५ कर्म ६ समग्रम् ७ प्रविलीयते ८ ॥२३॥ अ० उ० दूर होगई है सब पदार्थों में आसक्ति जिसकी १ अर्थात् न इस लोक के पदार्थों में जिसका मन आसक्त है और न परलोक के पदर्थों में १ धर्म अधर्म से❋ छूटाहुआ २ ब्रह्मज्ञानमेंही स्थित है चित्त जिसका ३ परमेश्वरार्थ वा लोकसंग्रह धर्मकी रक्षाके लिये ४ जो❋ कर्म ५ करता है उसका ६ समस्त ७ कर्म अकर्म विकर्म ब्रह्म में❋ लय होजाता है ८ अर्थात् जिस महात्मा के ऊपर चार विशेषण हैं उस विद्वान् के कर्म विकर्म सब नाश होजाते हैं. तात्पर्य—ऐसे महात्मा जीवन्मुक्त हैं ॥ २३ ॥

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ २४ ॥

अर्पणं १ ब्रह्म २ हविः ३ ब्रह्म ४ अग्नौ ५ ब्रह्मणा ६ हुतम् ७ ब्रह्म ८ तेन ९ ब्रह्म १० एव ११ गन्तव्यम् १२ ब्रह्मकर्मसमाधिना १३ ॥२४॥ अ० उ० अठारहवें श्लोक में तो ज्ञानीका लक्षण संक्षेप करके कहा और उन्नीस से लेकर तेईसवें श्लोकतक उसी अर्थको स्पष्ट करने के लिये विस्तारपूर्वक निरूपण किया. अब यह कहते हैं कि, जिस कारण से ज्ञानी कर्म करताहुआ भी ब्रह्मही को प्राप्त होताहै सो समझ यह है❋ अर्पण कियाजावे जिसकरके १ सो स्रुवादि पदार्थ करण❋ ब्रह्म २ सि० ही है❋ घृतादि भी❋ ब्रह्म ४ ही है❋ अग्नि में ५ ब्रह्मने ६ अर्थात् कर्तानें ६

१ जन्मान्तरार्जित कर्मोंके आश्रय जो अज्ञानावरण शक्तिरूप और अन्तःकरणके साक्षी होनेसे इतरेतराध्यास प्रधान जो तन्मयता सो फल वासना सहित जिसप्रकाररसे होती है उसी प्रकार लीन होजाती है, जलमें लीन क्षीर सदृश ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होम ७ सि० जो कियाहै सोभी ❋ ब्रह्म ८ ही है ❋ तात्पर्य—क्रिया, कर्ता, कर्म करण, अधिकरण यह सब ब्रह्महै ऐसे जो समझता है ❋ तिसको ९ ब्रह्म १० ही ११ प्राप्त होने को योग्य है १२ अर्थात् उसको ब्रह्म प्राप्त होगा. क्योंकि ❋ ब्रह्मरूप कर्म में समाधान है चित्त जिसका १३ अर्थात् क्रिया कारकादि सब पदार्थों को ब्रह्मरूप जानता है इस कारण से वह ब्रह्मही को प्राप्त होगा. नरक स्वर्गादिफल, कर्म, अकर्म, विकर्मादि उसको स्पर्श नहीं करेंगे टी० करण १ कर्म ३ कर्त्ता ६ अधिकरण ५ क्रिया ७ अर्पणादि शब्दों में तात्पर्य है. पाठक्रम से अर्थक्रम बलवान् होता है कर्त्ता कर्म करण अधिकरणादिको कारक कहते हैं. हवनादि को क्रियाकहते हैं. क्रिया करणादि पदार्थ सब ब्रह्म है. इस ज्ञान से जीव ब्रह्मको प्राप्त होता है, इत्यभिप्रायः ॥ २४ ॥

दैवमेवाऽपरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते।
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥ २५ ॥

अपरे १ ब्रह्माग्नौ २ यज्ञम् ३ यज्ञेन ४ उपजुह्वति ५ अपरे ६ योगिनः ७ दैवम् ८ यज्ञम् ९ एव १० पर्युपासते ११ ॥ २५ ॥ अ० उ० सर्वत्र ब्रह्म दर्शनको यज्ञ का रूपक बांधकर यज्ञरूप वर्णनकिया अब इस ज्ञानयज्ञकी स्तुति करने के लिये और ज्ञानयज्ञ की महिमा प्रसिद्ध करने के लिये ज्ञानयज्ञ के सहित बारह यज्ञ वर्णन करते हैं. अर्थात् ग्यारह यज्ञ सिवाय ज्ञानयज्ञ के जो वर्णन करेंगे वे ज्ञानयज्ञ की प्राप्तिके उपाय हैं. ज्ञानयज्ञ उपेय हैं साक्षात् मोक्ष के देने में ज्ञानयज्ञही समर्थ है सोई प्रथम कहते हैं. इस मन्त्र में दो यज्ञों का निरूपण है. पाठक्रम से अर्थक्रम बलवान् होताहै इस हेतुसे प्रथम जानयज्ञ का अर्थ लिखते हैं ❋ ब्रह्मज्ञानी महात्मा १ ब्रह्मरूप अग्निमें २ आत्मा को ब्रह्मयज्ञकरके ४ अर्थात् ब्रह्मज्ञान करके ४ वहन करते हैं ५ तात्पर्य—आत्माको शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्ण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निर्विकार ब्रह्म जो समझते हैं वे ज्ञानी हैं उनके ज्ञानको ज्ञानयज्ञ वर्णन करते हैं. एक ज्ञानयज्ञ तो निरुपण होचुका अब दूसरा निरूपण करते हैं ❋और एक ६ योगी ७ अर्थात् एक कर्मयोगी ७ दैव ८ यज्ञको ९ ही १० उपासना करते हैं ११ तात्पर्य्य—साकार रामादि देवताओंकी आराधन कियाहै जिस यज्ञमें उसको दैवयज्ञ कहते हैं साकार देवताओंकी उपासनाका नाम दैवयज्ञहै ❋एक शब्दका यह तात्पर्यहै कि भेदवादी रामादि देवताओं को वास्तव मूर्तिमान् देवता समझते हैं नित्य निराकार निर्विकार नहीं समझते हैं नहीं तो ज्ञानी और उपासकों में भेद क्या हुआ और ज्ञानयज्ञसे दैवयज्ञ को पृथक् क्यों निरूपण करते. श्रीमहाराज ❋रामादि देवताओंको ज्ञानी नित्य निराकार जानते हैं उपासक. उनको वास्तव मूर्तिमान् समझते हैं. मूर्त्तियोंको कल्पित मायिक नहीं समझते, यही भेदहै उपासक और ज्ञानियों में ॥ २५ ॥

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति ।
शब्दादीन् विषयानन्ये इन्द्रियाग्निषु जुह्वति ॥२६॥

अन्ये १ श्रोत्रादीनि २ इन्द्रियाणि ३ संयमाग्निषु ४ जुह्वति ५ अन्ये ६ शब्दादीन् ७ विषायान् ८ इन्द्रियाग्निषु ९ जुह्वति १० ॥ २६ ॥ अ० उ० इस मन्त्रमें दो यज्ञ निरूपण करेंगे ❋तीसरा यज्ञ कहते हैं ❋और एक १ श्रोत्रादि इन्द्रियों को २ ।३ संयमरूप अग्नि में ४ हवन करते हैं ५ तात्पर्य्य—इन्द्रियों का संयम करना यही यज्ञ है. कोई यही यज्ञ करते हैं अर्थात् इन्द्रियों को विषयों से निरोध करते हैं ❋चौथा यज्ञ यह है जो अब कहते हैं. कोई एक ६ शब्दादि ७ विषयों को ८ इन्द्रियरूप अग्नि में ९ हवन करते हैं १० तात्पर्य—वेदोक्त विषयों को भोगना भी यज्ञहै जैसे शास्त्रमें भोजन आदि निरूपण किया है. (नियम करके) जो उसीप्रकर वर्तते हैं वह यज्ञ है तात्पर्य—इसका भी इन्द्रियों के दमन में ही है ॥ २६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते॥ २७॥

अपरे १ सर्वाणि २ इन्द्रियकर्माणि ३ प्राणकर्माणि ४ च ५ आत्मसंयमयोगाग्नौ ६ जुह्वति ७ ज्ञानदीपिते ८॥ २७॥ अ० उ० पांचवां एक यज्ञ इस श्लोक में निरूपण करेंगे ❋ और कोई १ सब इंद्रियोंके कर्मोंको २। ३ और प्राण अपानादि के कर्मों का ४। ५ आत्मसंयमयोगाग्नि में ६ हवन करते हैं ७ अर्थात् इन्द्रिय और प्राणादिकी गतिका जो आत्मामें संयम निरोध उपराम करना यही हुई योगरूप अग्नि उपराम (शान्त) करते हैं. तात्पर्य—आत्मध्यान में स्थिर होकर प्राणादि की गतिको निरोध करते हैं कैसीहै वह आत्मसंयमयोगाग्नि ❋ ज्ञान करके प्रज्वलित है. तात्पर्य—इन्द्रियों की वृत्तियों को रोककर और कर्मेन्द्रियो के और प्राण अपानादि के कर्मोंको रोककर आत्मस्वरूप (सच्चिदानन्द) में जो तत्पर होना यह एक यज्ञ हैं. इन्द्रिय प्राणादि के कर्म आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में लिखे हैं॥ २७॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथाऽपरे।
स्वाध्याय ज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः॥ २८॥

द्रव्ययज्ञाः १ तपोयज्ञाः २ योगयज्ञाः ३ तथा ४ अपरे ५ स्वाध्यायज्ञानयज्ञाः ६ च ७ यत यः ८ संशितव्रताः ९॥ २८ अ० उ० पांचयज्ञ इस मन्त्रमें कहेंगे ❋ तीर्थयात्रा साधुसेवादि शुभकर्मों में द्रव्यव्यय (खर्च) करना यही ❋ द्रव्ययज्ञ है जिनका १ सि० यह एक छठां यज्ञ हुआ व्रत नियम मौनादि को तप कहते हैं ❋ तप यज्ञ है जिनके २ यह एक सातवां यज्ञ हुआ ❋ अष्टांगयोग यज्ञहै. जिनके ३ यह एक आठवां यज्ञ हुआ और तैसेही ४। ५ सि० कोइ ऐसे हैं कि स्वाध्याययज्ञ और ज्ञानयज्ञ है जिनके ६ अर्थात् स्वाध्याययज्ञ है जिनके कोई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसे हैं और ज्ञानयज्ञ है जिनके कोई ऐसे हैं वेदशास्त्रों का पढना पाठ करना इसको स्वाध्याय कहते हैं. यह एक नवां यज्ञ है और वेदशास्त्र के अर्थ समझने को भी ज्ञानयज्ञ कहते है. यह एक दशवां यज्ञ हुआ. प्रथम ज्ञयका नामभी ज्ञानयज्ञ है. उसका तात्पर्य ब्रह्मज्ञान में हैं कैसे हैं इस यज्ञके करनेवाले ❋ यत्न शीलवाले ८ सि० हैं अर्थात् यज्ञ करने में प्रयत्न करनेवाले है और ❋ तीक्ष्णव्रतहै जिनके ९ अर्थात् जैसे तलवार की धार पर चलना है वह बड़ा तीक्ष्ण काम है ऐसेही इन यज्ञोंका अनुष्ठान करना है ॥ २८ ॥

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानंतथापरे ।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥ २९ ॥

तथा १ अपरे २ अपाने ३ प्राणम् ४ प्राणे ५ अपानम् ६ जुह्वति ७ प्राणापानगती ८ रुद्ध्वा ९ प्राणायामपरायणाः १० ॥ २९ ॥ अ० उ० एक ग्यारहवां यज्ञ इसमन्त्र में निरूपण करते हैं कोई १ । २ अपान में ३ प्राणको ४ और ❋ प्राणमें ५ अपानको ६ हवन ७ करते हैं वा लय करते हैं मिलते हैं तात्पर्य—प्राण और अपानकी गतिको एक करते हैं ७ प्राण और अपानकी गतिको ८ निरोध करके ९ प्राणायाम में परायण १० हैं यहभी एक यज्ञहै. अर्थात् प्राणो का जो निरोध यही परम आश्रय है जिनके ऐसेहैं १० कोई तात्पर्य—प्राणकी गति रोकने से मन उसके साथही रुकता है. इस वास्ते प्राणायाम में तत्पर रहते है ॥ २९ ॥

अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति ।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥ ३० ॥

अपरे १ नियताहारः २ प्राणान् ३ प्राणेषु ४ जुह्वति ५ एते ६ सर्वे ७ अपि ८ यज्ञविदः ९ यज्ञक्षपितकल्मषाः १० ॥ ३० ॥ अ० उ० आधे मन्त्र में बारहवां एक यज्ञ निरूण करते है. फिर आधे मन्त्र में सब यज्ञ करने-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वालों का माहात्म्य कहतेहैं ❋ और कोई १ नियतआहारी २ थोडाभोजन करनेवाले २ प्राणों को ३ प्राणमें ४ ही लय करतेहैं ५ तात्पर्य—भोजन का संकोच करनेसे प्राणकी गतिभी संकुचित होजाती है और प्राणकी गति कम होने से मनकी गतिका निरोध होताहै. यज्ञ समझकर कोई एक आहार करने में संकोच करते हैं. यह एक बारहवां यह है ❋ ये ६ सब ७ ही ८ बारह ❋ यज्ञों के जाननेवाले ९ अर्थात् यज्ञोंके करनेवाले ❋ यज्ञों करके नाश करादिये हैं पाप जिन्होंने १० वे सब सनातन ब्रह्म को प्राप्त होंगे. अगले मन्त्रके साथ इस आधेमन्त्रका अन्वयहै. ब्रह्मज्ञानी साक्षात् प्राप्त होंगे. और कर्मकाण्डी उपासक योगी ब्रह्मज्ञानद्वारा ब्रह्मको प्राप्त होंगे ॥ ३० ॥

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्मसनातनम् ।
नायंलोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥ ३१ ॥

यज्ञशिष्टामृतभुजः १ सनातनम् २ ब्रह्म ३ यान्ति ४ कुरुसत्तम ५ अयज्ञस्य ६ अयम् ७ लोकः ८ न ९ अस्ति १० अन्यः ११ कुतः १२ ॥ ३१ ॥ अ० उ० आधे मन्त्र में यज्ञ करनेवालों का माहात्म्य कहते हैं और आधेमन्त्र में जो बारह यज्ञों में से एक भी यज्ञ नहीं करते हैं उनकी निन्दा करते हैं. श्रीमहाराज अर्थात् जो अयाज्ञेंको फलहोगा सो कहते हैं ❋ यज्ञशिष्टामृत के भोजन करने वाले १ सनातन २ ब्रह्म को ३ प्राप्त होते हैं ४ हे अर्जुन! ५ नहीं यज्ञ करनेवालेको ६ जो यज्ञ नहीं करते हैं उसको ६ यह ७ लोक ८ भी ❋ नहीं ९ हैं १० सि० फिर ❋ परलोक ११ तो ❋ कहां से १२ होगा? तात्पर्य—जो एक भी यज्ञ नहीं करता है उसको जब कि इसलोकमेंही सुख नहीं तो परलोकमें कैसे होसक्ता है. न उसको इसलोक का सुख है न परलोक में मिलेगा वह पशुवत् संसार में उत्पन्न हुआ ॥ ३१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ।
कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥३२॥

एवम् १ ब्रह्मणः २ मुखे ३ बहुविधाः ४ यज्ञाः ५ विततः ६ तान् ७ सर्वान् ८ कर्मजान् ९ विद्धि १० एवम् ११ ज्ञात्वा १२ विमोक्ष्यसे १३ ॥ ३२ ॥ अ० उ० जिस प्रकार बारह यज्ञ पीछे कहे इसीप्रकार १ वेद के २ मुख में ३ अर्थात् वेदों में बहुतप्रकार के यज्ञ ४ । ५ विस्तार ६ अर्थात् बहुतप्रकार के यज्ञों का वेदों में विस्तार है❀तिन सबका ७ । ८ अर्थात् उक्त अनुक्तों को शरीर मन वाणी के❀कर्मों से उत्पन्नहुआ ९ जान (तू) १० तात्पर्य्य—आत्मस्वरूप से स्पर्श रहित जान❀इस प्रकार ११ आत्माको❀जानकर १२ ज्ञाननिष्ठ हुआ संसारसे❀छूटजायगा (तू) १३ अर्थात् परमानन्दस्वरूप मुक्तिको प्राप्त होगा. टी० ये सब यज्ञ कायिक, वाचिक, मानस हैं. आत्मा इनका विषय भी नहीं इत्यभिप्रायः ॥ ३२ ॥

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परंतप ।
सर्वकर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥ ३३ ॥

परंतप १ द्रव्यमयात् २ यज्ञात् ३ ज्ञानयज्ञः ४ श्रेयान् ५ पार्थ ६ सर्वम् ७ कर्माखिलम् ८ ज्ञाने ९ परिसमाप्यते १० ॥३३॥ अ० उ० सब यज्ञों से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठहै अर्थात् कर्म भक्ति उपासना योगादिसे ब्रह्मज्ञान श्रेष्ठ है क्योंकि साक्षात् मुक्तिका हेतु है सोई कहते हैं❀हे अर्जुन! १ दैवादियज्ञों से २ । ३ ज्ञानयज्ञ ४ श्रेष्ठ ५ है जो सब यज्ञों से प्रथम निरूपण करी है❀क्योंकि❀हे अर्जुन! ६ सब कर्मफलसहित ७ । ८ ब्रह्मज्ञान में ९ समाप्त होते हैं १० अर्थात् ब्रह्मज्ञान से ही दुःखरूप कर्म नाशहोते हैं और कोई उपाय कर्मों की जड़का नाश करने वाला नहीं ॥३३॥

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥ ३४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तद् १ विद्धि २ प्रणिपातेन ३ परिप्रश्नेन ४ सेवया ५ ज्ञानिनः ६ तत्त्वदर्शिनः ७ ते ८ ज्ञानम् ९ उपदेक्ष्यन्ति १० ॥ ३४ ॥ अ० उ० ज्ञान प्राप्त होने के मुख्य साधन कहते हैं. ब्रह्मज्ञान प्राप्तिकी सम्प्रदाय (पन्थ या मार्ग) यही है जो श्रीभगवान् इसश्लोक में कहते हैं. जो ब्रह्मज्ञान साक्षात् मुक्तिका हेतु है और सब कर्म उपासना योगादि श्रेष्ठ है ❋ तिसको १ (तू) जान २ अर्थात् तिस ब्रह्म को प्राप्तहो जो परमान्द की इच्छा रखता है (तू) ❋ सि० उस परमानंदकी प्राप्तका उपाय यह है कि, यह ज्ञान श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ पुरुषों से प्राप्त होसक्ता है. जो त्रिकाण्ड वेदों के तात्पर्य को जानते हैं और जिसको ब्रह्म साक्षात् अनुभव अपरोक्ष प्रत्यक्ष है उनको श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ कहते हैं. तात्पर्य—ऐसे पण्डित विरक्त संन्यासी परमहंस हैं वे ब्रह्मज्ञानका उपदेश करसक्ते हैं और जो केवल श्रोत्रिय शास्त्रार्थ के जानने वाले हैं ब्रह्मनिष्ठ नहीं ब्रह्मज्ञानरहित हैं वे ब्रह्मज्ञान अनुभव सहित उपदेश नहीं करसक्ते साक्षात् ब्रह्मको अपरोक्ष नहीं बतासक्ते और जो केवल ब्रह्मनिष्ठही हैं शास्त्र नहीं पढ़े वे दृष्टान्त युक्ति अनुमान शंका समाधान पूर्वक नहीं उपदेश करसक्ते. इस हेतु से ब्रह्मतत्त्व उपदेश करने के योग्य अर्थात् ब्रह्मतत्त्व उपदेश करने में समर्थ श्रोतिय ब्रह्मनिष्ठही है अर्थात् श्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठभीहों श्रीभगवान् कहते हैं कि ऐसे ब्रह्मनिष्ठों के पास जाकर प्रथम उनको ❋ दण्डवत् नमस्कार करके ३ और फिर ❋ प्रश्न करके ४ सि० और बहुत काल संवत् से सीवाय ❋ सेवा करके ५ ज्ञान सीख अर्थात् प्रथम साधु महात्मा के पास जाकर उनको आदर के साहित प्रणाम कर फिर उन्होंसे यह प्रश्न कर, कि हे भगवन्! मुझको कृपा करके ब्रह्मज्ञान उपदेश कीजिये और बहुत दिनों उनकी सेवाकर तन धन मन वाणी करके तब ❋ ज्ञानी ६ तत्त्वदर्शी ७ अर्थात् श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ ७ तुझको ८ ज्ञान ९ उपदेश करेंगे १० तात्पर्य— यह तीनों साधन अवश्य चाहते हैं जो इन में एक भी न होगा, तो भी ज्ञान प्राप्त होना कठिनहै. प्रथम तो साधन रहित पुरुष

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को महात्मा उपदेशही न करेंगे और जो वे दया करके साधनरहितको उपदेश भी करदेंगे तो उसका कभी बोध न होगा. क्योंकि यह बात स्पष्ट प्रसिद्ध है कि बहुत लोग बर्षों वेदान्त शास्त्र पढ़ते सुनते हैं और ब्रह्म वार्तामें बहुत चतुर होजाते है परन्तु छोकरे लोगाई कुपात्र धनवानों के दासही बनेरहते हैं उनमेंही ममता रखते हैं❋केवल नमस्कारमात्र करकेही विना प्रश्न और सेवाके महात्मा उपदेश नहीं करेंगे. क्योंकि दण्डवत् सब करसक्ते हैं. प्रश्न करने से जिज्ञासु का तात्पर्य प्रतीत होताहै न जानिये कैसा अधिकारी हैं सिवाय इसके धर्मशास्त्र में निषेध है और बहुत लोग ब्रह्मवार्ता में जो कुशल होते हैं वे प्रश्न भी भले भले किया करते हैं परन्तु महात्मा विना चिरकाल सेवाके उपदेश नहीं करते हैं. क्योंकि मन्त्र का उपदेश करना विना एक वर्षकी परिक्षा किये निषेध है और यह तो सक्षात् ब्रह्मविद्याहै. इस वास्ते बहुत चिरकाल सेवाकरके और प्रश्न करके और दण्डवत नमस्कार करके ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता है इत्यभिप्रायः ॥ ३४ ॥

यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव।
येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥ ३५ ॥

पाण्डव १ यत् २ ज्ञात्वा ३ एवम् ४ पुनः ५ मोहम् ६ न ७ यास्यसि ८ येन ९ अशेषेण १० भूतानि ११ आत्मनि १२ द्रक्ष्यसि १३ अथो १४ मयि १५ ॥ ३५ ॥ अ० उ० ज्ञान का फल और महिमा कहते हैं चार श्लोकों में❋हे अर्जुन ! १ जिसको २ जानकर ३ अर्थात् ज्ञानको प्राप्त होकर❋इस प्रकार ४ फिर ५ मोहको ६ नहीं ७ प्राप्त होगा. जैसा अब मोह तुझको प्राप्त होरहा है और जिस करके ९ अर्थात् उसी ज्ञान करके ९ समस्त १० भूतों को ११ ब्रह्माजीसे लेकर चींटी पर्यन्त❋आत्मा में १२ देखेगा तू १३ अर्थात् यह समझेगा कि यह समस्त संसार मुझ सच्चिदानन्द मेंही नाम रूपकरके कल्पितहै❋पीछे उसके १४ मुझ शुद्ध

१ जिसप्रकारसे कनक कल्पित कटक कुंडलादि. इसी प्रकार भागत्याग लक्षणा करिकै तत्त्वमसीत्यादिवत् मेरेमें देखैगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सच्चिदानन्दस्वरूप में १५ आत्मा की एकता जानेगा. तू अर्थात् आत्माको नित्य निर्विकार, शुद्ध, सच्चिदानन्द जानेगा. केवल आत्माही करके❋ बुद्ध्यादि करके नहीं क्योंकि बुद्धबुद्धि में जड़बुद्धि की गमनहीं ॥ ३५ ॥

अपि चेदसि पापिभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि ॥ ३६ ॥

चेत् १ सर्वेभ्यः २ पापिभ्यः ३ अपि ४ पापकृत्तमः ५ असि ६ ज्ञान-प्लवेन ७ एव ८ सर्वम् ९ वृजिनम् १० सन्तरिष्यसि ११ ॥ ३६ ॥ अ० उ० जो १ सब पापियों से २। ३ भी ४ बढ़का पाप करनेवाला ५ है तू ६ तो भी❋ज्ञानरूप जहाज करके ७ निश्चय ८ सब पापको ९। १० तर जायगा (तू) ११ तात्पर्य—यह संसार समुद्रवत् अथाह पापरूपहैं इसको पार होजायगा. अर्थात् ज्ञानकरके तेरे पाप सब नाश होजावेंगे ॥ ३६ ॥

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥ ३७ ॥

यथा १ एधांसि २ समिद्धः ३ अग्निः ४ भस्मसात् ५ कुरुते ६ अर्जुन ७ तथा ८ ज्ञानाग्निः ९ सर्वकर्माणि १० भस्मसात् ११ कुरुते १२ ॥ ३७ अ० जैसे १ सुखी❋लकडियोंको २ प्रज्वलित ३ अग्नि ४ राख ५ कर देतीहै ६ हे अर्जुन! ७ तैसेही ८ ज्ञानरूप अग्नि ९ सब कर्मों को १० नाश ११ कर देय है १२ ॥ ३७ ॥

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिहविद्यते।
तत्स्वयंयोगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥ ३८ ॥

१ जैसा स्थाणुमें पुरुषकी भ्रान्तिरूपी ज्ञानको यथार्थ स्थाणु ज्ञान भस्मकरताहै और भ्रमसंबंधी कारणोंको भी नष्ट करताहै. तिसिप्रकार निष्क्रिय ब्रह्मात्मैकत्व विज्ञानभी जगदारोप रूपज्ञानको नष्ट करिकै तज्जनित कर्तृत्वको भी प्रध्वंस करिकै तिनको सम्पादन करनेवाले कर्मोंको भी निर्मूल करता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इह १ ज्ञानेन २ सदृशम् ३ पवित्रम् ४ हि ५ न ६ विद्यते ७ तत् ८ योगसंसिद्धः ९ कालेन १० आत्मनि ११ स्वयम् १२ विन्दति १३ ॥ ३८ ॥ अ० कर्म भेदभक्ति योगादि साधनों के बीचमें अर्थात् मोक्षमार्ग में १ ब्रह्मज्ञान की सदृश २। ३ पवित्र[1] ४ ही ५ नहीं ६ है ७ दूसरा मोक्षका साधन❀तिस ब्रह्मज्ञानको ८ समाधि योगकरके सिद्धहुआ ९ काल करके १० आत्माके विषय ११ अपनेआप १२ प्राप्त होजाता है १३ तात्पर्य—आत्माका ध्यान करते करते साक्षात् अपरोक्ष ज्ञान अपने आप प्राप्त होजाता है. कुछ थोडेही कालमें इस वास्ते सदा आत्मा का ध्यान करना योग्यहै ॥ ३८ ॥

श्रद्धावान्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परांशान्तिमचिरेणाऽधि गच्छति॥३९॥

श्रद्धावान् १ तत्परः २ संयतेन्द्रियः ३ ज्ञानम् ४ लभते ५ ज्ञानम् ९ लब्ध्वा ७ पराम् ८ शान्तिम् ९ अचिरेण १० अधिगच्छति ११ ॥ ३९ ॥ अ० उ० ज्ञान की प्राप्तिके साधन बहिरङ्ग तो चौतीसवें मन्त्रमें नमस्कार प्रश्न सेवा ये तीन कहे इन तीनों को तो मायावी भी करसक्ता है. यह शंका करके इस मन्त्रमें तीन अन्तरङ्ग ज्ञान के साधन कहते हैं. ये साधन जिसमें होंगे वह अवश्यही बे सन्देह ज्ञान को प्राप्त होकर मोक्ष होगा यह कहते हैं❀श्रद्धा[2]वाला १ ब्रह्मज्ञान में❀तत्पर परायण २ भले प्रकार जीती है इन्द्रिय जिसने ३ सो इन तीन साधनों करके सम्पन्न❀ज्ञानको ४ अवश्यही❀प्राप्त होता है ५ ज्ञानको ६ प्राप्त होकर ७ परमशान्ति को ८। ९ जल्दी १० प्राप्त होताहै ११ तात्पर्य—ये तीनों साधन परस्पर

---

१ कृछ्र चान्द्रायणादि राजसूयादि यज्ञ जिस निमित्त किये जाते उसी उद्देशको प्राप्तकरात हैं. किन्तु ब्रह्मज्ञान सम्पूर्ण जन्मांतरार्जित पुण्यपाप मिश्रामिश्रित कर्म्मोंके नाशकरनेसे सबसे अधिक पवित्र है।

२ गुरुवेदान्त वाक्यमें सत्यता जानकर ग्रहण करनेको श्रद्धा कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सापेक्ष हैं. तीनोंहीसे ज्ञान होताहै. एक वा दो से कचाई रह-जातीहै ॥ ३९ ॥

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्माविनश्यति।
नायंलोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥४०॥

अज्ञः १ च २ अश्रद्दधानः ३ च ४ संशयात्मा ५ विनश्यति ६ संशयात्मनः ७ न ८ अयम् ९ लोकः १० न ११ परः १२ न १३ सुखम् १४ अस्ति १५ ॥ ४० ॥ अ० उ० वेदों के महावाक्य सुनकर और ब्रह्मविद्या वेदान्त शास्त्र सुनकर भी जिसको यह संशय है कि मैं पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्दघन हूं. वा नहीं उसको न इस लोक में सुख होगा. न परलोक में क्योंकि जिसको स्वयं प्रकाश आत्मा में संशयरहा उसको परोक्ष वाक्यों में कैसे विश्वास होगा. इसहेतु से वह संशयात्मा सदा दुःखी रहेगा. यद्यपि मन्दबुद्धि और श्रद्धारहित पुरुषों को भी ज्ञान नहीं होता. परन्तु वहां यह आशा रहती है कि कभी न कभी मन्द बुद्धि तो बुद्धिमान् होजायगा और श्रद्धावान् होजायगा. संशयात्माही भ्रष्टहोगा. तात्पर्य—मन्दबुद्धि, श्रद्धारहित और संशयात्मा ये तीनों ज्ञान के अनधिकारी हैं और इन तीनोंमें भी संशयात्मा सबसे निकम्मा है. सोई इस मन्त्र में कहतेहैं श्रीभगवान् ❋ मन्दबुद्धि १ और २ श्रद्धारहित ३ और ४ संशयात्मा ५ नाश होजाता है ६ अर्थात् आनन्द से भ्रष्ट होजाताहै. ये तीनों ब्रह्मानन्दके लेखे मुर्दे की बराबर हैं और इन तीनोंमें से भी संशयात्मा तो अवश्यही भ्रष्ट है ❋ संशयात्मा को ७ न यह ९ लोक १० न ११ परलोक १२ न १३ सुख १४ है १५ तात्पर्य—जो पुरुष अज्ञ होताहै तो उसका गुरु शास्त्र में तो विश्वास होता हैं कालपाकर सुधरसक्ताहै और अज्ञ भी हो और श्रद्धारहित भी हो वह भी किसी कालमें श्रद्धावान् बुद्धिमान होकर सुधरजाताहै और जो जानबूझकर तर्क करता है और अपने विपर्यय पक्ष में दुराग्रह करताहै. उस कुतर्की दुराग्रही को कभी सुख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न होगा. जब कि संशयात्मा कुतर्की दुराग्रही को इसी लोकमें सुख नहीं तो परलोक का सुख कहां होगा. सदा उसके विषय तर्क दुराग्रह संशय बने ही रहेंगे. महात्माओं का ऐसे दुष्टोंको कभी एक बात भी ज्ञान की सुनानी न चाहिये क्योंकि वह कुछ उसमें झूंठी कुतर्क करेगा ❀ संशयात्मा उसको भी कहतेहैं कि जिसको यह संशयहै कि मैं कर्मों का अनुष्ठान करूं वा न करूं अकर्म ज्ञान में निष्ठाकरूं वा न करूं संशयात्मा इसपदका अक्षरार्थ यह है कि संशय है अन्तःकरण में जिसके सो संशयात्मा सो संशय दो प्रकार का है प्रमाणगत और प्रमेयगत सो उपर लिखागया. तात्पर्य--श्रीमहाराज के उपदेश में जो संशय करेगा. उसको नाश होजायगा यह शाप है. भगवान् का वे सन्देह आत्माको शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप जानना योग्य है ॥ ४० ॥

योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय ॥ ४१ ॥

धनंजय १ योगसंन्यस्तकर्माणम् २ ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ३ आत्मवन्तम् ४ कर्माणि ५ न ६ निबध्नन्ति ७ ॥ ४१ ॥ अ० उ० इस अध्याय में जो अर्थ पीछे विस्तार पूर्वक निरूपण किया उसीको इस मंत्र में संक्षेप करके कहते हैं. समस्त अध्यायका तात्पर्य समझनेके लिये ❀ हे अर्जुन! १ ज्ञानयोगकरके संन्यास किये हैं कर्म जिसने २ और ❀ ब्रह्मज्ञान करके छेदन किये हैं संशय जिसने ३ ऐसे ❀ अप्रमत्त आत्मनिष्ठ को ४ कर्म ५ नहीं[1] ६ बन्धन करते हैं ७ ॥ ४१ ॥

तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ।
छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥ ४२ ॥

भारत १ तस्मात् २ अज्ञानसंभूतम् ३ हृत्स्थम् ४ आत्मनः ५ एनम्

---

१ जिस प्रकार शुक्तिका दृष्टि करिकै भ्रमज रजत प्रत्यय अन्तःकरण को नही करता ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

६ संशयम् ७ ज्ञानासिना ८ छित्त्वा ९ योगम् १० आतिष्ठ ११ उत्तिष्ठ १२ ॥ ४२ ॥ अ० उ० जब कि संशयात्मा को न इस लोक में सुख होता है न परलोक में❋हे अर्जुन ! १ तिस कारणसे २ अज्ञान करके उत्पन्न हुआ ३ अन्तःकरण में स्थित ४ जो यह संशय कि मैं युद्ध करूं वा न करूं और मैं सदा निर्विकार हूं. वा नहीं❋अपने ५ इस ६ संशय को ७ ब्रह्मज्ञानरूप तलवारसे ८ छेदन करके ९ कर्म योग का १० अनुष्ठानकर ११ खड़ा हो १२ युद्ध करनेके लिये तात्पर्य आत्मा को शुद्ध, सच्चिदानन्द, नित्य, निर्विकार, पूर्णब्रह्म समझकर युद्धकर इत्यभिप्रायः ॥ ४२॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेकर्मसंन्यासयोगोनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

॥ अथ पंचमोऽध्यायः ॥

अर्जुन उवाच—

संन्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥ १ ॥

कृष्ण १ कर्मणाम् २ संन्यासम् ३ पुनः ५ योगम् ५ च ६ शंससि ७ एतयोः ८ एकम् ९ यत् १० सुनिश्चितम् ११ श्रेय १२ तत् १३ मे १४ ब्रूहि १५ ॥ १ ॥ अ० उ० चतुर्थ अध्यायमें अर्जुन को समुच्चय प्रतीत हुआ. इस वास्ते प्रश्न करता है❋हे कृष्णचन्द्र ! १ कर्मोंका २ त्याग ३ सि० भी आप कहते हो और❋फिर ४ योग ५ भी ६ आप कहते हो ७ सि० इन दोनों का स्वरूप दिनरात्रिवत् विरुद्ध हैं. एक पुरुषसे एकसमय इन दोनों का अनुष्ठान कैसे होसक्ता है❋इन दोनों में ८ एक ९ जो १० भलेप्रकार निश्चय किया हुआ ११ श्रेष्ठहै १२ सो १३ मुझको १४ कहो १५ तात्पर्य--कर्मयोग और कर्मसंन्यास इन दोनों में मेरेवास्ते श्रेष्ठ क्या है ? यह मेरा तात्पर्य है. यह तो मैं तृतिय अध्याय में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समझगया हूं कि अधिकारी प्रति दोनों श्रेष्ठ हैं. मैं किस निष्ठा का अधिकारी हूं. इत्यभिप्रायः ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच—

संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते ॥ २ ॥

संन्यासः १ कर्मयोगः २ च ३ उभौ ४ निःश्रेयसकरौ ५ तयोः ६ तु७ कर्मसंन्यासात् ८ कर्मयोगः ९ विशिष्यते १० ॥ २ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् कहते हैं, कि पीछे जो हमने कर्मोंका अनुष्ठान करना और त्याग करना कहाहै. सो कुछ विरोध नहीं कहा! क्योंकि समसमुच्चय मैंने नहीं कहा अधिकारी प्रति क्रमसमुच्चय कहा है शोक मोह रहित ज्ञाननिष्ठावाले पुरुषोंको तो ज्ञाननिष्ठा परिपाक होने के वास्ते कर्मोंको त्याग करना श्रेष्ठहै और तमोगुणी रजोगुणी पुरुषों को ज्ञाननिष्ठा की प्राप्ति के लिये कर्मों का❀त्याग १ और योग २। ३ ये क्रमसे❀दोनों ४ मोक्ष को प्राप्त करनेवाले हैं ५ यथायोग्य अधिकारियों को और तू जो यह बूझता है कि इन दोनों मे से मेरे वास्ते क्या श्रेष्ठ है. सो सुन तुझको❀तिनके ६ बीच में तो ७ अर्थात् कर्मयोग और कर्मसंन्यास इन दोनों के बीच में❀कर्मसंन्यास से ८ कर्मयोग ९ विशेष है १० अर्थात् क्षत्रियों का धर्म जो युद्ध करना है. अभी उस का अनुष्ठान करनाही तुझको श्रेष्ठ है. कदाचित् इस मन्त्रका कोई यह अर्थकरै कि कर्मसंन्याससे कर्मयोग सबके वास्ते विशेष है तो इस अर्थ में वदतोव्याघात दोष आता है. क्योंकि पुनः पुनः वारंवार पीछे श्रीभगवान् ने कर्मसंन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा की प्रशंसा और आगे करेंगे. जिसकी प्रथम आप स्तुति करैं फिर उसकी आप निकृष्ट बतावें इसी को वदतोव्याघातदोष कहते हैं. अर्थात् अपने कहे हुये को आपही खण्डन करना यह बड़ा दोष है " श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परंतप। नहिज्ञानेनसदृशं पवित्रमिहविद्यते" इत्यादि वाक्य और भी बहुत हैं इस जगह तात्पर्य—श्रीभगवान् का यही है कि रजोगुणी, तमोगुणी पुरुषों के वास्ते कर्मोंका अनुष्ठान करनाही श्रेष्ठ हैं. तमोगुणी, रजोगुणी पुरुषोंको कर्मोंका अनुष्ठान अन्तःकरण की शुद्धी का हेतु है और सतोगुणी पुरुषों के लिये कर्मोंका त्याग करनाही श्रेष्ठहैं. क्योंकि उनको अब कर्मों का अनुष्ठान करना विक्षेपका हेतुहैं और ज्ञाननिष्ठाके परिपाक होनेमें प्रतिबन्ध है और दोनों का अनुष्ठान एककाल में एक पुरुषसे नहीं होसक्ता. कर्मनिष्ठा और कर्मनिष्ठा का स्वरूप दिनरात्रिवत् विरूद्ध है. प्रथम अन्तःकरण की शुद्धिके लिये तुझको कर्मयोग विशेष है. इत्यभिप्रायः ॥ २ ॥

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न कांक्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

यः १ न २ द्वेष्टि ३ न ४ कांक्षति ५ सः ६ नित्यसंन्यासी ७ ज्ञेयः ८ महाबाहो ९ निर्द्वन्द्वः १० हि ११ सुखम् १२ बन्धात् १३ प्रमुच्यते १४ ॥ ३ ॥ अ० उ० रागद्वेषरहित निष्काम जो कर्मोंका अनुष्ठान करता है. उसको संन्यासीवत् समझकर श्रीभगवान् अब कर्मयोग की स्तुति करते हैं. कर्मयोग के वास्ते सि० ❋ प्रतिकूल पदार्थोंमें ❋ जो १ नहीं २ द्वेष करता हैं ३ सि० अनुकूल पदार्थों की ❋ नहीं ४ इच्छा करता है ५ सो ६ कर्मयोगी ❋ नित्यसंन्यासीवत् ७ निष्काम कर्मयोग को जान तू ८ ❋ हे अर्जुन ! ९ द्वन्द्वरहित १० ही ११ सुखपूर्वक १२ बन्ध से १३ छूटता है १४ तात्पर्य रागद्वेषादि द्वन्द्वरहित होकर कर्मों का अनुष्ठान कर तू ॥ ३ ॥

सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम् ॥ ४ ॥

सांख्ययोगौ १ पृथक् २ बालाः ३ प्रवदन्ति ४ पण्डिताः ५ न ६ सम्यक् ७ एकम् ८ अपि ९ आस्थितः १० उभयोः ११ फलम् १२ वि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न्दते १३ ॥ ४ ॥ अ० उ० अवस्थाभेद करके कर्मयोग और ज्ञानयोग इन दोनों का क्रमसमुच्चय है. अर्थात् प्रथम निष्काम कर्मों का अनुष्ठान करना. अन्तःकरण शुद्ध हुये पीछे कर्मों को त्याग देना यही सिद्धान्त है. सब शास्त्र और महात्मापुरुषों का और जो यह प्रश्न करताहै. कि इन दोनोंमें से एक स्वतन्त्र मुक्ति का देनेवाला बताओ यह प्रश्न कम समझकाहै कर्मयोग और ज्ञानयोग इन दोनोंका तात्पर्य—एक परमानन्दमें ही है इस हेतु से इन दोनों को फल में पृथक् समझना चाहिये. सोई कहते हैं ❀ज्ञानयोग और कर्मयोग को १ पृथक् २ एक स्वतन्त्र निरपेक्ष मोक्षका देनेवाला ❀कम समझ ३ कहते हैं ४ पूर्वापर शास्त्रका तात्पर्य—समझेहुये ❀विद्वान् ५ नहीं ६ पृथक् स्वतन्त्र कहते हैं क्योंकि ❀भले प्रकार ७ एकको ८ भी ९ आश्रय कियाहुआ १० अर्थात् साङ्गोपाङ्ग एक का भी अनुष्ठान किया हुआ ❀दोनों के ११ फलको १२ प्राप्त करता है १३ अर्थात् दोनों का फल परमानन्द है. सोई दोनों को प्राप्त होजाता हैं. तात्पर्य—जो कर्मों का अनुष्ठान निष्काम करेगा. उसका अवश्यही अन्तःकरण शुद्ध होकर ज्ञान प्राप्तहोगा. पीछे उसके मोक्षपरमानन्द की प्राप्ति यही दोनों का फलहै और ज्ञानका अनुष्ठान भलेप्रकार करेगा. बे संदेह पहले उसने इस जन्म में वा जन्मान्तर में कर्मयोग करके अन्तःकरण शुद्ध कर लिया है. उसको भी मोक्ष परमानन्द की प्राप्ति होगी. यही दोनों का फल है. एक ज्ञानयोग साक्षात् सच्चिदानन्द को प्राप्त करता है और एक कर्मयोग अन्तःकरण शुद्धकर ज्ञानद्वारा सच्चिदानन्द को प्राप्त करता है. इसप्रकार ये दोनों फल में एकहैं स्वरूप इनका एक नहीं ॥ ४ ॥

यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥५॥

सांख्यैः १ यत् २ स्थानम् ३ प्राप्यते ४ तद् ५ अपि ६ योगैः ७ ग-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

म्यते ८ सांख्यम् ९ च १० योगम् ११ च १२ एकम् १३ यः १४ पश्यति १५ सः १६ पश्यति १७ ॥ ५ ॥ अ० उ० पिछले मन्त्रमें जो कहा उसीको फिर भलेप्रकार स्पष्ट करते हैं❋ज्ञानी १ जिस स्थान को २। ३ साक्षात् व्यवधान रहित❋प्राप्तहोते हैं ४ तिसको ५ ही ६ कर्मयोगी ७ ज्ञानद्वारा❋प्राप्त होते हैं ८ ज्ञानयोग को ९ भी १० और कर्मयोग को भी ११। १२ फलमें❋एक १३ जो १४ देखता है १५ सो १६ देखता है १७ शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको तात्पर्य—जो यह समझता है कि दीनका फल एक अद्वैत (शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा) है सो महात्मा यथार्थ आत्मा परमात्मा को जानता है जैसे दो पुरुष जगन्नाथ जी को जाते हैं एक काशीजी में है और एक प्रयागराज में हैं. कहनेवाले दोनों को यही कहते हैं कि ये दोनों जगन्नाथजी को जाते हैं पहुँचेंगे और जाननेवाला भी सब ठिकाने दिन प्रतिदिन यही कहता है कि मैं जगन्नाथजी को जाताहूं. एक मंजिलवाला भी यही कहता है और बीस मंजिलवाला भी कहता है और बात यथार्थ है कि दोनों एक जगह पहुँचेंगे परन्तु भेदभी है जो सब मंजिल करचुका है एकही मंजिल जिसको रही है. वह उसी दिन साक्षात् व्यवधानरहित जगन्नाथ जी में पहुँचेगा इस प्रकार तो ज्ञानी गतिहै और जिसको दो मंजिल रही है वह प्रथम बीच की मंजिल पर पहुँचकर फिर जगन्नाथजी में पहुँचेगा इस प्रकार कर्मयोगी की गति है. शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म आत्माको दोनों प्राप्त होंगे यही दोनोंका स्थान परमपद है. विना ब्रह्मज्ञान के कर्मयोगी स्वतन्त्र मोक्ष नहीं होसक्ता और जो कहदेते हैं या तो उसको पूर्वापर अर्थ की समझ नहीं वा हठकरके वा रुचि बढ़ने के लिये कहतेहैं अर्थ सच्चा वही है जिसमें पूर्वापर से विरोध न आवे नहीं तो एक श्लोकका अर्थ तो बालकभी कह सक्ता है ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः ।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म न चिरेणाऽधिगच्छति ॥ ६ ॥

महाबाहो १ संन्यासः २ तु ३ अयोगतः ४ दुःखम् ५ आप्तुम् ६ योगयुक्तः ७ मुनि ८ ब्रह्म ९ न १० चिरेण ११ अधिगच्छति १२ ॥ ६ ॥ अ० उ० कर्मयोग तो ज्ञानद्वारा परमान्द मुक्तपद को प्राप्त करता है और कर्मों का संन्यास ज्ञान साक्षात् मुक्तपद देताहै. तो कर्मयोग क्यों करना चाहिये. संन्यास होकर अर्थात् ज्ञानकाही अनुष्ठान करना यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं❋हे अर्जुन ! १ विना रागद्वेषादि दूर हुये प्रथमही कर्मोंका❋संन्यास २ तो ३ अर्थात् प्रथम विना कर्मयोग का अनुष्ठान किये ४ दुःखपूर्वक ५ प्राप्त होनेको ६ शक्य है अर्थात् विना कर्मयोग किये ज्ञान प्राप्त होना कठिन है❋कर्मों के अनुष्ठान करने में बहुत देर लगती है. ब्रह्मकी प्राप्ति बहुतकालमें होगी. यह शङ्काकरके कहते हैं❋ योगयुक्त ७ मुमुक्षु ८ ब्रह्मको ९ नहीं १० देर करके ११ प्राप्त होगा १२ तात्पर्य—कर्मयोगी मुमुक्षुसंन्यासी ज्ञाननिष्ठ होकर ब्रह्मको शीघ्रही प्राप्त होगा. अथवा इसजगह ब्रह्म संन्यासका नामहै. योगयुक्त मुनी संन्यासको शीघ्र सुखपूर्वक प्राप्त होगा ॥ ६ ॥

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः ।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥ ७ ॥

योगयुक्तः १ विशुद्धात्मा २ विजितात्मा ३ जितेन्द्रियः ४ सर्वभूतात्मभूतात्मा ५ कुर्वन् ६ अपि ७ न ८ लिप्यते ९ ॥ ७ ॥ अ० उ० कर्मयोगी बन्धनको प्राप्त होताहै. यह शङ्काकरके कहते हैं कि योही अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानी होजाता है. इस हेतुसे बन्धनको नहीं प्राप्त होता ❋योगयुक्त १ विशेष करके शुद्धहै शरीर जिसका २ विशेष करके जीता है शरीर जिसने ३ जीती है इन्द्रिय जिसने ४ सब भूतोंका आत्मभूतहै

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मा जिसका ५ अर्थात् ब्रह्माजीसे लेकर चींटीपर्यन्त सब भूतों का आत्मा उसीका आत्माहै सो लोकरक्षा के लिये अथवा स्वभावसेही कर्म❋ करता हुआ ६ भी ७ नहीं ८ बन्धन को प्राप्त होता ९ ॥ ७ ॥

नैवकिञ्चित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित् ।
पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन्८॥
प्रलपन् विसृजन् गृहणन्नुन्मिषान्निमिषन्नपि ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्त्तन्त इति धारयन् ॥ ९ ॥

किञ्चित् १ एव २ न ३ करोमि ४ इति ५ युक्तः ६ तत्त्ववित् ७ मन्येत ८ इन्द्रियाणि ९ इन्द्रियार्थेषु १० वर्तन्ते ११ इति १२ धारयन् १३ पश्यन् १४ शृण्वन् १५ स्पृशन् १६ जिघ्रन् १७ अश्नन् १८ गच्छन् १९ स्वपन् २० श्वसन् २१ प्रलपन् २२ विसृजन् २३ गृहन् २४ उन्मिषन् २५ निमिषन् २६ अपि २७ ॥ ८ । ९ ॥ अ० उ० जिस समझसे कर्मोंके साथ बन्धन नहीं होता. सो कहते हैं. दो श्लोकोंका अन्वय एकहै ❋कुछ १ भी २ नहीं ३ करताहूं मैं ४ यह ५ समाहित याने सावधान ६ ज्ञानी ७ मानताहै ८ इन्द्रिय ९ इन्द्रियों के आर्थों में १० बर्तते हैं ११ अर्थात् शब्दादि विशयोंका धर्महैं. आत्मा असंग निर्विकार शुद्धहै और अशुद्ध है❋यह १२ धारण करत हुआ १३ अर्थात् पूर्वोक्त निश्चय करके❋कौनसे वे कर्म हैं कि जिनको करता हुआ यह मानताहै कि मैं असंगहूं सो कहते हैं❋देखता हुआ १४ सुनता हुआ १५ स्पर्श करता हुआ १६ सूंघता हुआ १७ खाताहुआ १८ चलता हुआ १९ सोता हुआ २० श्वासलेता हुआ २१ बोलता हुआ २२ त्यागता हुआ २३ ग्रहण करता हुआ २४ नेत्रों को खोलता हुआ २५ मीचता हुआ २६ अपि शब्द करके अनुक्तोको भी जानलेना २७ तात्पर्य—जाग्रत्-स्वप्न, सुषुप्ति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अवस्थामें जितनी क्रिया होती हैं इस संघातके विषय सब अनात्म धर्म है. किसप्रकार इस अपेक्षा में कहते हैं. सुनो दर्शनादि इन्द्रियोंका धर्म है, आत्माका नहीं चलना पैंरोंका धर्महै. सोना बुद्धिका श्वास लेना, प्राण का बोलना वाणी का त्यागना, गुदा उपस्थ का ग्रहण करना. हाथोंका खोलना मीचना नेत्रोंका कूर्म प्राण का धर्महै. आत्मा सदा अकर्ता है ज्ञानी यही समझते हैं इसी समझ से निर्बन्ध होजाते हैं ॥ ८ । ९ ॥

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संग त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥ १० ॥

यः १ कर्माणि २ ब्रह्मणि ३ आधाय ४ संगम् ५ त्यक्त्वा ६ करोति ७ स ८ पापेन ९ न १० लिप्यते ११ पद्मपत्रम् १२ इव १३ अम्भसा १४ ॥ १० ॥ अ० उ० जिसके यह अभिमान है कि मैं कर्त्ताहूं अर्थात् जो आत्मा को अकर्त्ता नहीं जानता. ब्रह्मज्ञान रहित है. उस को तो कर्म-बन्धन करेगा. और मैंला अन्तःकरण होनेसे उसका कर्मोंके संन्यास में ज्ञाननिष्ठामें अधिकार नहीं वह तो बड़े सङ्कट में फँसा यह शंका करके श्रीभगवान् उसके वास्ते यह कहते हैं❀जो १ कर्मोंको २ परमेश्वर में ३ अर्पण करके ४ और कर्मों के फल में❀संग असक्ति को ५ त्याग करके ६ करताहै ७ सो ८ पाप के साथ ९ नहीं १० स्पर्श करताहै ११ अर्थात् पाप पुण्य दोनों उस को छूते भी नहीं ११❀कमल का पत्र १२ जैसे १३ जलके साथ १४ सि० नहीं स्पर्श करता ॥ १० ॥

कायेन मनसा बुद्धया केवलैरिन्द्रियैरपि ।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति संगंत्यक्त्वात्मशुद्धये ॥ ११ ॥

कायेन १ मनसा २ बुद्धया ३ इन्द्रियैः ४ केवलैः ५ अपि ६ योगिनः ७ कर्म ८ कुर्वन्ति ९ संगम् १० त्यक्त्या ११ आत्मशुद्धये १२ ॥ ११ ॥ उ० अ० अन्तः करणकी शुद्धिके लिये जो कर्म करते हैं वे बन्धनको नहीं प्राप्त होते. यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विचारकर❀शरीर करके १ मन कर २ बुद्धि करके ३ इन्द्रियों करके ४ ममता वर्जित करके ५ अर्थात् केवल ब्रह्मार्पण करताहूं मैं यह समझ करके ५ ही ६ योगी ७ कर्म को ८ करते हैं ९ सि० कर्मोंके फलमें❀ आसक्ति को १० त्याग करके ११ अन्तःकरण शुद्धिके लिये १२ टी० स्नानादि १ ध्यानादि २ तत्त्व का निश्चय करना इत्यादि ३ श्रवणादि ४ ये कर्म केवल अन्तःकरण की शुद्धि और चित्तकी एकाग्रताके लिये करते हैं. सिवाय इसके और कुछ फल चाहना बन्ध का हेतु है. तात्पर्य–इन कर्मोंमें अभिनिवेश रहित होकर कर्म करते हैं. इस पांचवें पद का यह तात्पर्यार्थ है ॥ ११ ॥

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥ १२ ॥

युक्तः १ कर्मफलम् २ त्यक्त्वा ३ नैष्ठिकीम् ४ शान्तिम् ५ आप्नोति ६ अयुक्तः ७ कामकारेण ८ फले ९ सक्तः १० निबध्यते ११ ॥ १२ ॥ अ० उ० कर्म एक है कोई तो उसको करके मुक्त होताहै कोई. उसको करके बन्ध होताहै यह कैसी व्यवस्था है. ऐसी शंका करके श्रीभगवान् यह कहते हैं❀समाहित समाधान भगवत्भक्त १ कर्मों के फलको २ त्याग करके ३ मोक्षरूप शान्तिको ४ । ५ ज्ञानद्वास❀प्राप्त होताहै ६ बहिर्मुख विषयी कामी ७ कामकी प्रेरणा करके ८ फल में ९ आसक्त १० सदा बन्धन को प्राप्त रहताहै ११ तात्पर्य–निष्काम कर्म ज्ञानद्वारा मोक्ष करदेता है. उसी कर्म में जो इस लोक वा परलोक के पदार्थों की चाहना होजाती है. सो कर्म बन्धनको प्राप्त कर देताहै ॥ १२ ॥

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् ॥ १३ ॥

वशी १ देही २ सर्वकर्माणि ३ मनसा ४ संन्यस्य ५ सुखम् ६ नव-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वारे ७ पुरे ८ आस्ते ९ न १० एव ११ कुर्वन् १२ न १३ कारयन् १४ ॥ १३ ॥ अ० उ० जिसका अन्तःकरण शुद्ध नहीं उसको कर्मसंन्यास से कर्मयोग विशेष है. यह विस्तारपूर्वक निरूपण किया. अब यह कहतेहैं कि जिसका अन्तःकरण शुद्धहै उस को कर्मसंन्यास श्रेष्ठहै ❋ शुद्धान्तःकरण-वाला १ देहका स्वामी जीव शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप अर्थात् ज्ञानी २ सबकर्मों को ३ मन से ४ त्यागकर ५ सुखपूर्वक ६ नवद्वारपुरमें ७ । ८ अर्थात् नव दरवाजे हैं. जिसमें ऐसे पुरदेह में ❋ बैठा है ९ किसप्रकार है. क्या करे है सो कहते हैं ❋ न १० तो ११ कुछ ❋ करता हुआ १२ न १३ कराताहुआ १४ बैठा है अर्थात् ज्ञानी इस देहमें न कुछ करता है न कुछ कराता है तात्पर्य—न कर्त्ता है न प्रेरक है अपने स्वरूप में जीवते हुयेही मग्न है न आपको कर्त्ता मानता और न शरीरादि के ममता करता है. यही उसका न करना न कराना है. टी० दो कान में दो नाक में दो नेत्रों में और एक मुखमें ये सातद्वार तो शिर में हैं और दो नीचे हैं इस प्रकार नवद्वार हैं ॥ १३ ॥

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्यसृजतिप्रभुः ।
न कर्म फलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्त्तते ॥ १४ ॥

---

१ जिसप्रकार जगतमें चराचर वस्तुके प्रकाशक सूर्य है उसीप्रकार बुद्ध्यादि संपूर्ण दृश्यजात आत्मा के प्रकाशसे प्रकाशित है स्वयं प्रकाश चिदेकरस नित्य शुद्ध बुद्धासंगोदासीन सर्वसाक्षी मुक्त स्वभाव आनन्द घन इनगुणोंसेयुक्त आत्माको जानकर देहातिरिक्तात्मदर्शी विद्वान् ग्रहमें स्थित देवदत्तादि की समान देहमें सुख पूर्वक स्थितहानेको समर्थ है ॥

२ निरवयवाकाशगत गमनादि क्रियाके अभावकी समान नर वयव अखंडपरिपूर्ण आत्मामें करना और कराना इनक्रियाओंका अभावही है । जैसे कि सूर्य उदय होनेसे अंधकारके नाशमें सूर्यको उपचार मात्र से कारणताहै. जैसे कि चुम्बककी सामीप्यता से लोहका संचार होनेमें चुम्बक लोहाको चलाताहै. इसप्रकार उपचार मात्रसे कारणताहै वास्तवमें नहीं है तिसीप्रकार आत्मसांनिध्यसे विजृम्भमाण प्रकृति होते संते प्रकृति विजृम्भण परमात्मा में उपचार मात्रसे कल्पित है वास्तवमें नहीं है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुः १ लोकस्य २ कर्तृत्वम् ३ न ४ सृजति ५ न ६ कर्माणि ७ न ८ कर्मफलसंयोगम् ९ स्वभावः १० तु ११ प्रवर्त्तते १२ ॥ १४ ॥ अ० उ० त्वम् पदार्थ जीवको तो निर्विकार निरूपण किया अब तत्पदार्थ ईश्वर को भी निर्विकार निरूपण करते हैं. अर्थात् परमार्थ में ये दोनों निर्विकार हैं. क्योंकि नाममात्रही हैं वास्तव दोनों एक हैं दो श्लोको में कहते हैं❋ ईश्वर शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप निर्विकर १ जीवके २ कर्तृत्व को ३ वास्तव ❋नहीं ४ रचता है ५ और न ६ कर्मों को ७ और❋न कर्मोंके फल ८ संयोग को ९ रचताहै. यह जो कुछ देखा सुनाजाना है सब❋अविद्या १० ही ११ प्रवृत्त होरही है १२ अर्थात् क्रिया कारक फलादि सब अविद्या करके कल्पितहै न किसीने ये रचे हैं और न वास्तव है यह सब जीवके अज्ञान अध्यारोपमें विस्तार होरहाहै. वास्तव जीव भी शुद्ध है जगत् का कर्त्ता जो ईश्वर को कहते हैं सो अध्यारोप में करते हैं. वास्तव ईश्वर निर्विकार है जगत् है नहीं इत्यभिप्रायः ॥ १४ ॥

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतंविभुः ।
अज्ञाने नावृतं ज्ञानं तेनमुह्यन्ति जन्तवः ॥ १५ ॥

विभुः १ कस्यचित् २ पापम् ३ एव ४ न ५ आदत्ते ६ न ७ च ८ सुकृतम् ९ अज्ञानेन १० ज्ञानम् ११ अवृतम् १२ तेन १३ जन्तवः १४ मुह्यन्ति १५ ॥ १५ ॥ अ० उ० ईश्वर १ किसी के २ पापको ३ भी ४ नहीं ५ ग्रहणकरते ६ और न ७ । ८ पुण्यको ९ अनादि अनिर्वाच्य मूलाज्ञान करके १० जीवका❋ज्ञान ११ ढक गयाहै १२ तिस करके १३ अर्थात् तिस ज्ञानकरके १३ जीव १४ भ्रान्तिको प्राप्त होरहीहै

---

१ मेघागमनसे आच्छादित रविबिम्बवत् अज्ञानवृत ज्ञानसे अहम् ममादि अभिमानसे अथवा अमुक कर्मसे ईश्वर प्रसन्न होकर हमारे अभीष्ट सिद्धि करैंगा इसप्रकार भ्रान्तिको प्राप्त होकर नाना योनियोंमें भ्रमते हैं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् ईश्वर को भी कर्त्ता विकारवान् माननेको भी ॥ १५ ॥

ज्ञानेन तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः ।
तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् ॥ १६ ॥

ज्ञानेन १ तु २ तत् ३ अज्ञानम् ४ येषाम् ५ नाशितम् ६ तेषाम् ७ आत्मानः ८ तत्परम् ९ ज्ञानम् १० आदित्यवत् ११ प्रकाशयति १२ ॥ १६ ॥ अ० उ० ज्ञानीको भ्रान्ति नहीं होती यह कहते हैं ❀ और ब्रह्मज्ञान करके १ । २ सो ३ अज्ञान ४ पूर्व मन्त्रोक्त ❀ जिनका ५ नाश होगया है ६ तिनको ७ आत्माका ८ परमार्थतत्त्व ९ ज्ञान १० सूर्यवत् ११ प्रकाश करके परमार्थ तत्त्वरूप आत्मा को प्रकाशकर हेताहै १२ तात्पर्य–जैसे सूर्य अन्धकारको नाश करके पदार्थोंको प्रकाशकरदेता है ॥ १६ ॥

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥ १७ ॥

तद्बुद्धयः १ तदात्मानः २ तन्निष्ठाः ३ तत्परायणाः ४ ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ५ अपुनरावृत्तिम् ६ गच्छन्ति ७ ॥ १७ ॥ अ० उ० जिन पुरुषों को आत्मतत्त्व का ज्ञान होता है. उनका लक्षण कहतेहैं और ज्ञानका फल निरूपण करतेहैं. तिसमें ही है बुद्धि जिनकी १ अर्थात् सिवाय आत्माके और किसी पदार्थ में नहीं जाती है बुद्धि जिनकी आत्मा से सिवाय और किसी पदार्थको सत्यात्रिकालाबाध्य निश्चय नहीं करते और ❀ तिसमेंही है मन जिनका २ अर्थात् सिवाय आत्माके और किसी पदार्थ में उनका मन नहीं जाता और है तिसमेंही निष्ठा जिनकी ३ अर्थात् सिवाय आत्माके दूसरी जगह निष्ठा नहीं करते हैं सदा आत्माही में तत्पर रहते हैं और ❀ सोई आत्मा परमआश्रय है जिनका ६ सि० ऐसे महात्मा ❀ ज्ञान करके नाश करादिये हैं पाप जिन्होंने ५ वे ❀ मुक्तिको ६ प्राप्त होते हैं ७ ॥ १७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हास्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥१८॥

विद्याविनयसंपन्ने १ ब्राह्मणे २ स्वपाके ३ च ४ गवि ५ हस्तिनि ६ शुनि ७ च ८ एव ९ समदर्शिनः १० पण्डिताः ११ ॥ १८ ॥ अ० उ० पण्डित नाम भी ज्ञानियोंका ही है अर्थात् पण्डित ज्ञानीको कहते हैं इस मन्त्र में पण्डित शब्द के अर्थका लक्षण कहते हैं❋विद्या नम्रता करके संयुक्त ब्राह्मणमें १। २ और चाण्डाल में ३। ४ गौ में ५ हाथी में ६ और कूकर में ७। ८ भी ९ आत्मा को सम देखने का स्वभाव है. जिनका १० वे❋पण्डित ११ हैं मूर्खों के कहने से और पण्डित नाम रखवालेनेसे पण्डित नहीं होसक्ता टी० ब्राह्मण और चाण्डालमें तो कर्मकी विषमताहै और गौ, हाथी, कूकरमें जातिकी विषमताहै तात्पर्य—सबमें आत्माको सम देखतेहैं. इस वास्ते उनकोभी समदर्शी कहाजाता है. व्यवहारमें ब्राह्मण और चाण्डालादिको एक देखना समझना भ्रष्ट मूर्खोंका काम है ॥ १८ ॥

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्येस्थितं मनः।
निर्दोषंहि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणिते स्थिताः॥१९

येषाम् १ मनः २ साम्ये ३ स्थितम् ४ तैः ५ इह ६ एव ७ सर्गः ८ जितः ९ ब्रह्म १० निर्दोषम् ११ समम् १२ तस्मात् १३ हि १४ ब्रह्मणि १५ ते १६ स्थिताः १७ ॥ १९ ॥ अ० उ० समदर्शियोंका माहात्म्य कहतेहैं जिनका १ मन २ समता के बिषे ३ स्थित है ४ अर्थात् सब भूतों में जिनकी ब्रह्मभावना है❋तिन्हों ने ५ जीवते हुये ६ ही ७ संसार ८ जीता है ९ क्योंकि❋ब्रह्म १० निर्दोष ११ और❋सम १२ है❋तिस कारण से १३ ही १४ ब्रह्म में १५ वे १६ पण्डित पूर्वमन्त्रोक्त❋स्थितहैं १७ अर्थात् ब्रह्मभाव को प्राप्त हैं तात्पर्य—संसार दोषों के सहित विषम-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूप है और ब्रह्मसम निर्दोष है ब्रह्मभावको प्राप्तहोकरही संसार जय होसक्ता है जीताजाता है नाश होसक्ता है. अथवा इसप्रकार अन्वय करदेना कि जिस कारण से ब्रह्मसम निर्दोष है. तिस कारणसेही वे ब्रह्म में स्थितहैं और जब कि ब्रह्म में उनकी स्थितिहुई तिस कारणसेही उन्होंने संसारको जीता सिवाय शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा के सब पदार्थ सदोष हैं यह समझकर निर्दोष ब्रह्म में स्थित होकर संसार जी जाता है॥१९॥

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणिस्थितः॥ २०॥
बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनियत्सुखम्।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते॥ २१॥

ब्रह्मणि १ स्थितः २ स्थिरबुद्धिः ३ असंमूढः ४ ब्रह्मवित् ५ प्रियं ६ प्राप्य ७ न ८ प्रहृष्येत् ९ च १० अप्रियम् ११ प्राप्य १२ न १३ उद्विजेत् १४ ॥ २० ॥ ब्रह्ममें १ स्थित २ स्थिर बुद्धिवाला ३ असंमूढ़ ४ ब्रह्मवेत्ता ५ प्रियपदार्थको ६ पाकर ७ न ८ हर्षितहो ९ और १० अप्रिय पदार्थको ११ पाकर १२ न १३ ऊबे १४ ॥ २० ॥ बाह्यस्पर्शेषु १ असक्तात्मा २ ब्रह्मयोगयुक्तात्मा ३ सः ४ आत्मनि ५ यत् ६ सुखम् ७ विन्दति ८ अक्षयम् ९ सुखम् १० अश्नुते ११ ॥ २१ ॥ अ० उ० जिस हेतुसे शब्दादि पदार्थों में रागद्वेष नहीं है ज्ञानीका वह हेतु कहते हैं❀ शब्दादि इंद्रियों के अर्थों में १ नहीं असक्त अन्तःकरण जिसका २ और ❀ब्रह्म में समाधि करके युक्त है अन्तःकरण जिसका ३ सो ४ अन्तःकरण में ५ जो ६ सतोगुणी उपशमात्मक❀सुख तिसको ७ प्रथम प्राप्तहोताहै ८ फिर❀अक्षय सुखको ९। १० प्राप्तहोताहै ११ टी० बाहर

---

१ भवितव्य सुखदुःखादिहोते हैं. इसप्रकारकी दृढ़वृद्धिद्वारा प्रारब्धार्पण शरीरको समझकर तद्विषयो भूतस्वयं न होकर ब्रह्माकारको प्राप्त होकर स्थित होवै॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिनका स्पर्श होता है इन्द्रियों की वृत्तिकरके वे शब्दादि पञ्चइन्द्रियों के अर्थ हैं तिनमें जिनका मन आसक्त नहीं उसमें यह हेतुहै कि उन्होंने अत्मामें अन्तःकरण को समाधान करके जीव को ब्रह्मरूप समझ-लिया है. और आत्मा पूर्णानन्द नित्य एकरस है, इसवास्ते उनको अक्षय सुख प्राप्त होताहै. अर्थात् वे सच्चिदानन्द स्वरूप एकरसहै. पूर्णानन्द के सामने विषयानन्द तुच्छ है, प्रथम तो सतोगुणी सुखके सामने विषयानन्द तुच्छ है, फिर परमानन्द के सामने तुच्छहो तो इसमें क्या कहना है अथवा इस श्लोक का अन्यय ऐसे करना कि शब्दादि विषयों में नहीं है आसक्त अन्तःकरण जिस का सो महात्मा सात्त्विक सुखको प्राप्तको प्राप्त होता है, फिर समाधि करके ब्रह्मात्मा में अन्तःकरण लगायाहै. जिसने सो महात्मा पुरुष अक्षय सुखको प्राप्तहेजाता है ॥ २१ ॥

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ॥ २२ ॥

संस्पर्शजाः १ ये २ भोगाः ३ ते ४ एव ५ हि ६ दुःखयोनयः ७ कौन्तेय ८ अद्यन्तवन्तः ९ तेषु १० बुधः ११ न १२ रमते १३ ॥ २२ ॥ अ० उ० शब्दादि विषयों में इन्द्रादि देवता अनन्द मानते हैं और बडे बड़े समझवाले चतुरलोग वैकुण्ठलोकादि परलोक पदार्थों की प्राप्ति के लिये नानाप्रकार के प्रयत्न करते हैं वहां जाकर नानाप्रकार के शब्दादि विषयों को भोगते हैं, पुराणादि में भी उनका माहात्म्य सुनाजाता हैं ऐसे प्रत्यक्ष सुंदर शब्दादि विषयों को छोड़ जो ब्रह्मत्मा में परमानन्द मानते हैं वे तो कुछ कमसमझ प्रतीत होते हैं यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं❋ शब्दादि विषयों से उत्पन्न होते हैं १ जो २ भोग ३ अर्थात् विषयजन्य जो सुख आनन्द❋ वे ४ निश्चय ५ ही ६ दुःखके कारण हैं ७ अर्थात् बे सन्देह समझना कि शब्दादि पदार्थों में जो सुख है वह दुःखों का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मूल है. जो कोई मूर्ख यह समझे कि आपकी समझ में विषयानन्द दुखों का मूलहै हमारी समझमें श्रेष्ठहै यह शंका करके प्रत्यक्ष और भी दोष दिखाते हैं❀हे अर्जुन ! ८ फिर कैसे हैं ये भोग❀आदि अन्तवालेहैं अर्थात् आगमापायी आने जानेवाले हैं. सदा नहीं बने रहते ९ तिनके विषय १० विद्वान् ११ नहीं १२ रहता है १३ अर्थात् जो स्त्रीआदि पदार्थों में रमे हैं शब्दादि विषयों को प्रिय समझकर भोगते हैं और उनकी प्राप्तिके लिये लौकिक वैदिक कर्म करते हैं वे बडी समझवाले चतुर नहीं उनको महामूर्ख समझना❀उक्तंच " रमन्तिमूर्खा विरमन्तिपण्डिताः " हि यह शब्द कहने से तात्पर्य श्रीमहाराजका यहहै कि विषय इसलोक परलोक के सब सम हैं उनके में और नाश होनेमें जो २ दुःखहै वे तो प्रसिद्ध है परन्तु भोगकालमें भी वे दुःखही के हेतु हैं चोर राजादि का सदा भय बना रहता हैं तात्पर्य—जो विषयों में कुछ एक सुख भी प्रतीत हाताहै तो सहस्रो प्रकारका उनमें दुःख है और वह सुखभी अनित्य है श्रेष्ठ आत्यानन्दही है आत्मानन्द के भोगनेवाले आत्मानन्द के प्रयत्न करनवालेही चतुर बुद्धिमान् सब से श्रेष्ठ हैं. इत्यभिप्रायः ॥ २२ ॥

शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्छरीरविमोक्षणात् ।
कामक्रोधोद्भवंवेगं स युक्तः स सुखी नरः ॥ २३ ॥

यः १ कामक्रोधोद्भवम् २ वेगम् ३ प्राक्छरीरविमोक्षणात् ४ इह ५ एव ६ सोढुं ७ शक्नोति ८ सः ९ युक्तः १० स ११ सुखी १२ नरः १३ ॥ २३ ॥ अ० उ० परम पुरुषार्थ मोक्षहैं. उसके काम क्रोध दो वैरीहैं जो इनको सहेगा, त्यागेगा, वह मोक्षका भागी होगा यह कहते हैं जो १ महापुरुष काम और क्रोध से प्रकट होताहै जो वेग उसको २ । ३ पहले शरीर के छूटनें से ४ जीवते ५ ही ६ सहनेको ७ समर्थ है ८ सोई ९ सुखी १० सोई ११ योगी १२ महापुरुष १३ है तात्पर्य—कामना सब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पदार्थों की शुभ या अशुभ इसलोक के पदार्थों की अनर्थका हेतु हैं और स्त्रीकी कामना तो मोक्ष में बड़ाही प्रतिबन्धन हैं जिस समय देखने सुनने स्मरण करने से बनमें विचार प्रतीतहो मनमें आवे उसके आने से मनमें विकार प्रतीतहो उसीसमय दोषोंका स्मरण करे जिस गुणका स्मरण करनेसे कामना होतीहै उसका कभी चिन्तन न करे. जितने उस पदार्थमें अवगुण हैं उन सको स्मरणकरे मनोराज्य का अंकुर जमने न दे. दूसरे अध्याय के मन्त्रोंका विचारकरे नारायणको यादकरै जैसे बने वह समय टलावे और उत्तम उपाय यहहै कि उससमय विरक्त साधुके पास जा बैठे बे सन्देह उसीसमय चित्त शान्त होजायगा और यह प्रयत्न सुषुप्ति मरणपर्यन्त चाहिये कामनाही से क्रोध होताहै ऐसेही क्रोध लोभादिका जब उद्वेगहो उसीसमय समझकर निरोध करे इसीप्रकार सहज सहज सहते फिर आपही स्वभाव ऐसा पड़जायगा प्रथम तो कामादिका उदयही न होगा जो कुसङ्ग से उदयभी होवेंगे तो तनक विचार करने से दूर होजावेंगे॥२३॥

योऽन्तः सुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव यः।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणम्ब्रम्हभूतोऽधिगच्छति॥२४॥

अन्तःसुखः १ यः २ अन्तरारामः ३ तथा ४ एव ५ अन्तर्ज्योतिः ६ यः ७ सः ८ योगी ९ ब्रह्मनिर्वाणम् १० ब्रह्मभूतः ११ अधिगच्छति १२ ॥ २४ ॥ अ० उ० कामनादि के त्यागने से अन्तस्सुख की प्राप्ति होती है. कैसाहै वह सुख कि स्वतन्त्र नित्य पूर्ण अखण्डहै उसमें विहार करता हुआ पूर्णब्रह्म परमानन्द स्वरूप आत्माको सदाके वास्ते प्राप्त होजाता है. सोई कहते हैं❀अन्तःकरण में है सुख जिसको अर्थात् आत्माहीमें जिसको सुखहै इसी हेतुसे विषयोंमें सुख नहीं मानता जो २ महात्मा और आत्माही में है विहार जिसका ३ इसी हेतुसे बाहर के पदार्थों में नहीं विहार करता और अन्तर सुख मानताहै अन्तरही विहार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करताहै ❋ तैसे ४ ही ५ भीतर दृष्टि जिसको ६ इसी हेतुसे गीत नृत्यादि में दृष्टि नहीं करता ❋ जो ७ महापुरुष योगी ❋ सो ८ योगी ९ ब्रह्मस्वरूप हुआ १० ब्रह्मको अर्थात् निर्वाण ब्रह्म मोक्षको ११ प्राप्त होताहै १२ फिर उसका जन्म मरण नहीं होता पूर्ण परमानन्द स्वरूप आत्माको प्राप्त होताहै ॥ २४ ॥

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षिणकल्मषाः।
छिन्नद्वैधायतात्मानः सर्वभूतहिते रताः ॥ २५ ॥

ऋषयः १ क्षीणकल्मषाः २ छिन्नद्वैधाः ३ यतात्मानः ४ सर्वभूताहितेरताः ५ ब्रह्म निर्वाणम् ६ लभन्ते ७ ॥ २५ अ० उ० जो ब्रह्मको प्राप्त होते हैं. उनका लक्षण कहते है ❋ ज्ञाननिष्ठावाला साधु महात्मा १ नाश होगये हैं पाप जिनके २ और छिन्नछिन्न दो दो टूक होगये है संशय जिनके ३ अर्थात् किसी प्रकार का संशय जिनको नहीं ❋ है जीता हुआ है अन्तःकरण जिनका ४ सब भूतोंके हितमें प्रीति जिनकी ५ ऐसे कृपालु महात्मा ❋ ब्रह्मनिर्वाण को ६ प्राप्तहोंगे ७ पहले बहुत होगये वर्तमानकाल में बहुत जीवन्मुक्त विद्यमान हैं ॥ टी० साधन चतुष्टय संपन्न श्रवणादि साधनोंकरके युक्त १ तिरोभाव होगये हैं रजोगुण, तमोगुण जिनके ज्ञानके प्रताप से पाप नाश होगये हैं जिनके २ प्राणगत वा प्रमेयगत किसी जगह उनको संशय नहीं ३ सदा समाधिनिष्ठ रहते हैं ४ नगर ग्राममें जो उनका आना गृहस्थों के घर ज्ञाना गृहस्थों से बात करनी यह उनकी केवल कृपाही समझना क्योंकि वे पूर्णकाम हैं ऐसे दयालु महापुरुषों का दर्शन भी भी भागसे होता है ५ उक्तं च ❋ " महद्विचलनं नृणां गृहिणान्दीनचेतसाम। निःश्रेयसायभगवन् कल्पतेनान्यथाक्वचित् " ❋ तात्पर्यार्थ इस श्लोकका यहहै कि गृहस्थोंके घरमें महात्मा पुरुषोंका जो जाना है वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

केवल उनके भलेके लिये है सिवाय उसके उनका और कुछ प्रयोजन नहीं कभी कुछ और प्रकारकी कल्पना नहीं करनी क्योंकि गृहस्थ आपही दीन होते हैं उनके पास है क्या जो किसी कामनाकी कल्पना कीजावे ॥ २५ ॥

कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम्।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्त्तते विदितात्मनाम् ॥ २६ ॥

यतीनाम् १ अभितः २ ब्रह्मनिर्वाणम् ३ वर्त्तते ४ कामक्रोधवियुक्तानाम् ५ यतचेतसाम् ६ विदितात्मनाम् ७ ॥ २६ ॥ अ० उ० कामादिरहित सज्जन जीवतेही मुक्त है फिर उनकी विदेहमुक्तियों में तो क्या कहनाहै ❋ संन्यासी के १ सब अवस्था में २ मोक्षपरमानन्द ३ वर्तता है ४ अर्थात् जीवते हुये भी जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति ३ परमानन्द को भोगते हैं तात्पर्य— अज्ञानियों की दृष्टि में ज्ञानियों के विषे ये तीन अवस्था प्रतीत होती है. वास्तव ज्ञानियों के एक तुर्यातीत अवस्था रहती है और पीछे देहके भी परमानन्दको भोगते हैं सि० कैसे है वे संन्यासी ज्ञानी ❋ काम क्रोधकरके रहितहै ६ जीत रक्खा है अन्तःकरण जिन्होंने ६ जाना है आत्मतत्त्व जिन्होंने ७ अर्थात् पूर्णब्रह्मसच्चिदानन्द नित्यमुक्त आत्मा को जानते हैं. कामादिरहित ऐसे हैं ॥ २६ ॥

स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ॥२७॥

बाह्यान् १ स्पर्शान् २ बहिः ३ एव ४ कृत्वा ५ चक्षुः ६ च ७ अन्तरे ८ भ्रुवोः ९ प्राणापानौ १० नासाभ्यन्तरचारिणौ ११ समौ १२ कृत्वा १३ ॥ २७ ॥ अ० उ० जिस योग करके संन्यासी महात्मा जीवते हुये और देहके पीछे भी सदा परमानन्द भोगते हैं उस योगका लक्षण दो मन्त्रों में तो अब कहते हैं. संक्षेप से और अगले छठें अध्याय में विस्तारपूर्वक कहैंगे ❋

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहिः पदार्थों को १ रूप रसादिको २ बाहर ३ ही ४ करके ५ अर्थात् रूपरसादि जो पदार्थ हैं ये सब बाहर हैं. चिन्तन करने से भीतर प्रवेश होते हैं इसवास्ते विषयों का चिन्तन दर्शनादि त्यागकरके ❋ और चक्षु को ६ । ७ दोनों भ्रूके ८ बीच में ९ करके तात्पर्य—नेत्रों को बहुत न खोलना न मीचना बहुत खोलने से रूप के साथ सम्बन्ध होजाता है बहुत मीचनेसे निद्रा आती है इसवास्ते दोनों भ्रूके मध्यमें दृष्टि रखनी ❋ प्राण अपान १० नासाभ्यन्तरचारी ११ समान १२ करके १३ मुक्त होजाता है अर्थात् ऐसे महात्मा सदामुक्त हैं अगले मन्त्रके साथ इसका अन्वय है. टी० नासिकाके भीतरही प्राण चले शीघ्रगति न होनेपावे ११ नीचे ऊपर की गतिको सम करनी योग्य है जिसको कुम्भक कहते हैं. यह अर्थ साक्षात् गुरुके बतलाने से समझमें आताहै केवल शास्त्रके श्रवण विचारसे नहीं आता ॥ २७ ॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥२८॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिः १ मोक्षपरायणः २ विगतेच्छाभयक्रोधः ३ यः ४ मुनिः ५ सः ६ सदा ७ मुक्तः ८ एव ९ ॥ २८ ॥ अ० उ० जीते हैं इन्द्रिय, मन, बुद्धि जिसने १ मोक्ष ही है परमगति जिसके २ दूर होगई है इच्छा, भय, क्रोध जिससे ३ ऐसे जो ४ मुनि संन्यासी ५ वे ६ सदा ७ जीतेहुये भी और देहके पीछे भी ❋ मुक्त ८ ही हैं. इससे पृथक् कोई और मुक्ति पदार्थ नहीं सालोकादि अनित्य होनेसे नाममात्र मुक्ति कहलाती है ❋ सब दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्ति यह मुक्तिका लक्षण है टी० जिसका मन आत्मा में ही रहता है. उसको मुनि कहते हैं ॥ २८ ॥

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोक महेश्वरम् ।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ॥२९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यज्ञतपसाम् १ भोक्तारम् २ सर्वभूतानाम् ३ सुहृदम् ४ सर्वलोकमहेश्वरम् ५ माम् ६ ज्ञात्वा ७ शान्तिम् ८ ऋच्छति ९ ॥ २९ ॥ अ० उ० जैसा पीछे निरूपणकिया इस प्रकार इन्द्रिय और अन्तःकरणादि का निरोध करके ब्रह्मज्ञानद्वारा मुक्ति होती है. इसवास्ते अब ज्ञानका स्वरूप कहकर शान्ति फल सबका निरूपण करते हैं❀यज्ञ तपका १ भोक्ता २ अविद्योपहित त्वम्पद का वाच्यार्थ है और❀सब भूतोंका ३ वे प्रयोजन हित करनेवाला ४ अन्तर्यामी ईश्वर सब कर्मोंके फलका देनेवाला तत्पदका वाच्यार्थ सच्चिदानन्द है और❀सब लोकोंका महेश्वर ५ परमात्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार नित्यमुक्त तत्त्वम्पदों का लक्ष्यार्थ अद्वैत है इसप्रकार❀मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा को ६ जानकर ७ शान्तिको ८ अर्थात् मुक्तिको ८ प्राप्तहोता ९ " नसपुनरावर्तते " इत्यभिप्रायः ॥ २९ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादे संन्यासयोगोनामपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

॥ अथ षष्ठोऽध्यायः ॥

उ० इस छठें अध्याय में श्रीभगवान् यह कहेंगे कि जो अग्निहोत्रादि कर्म करताहै और कर्मों के फलमें आसक्त नहीं उसको संन्यासी समझो. यह कर्मयोगीकी स्तुति है इसको शास्त्रमें अर्थवाद कहते हैं. इस कहने से यह नहीं समझना कि गृहस्थाश्रममें ही सदा बने रहना चतुर्थ आश्रम संन्यास से क्या प्रयोजन है जैसे संन्यासी वैसेही गृहस्थी कर्मयोगी हैं यह अधिकार प्रति श्रीमहाराजका कहना है नहीं तो पुनः २ पांचवें बारहवें दूसरे अठारहवें इत्यादि अध्यायों में चतुर्थ आश्रम संन्यासके जो लक्षण और माहात्म्य गृहस्थाश्रम से विशेष अपने मुखसे श्रीमहाराजने कहाहै वह कहना भगवान्का निरर्थ होजायगा. तात्पर्य—सर्वयज्ञों की वाणीका यह नियम है कि जिससमय जिस साधनका प्रसंग होता है उससमय उसीको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सबसे अच्छा कहा करते हैं. उनका आशय यथार्थ जब प्रतीत होताहै कि अगले पिछले कहे हुये उनके सब अर्थको विचारे फिर अधिकार गौण मुख्य देश वस्तुकालादिका विचारकरे युक्तियों करके सब श्रुति स्मृतियों के साथ उस अर्थ का एक जगह समन्वयकरे अगले पिछले वाक्यों में विरोध न आवे. सबका सम्मत एक अर्थ में होजाय तब समझना कि इस श्लोक वा ग्रन्थका यह यथार्थ ज्योंका त्यों अर्थ है और लक्षणाव्यञ्जना शक्तिका भी देखना योग्य है पूर्वपक्ष सिद्धान्तको पृथक् २ समझना साधन फलका भेददेखना साधनों में भी तारतम्यता अधिकार प्रति है इसप्रकार शास्त्रका तात्पर्य जानाजाताहै और भी शास्त्र के तात्पर्य जाननेमें मुख्य छःबातें यह हैं प्रथम तो उपक्रम उपसंहार १ अर्थात् ग्रन्थका आदि अन्त देखना कि दोनोंकी संगति मिले हैं वा नहीं सर्वज्ञों का कहा हुआ जो ग्रन्थ होता है उसके प्रारम्भमें जो अर्थ होगा वही अन्तमें होगा. जैसे श्रीभगवद्गीताका आदि पद अशोच्य है और माशुचःपिछलापद है इन दोनों पदोंसे प्रथम पीछे जो कथा है वह संगतिके लिये उपोद्घातहै इस प्रकार गीताका उपक्रम उपसंहार एक मिले है और शोचका न होना अर्थात् परमानन्द की प्राप्ति यही गीताशास्त्रका तात्पर्य है १ इसीबातके सिद्ध करनेके लिये बीचमें पांच बात ये हैं अपूर्वता २ अर्थात् आत्माकोही सच्चिदानन्द नित्य जानना. जिसके जानने सेही वे शोच होजाता है यह बात अपूर्व अलौकिक है. २ अनुवाद ३ उसी एक बातको नानाप्रकारकी रीति शैली करके पुनः २ कथनकरना ३ अर्थवाद ४ अर्थात् उसी पदार्थकी सिद्धिके जो साधन हैं (उनकोही रुचि बढ़ानेके लिये) परात्पर श्रेष्ठ कहना जैसे कर्म भक्ति योगादि तीर्थादि का माहात्म्य कहा है ४ उपपत्ति ५ अर्थात् फिर युक्तियों करके साधन कहकर सिद्धान्त पक्षको सिद्धकरना ५ फल ६ अर्थात् सिद्धान्तको कथनकरना लक्षण करना कि वह परमानन्दस्वरूप ऐसा है ६ इसप्रकार ग्रन्थका तात्पर्य प्रतीत होता है. ग्रन्थके एक एक देशसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्थात् एक श्लोक वा एक अध्यायसे ग्रंथका तात्पर्य नहीं जाना जाता ये भी छःबात उपक्रम उपसंहारादि गीताशास्त्रमें हैं. लक्षण व्यञ्जनादि भी हैं इन छः बातोंका एक पदार्थ में जब सम्मत होगा. तब जानना कि इस ग्रन्थता यह तात्पर्य है अर्थवाद साधनोंके सिद्धान्त समझलेना. यह मूर्खोंका काम है ॥

श्रीभगवानुवाच—

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः॥ १॥

कर्मफलं १ अनाश्रितः २ कार्यम् ३ कर्म ४ यः ५ करोति ६ सः ७ संन्यासी ८ च ९ योगी ११ न १२ निरग्निः १३ न १४ च १५ अक्रियः १६ ॥ १ ॥ अ० उ० अन्तःकरण शुद्ध होने के लिये कर्मयोगी की स्तुति करते हैं श्रीभगवान् कर्मों के फलका नहीं आश्रय कियाहै जिसने १। २ अर्थात् कर्मफलकी तृष्णा और कामना नहीं है जिसको ❋ करने के योग कर्मको ३। ४ जो ५ करता है ६ अर्थात् नित्य नैमित्तिक प्रायश्चित्त कर्म और भगवत् भक्तिसंबन्धि ज्ञानसंबन्धि जो कर्म और तीर्थयात्रा साधुसेवादि साधारण जो कर्म और दान लेना इत्यादि जो असाधारण कर्म है. इन सब कर्मोंको यथाधिकार यथाशक्ति जो करता है ❋ सो ७ संन्यासी ८ और ९ योगी १० भी ११ समझना चाहिये. अर्थात् कर्मफल का संन्यास करने से एक देश में तो उसको संन्यासी समझना और कर्मयोग करनेसे से एकदेश में उसको योगी समझना. इस अर्थमें समसमुच्चय की गन्धमात्र भी नहीं कल्पना करनी ❋ कर्म संन्यास का दिन रात्रिवत् विरोध है कर्मयोगीकोही संन्यासी कहना. यह उपमा है जैसे स्त्रीके मुखको चन्द्रमा कहना. यह उपमा का तात्पर्य एकदेश में होता है नहीं तो अगले पिछले वाक्यों में विरोध आता है. पीछे श्रीभगवान् ने बहुत जगह कर्म संन्यास फलके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सहित निरूपण किया और आगे बहुत करेंगे इस जगह कर्मयोग काही प्रसंग है इसीवास्ते श्रीमहाराज कर्मयोगी की स्तुति करते हैं कैसाहै वह कर्मयोगी ❋ न १२ निरग्निः १३ और न १४। १५ अक्रिय १६ है जैसे चतुर्थाश्रमी संन्यासी अग्निहोत्रादि कर्म नहीं करते निरग्नि होते हैं ऐसा कर्मयोगी नहीं और चतुर्थाश्रमी संन्यासी ज्ञानीवत् अक्रिय भी नहीं. क्योंकि ज्ञानी आत्माको अक्रिय क्रियारहित मानते हैं आत्मा का जब देह के साथ संबन्ध माना तब आत्मा अक्रिय कहां रहा. यह बात सत्य श्रीमहाराज कहते हैं कि कर्मयोगी अक्रिय नहीं ❋ अथवा केवल अग्नि के न छूने से कर्मोंके न करने से विना ज्ञाननिष्ठा परमार्थ में संन्यासी नहीं होसक्ता. व्यवहार में उसको नाममात्र संन्यासी कहेंगे. तात्पर्य—जबतक अन्तःकरण शुद्ध न हो. तबतक ज्ञाननिष्ठा और संन्यसका माहात्म्य सुनकर कर्मों का त्याग न करे और जिनका अन्तःकरण शुद्ध हो. उनके वास्ते कर्मोंका संन्यास करना चतुर्थाश्रम धारण करना निषेध नहीं अवश्य चतुर्थाश्रम धारण करना. उनके विना ज्ञाननिष्ठा कभी परिपाक न होगी. यह नियम विधि है ॥ १ ॥

यं संन्यासमितिप्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव।
नह्यसंन्यस्तसंकल्पो योगी भवति कश्चन ॥ २ ॥

पाण्डव १ यम् २ संन्यासम् ३ प्राहुः ४ तम् ५ हि योगम् ७ इति ८ विद्धि ९ असंन्यस्तकल्पः १० कश्चन ११ योगी १२ न १३ भवति १४ ॥ २ ॥ अ० उ० कच्चे कर्मयोगी का संन्यासमें अधिकार नहीं यह कहते हैं हे अर्जुन! १ जिसको २ संन्यास ३ कहते हैं ४ तिसको ५ ही[1] ६ योग ७ कहते हैं यह ८ जान तू ९ क्योंकि संन्यास योग

१ यद्यपि कर्मयोग और संन्यास एकनहीं होसकता तथापि मोक्षके प्रति कर्मयोग और संन्यास इन दोनों कूं असाधारण कारणता है तिससे मोक्षैकफल निष्पत्तीमें दोनों के एक शक्ति भक्त होनेसे एकत्वसिद्ध हैं तिससे कर्मफल संकल्प संन्यासप्रधान जो कर्म योग वही मोक्षके लिये पर्याप्त है॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काही फल है❋नहीं संन्यास किये हैं जिसने अर्थात् शुभाशुभ संकल्पों को जिसने नहीं त्यागा है सो १० कोई ११ योगी १२ नहीं १३ होता है १४ तात्पर्य—जबतक शुभ वा अशुभ संकल्प मनमें बने रहै तबतक अपने को सिद्धयोगी समझना न चाहिये. अर्थात् यह १ समझे कि मेरा भक्तियोग अभी सिद्ध नहीं हुआ. जब अन्तःकरण का निरोध होजाय संकल्प विकल्प सूक्ष्म कम होजावैं. तब संन्यासका अधिकारी होताहै ॥ २ ॥

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्मकारणमुच्यते ।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥ ३ ॥

योगम् १ आरुरुक्षोः २ मुनेः ३ कर्म ४ कारणम् ५ उच्यते ६ योगारूढस्य ७ तस्य ८ एव ९ शमः १० कारणम् ११ उच्यते १२ ॥ ३ ॥ अ० उ० हे अर्जुन ! पीछे जो मैंने कर्मयोगी की स्तुति करी उस कहने से यह नहीं समझना कि सदा कर्महीं करता रहे. अधिकार प्रति मैंने वहां कहा है तात्पर्य-सिद्धान्त मेरा यह है कि जो मैं अब कहता हूं❋ऊपर के पद ज्ञानपर १ चढ़ने की इच्छा है जिसके और ध्यानयोग में समर्थ नहीं अर्थात् सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान नहीं करसक्ता. ऐसे ज्ञानयोग के जिज्ञासु २ मननशील को ३ अर्थात् मन में तो यह मनन करता है कि सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान करना चाहिये. परन्तु अन्तःकरण मैला होनेसे ध्यान नहीं होसक्ता. ऐसे जिज्ञासु मुनि को ३ कर्म्म बहिरङ्ग भगवत् आराधनादि ४ परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति में❋हेतु ५ कहा है ६ और❋योगारूढ़ को ७ अर्थात् शुद्ध अन्तःकरणवाले को तात्पर्य—जो ज्ञान योगपर चढ़गया है. वही कर्मयोगी साधन चतुष्टय संपन्न होकर ज्ञाननिष्ठ हुआ है ७ तिसको ८ ही ९ उपशम १० हेतु ११ कहा है १२ परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति में उपशम हेतु है अर्थात् लौकिक, वैदिक कर्मों से उपराम होकर सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करना कहा है. फिर उसको बहिरङ्ग कर्मों में प्रवृत्त होना न चाहिये क्योंकि वे विक्षेपके हेतु हैं और ऊपर चढ़कर नीचे उतरना है टी० तिस को ही अर्थात् उसीको कि जो पहले कर्मयोगी था. साकार मूर्तियों का ध्यान करता था और बहिरङ्ग कर्मों में प्रवृत्त था उसी बहिर्मुख को अन्तर्मुख होना कहते हैं. श्रीभगवान्❀यह नहीं समझना कि कर्मयोगी को सदा बाहिर्मुख रहना ही कहते हैं ज्ञानमार्ग दूसरा है उसके अधिकारी दूसरे हैं जैसे कोई २ कमसमझ यह कहा करते हैं कि मकान एक है उसके रस्ते अनेक हैं यह बात नहीं मोक्षमार्ग एकही है मंजिल अनेक हैं रस्ते अनेक हैं यह बात नहीं मोक्षमार्ग एकही है मंजिल अनेक हैं रस्ते अनेक नहीं रस्ता एकही है अर्थात् मोक्षके मार्ग अनेक नहीं अधिकार प्रति भूमिका दरजे सीढ़ी अनेक है ॥ ३ ॥

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते ।
सर्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते ॥ ४ ॥

यदा १ हि २ न ३ इन्द्रियार्थेषु ४ न ५ कर्मसु ६ अनुषज्जते ७ सर्वसंकल्पसंन्यासी ८ तदा ९ योगारूढः १० उच्यते ११ ॥ ४ ॥ अ० उ० यह कैसे प्रतीत हो कि योगारूढ मैं अब हुआ इस अपेक्षा में योगारूढ़का लक्षण कहते हैं❀जिस काम में १ ही २ जो महापुरुष❀न ३ विषयों में ४ न ५ कर्मों में ६ असक्ति करता है ७ अर्थात् इस लोक में जो देखे सुने हैं रूप शब्दादि और परलोक के जो अर्थवाद सुने है किसी में तृष्णा नहीं करता क्योंकि अन्तर परमानन्द स्वतन्त्र सामने बहिर्मुख परिछिन्न परतंत्र विषयजन्य सुखको तुच्छ समझता है. और बहिर्मुख के जो साधन कर्म उनको कर भी सक्ता है. परन्तु अपना उन से कुछ प्रयोजन नहीं यह समझकर उन कर्मों में भी प्रीति नहीं करता और सब संकल्पो के त्यागने का स्वभाव है जिसका ८ अर्थात् इसलोक परलोकके निमित्त जो जो संकल्प उत्पन्न होते हैं.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब को त्याग देता है. तात्पर्य–सिवाय सच्चिदानन्द आत्माके और किसी पदार्थ की प्राप्तिका संकल्पमात्र भी नहीं करता. जिस काल में❋तिस काल में ९ योगारूढ़ ९ कहा है १० सोइ महात्मा साधु भगवत् भक्त जो विषयादि में प्रीति नहीं करता ॥ ४ ॥

उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैवरिपुरात्मनः ॥ ५ ॥

आत्मना १ आत्मानम् २ उद्धरेत ३ आत्मानम् ४ न ५ अवसादयेत ६ आत्मनः ७ आत्मा ८ हि ९ एव १० बन्धुः ११ आत्मनः १२ आत्मा १३ एव १४ रिपुः १५ ॥ ५ ॥ अ० उ० अब यह कहते हैं, कि ज्ञानपर आरूढ़ होना चाहिये, चढ़ना योग्य है नीचे कर्मोंमें ही गिरना न चाहिये विवेकयुक्त मनकरके १ जीव को सि० २ ज्ञानयोगपर❋चढ़ावे ३ सि० यही जीव का संसारसे उद्धार करनाहै अर्थात् ज्ञाननिष्ठ होना योग्य है❋ जीवको ४ नीचे न गिरावे ५। ६ अर्थात् सदा कर्मों में ही लगारहै❋ जीवका ७ विवेकयुक्त मन ८ ही ९ तो १० बन्धु ११ है अर्थात् संसारसे मुक्त करनेवाला है और❋जीवका १२ रागद्वेषादियुक्त मन १३ ही १४ वैरी १५ सि० है❋अर्थात् नरकादि की प्राप्त करनेवालाहै टी० विवेकयुक्त रागद्वेषादि रहित मनको शुद्ध मन कहते हैं ८ विवेकरहित रागद्वेषादि सहित मनको मलिन मन कहते हैं १३ दो एवकार शब्दोंसे यह तात्पर्य है कि जो मैं कहता हूं इसको धारण करना योग्य है कहानीवत् सुननेसे प्रयोजन सिद्ध न होगा १०। १४ तात्पर्य–बन्ध मोक्ष में कारण मनुष्योंका

---

१ जिस प्रकारसे कि जिह्वाके दोषसे अपथ्य करनेवाला अपने को अपना शत्रुबनाता है उसी प्रकार शमादि षट्क सम्पति साधनोंके अनवलंबन से उद्धरणाक्षम ब्रह्मयोग निष्ठामें अनाश्रित होकर अनादि अविद्याकी बासनाके वेगसे प्राप्त हुये जो ज्ञान निर्मूलक बाह्यविषय तिसको अवलम्बनकर के आत्मशत्रु होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनही है विषयों में आसक्त हुआ बन्धका हेतु स्वरूपानिष्ठ हुआ मोक्षका हेतु है उक्तंच❀" मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ॥ " " मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत् त्यज। क्षमार्जवदयातोषसत्यं पीयूषवद् भज "❀ अष्टावक्रजीने कहा है कि हे तात! जो मुक्तिकी इच्छा करता है तो विषयोंको विषवत् त्याग और क्षमा, आर्जव, दया, संतोष सत्य इनका अनुष्ठान कर यही तात्पर्य इस मन्त्रका है ॥ ५ ॥

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मनाजितः।
अनात्मनस्तुशत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥ ६ ॥

तस्य १ एव २ आत्मनः ३ आत्मा ४ बन्धुः ५ येन ६ आत्मना ७ आत्मा ८ जितः ९ अनात्मनः १० तु ११ आत्मा १२ एव १३ शत्रुत्वात्१४ शत्रुत्वे १५ वर्तेत १६ ॥ ६ ॥ अ० उ० पिछले अर्थ को इस मन्त्र में स्पष्ट करतें हैं❀तिसही जीवको १। २। ३ मन ४ बन्धु ५ सि० है कि❀जिस जीवने ६। ७ शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण ८ वशमें किया है ९ और जिसने अन्तःकरणादि नहीं वश किये तिसका १०। ११ मन १२ ही १३ वैरीवत् १४ वैरभावमें १५ वर्तता हैं १६ तात्पर्य–विषयासक्त मन मोक्ष में प्रतिबन्ध है, इसहेतु से उसको वैरी कहा और राग द्वेषादि रहित मन मोक्ष में सहायक है, इस हेतुसे उनको बन्धु कहा ॥ ६ ॥

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथामानापमानयोः ॥ ७ ॥

जितात्मनः १ प्रशान्तस्य २ परमात्मा ३ समाहितः ४ शीतोष्णसुखदुः-

---

१ जिसप्रकारसे पथ्यौषधसे वा जिसरोगीने सेवनकी है उसीकी आरोग्य सिद्धि देखी जाती है. अन्यथा नहीं. तिसी प्रकार अपने किये हुये श्रवण मनन निदिध्यासन समाधिनिष्ठा के विना पुत्रादिकोंसे नहीं तर सकता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खेषु ५ तथा ६ मानापमानयोः ७ ॥ ७ ॥ अ० उ० अन्तःकरणादि के वशकरने का फल कहते हैं❋जीते हैं अन्तःकरणादि जिसने १ इसी हेतुसे जो भलेप्रकार शान्त है अर्थात् विक्षेपरहित है जो तिसको २ परमात्मा ३ शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म❋साक्षात् अपरोक्ष आत्मभाव करके वर्तता है अर्थात् आत्मा सच्चिदानन्द अखण्ड नित्यमुक्त साक्षात् अपरोक्ष जीतेहुये ही अनुभव करता है ४ और कोई प्रतिबन्ध भी उसको बाधा विक्षेप नहीं करसक्ते. आधे श्लोक में अब यह कहते हैं❋शीत गरमी दुःख सुखमें ५ और तैसेही ६ मान और अपमान में ७ आत्मा अखण्ड अपरोक्ष रहता है ❋तात्पर्य—पांचवीं छठीं जो ज्ञान की भूमिका हैं उनमें वर्तताहै अर्थात सदा जीवन्मुक्ति का आनन्द भोगताहै इसी हेतु से उस आनन्द के सामने मानापमानादि भी नहीं प्रतीत होते और कभी रजोगुण के आविर्भाव होने से बहिर्मुख वृत्ति होने में अपमानादि भी प्रतीत हों तो भी उनको गुणोंका कार्य समझकर और अपनेको असंग जानकर विक्षेप को नहीं प्राप्त होताहै ॥ ७ ॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः ॥ ८ ॥

युक्तः १ योगी २ इति ३ उच्यते ४ ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा ५ कूटस्थः ६ विजितेन्द्रियः ७ समलोष्टाश्मकाञ्चनः ८ ॥ ८ ॥ अ० उ० जिस योगारूढ को अखण्डात्मा अपरोक्ष है. उसका लक्षण यह❋योगारूढ १ योगी २ ऐसा ३ कहा है ४ अर्थात् उसका लक्षण यह है❋ज्ञान विज्ञानकरके तृप्त है अन्तःकरण जिसका ५ निर्विकार ६ भलेप्रकार जीते हैं इन्द्रिय जिनके ७ समान हैं लोहा, पाषाण, सोना जिसको ८ उसको योगारूढ़ योगी कहते हैं टी० महावाक्य श्रवण करके यह जानना है कि मैं ब्रह्महूं क्योंकि वेदवाक्यमें विश्वास श्रद्धा करना अवश्य योग है वेदों के कहने से यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानना कि मैं सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म हूं इसको ज्ञान कहते हैं. अर्थात् यह तो अपरोक्षज्ञान है और युक्ति समन्वयादि करके साक्षात् करामलकवत् अनुभवकरना इसको विज्ञान कहते हैं. अर्थात् यह अपरोक्षज्ञान है. इन दोनों ज्ञान विज्ञान करके संतुष्ट है. अन्तःकरण जिसका उसको ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कहते हैं ५ राग द्वेषादि विकारों करके जो रहित है उसको कूटस्थ कहते हैं ॥ ८ ॥

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥ ९ ॥

सुहृद् १ मित्र २ अरि ३ उदासीन ४ मध्यस्थ ५ द्वेष्य ६ बन्धुषु ७ । १ यहांतक एक पद है❋साधुषु २ च ३ पापेषु ४ समबुद्धिः ५ विशिष्यते ६ ॥ ९ अ० उ० सातवे अङ्क तक पद है पापी साधु आदि जनोंमें समान बुद्धि है जिसकी सो पूर्वोक्त से भी विशेष है. यह कहते हैं❋बे प्रयोजन जो दूसरे का भला चाहे और करे ममता और स्नेह करके वर्जित हो उसको सुहृद् कहते हैं १ ममता स्नेहके वश होकर जो भला करे २ शत्रु ३ किसी का बुरा चाहना न भला चाहना ४ दोके झगड़े में यथार्थ ज्योंका त्यों कहने वाला ५ आत्मा का अप्रिय अर्थात् आपसे जो प्यार न करै ६ इसमें और शत्रु में कुछ भेद नहीं प्रतीत होता. परन्तु भेद है एक शत्रु तो ऐसा होताहै कि प्रसिद्ध तो मिला रहै पीछे बुराई करै और एक शत्रु ऐसा होताहै कि प्रसिद्ध में भी बुराई करै तीसरे और छठे अङ्क में अर्थात् अरि और द्वेष्य में यही भेदहै ❋संबन्धी ७ इन सब में ७ । १ और साधुजनों में २ । ३ सि० और❋ पापीपुरुषोंमेंभी ४ समबुद्धिवाला ५ विशेषहै ६ तात्पर्य—शत्रु मित्रादिमें जो न राग करता है. न द्वेष करता है. सो पूर्वोक्त योगी से भी विशेष है ॥९॥

१ आभाससे प्राप्त मृत्तिकामें घट बुद्धि की उत्पत्तिमें सर्वावयवस घटमें मृत्तिकाकी बुद्धि स्थापनके तुल्य सम्पूर्ण सुहृदादिकों ब्रह्मबुद्धि रखने वाला।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥ १० ॥

योगी १ सततम् २ आत्मानम् ३ युञ्जीत ४ रहसि ५ स्थितः ६ एकाकी ७ यतचित्तात्मा ८ निराशीः ९ अपरिग्रहः १० ॥ १० ॥ अ० उ० योगारूढ़ का लक्षण कहा अब योगको अङ्गों सहित कहते हैं ❋ योगारूढ़ १ निरन्तर २ अन्तःकरणको ३ समाधान करै ४ एकान्त में ५ बैठकर ६ अकेला ७ जीता है अन्तःकरण शरीर जिसने ८ आशारहित ९ परिग्रहरहित १० टी० योगारूढ बहिरङ्ग साधनों में अर्थात् तीर्थ यात्रादि में मुख्यता करके प्रवृत्त न हो निरन्तर दिन रात्रि अन्तःकरण निरोध करै. क्षणमात्र बहिर्मुख वृत्ति न होने पावै, २ जिस जगह सिंह, सर्प, चोरादि का अतिभय न हो, स्त्री बालक प्राकृतजनों की समुदाय न हो, शुद्धचित्तके प्रसन्न करने वाले स्थलमें अर्थात् उत्तराखण्ड भागीरथी नर्मदाजीके तीर इत्यादि स्थलोंमें चिरकाल निवास करे ५ एकान्त में भी दो चार इकट्ठे होकर न रहैं ७ एकान्त जगह भी हो और अकेला भी हो तो वहां रहकर शिष्य सेवकों को उपदेश करना. इत्यादि क्रिया अथवा मन्दिर कुटीके पास फूल फुलवारी लगाना इत्यादि क्रिया न करै कि जिससे वृत्ति बहिर्मुख हो ८ एकान्त में अकेला जब निवास करे तत्र किसी से यह आशा न रक्खे कि हमको कोई इसी जगह बैठे हुये भिक्षा दे जाया करे और बन्धान्न भी न बांधे बन्धान्न की आशा न रक्खे. तात्पर्य—भिक्षान्न भोजन करना योग्यहै ९ एकान्त में अकेला जो मनके समाधान करके को बैठे तो भोजन वस्त्रादि सिवाय शरीरयात्रा के संचय न करै तब अभ्यास होसक्ताहै, १० निरन्तर एकान्त (अकेला) जितेन्द्रिय आशारहित परिग्रहरहित ये सब अङ्ग अन्तःकरण समाधान करने के हैं विना गृहस्थाश्रम के छोड़े विना विरक्त हुये इन सब अङ्गों का अनुष्ठान भले प्रकार नहीं होसक्ता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो सब न होसके तो जितना होसके अवश्य करना योग्य है. विना अभ्यासके बहिरङ्ग साधन निष्फल है. ईश्वराराधनादि कर्मोंका फल यही है कि अन्तःकरण शान्त हो ॥ १० ॥

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥

शुचौ १ देशे २ आत्मनः ३ आसनम् ४ स्थिरम् ५ प्रतिष्ठाप्य ६ न ७ अति ८ उच्छ्रितम् ९ न १० अति ११ नीचम् १२ चैलाजिनकुशोत्तरम् १३ ॥ ११ ॥ अ० उ० आसनकी विधि दो श्लोकों में कहते हैं. आसन योगका बहिरङ्ग साधन है. अन्तरङ्ग अभ्यास का सहायक है❋ पवित्र भूमि में १।२ अपना ३ आसन ४ अचल ५ बिछाकर ६ सि० अभ्यास करे कैसा है वह आसन कि❋न ७ बहुत ८ ऊंचा ९ न १० बहुत ११ नीचा १२ हो. फिर कैसा इस अपेक्षा में कहते हैं कि❋कुश और मृगचर्म और वस्त्र ये ऊपर हों भूमिके अर्थात् पृथ्वीके ऊपर प्रथम कुशका आसन उसके ऊपर मृगचर्मादि उसके ऊपर सि० सूतीवस्त्र बिछावे १३ टी० कोई भूमि तो स्वभावसेही पवित्र होतीहै. जैसे श्रीगङ्गाजी की रेती. "वसुधा सर्वत्र शुद्धा न लेपो यत्र विद्यते" पृथिवी सब जगह पवित्रहै परन्तु जहां लिपगई हो तो फिर उसको लीप लेना योग्य है अथवा उत्तराखण्डादिको पवित्रदेश समझना योग्यहै १ । २ दूसरे के आसन पर बैठना शास्त्रमें निषेध है. इसवास्ते अपना आसन कहा ३ । ४ स्थिर शब्द से. तात्पर्य--यह है कि यह काम दो चार महीने का नहीं बरसोंका यह काम है. अर्थात् जबतक जीवे यही अभ्यास करता रहे यह अभ्यास अज्ञानी को तो ज्ञानका प्राप्त करनेवाला और ज्ञानी को जीवन्मुक्ति देनेवाला है सिवाय इसके और क्या काम श्रेष्ठतर है कि इसको छोड़कर जो करना चाहिये ५ रुई भरे बिछौने वस्त्र बिछाकर न बैठना चौकोर छतकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुड़ेरी परभी बैठकर योगाभ्यास नहीं करना ६। ७। ८। ९ विना आसन पृथ्वीपर बैठकर वा गढ़े में बैठकर यह योगाभ्यास नहीं होसक्ता इत्यभिप्रायः १०। ११। १२॥ ११॥

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासनेयुञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये॥ १२॥

यतचित्तेन्द्रियक्रियः १ तत्र २ आसने ३ उपविश्य ४ मनः ५ एकाग्रम् ६ कृत्वा ७ आत्मशुद्धये ८ योगम् ९ युञ्ज्याद् १०॥ १२ अ० जीती है चित्त की और इन्द्रियों की क्रिया जिसने १ सि० सो योगी❋ तिस आसनपर २। ३ बैठ कर ४ मनको ५ एकाग्र करके ६। ७ अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये ८ सि० इस❋ योगका अभ्यासकरे ९। १० टी० अगले पिछली वातों को याद करना. यह चित्त की क्रिया है, देखना श्रवणादि इन्द्रियों की क्रिया हैं १ मनको सब विषयों से हटाकर आत्मा के संमुख करके पिछले मन्त्रमें जिस प्रकारका आसन कहा उसपर बैठकर अभ्यास करै २। ३। ४। ५। ६। ७। ८। ९। १०॥ १२॥

समंकायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्॥१३॥

कायशिरोग्रीयम् १ समम् २ अचलम् ३ धारयन् ४ स्थिर ५ स्वम् ६ नासिकाग्रम् ७ संप्रेक्ष्य ८ दिशः ९ च १० अनवलोकयन् ११॥ १३॥ अ० उ० चित्तके एकाग्र करनेनें देहकी धारणाभी बहिरङ्ग साधन उपयोगी है इसको भी दो मन्त्रो में कहते हैं❋ देहका मध्यभाग और शिर ग्रीवाको १ सम २ अचल ३ धारण करता हुआ ४ दृढ प्रयत्नवान् होकर ५ अपनी ६ नासिका के अग्र को ७ देखकरके ८ सि० पूर्वादि❋ दिशाको ९ भी १० नहीं देखता हुआ ११ सि० आत्मपरायण होकर बैठे टी० मूलाधार से लेकर मूर्द्धातक सीधा निश्चल बैठे १। २। ३। ४ दुःख सम-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

झकर प्रयत्न में कचाई न होनेपावे सावधान होकर धीरजके सहित दृढ जोशरीर पात होजाय तो होजाय परन्तु विना मनके शान्त हुये वहां से हटना नहीं ५ नासाग्र दृष्टि में तात्पर्य—यह नहीं कि नासिकाके ही देखते रहना. किन्तु यह तात्पर्य है कि ऐसे बैठे जैसे नासाग्रदृष्टि होकर बैठतेहै दृष्टि और वृत्ति आत्मा में लगानी योग्यहै. नेत्रों को न बहुत खोलना न मीचना ६ । ७ । ८ इत्यभिप्रायः ॥ १३ ॥

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रतेस्थितः ।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः॥ १४ ॥

प्रशान्तात्मा १ विगतभीः २ ब्रह्मचारिव्रतेस्थितः ३ मनः संयम्य ५ मच्चित्तः ६ युक्तः ७ मत्परः ८ आसीत ९ ॥ १४ ॥ अ० ॥ भलेप्रकार शान्त हुआ है अन्तःकरण जिसका १ दूर होगयाहै भय जिसका २ ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थित ३ मन को ४ रोककर ५ मुक्त सच्चिदानन्द स्वरूपमें चित्त हैं जिसका ६ सो❀समाहित हुआ ७ मैं सच्चिदानन्द स्वरूपही हूं परमपुरुषार्थ जिसका ८ सि० ऐसा समझ कर❀बैठे ९ टी० अष्टांग मैथुन करके वर्जित, ज्ञान के उपदेश करनेवाले गुरुकी टहलमें तत्पर भिक्षान्न सदा भोजन करनेवाला ३ अन्तःकरणकी वृत्तियों को उपसंहार करके ४ । ५ समाधान अप्रमत्त अनालस्य हुआ ७ परब्रह्म की प्राप्ति कोही परम पुरुषार्थ समझ ब्रह्मपर होकर ८ पूर्वोक्त आसनपर बैठकर अभ्यास करै ॥ १४ ॥

युञ्जनेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ।
शान्ति निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥१५॥

योगी १ सदा २ एवम् ३ आत्मानम् ४ युञ्जन् ५ नियतमानसः ६ शान्तिम् ७ अधिगच्छति ८ निर्वाण परमाम् ९ मत्संस्थाम् १० ॥ १५ ॥ अ० उ० इस प्रकार अभ्यास करने से जो होताहै सो सुन अर्जुन योगी विरक्त १ सदा २ इसप्रकार ३ शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण को ४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समाधान करताहुआ ५ निरोध हुआ है मन जिसका ६ सो❋शान्तिको ७ प्राप्त होता है ८ कैसी है वह शान्ति❋मोक्षमें निष्ठा है जिसकी अर्थात् मोक्षमें तात्पर्य है जिसका ९ और वह शान्ति❋सच्चिदानन्द रूपहै १० उसको प्राप्तहोता है तात्पर्य—परमगति मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १५ ॥

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।
न चातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन॥ १६॥

अर्जुन १ अति २ अश्नतः ३ तु ४ योगः ५ न ६ अस्ति ७ एकान्तम् ८ अनश्नतः ९ च १० न ११ अति १२ स्वप्नशीलस्य १३ च १४ न १५ जाग्रतः १६ च १७ न १८ एव १९ ॥ १६ ॥ अ० उ० ध्यानानिष्ठ योगीके अब आहारादिका नियम कहते हैं, दो मन्त्रों में. यह भी बहिरङ्ग साधन उपयोगी है❋हे अर्जुन ! १ बहुत २ भोजन करनेवालेको ३ भी ४ योगका फल परमानन्द ५ नहीं ६ होता ७ अर्थात् योगसिद्ध नहीं होता अत्यन्त ८ नहीं खानेवाले को ९ भी १० नहीं ११ बहुत १२ सोनेवालेको १३ भी १४ नहीं १५❋जागनेवालेको १६ भी १७ नहीं १८ योग सिद्ध होता❋निश्चय १९ सि० यही बात है ॥ १६ ॥

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥ १७ ॥

कर्मसु १ युक्तचेष्टस्य २ युक्ताहारविहारस्य ३ युक्तस्वप्नावबोधस्य ४ दुःखहा ५ योगः ६ भवति ७ ॥ १७ ॥ अ० उ० ऐसे पुरुषको योग सिद्ध होताहै❋युक्तका खाना और चलना है जिसका १ शौच स्नानादि ❋कर्मों में २ प्रमितयाने मापी हुई क्रिया है जिसकी ३ युक्तका सोना जागना है जिसका ४ उसको दुःखोंका नाश करनेवाला ५ योग ६ सि० सिद्ध❋होता है ७ टी० चार भागमें से दो भाग तो अन्नसे पूर्णकरें एक जलसे पूर्णकरे एक भाग पवन आनेजाने के लिये खाली भाग रक्खे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तात्पर्य—यह कि एक बेर कुछ क्षुधा रखकर भोजन करना❀" द्वौ भागौ पूरयेदन्नैस्तोयेनैकं प्रपूरयेत । मारुतस्यप्रचारार्थं चतुर्थमवशेषयेत "❀ सिवाय शौचस्नान भिक्षाके वृथा डोलना फिरना बे योग है. क्रियाका प्रमाण बांधना योग्य है अर्थात् इतनीदूर जंगलजाना इतनी देरमें स्नानकरना अमुक समय इतनी देरमें भोजन करना ये सब विधि मनुआदि धर्मशास्त्र में से श्रवण करने योग्य है ३ रात्रिके वीचमें डेढपहर सोना सिवाय उसके सदा जागना योग्य है ॥ १७ ॥

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ।
निस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥ १८ ॥

यदा १ विनियतम् २ चित्तम् ३ आत्मनि ४ एव ५ अवतिष्ठते ६ सर्वकामेभ्यः ७ निस्पृहः ८ तदा ९ युक्तः १० उच्यते ११ इति १२ ॥ १८ ॥

अ० उ० किसकालमें योग सिद्ध होता है, इस आपेक्षामें कहते है जिस कालमें १ भलेप्रकार निरोधहुआ जीता हुआ २ चित्त ३ आत्मा में ४ ही ५ ठहरता है ६ सब कामों से ७ दूर होगई है तृष्णा जिसकी ८ सि० सो तिसकाल में ९ सिद्धयोगी १० कहा है ११ यह १२ जानना योग्य है अर्थात् जिसकालमें इसलोक व परलोककी सब कामना दूर होजावें और चित्त भलेप्रकार एकाग्र होकर आत्मा में स्थित हो जिसका सो महात्मा तिसकाल में सिद्धयोगी कहा जाता है तात्पर्य—जब ऐसा हो जाय, कि जैसा इस मन्त्र में कहा है तब समझना कि मुझको अब योग सिद्धहुआ ॥ १८ ॥

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता ।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥ १९ ॥

यथा १ दीपः २ निवातस्थः ३ न ४ इङ्गते ५ सा ६ उपमा ७ स्मृता ८ योगिनः ९ यतचित्तस्य १० आत्मनः ११ योगम् १२ युञ्जतः १३ ॥ १९ ॥

अ० उ० एकाग्रचित्त की उपमा यह है❀जैसे १ दीपक २ पवनरहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जगह जलता हुआ ३ नहीं ४ हलता ५ सो ६ उपमा ७ कही है ८ योगी के ९ जीतेहुये चित्तकी १० अर्थात् जिस योगी का भलेप्रकार अन्तःकरण निरोध है उस अन्तःकरणकी यह उपमा है कि जैसे पवनरहित जगहमें जलताहुआ दीवा नहीं हलता ऐसेही उसयोगीका चित्त स्थिर रहता है फिर कैसा है वह योगी कि जिसका चित्त स्थिर रहता है सो कहते हैं ❋ आत्माकी ११ प्राप्तिके लिये ❋ आत्मध्यान योगके १२ अनुष्ठान करनेवाले का १३ सि० चित्त स्थिर रहताहै ❋ ॥ १९ ॥

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥२०॥

यत्र १ योगसेवया २ निरुद्धम् ३ चित्तम् ४ उपरमते ५ यत्र ६ च ७ आत्मना ८ आत्मानम् ९ एव १० पश्यन् ११ आत्मनि १२ तुष्यति १३ ॥ २० ॥ अ० उ० जिसकालमें १ समाधियोगका अनुष्ठान करके २ निरोध हुआ ३ चित्त ४ संसार से ❋ उपराम होता है ५ और जिसकालमें ६ । ८ समाधि करके शुद्ध किया हुआ जो अन्तःकरण तिस ❋ अन्तःकरण करके ८ परमचैतन्य ज्योतिः स्वरूप आत्माको ९ ही १० देखता हुआ ११ अर्थात् आत्माको प्राप्त हुआ ११ सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मामें १२ सन्तुष्ट होता है १३ तिसकालमें योग की सिद्धि होती है ॥ २० ॥

सुखमात्यन्तिकं यत्तद् बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥ २१ ॥

यत् १ आत्यन्तिकम् २ सुखम् ३ अतीन्द्रियम् ४ बुद्धिग्राह्यम् ५ यत्र ६ च ७ अयम् ८ स्थितः ९ तत् १० वेत्ति ११ तत्त्वतः १२ एक १३ न १४ चलति १५ ॥ २१ ॥ अ० उ० ❋ जो १ अत्यन्त २ सुख ३ इन्द्रियों का विषय नहीं ४ अपने अनुभव करके ग्रहण होता है ५ और जिसकालमें ६ । ७ यह ८ विद्वान ९ आत्मस्वरूप में ❋ स्थितहुआ ९ तिसको अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तिस सुखको १० अनुभव करता है ११ आत्म❀तत्त्व से १२ भी १३ नहीं १४ चलता १५ सि० तिसकालमें योग की सिद्धि होती है❀॥ २१ ॥

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥२२॥

यम् १ लब्ध्वा २ अपरम् ३ अधिकम् ४ लाभम् ५ न ६ मन्यते ७ ततः ८ यस्मिन् ९ च १० स्थितः ११ गुरुणा १२ दुःखेन १३ अपि १४ न १५ विचाल्यते १६ ॥ २२ ॥ अ० सि० जिसको अर्थात् आत्माको १ प्राप्त होकर २ अपर ३ अधिक ४ लाभ ५ नहीं ६ मानता है ७ तिससे अर्थात् आत्माके लाभसे ८ और जिसमें अर्थात् आत्मामें ९ । १० स्थितहुआ ११ बड़े १२ दुःखकरके १३ भी १४ नहीं १५ विचलता है १६ ॥२२॥

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम् ।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ॥२३॥

तम् १ योगसंज्ञितम् २ विद्याद् ३ दुःखसंयोगवियोगम् ४ सः ५ योगः ६ अनिर्विण्णचेतसा ७ निश्चयेन ८ योक्तव्यः ९ ॥ २३ ॥ अ० उ०❀पिछले तीन मन्त्रोंमें जो आत्मा की अवस्था विशेष कही❀तिसको १ योगसंज्ञित २ जान तू ३ अर्थात् योग है संज्ञा जिसकी तात्पर्य—जिस अवस्था विशेषका योग नाम है उसी को तू योग जान पिछले तीन मन्त्रोंमें जो आत्माकी अवस्था विशेष कही उसीका नाम योग है कैसा है वह योग❀दुःख के संयोग का वियोग है जिसमें अर्थात् दुःख और विषयसम्बन्धी सुख जहां कोई नहीं केवल निरतिशय आनन्द है विषय सम्बन्ध सुख भी विद्वान् की दृष्टि में दुःखोंका मूल है क्योंकि अतिशयवाला सुख दुःख रूप है इसजगह योग शब्दको विपरीत लक्षण समझना क्योंकि इस जगह वियोगका नाम जो योगसंज्ञित है यह विपरीत अलंकार कहलाताहै जैसे सुन्दरको बे सुन्दर कहना❀सो ५ योग ६ अनि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विण्ण चित्त करके ७ शास्त्र आचार्यों से❋निश्चय करके ८ अनुष्ठान करना योग्य है ९ अर्थात् आत्मामें तत्पर होना योग्य है❋टी० दुःख बुद्धि करके प्रयत्न की जो शिथिलता उसको छोड़कर अर्थात् चित्तमें यही नहीं चिन्तन करना कि इसमें तो दुःख प्रतीत होता है पीछेका आनन्द फल किसने देखा है. ऐसा समझकर चित्तको कच्चा न करै वारंवार उत्साह धीरज करै ॥ २३ ॥

संकल्पप्रभवान् कामांस्त्यक्त्वासर्वानशेषतः।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥ २४ ॥
शनैः शनैरुपरमेद् बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किंचिदपि चिन्तयेत् २५॥

संकल्पप्रभवान् १ कामान् २ सर्वान् ३ अशेषतः ४ त्यक्त्वा ५ मनसा ६ एव ७ समन्ततः ८ इन्द्रियग्रामम् ९ विनियम्य १० ॥ २४ ॥ शनैः १ शनैः २ उपरमेत ३ धृतिगृहीतया ४ बुद्ध्या ५ मनः ६ आत्मसंस्थम् ७ कृत्वा ८ किंचित् ९ अपि १० न ११ चिन्तयेत् १२ ॥ २५ ॥ अ०❋संकल्प से उत्पन्न होती हैं १ सि० योगकी वैरी जो❋कामना २ तिन❋सबको ३ समूल ४ त्यागकरके ५ विवेकयुक्त❋मन करके ६ निश्चय ७ सब तरफ से ८ इन्द्रियोंके समूहको ९ रोककर १० ॥ २४ ॥ सहज १ सहज २ अर्थात् अभ्यास क्रमकरके संसारसे❋उपराम हो ३ अर्थात् देखने, सुनने, बोलने, खाने, सोने आदि क्रियाओं से मनको शनैः शनैः हटा कर आत्मामें दिन दिन प्रति विशेष लगाना योग्य है ३❋धीरज के सहित ४ बुद्धि करके ५ अर्थात् धीरज करके वशमें करीहुई जो बुद्धि तिसकरके ५ मनको ६ आत्मामें भलेप्रकार स्थित ७ करके ८ अर्थात् यह

---

१ जिसप्रकार पात्रमें स्थित तैल नष्ट भी होजाय तो भी उसका लेसपात्रमें रहताही है तिसी प्रकार वासनासे परिणत अन्तःकरण तदाकार परीणामितासे विषय वासना नष्ट हुये परभी वासनाके लेशसे युक्त रहता है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब आत्माही है आत्मासे पृथक् कुछभी नहीं इसप्रकार मनको आत्माकार करके ८ कुछ ९ भी १० न ११ चिन्तन करे १२ यही योगकी परम अवधि है❀टी० चौवीसवें मन्त्रकी❀चित्तसे किंचिन्मात्र भी चिन्तन किया और कामना उत्पन्न हुई इसवास्ते विषयोंका चिन्तन करनाही अनर्थका हेतु है १ "सर्वान् अशेषतः" इन दोनों पदोंके अर्थमें कुछ भेद नहीं प्रतीत होता. दो पद के कहने से तात्पर्य—श्रीमहाराजका यह है, कि इस लोक परलोक की कामना गन्धमात्र भी न रहने पावे. कामनासे अन्तःकरण को निर्लेप करदेना योग्य है ३। ४ शब्दादि विषयों से ८ सब इन्द्रियों को ९ निरोधकरके १० पूर्वोक्त योगका अनुष्ठान करना योग्य है❀॥ २५ ॥

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥ २६ ॥

अस्थिरम् १ चञ्चलम् २ मनः ३ यतः ४ यतः ५ निश्चरति ६ ततः ७ ततः ८ नियम्य ९ एतद् १० आत्मनि ११ एव १२ वशम् १३ नयेत् १४ ॥ २६ ॥ अ० उ०❀विचारने से भी जो कदाचित् रजोगुणके वशसे मन न ठहरे आत्मा में तो फिर प्रत्याहार करके ठहराना योग्य है सोई कहते हैं❀अस्थिर १ चञ्चल २ मन ३ जिस जिस ५ विषय में❀जावे ६ तहां ७ तहां से ८ रोककर ९ इसको १० अर्थात् मनको १० आत्मामें ११ ही १२ वश १३ करे १४ अर्थात् आत्मामें ही स्थिरकरे टी० मनका स्वभाव ही यह है कि एक जगह नहीं ठहरता सदा का चञ्चल है १।२ इसप्रकार अभ्यास करनेसे यह मन अस्थिर आत्मामें स्थिर होजाता है. आत्मामें इसवास्ते मनपर सदा दृष्टि रखनी योग्य है ॥ २६ ॥

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥ २७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एनम् १ योगिनम् २ हि ३ उत्तमम् ४ सुखम् ५ उपैति ६ शान्तर-जसम् ७ प्रशान्तमनसम् ८ ब्रह्मभूतम् ९ अकल्मषम् १० ॥ २७ ॥ अ० उ० ❋इसप्रकार अभ्यास करने से रजोगुणका नाश होताहै. रजो-गुणका नाशहोने से योगका फल आत्मसुख प्राप्त होता है. यह कहते हैं❋ इस योगीको १ । २ ही ३ उत्तम ४ सुख ५ प्राप्त होता है ६ सि० कैसा है यह योगी❋शान्त होगया है रजोगुण जिसका ७ भले प्रकार शान्त होगया है मन जिसका ८ जीवन्मुक्त ९ निष्पाप अर्थात् धर्म अधर्म करके वर्जित १० तात्पर्य ऐसे योगीको निरतिशय सुख प्राप्त होता है ॥ २७ ॥

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते ॥ २८ ॥

एवम् १ योगी २ सदा ३ आत्मानम् ४ युञ्जन् ५ अत्यन्तम् ६ सुखम् ७ अश्नुते ८ विगतकल्मषः ९ सुखेन १० ब्रह्मसंस्पर्शम् ११ ॥ २८ ॥ अ० इसप्रकार १ योगी २ सदा ३ मनको ४ वश करता हुआ ५ अत्यन्त ६ सुखको ७ अर्थात् निरतिशय सुखको ७ प्राप्त होता है ८ सि० कैसाहै वह योगी❋दूरहोगये हैं पाप जिसके ९ सो वह फिर कैसे सुख को प्राप्त होता है अर्थात् कैसा है वह सुख❋अनायास करके १० ब्रह्म-जीवका स्पर्श है जिसमें ११ अर्थात् जीव ब्रह्मकी एकताको प्राप्त होता है जिसको अखण्डानन्द साक्षात्कार कहते हैं तात्पर्य—जीवन्मुक्त होजाता है जीवते हुयेही उस नित्य अखण्डानन्द को अनुभव करता है ११ ॥ २८ ॥

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ २९ ॥

योगयुक्तात्मा १ सर्वत्र २ समदर्शनः ३ आत्मानम् ४ सर्वभूतस्थम् ५ सर्वभूतानि ६ च ७ आत्मनि ८ ईक्षते ९ ॥ २९ ॥ अ० उ० अब इस योगका फल जीव ब्रह्मकी एकता को दिखाते हैं❋योग करके युक्त है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तःकरण जिसका अर्थात् समाहित अन्तःकरणवाला १ सब जगह २ सम देखनेवाला ३ सि० अपने ❋ आत्माको ४ सबभूतोंमें स्थित ५ और सब भूतोंको ६। ७ अपने ❋ आत्मामें देखता है. टी० ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्यंत आत्माकी एकता देखता है ६ सब विषयभूतों में ब्रह्माजी से लेकर स्थावरपर्यंत निर्विशेष ब्रह्म और आत्माकी एकता का ज्ञान है जिसके सो सर्वत्र सम देखनेवाला है ॥ २९ ॥

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥ ३०॥

यः १ माम् २ सर्वत्र ३ पश्यति ४ सर्वम् ५ च ६ मयि ७ पश्यति ८ तस्य ९ अहम् १० न ११ प्रणश्यामि १२ सः १३ च १४ मे १५ न १६ प्रणश्यति १७ ॥ ३० अ० उ० जीव ब्रह्मकी एकता देखने का फल कहते हैं, यही मुख्य उपासना परमेश्वरकी है ❋ जो १ मुक्त सच्चिदानन्द परमेश्वर को २ सर्वत्र ३ देखता है ४ और सबको ५। ६ मुझमें ७ देखता है ८ अर्थात् मुझ सबके आत्माको सब भूतोंमें और सब भूतोंको मुझ सब भूतोंके आत्मामें जो देखता है ❋ तिसको ९ मैं १० नहीं ११ परोक्ष हूं १२ अर्थात् जो ऐसे समझता है उसीको मैं साक्षात्कार हूं वही मेरा दर्शन करता है आत्मासे पृथक् मैं नहीं ❋ और सो १३। १४ विद्वान् १४ मुझको १५ नहीं १६ परोक्ष है १७ अर्थात् वह मेरी आत्मा है वही मुझको सदा अपरोक्ष है इसी हेतुसे ब्रह्मका जाननेवाला ब्रह्म कहलाता है मुझमें और ज्ञानी में किंचित् भेद नहीं ॥ ३० ॥

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्त्तते॥ ३१॥

एकत्वम् १ आस्थितः २ यः ३ माम् ४ सर्वभूतस्थितम् ५ भजति ६ सः ७ योगी ८ सर्वथा ९ वर्तमानः १० मयि १२ वर्तते १३ ॥ ३१ ॥ अ०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ० पूर्वमन्त्रोक्त ज्ञानी विधिनिषेधका दास नहीं, अर्थात् परतन्त्र नहीं, स्वतन्त्र है. यह कहते हैं❀ब्रह्मके साथ❀एकता को १ प्राप्त हुआ २ अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप अपने प्रत्येक आत्माको पूर्णब्रह्म जानता हुआ २ जो ३ मुझ सच्चिदानन्द सब भूतों में स्थित ४। ५ सि० से को भजता है अर्थात् यह सब वासुदेव है ऐसे जो समझता है ❀सो ७ योगी ज्ञानी ८ सर्वथा ९ वर्त्तमान १० भी ११ मुझ सच्चिदानन्द स्वरूप में बर्तता है १२। १३ टी० विधि निषेधको उल्लंघन करभी जो विद्वान् का व्यवहार किसी को प्रतीत होता हो तो भी विद्वान् वेदों के साक्षी से ब्रह्ममेंही विहार करता है विधि निषेध अज्ञानियोंके वास्ते है. विद्वानोंका व्यवहार प्राप्तितक विदेह मुक्तिमें क्षति करनेवाला नहीं यह बात आनन्दामृतवर्षिणीके तृतीयअध्यायमें भले प्रकार स्पष्ट कीगई है द्रष्टव्यम ॥ ३१ ॥

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ॥
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥३२॥

अर्जुन १ यः २ आत्मौपम्येन ३ सर्वत्र ४ समम् ५ पश्यति ६ सुखम् ७ वा ८ यदि ९ वा १० दुःखं ११ सः १२ योगी १३ परमः १४ मतः १५ ॥ ३२ ॥ अ० उ० ज्ञानियों में ऐसा ज्ञानी श्रेष्ठ है❀हे अर्जुन! १ जो २ विद्वान् २ आत्माकी उपमा करके ३ सर्वत्र ४ सम ५ देखता है ६ सुखको ७ भी ८ और ९ दुःखको भी १०। ११ सो १२ विद्वान् १३ श्रेष्ठ १४ माना है १५ सि० महात्मा पुरुषोंने अर्थात् महात्मा ऐसे विद्वान् को उत्तम मानते हैं टी० जैसे इष्ट के और अनिष्ट की प्राप्तिमें मुझको दुःख सुख होता है. ऐसेही सबको होता है. इसवास्ते जहांतक होसके किसी को शरीर मन वाणी से दुःख नहीं देना सुख देना, योग्य है. आपको सुख तो शूकर कूकरभी चाहते प्रयत्न करते हैं दूसरे को सुख देना परोपकार करना सज्जनों का काम है. नहीं तो पशु, पक्षी, मनुष्यों में क्या विशेषता हुई?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथवा ऐसेही सब जीव हैं आत्मासे दूसरे को नीच समझना नीचों का काम है आत्मदृष्टि करके और देहदृष्टि करके भी सम देखना योग्य है. क्योंकि देह सबके अनित्य हैं और आत्मा सबका नित्य है. यह विचार परमार्थ का है. व्यवहार में परमार्थ नहीं मिलसक्ता ॥ ३२ ॥

अर्जुन उवाच—

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात् स्थितिं स्थिराम् ३३

मधुसूदन १ अयम् २ यः ३ योगः ४ साम्येन् ५ त्वया ६ प्रोक्तः ७ एतस्य ८ स्थिराम् ९ स्थितिम् १० अहम् ११ न १२ पश्यामि १३ चञ्चलत्वात् १४ ॥ ३३ ॥ अ० उ० श्रीभगवान् का यह उपदेश सुनकर अर्जुनने विचार किया कि श्रीमहाराज जो कहते हैं वह तो सब सत्य है. परन्तु मन, लय विक्षेपरहित होकर आत्माकार सम दीर्घकाल स्थित रहै यह मेरी कम समझसे मुझको असम्भव प्रतीत होता है इसी हेतुसे कहे-हुये लक्षण श्रीमहाराजके में असम्भाव दोष मानता हुआ अर्जुन प्रश्न करता है जिज्ञासा करके दो श्लोकों में ❋ हे कृष्णचन्द्र ! १ यह २ जो ३ योग ४ समता करके ५ आपने ६ कहा ७ इसकी ८ दीर्घकाल ९ स्थिति १० मैं ११ नहीं १२ देखता हूं १३ अर्थात् क्षण दो क्षण घडी दो घडी मन लय विक्षेप रहित होकर समता को प्राप्त होजाय यह तो सम्भव होसक्ता है परन्तु सदा अथवा दिन रात्रि में पांच चार पहर मन सम आत्माकार रहे यह मेरी कम समझ से असम्भव है क्योंकि मनको ❋ चञ्चल होनेसे १४ अर्थात् मन तो चञ्चल है वह कैसे ठहर सक्ता है ॥३३॥

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याऽहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥ ३४॥

हे कृष्ण १ मनः २ चञ्चलं ३ हि ४ प्रमाथि ५ बलवत् ६ दृढम् ७ तस्य ८ निग्रहम् ९ वायोः १० इव ११ सुदुष्करम् १२ अहं १३ मन्ये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१४ अ० उ० ❋ सिवाय चञ्चल होनेके जो मनमें और भी दोष हैं. उनको भी प्रकट करता है अर्जुन ❋ हे भगवन् ! १ मन २ चञ्चल ३ है यह तो प्रसिद्धही है ४ सि० सिवाय इसके जो इसमें और भी दोष हैं उनको सुनिये प्रथम तो चञ्चल, दूसरे ❋ प्रथम न स्वभाववाला अर्थात् शरीर इन्द्रियों को विक्षेप करनेवाला और परवश करनेवाला है ५ सि० तीसरे यह कि ५ बलवाला ६ ऐसा है विवेकी जनोंके वशमें भी नहीं रहता अर्थात् जो भलेप्रकार शोचते समझते भी हैं, कि इस काम करनेमें यह यह दोष और यह यह दुःख हैं तोभी मनके वश होकर उसी काममें प्रवृत्त होते हैं. चौथे यह कि अनादि काल कालका शब्दादि विषयों की वासना में ऐसा ❋ दृढ बंधा-हुआ है कि अनेक कर्म उपासनादि करते भी हैं तो भी विषयों से पृथक् नहीं होता है. परमेश्वर आपकी कृपासे जो होजाय वह तो सब सत्य है परंतु मैं तो मनका निरोध पवनवत् अति कठिन समझता हूं. यह अभिप्राय है इसीको अक्षर में योजना करते हैं ❋ तिसका ८ अर्थात् मनका निग्रह ९ वायु १० वत् ११ अति कठिन १२ मैं १३ मानता हूं १३ जैसे पवन का रोकना विषयों से कठिन प्रतीत होता है ॥ ३४ ॥

श्रीभगवानुवाच—

असंशयं महाबाहो मनोदुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ ३५ ॥

महाबाहो १ असंशयम् २ मनः ३ दुर्निग्रहम् ४ चलम् ५ कौन्तेय ६ अभ्यासेन ७ तु ८ वैराग्येण ९ च १० गृह्यते ११ ॥ ३५ ॥ अ० उ० अर्जुनने जो मनकी गति कही उसको अङ्गीकार करके श्रीभगवान् मनके निरोधका उपाय बताते हैं ❋ हे अर्जुन ! १ सि० पीछे दो मन्त्रों में जो तुमने मनकी गति कही सो सत्य है ❋ नहीं है संशय उसमें २ मन ३ दुर्निग्रह ४ है अर्थात् मनका रोकना कठिन है सि० और कैसा है यह मन कि ❋

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चलताही रहताहै कभी स्थिर नहीं होता ५ परन्तु ❋ हे अर्जुन ! ६ सि० अभ्यास करके ७ तो ८ और वैराग्य करके ९ । १० वश में होसक्ता है ११ टी० मनकी जो गति हैं लय और विक्षेप लय अभ्यास करके विक्षेप वैराग्य करके दूर होताहै ❋ विजातीय का तिरस्कार करके सजातीय का प्रवाह करना अर्थात् वृत्तिको आत्माकार करना इसको अभ्यास कहते हैं और विषयों में दोष दृष्टि करनी इसको वैराग्य कहतेहैं और भी वैराग्यके लक्षण जहां तहां मोक्षशास्त्रमें प्रसिद्ध हैं. वश करनेके मुख्य ये दोही उपाय हैं. इनको छोड जो पृथक् यत्न करते हैं वे वृथा मृगतृष्णावत् भ्रमते हैं. यह अभ्यास वैराग्य तो हो नहीं सक्ता वृथा साधु महात्मा महापुरुषों में वाक्यवादी माथा मारते हैं अर्थात् वारंवार यही बूझते हैं कि महाराज मनका निरोध जैसे हो ऐसी कोई रीति कहो हजारोंबेर मनके निरोधका उपाय वैराग्यको सुनतेहैं तो भी माथा मारतेही रहते हैं कभी क्षणमात्र अनुष्ठान करने को तो क्या प्रसंगहै ? अनुष्ठान करनेवाले को यह याद रहे कि वैराग्य और अभ्यास में वैराग्य प्रथम पीछे अभ्यास होसक्ता है पाठक्रम से अर्थक्रम बलवान् होता है ॥ ३५ ॥

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः ।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः॥ ३६ ॥

असंयतात्मना १ योगः २ दुःप्राप ३ इति ४ मे ५ मतिः ६ वश्यात्मना ७ यतता ८ तु ९ उपायतः १० अवाप्तुम् ११ शक्यः १२ ॥ ३६ ॥ अ० नहीं भले प्रकार जीताहै मन जिसने सि० १ उसको ❋ योग २ प्राप्त होना कठिन है ३ यह ४ मेरी ५ समझ ६ अर्थात् यह मेरा निश्चय किया हुआ है और ❋ वशवर्त्ति है मन जिसका अर्थात् मन जिसके वशमें है उस ७ यत्न करनेवाले को ८ तो ९ वैराग्य और अभ्यास इनहीं दोनों ❋ उपायसे १० सि० योग ❋ प्राप्त होनेको ११ शक्य है अर्थात् प्राप्त होसक्ता है १२ टी० जीव ब्रह्मकी एकताका नाम योग है २. तात्पर्य—वैराग्य अभ्यास करके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिसने मन वश कियाहै उसको नित्य अखण्डानन्द की प्राप्ति होती है विना वैराग्य अभ्यास के कोई आशा आनन्द छाया की भी न रक्खै ॥ ३६ ॥

अर्जुन उवाच—

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलित मानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति॥३७

श्रद्धया १ उपेतः २ योगात् ३ चलितमानसः ४ अयतिः ५ योगसंसिद्धित् ६ अप्राप्य ७ काम् ८ गतिम् ९ गच्छति १० कृष्ण ११ ॥३७॥ अ० उ० शास्त्रकी विधिको सुन समझकर बहिरङ्ग नित्यादि कर्मोंको त्यागकरके श्रद्धापूर्वक जो कोई मुमुक्षु ज्ञानमार्गमें प्रवृत्त हो, अर्थात् वेदान्त शास्त्रके श्रवणादिमें तत्परहो और प्रारब्धवशात् वा किसी प्रतिबन्धसे ज्ञान प्राप्त न हो और वैराग्य अभ्यासमें भी शिथिल होजाय और मन विषयों की तरफ लगजाय ऐसे पुरुषकी क्या गति होगी? क्योंकि कर्मोंके त्यागदेनेसे तो उसको स्वर्गादिकी प्राप्ति न होगी और ज्ञान न होने से वह मुक्त न होगा और श्रद्धापूर्व्वक ज्ञानयोगमें प्रवृत्तहोनेसे उसको गति होनी न चाहिये क्योंकि ब्रह्मविद्या के लक्षणमात्र श्रवण करनेका अत्यन्त महात्म्य है. यह संशय करके अर्जुन प्रश्नकरता है ❋ ज्ञानयोग में ❋ श्रद्धाकरके १ युक्त २ अर्थात् ज्ञानयोगमें श्रद्धावान् और किसी प्रतिबन्ध करके अर्थात् किसी हेतु करके ❋ ज्ञानयोग से ३ चलित होगया है मन जिसका ४ अर्थात् श्रवणादि से हटकर विषयों में लगगयाहै मन जिस का ❋ नहीं यत्नकिया है ५ भले प्रकार वैराग्य अभ्यास में जिसने अर्थात् मन्द वैराग्य शिथिल अभ्यास रहाहै जो सो मुमुक्षु ❋ योगकी सिद्धिको अर्थात् जीव ब्रह्मकी एकता के ज्ञानको ६ नहीं प्राप्तहोकर ७ किसी ८ गतिको ९ प्राप्तहोता है १० हे कृष्णचन्द्र महाराज ! ११ ॥ ३७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कच्चिन्नोभय विभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिवनश्यति ।
अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि ॥ ३८ ॥

उभयविभ्रष्टः १ छिन्नाभ्रम् २ इव ३ कच्चित् ४ नश्यति ५ न ६ महाबाहो ७ ब्रह्मणः ८ पथि ९ विमूढः १० अप्रतिष्ठः ११ ॥ ३८ ॥ अ० कर्ममार्ग और ज्ञानमार्ग में❋ उभय भ्रष्टहुआ १ छिन्नाभ्र २ वत् ३ अर्थात् बादल के टूककी तरह❋ क्या ४ नाश होजाता है? ५ क्या नहीं❋ ६ नाशहोता❋ हे कृष्णचन्द्र! ७ कैसा है वह अयति❋ ब्रह्म के ८ मार्ग में ९ विमूढ हुआ १० निराश्रय ११ है अर्थात् उसको न कर्म योगका आश्रयरहा न ज्ञानहोगका टी० जैसे बादलका टूक एक बादलमें से पृथक् होकर पवन के बादल दूरसे बादल की और जाता हुआ बीचमें ही नाश होजाता है २ ब्रह्मकी प्राप्ति के उपाय वैराग्य अभ्यास में ८। ९ शिथिल हुआ अर्थात् मन्दबुद्धि हुआ १० ॥ ३८ ॥

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः ।
त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते ॥ ३९ ॥

कृष्ण १ अशेषतः २ एतद् ३ मे ४ संशयम् ५ छेत्तुम् ६ हि ७ अर्हसि ८ त्वदन्यः ९ अस्य १० संशयस्य ११ छेत्ता १२ न १३ उपपद्यते १४ ॥ ३६ ॥ अ० हे कृष्णचन्द्र! १ समस्त २ इस ३ मेरे ४ संशय ५ छेदन करने को ६ आप❋ ही ७ योग्य हो ८ आपसे पृथक् ९ इस १० संशयका ११ दूर करनेवाला १२ नाशकरनेवाला १३ छेदन करनेवाला २२ नहीं १३ प्रतीत होता है १४ कोई मुझको आप सर्वज्ञहैं यह संशय आपही नाश करसक्ते हैं ॥ ३९ ॥

श्रीभगवानुवाच—

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।
न हिकल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति ॥४०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पार्थ १ तस्य २ विनाशः ३ न ४ एव ५ इह ६ न ७ अमुत्र ८ विद्यते ९ कल्याणकृत् १० काश्चित् ११ हि १२ दुर्गतिम् १३ न १४ गच्छति १५ तात १६ ॥ ४० अ० उ० हे अर्जुन ! १ तिसका २ अर्थात् ज्ञान-निष्ठ मुमुक्षुका २ नाश ३ न ४ तो ५ इसलोकमें ६ न ७ परलोकमें ८ होता हैं ९ अर्थात् पूर्वजन्मसे नीच जन्मकी प्राप्ति नहीं होती तात्पर्य—उसकी हानि (क्षति) न इसलोक में न परलोक में क्योंकि ❋शुभकर्म करनेवाला १० कोई ११ भी १२ दुर्गति को १३ नहीं १४ प्राप्त होता १५ हे तात ! १६ और यह तो बहुत उत्तम शुभ करनेवाला है क्योंकि श्रद्धापूर्वक जो ज्ञानयोग में प्रवृत्त हुआ है तात्पर्य—श्रद्धापूर्वक जो ज्ञानयोगमें प्रवृत्त होता है और किसी प्रतिवन्ध से जो उसको ज्ञान प्राप्त न हो अथवा मुमुक्षुही मन्दप्रयत्न रहे अर्थात् आत्मा की प्राप्ति के लिये भलेप्रकार प्रयत्न न करे और विना ज्ञान के उसका देहपात होजाय तो उसको विद्वान् लोग बुरा नहीं कहते न परलोक में उसको नरक की प्राप्ति होती है न पूर्व जन्मसे हीन जन्म की प्राप्ति होती है सो अगले मन्त्रों में कहते हैं इसी हेतुसे इस मन्त्रमें यह कहा कि उसका इस लोक व परलोकमें ❋नाश नहीं होता है❋ ॥ ४० ॥

प्राप्य पुण्यकृताँल्लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते॥४१॥

पुण्यकृतान् १ लोकान् २ प्राप्य ३ शाश्वतीः ४ समाः ५ उषित्वा ६ शुचीनाम् ७ श्रीमताम् ८ गेहे ९ योगभ्रष्टः १० अभिजायते ११ ॥ ४१ ॥ अ० उ० जो योगभ्रष्ट दुर्गति को नहीं प्राप्त होता तो फिर किस गतिको प्राप्त होता है इस अपेक्षा में कहते हैं ❋पुण्यकारी पुरुषों के १ लोकों को २ प्राप्त होकर ३ अर्थात् अश्वमेधादि यज्ञों के करनेवाले जिन लोकों में जाते हैं लाखों वर्ष वहां ४ । ५ बस कर ❋पवित्र ७ धन वालों के ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घरमें ९ योगभ्रष्ट १० जन्म लेता है ११ तात्पर्य—वेदोक्त मार्ग में चलने वाले श्रीमानोंमेंके कुल में योगभ्रष्ट उत्पन्न होता है कुमार्गियों के कुपात्र उत्पन्न होते हैं ॥ ४१ ॥

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।
एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्मयदीदृशम् ॥ ४२ ॥

अथवा १ धीमताम् २ योगिनाम् ३ एव ४ कुले ५ भवति ६ लोके ७ यत् ८ ईदृशम् ९ जन्म १० एतद् ११ हि १२ दुर्लभतरम् १३ ॥ ४२ अ० उ० ब्रह्मको परोक्ष समझकर जिसने थोड़ाही कभी कभी ब्रह्म विचार किया था, उसकी गति तो पिछले मन्त्रमें कही ❋ अब पक्षान्तर उसकी गति कहते हैं अथवा यह शब्द पक्षान्तर में भी आता है १ तात्पर्य—अब इस मन्त्र में उसकी गति कहते हैं कि जिसने बहुत ब्रह्म बिचार किया था और अपरोक्ष ज्ञान होने में कुछ थोडाही काल रहा था सो योगभ्रष्ट ❋ ज्ञानवान् २ योगियों के ३ ही ४ कुलमें ५ उत्पन्न ❋ होता है ६ इस ❋ लोकमें ७ जो ८ ऐसा ९ जन्म १० यह ११ ही १२ बहुत दुर्लभ है १३ क्योंकि ज्ञानियों के कुलमें जन्महोना मोक्षका हेतु है. कर्म-काण्डी धनवालों के नानाप्रकार का विक्षेप होनेसे उसी जन्ममें मोक्ष होजाना कठिन प्रतीत होता है ❋ "नास्य कुले ब्रह्मविद्भवति" इति—श्रुतिः ❋ यहां वेद प्रमाण है कि ज्ञानी के कुलमें अज्ञानी नहीं उत्पन्न होता अर्थात् ज्ञानी होजाता है उत्पन्न होकर ❋ तात्पर्य—इस लोकमें विचार करना आत्मतत्त्वका यही दुर्लभ है भोग तो सबलोकोंमें बराबर हैं अर्थात् पशु पक्षी आदमी देवतादि के भी भोग दुःख के देनेमें सब सम है केवल आकृतिका भेद है जो राजा को रानी में आनन्द वही कङ्गाल को अपनी स्त्री में और कूकर को कूकरी में वही आनन्द है खाना सोना मैथुन भयआदि सब जीवन में सम हैं मनुष्य देहमें एक ब्रह्मज्ञानही विशेष है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिसको ब्रह्मज्ञान नहीं सो पशु पक्षियों से भी नीच है क्योंकि पशु पक्षियोंका तो अज्ञान एक धर्म है. उनको बुरा कहना नहीं बनता इस मनुष्य निर्भाग ने मनुष्यदेह पाकर जो ब्रह्मज्ञान न सम्पादन किया तो फिर क्या अलौकिक पदार्थ सम्पादन किया. "आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुमानवानाम्। ज्ञानं नरणामधिको विशेषो ज्ञानेनहीनः पशुभिः समानः" ॥ ४२ ॥

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् ॥
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन ॥ ४३ ॥

तम् १ बुद्धिसंयोगम् २ पौर्वदेहिकम् ३ तत्र ४ लभते ५ कुरुनन्दन ६ ततः ७ भूयः ८ संसिद्धौ ९ च १० यतते ११ ॥ ४३ ॥ अ० तिस १ ज्ञान योगको २ पूर्व देहमें जिसके जानने की इच्छा करके अभ्यास करता था उसी को ३ श्रीमानों के कुलमें अर्थात् कर्मकाण्डियों के कुलमें अथवा ज्ञानियों के कुलमें ४ प्राप्त होता है ५ हे अर्जुन ! ६ फिर ७ अधिक ८ मोक्षमें ९ ही १० अर्थात् मुक्ति के वास्ते ही यत्न करता है॥४३॥

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्माऽतिवर्त्तते ॥ ४४ ॥

सः १ अवशः २ अपि ३ हि ४ तेन ५ एव ६ पूर्वाभ्यासेन ७ ह्रियते ८ योगस्य ९ जिज्ञासुः १० अपि ११ शब्दब्रह्म १२ अतिवर्तते १३ ॥ ४४ ॥ अ० उ० फिर अधिक यत्न करने में कारण है ❋ सो १ सि० योगभ्रष्ठ कर्मकाण्डियों के कुलमें अथवा ज्ञानियोंके कुलमें जन्म लेकर दैवयोगसे ❋ परवश २ भी ३ हो जावे अर्थात् माता, पिता, पुत्र, मित्र, धनादिमें आसक्त हो जावे अथवा भेदवादियों के पंजे में आजावे ❋ तो भी ४ सोई ५। ६ पूर्वाभ्यास ७ सि० कि जो अभ्यास करता करता योगभ्रष्ठ हुआ था वही ❋ विषयों से विमुख करके ब्रह्मविचारके सन्मुख कर देता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है ८ सि० योगभ्रष्टको ❀ हे अर्जुन ! ब्रह्मविचार का ऐसाही माहात्म्य है सो सुन ❀ ज्ञानयोग का ९ जिज्ञासु १० भी ११ शब्द ब्रह्मको १२ उलंघकर वर्तता है १३ अर्थात् कर्मकाण्ड को छोड़ ब्रह्मनिष्ठ होजाता है. टी०ब्रह्मविचार करनेवाला ब्रह्मनिष्ठ होजाय तो इसमें क्या कहना है. जो अनजान अवस्थामें क्षणमात्र भी यह चिन्तवन करता है कि मैं ब्रह्म हूं सो विचार महापातकों को दूर कर देता है. जैसे सूर्य तमको और जो समझकर बरसों चिन्तवन करते हैं. इनका तो क्या कहना है अर्थात उनकी सद्गति मोक्षमें किंचित् भी संदेहनहीं ❀ " क्षणं ब्रह्माहमस्मीति यः कुर्यादात्मचिन्तनम् । तन्महापातकं हन्ति तमः सूर्योदये यथा " ॥ ४४ ॥

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः ।
अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ॥ ४५ ॥

यतमानः १ योगी २ तु ३ प्रयत्नाद् ४ अनेकजन्मसांसिद्धः ५ ततः ६ पराम् ७ गतिम् ८ याति ९ ॥ ४५ ॥ अ० उ० योगभ्रष्ट तीसरे जन्ममें तो अवश्यही मुक्त होगा. इसमें सन्देह नहीं. यह कहते हैं. अर्थात् पिछले कहे हुए अर्थको फिर कैमुतिक न्यायकरके दृढ करते हैं ❀ जब कि जिज्ञासु परमपदको प्राप्त होता है, तो फिर ❀ प्रयत्न करनेवाला १ योगी २ जो ३ प्रयत्नमें ४ सि० निष्पाप होकर ❀ अनेक जन्मोंमें भलेप्रकार सिद्ध होकर अर्थात ब्रह्मवित् होकर ५ फिर ६ परम ७ गतिको ८ प्राप्त होता है ९ सि० इसमें क्या कहना है तात्पर्य—ब्रह्मका जिज्ञासु भी योगभ्रष्ट, मन्द वैराग्य दूसरेही जन्ममें सद्गति को प्राप्त होता है और प्रयत्न करनेवाला विद्वान् ज्ञानवान् होकर दूसरे जन्ममें अथवा उसी जन्ममें मोक्षको प्राप्त हो तो फिर इसमें क्या कहना है. प्रथम तो योगभ्रष्ट दूसरेही जन्ममें मोक्ष होगा और अनेक जन्ममें अर्थात् तीसरे जन्ममें मुक्ति हो तो इसमें क्या कहना है न एक अनेक इस प्रकार अनेक शब्दका अर्थ दो या तीन हो सक्ता है और अनेक जन्मका यह भी अर्थ है कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असंख्यात जन्मोंसे पुण्य करता जो चला आता हैं. वह उन पुण्योंके प्रतापसे निष्पाप ज्ञानवान् होकर पिछले जन्ममें ब्रह्मनिष्ठ होकर वही योगभ्रष्ट सद्गतिको प्राप्त हो तो इसमें क्या कहना है ॥ ४५ ॥

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपिमतोऽधिकः ॥
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगीभवार्जुन॥ ४६ ॥

योगी १ तपस्विभ्यः २ अधिकः ३ ज्ञानिभ्यः ४ अपि ५ अधिकः ६ मतः ७ कर्मिभ्यः ८ च ९ अधिकः १० ॥ ४६ ॥ अ० उ० ब्रह्मज्ञानका साधन अष्टाङ्गयोग, तप पण्डिताई कर्म से श्रेष्ठ है यह कहते हैं ❋ योगी १ तपस्वी पुरुषोंसे २ श्रेष्ठ ३ सि० हैं क्योंकि चान्द्रायणादि व्रतोंका करना, पञ्चाग्नि तपना, शीतकालमें प्रातः-काल स्नान करना आदि तप कहलाता है यह बहिरङ्ग साधन हैं ❋ पण्डितों से ४ भी ५ सि० योगी ❋ श्रेष्ठ ६ माना है ७ सि० इस जगह ज्ञानीका अर्थ जो पण्डित किया उसका तात्पर्य यह है कि विना अनुष्ठान करनेवाले जो केवल विद्यावान् ही हैं अर्थात् केवल श्रोत्रिय हैं ब्रह्मनिष्ठ नहीं समझना क्योंकि अष्टाङ्गयोग ज्ञानका अन्तरङ्ग साधन है जैसे विद्या तप विचारादि साधन हैं ❋ अग्निहोत्रादि कर्म करनेवालों से ८ भी ९ योगी १० श्रेष्ठ ११ सि० है क्योंकि यह भी साधन ज्ञानका बहिरङ्ग है ❋ हे अर्जुन ! १२ तिस कारण से १३ योगी १४ हो तू अर्थात् धारणा ध्यानादि में तत्पर हो क्योंकि यह ज्ञानका अन्तरङ्ग साधन है ॥ ४६ ॥

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः॥४७॥

सर्वेषाम् १ योगिनाम् २ अपि ३ मद्गतेन ४ अन्तरात्मना ५ यः ६ श्रद्धावान् ७ माम् ८ भजते ९ सः १० मे ११ युक्ततमः १२ मतः १३ ॥ ४७ ॥ अ० उ० ज्ञानका उत्तम साधन अन्तरङ्ग भगवद्भक्ति है. सब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्मयोगियों में भगवद्भक्त श्रेष्ठ हैं. सोई कहते हैं❋सब १ योगियों के २ मध्य में❋भी ३ मद्गत अन्तःकरण करके ४। ५ अर्थात् मुझ वासुदेव में अन्तःकरण समाहित करके❋जो ६ श्रद्धावान् ७ सि० ब्रह्म का जिज्ञासु❋ मुझको ८ भजता है ९ अर्थात् अभेद उपासना करता है❋सो १० मुझको ११ युक्ततम १२ सम्मत है १३ अर्थात् वह सब योगियों से श्रेष्ठ है ॥ ४७ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे आत्मसंयमयोगोनामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

॥ अथ सप्तमोऽध्यायः ॥

उ० बीचके छः अध्यायोंमें सातसे बारह तक उपासना करने के योग्य भगवत् का स्वरूप विशेष निरूपण किया गया है. उपासना करने के लिये जिस परमेश्वर की भक्ति करनी उसका स्वरूप भी तो पहले समझलेना उचित है. जो अपना स्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने समस्त गीताशास्त्रमें और विशेष बीच के छः अध्यायोंमें निरूपण किया है वह स्वरूप परमेश्वरका समझना. तात्पर्य यह कि पहले परमेश्वरका स्वरूप समझ कर फिर उनकी भक्ति करनी योग्य है. वारंवार परमेश्वर यह कहते हैं कि मुझमें मन लगा मेरा भजन कर. माम्, मम, अहम्, इत्यादि प्रयोग अस्मत् शब्दके हैं. जिस जगह यह प्रयोग हैं वहां तात्पर्य अस्मत् शब्दसे है अस्मत् आत्मा को कहते हैं. त्वम्, त्वाम्, ते इत्यादि युष्मत् के प्रयोग हैं. अस्मत् शब्दके प्रयोग भगवत् विषय जो गीताशास्त्र में हैं उनका तात्पर्य–किसी जगह तो मायोपहित चैतन्यमें है किसी जगह अविद्योपहित चैतन्य में किसी जगह शुद्धचैतन्यमें किसी जगह लीला विग्रह मूर्त्तिमें और किसी जगह सगुण ब्रह्ममें तात्पर्य है सब जगह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लीला विग्रह मूर्त्तिका अर्थ नहीं समझना. बहुत जगह तो सोपाधिक निरुपाधिकका भेद हमने दिखा दिया है. किसी किसी जगह स्पष्ट समझकर छोड़दिया है वहां विचार करलेना कि इस जगह तात्पर्य निरुपाधिक ब्रह्ममें है अथवा सोपाधिक ब्रह्ममें और यह भी विचार लेना कि इस जगह जो अस्मत् शब्दका प्रयोग है इसका तात्पर्य तत्पदार्थ में है अथवा त्वम् पदार्थ में है अथवा दोनों की एकता में है तब भगवत् का स्वरूप समझ में आवेगा नहीं तो यह अनर्थ नहीं समझ लेना कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज श्यामसुन्दर स्वरूपसे सिवाय श्रीसदाशिव शक्ति आदि देवता जीव हैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने मूर्त्तिको ही परब्रह्म कहा है किन्तु यह समझना कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज शुद्धसच्चिदानन्द निराकार अखण्ड पूर्णब्रह्म हैं. विष्णु, शिव, सूर्य, शक्ति, गणेशादि, वासुदेव, दाशरथि आदि उनकी लीला विग्रह मूर्त्ति हैं. जो रामकृष्णादिकी एकता में प्रमाण है वही विष्णुशिवादि की एकता में प्रमाण है ॥ १२ ॥

श्रीभगवानुवाच—

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥ १ ॥

पार्थ १ मयि २ आसक्तमनाः ३ मदाश्रयः ४ योगम् ५ युञ्जन् ६ यथा ७ समग्रन् ८ असंशयम् ९ माम् १० ज्ञास्यसि ११ तत् १२ शृणु १३ ॥ १ ॥ अ० उ० पिछले अध्यायमें श्रीभगवान्ने कहा कि जो मुझमें मन लगाकर मुझको भजता है वह कर्मयोगियोंमें श्रेष्ठ है इस वास्ते अब अपना वही स्वरूप कहते हैं कि जिसकी भक्ति करनी योग्य है. हे अर्जुन ! १ मुझमें २ आसक्त है मन जिसका ३ सि० और मेराही आश्रय ले रक्खा है जिसने ४ विभूति बल ऐश्वर्यादि सहित ८ निस्सन्देह ९ टी० जैसा स्वरूप हमें आगे कहना है उसमें मन लगाकर २। ३ सिवाय परमे-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्वरके और कोई नहीं है आश्रय जिसका ४ हे अर्जुन! इस प्रकार तू १ योगका ५ अभ्यास करता हुआ कि जो योग मैंने छठे अध्याय में निरूपण किया उस प्रकार मनको समाधान करके ६ जैसे मैं सोपाधिक और निरुपाधिक हूं वैसाही ७। ८ सन्देहरहित मुझ शुद्ध सच्चिदान निराकार निर्विकार को और लीलाविग्रह श्यामसुन्दरादि स्वरूपको जानेगा तू ९। १०। ११ सोई सि० आगे कहूंगा १२ सावधान होकर❀ सुन १३ ॥ १ ॥

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेहभूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥ २ ॥

इदम् १ ज्ञानम् २ ते ३ अहम् ४ वक्ष्यामि ५ सविज्ञानम् ६ अशेषतः ७ यत् ८ ज्ञात्वा ९ इह १० भूयः ११ अन्यत् १२ ज्ञातव्यम् १३ न १४ अवशिष्यते १५ ॥ २ ॥ अ० उ० आगे जो ज्ञान कहना है प्रथम उसकी इस श्लोक में स्तुति करते हैं❀ यह १ सि० जो आगे❀ ज्ञान २ तेरे अर्थ ३ मैं ४ कहूंगा ५ सो❀ विज्ञान के सहित ६ समस्त कहूंगा❀ जिसको ८ जानकर ९ अर्थात् जिस ज्ञानसे मुझको जानकर ९ मोक्षमार्गमें १० फिर अधिक ११ अन्य पदार्थ १२ जानने के योग्य १३ नहीं १४ शेष रहेगा १५ तात्पर्य उसीसे कृतार्थ होजायगा परोक्ष (शास्त्रद्वारा) जो परमेश्वरका ज्ञान है उसको ज्ञान कहते हैं और अनुभव युक्तिपूर्वक साक्षात् अपरोक्ष जो परमेश्वरका सन्देहराहित ज्ञान है उसको विज्ञान कहते हैं ॥ २ ॥

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ ३ ॥

मनुष्याणाम् १ सहस्रेषु २ कश्चित् ३ सिद्धये ४ यतति ५ यतताम् ६ अपि ७ सिद्धानाम् ८ माम् ९ तत्त्वतः १० कश्चित् ११ वेत्ति १२ ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अ० उ० विशेषकरके कम समझ लोग यह कहा करते हैं कि ईश्वरका ज्ञान सबको है जो इस प्रजाका कर्ता पालक है उसको समस्त गुणोंकी खानि समझना रूपरङ्ग उसमें नहीं इस हेतुसे कोई उसको देख नहीं सक्ता. अब विचारो कि यह तो समझ और निश्चय और नेह ऐसे तुच्छपदार्थों में जिनके स्मरण करने से समझवाले को ग्लानि आजाय जैसे स्त्री छोकरे धनान्ध नीच यह बडे आश्चर्यकी बात है कि सद्गुण करना छोड तुच्छपदार्थ धनान्धादि नीचपुरुषोंमें मन जावे तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त बोली मन्दमति आलसीविषयी बहिर्मुखोंकी हैं परमेश्वरके ज्ञानकी गन्धभी उनके पास होकर नहीं निकल यह सब उनका वाचक ज्ञान है क्योंकि उनके मुखमें परमेश्वरही धूलि डालकर भगवत् के स्वरूप का ज्ञान किसी अन्तर्मुख विरले महात्मा कोही है बहिर्मुख विषयी परमेश्वरको कभी नहीं जानसक्ते सोई इस श्लोकमें कहते हैं ❋ हजारो मनुष्योंमें १। २ कोई ३ सच्चिदानन्दकी प्राप्तिके लिये ४ प्रयत्न करता है ५ उन यत्न करनेवालोंमें ६ भी ७ कोई देहसे पृथक् सूक्ष्मरूप सच्चिदानन्दको जान जाता है ऐसे ❋ सिद्धोंमेंसे ८ मुझको ९ यथार्थ १० कोई ११ जानता है १२ तात्पर्य अब विचार करना चाहिये कि मनुष्योंसे व्यतिरिक्त जीवनको तो मोक्षमार्ग में प्रवृत्त लेशमात्र नहीं और मनुष्योंमें भी भरतखण्डसे अन्य द्वीपोंमें रहते हैं व श्रुति स्मृति के जो द्वेषी है. वे आत्मविद्याको भी नहीं जानते आत्मज्ञान तो बहुत कठिन है और भरतखण्डनिवासी वर्णाश्रमवालोंमें भी प्रायशः द्वैतवादी हैं प्रत्युत द्वैतवादी भी कम हैं विशष करके तो अनजान हैं किंचित् परलोक का उनको विचार नहीं और जो कोई परलोक के विचार में प्रवृत्त भी होता है तो नये नवीन पन्थ सम्प्रदायों ने उनको ऐसा भुला रक्खा है, कि उस व्यवस्था लिखनेके लिये पृथक् ग्रन्थ चाहिये तात्पर्य इन पूर्वोक्त सब उपाधियों से बचकर कोई महात्मा आत्माकी प्राप्तिके लिये प्रयत्न करता है और उनमें से कोई ईश्वरसे अभिन्न याथार्थ साच्चि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दानन्द आत्मा जानता है जिनको ब्रह्मविद्या प्राप्त हुई और ब्रह्मवत् पुरुष जिससे मिले उसके भाग्य की बड़ाई जितनी कीजावे वह कमसे कम है और जिन्होंने आत्मतत्त्व को जाना वे तो मन और वाणी से परे पहुँचे उनका क्या कहना है ॥ ३ ॥

भूमिरापोऽनलोवायुःखंमनोबुद्धिरेवच ।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्नाप्रकृतिरष्टधा ॥ ४ ॥

भूमिः १ आपः २ अनलः ३ वायुः ४ खम् ५ मनः ६ बुद्धिः ७ एव ८ च ९ अहंकारः १० इति ११ इयम् १२ मे १३ प्रकृतिः १४ अष्टधा १५ भिन्ना १६ ॥ ४ ॥ अ० उ० जिस प्रकार यथार्थ परमेश्वरका स्वरूप जानजाता है, सोई कहते हैं, प्रथम इस श्लोकमें अपरा प्रकृतिका स्वरूप निरूपण करते हैं क्योंकि प्रकृतिद्वारा भगवत्का ज्ञान होता है❋ पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश १ । २ । ३ । ४ । ५ सि० इनका अर्थ गन्धादि पञ्चतन्मात्रा समझना. इस जगह पञ्चीकृत पञ्च स्थूल भूत नहीं समझना और❋अहंकार ६ महत्तत्त्व७ । ८ । ९ अविद्या १० । ११ इस प्रकार मन और बुद्धि और अहंकारका अर्थ क्रमसे अहंकार और महत्तत्त्व और अविद्या समझना❋यह १२ मेरी १३ प्रकृति १४ आठप्रकार के १५ भेदको प्राप्त हुई है १६ अर्थात् एक प्रकृति अपरा यही कष्ट प्रकारकी है और आगे तेरहवें अध्यायमें इसीको चौबिस भेदमें निरूपण करूंगा❋ टी० गन्ध १ रस २ रूप ३ स्पर्श ४ शब्द ५ अहंकार ६ महत्तत्त्व ७ अविद्या ८ सबका कारण अविद्या है अविद्यासे महत्तत्त्व महत्तत्त्व से अहंकार अहंकार से शब्दादि उत्पन्न हुये हैं जैसे विष मिले हुये अन्नको विष कहते हैं इसी प्रकार अविद्योपहित चैतन्यको अविद्या कहा गया तात्पर्य-जगत्का कारण मायोपहित अव्यक्त है विना चैतन्य रचनादि क्रिया असम्भव है अविद्याका अर्थ इस जगह मूलाज्ञान प्रकृति समझना.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्यायमें इन सबका अर्थ विस्तारपूर्वक और क्रमसे लिखा है ॥ ४ ॥

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥ ५ ॥

इयम् १ अपरा २ इतः ३ तु ३ अन्याम् ४ जीवभूताम् ५ मे ६ पराम् ७ प्रकृतिम् ८ विद्धि ९ महाबाहो १० यया ११ इदम् १२ जगत १३ धार्यते १४ ॥५॥ अ० उ० इस श्लोकमें परा प्रकृति निरूपण करते हैं❋ पीछे जिसके आठ भेद कहे ॥ यह १ सि० प्रकृति❋ अपरा २ अर्थात् निकृष्ट अशुद्ध जड़ अनर्थ करनेवाली संसार बन्धको प्राप्त करनेवाली ऐसी २ है❋ २ इससे ३ । ३ जुदी ४ जीवरूपको ५ मेरी ६ परा ७ प्रकृति ८ जान तू ९ हे अर्जुन ! १० जिसने ११ यह १२ जगत् १३ धारण कर रक्खा है १४ ॥ टी० ॥ शुद्ध प्रकृष्ट, श्रेष्ठ मेरा आत्मरूप जान ७ इस जगत्को रचकर इसके भीतर जीवरूप होकर मैंही प्रवेश हुआ हूं ११ । १२ । १३ । १४ " ततसृष्ट्वातदेवानुप्राविशत इति श्रुतिः " ॥ ५ ॥

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥ ६ ॥

सर्वाणि १ भूतानि २ एतद्योनीनि ३ इति ४ उपधारय ५ अहम् ६ कृत्स्नस्य ७ जगतः ८ प्रभवः ९ प्रलयः १० तथा ११ ॥ ६ ॥ अ० सब १ भूतोंकी २ यह योनि हैं ३ यह ४ जान तू ५ अर्थात् अपरा और परा यही दोनों प्रकृति सब जगत्का कारण है और❋ मैं ६ समस्त ७ जगत्का ८ उत्पत्ति करनेवाला ९ और नाश करनेवाला १० । ११ हूं तात्पर्य—उपादानकारण प्रकृति है और निमित्तकारण चैतन्य ईश्वर है. इसवास्ते अभिन्न निमित्तोपादान कारण ईश्वर है जगत्का❋ यह अर्थ आनन्दामृतवर्षिणीके द्वितीय अध्यायमें स्पष्ट दृष्टान्त सहित लिखा है ॥ ६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मत्तः परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनञ्जय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रेमणिगणा इव ॥ ७ ॥

धनञ्जय १ मत्तः २ परतरम् ३ अन्यत् ४ किंचित् ५ न ६ अस्ति ७ इदम् ८ सर्वम् ९ मयि १० प्रोतम् ११ सूत्रे १२ मणिगणाः १३ इव १४ ॥७॥ अ० उ० जैसे पीछे कहा इसी हेतुसे जुदा मुझसे कोई पदार्थ नहीं यह कहते हैं❀हे अर्जुन ! १ मुझसे २ श्रेष्ठ ३ जुदा ४ सृष्टि संहारका स्वतन्त्रकारण ४ कुछ ५ नहीं ६ है ७ यह ८ सब ९ जगत्❀मुझ सच्चिदानन्द परमेश्वरमें १० गुँधा हुआ है ११ सूत्रमें १२ सूत्रकेही बने हुए❀ मणिके दाने १३ जैसे १४ ॥ ७ ॥

रसोहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः ॥
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥ ८ ॥

कौन्तेय १ अप्सु २ रसः ३ अहम् ४ शशिसूर्ययोः ५ प्रभा ६ अस्मि ७ सर्ववेदेषु ८ प्रणवः ९ खे १० शब्दः ११ नृषु १२ पौरुषम् १३ ॥ ८॥ अ० उ० श्रीभगवान्‌जी अपनी पूर्णताको विस्तारपूर्वक कहते हैं पांच मन्त्रोंमें❀हे अर्जुन ! १ जलमें २ रस ३ मैं हूं ४ चन्द्रसूर्यमें ५ प्रभा दीप्ति चमक रोशनी ६ मैं हूं ७ सब वेदोंमें ८ ॐकार ९ मैं हूं❀आकाशमें १० शब्द ११ मैं हूं❀पुरुषोंमें १२ उद्यम १३ मैं हूं❀तात्पर्य—जलादि पदार्थ रसादि पदार्थोंके विना कुछ नहीं ॥ ८ ॥

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥ ९ ॥

पृथिव्याम् १ च २ पुण्यः ३ गन्धः ४ विभावसौ ५ तेजः ६ च ७ अस्मि ८ सर्वभूतेषु ९ जीवनम् १० तपस्विषु ११ तपः १२ च १३ अ-

---

१ पटान्तर्गत तन्तुवत् सूत्रप्रोत मणिवत् जलाधिकरणकतरंगफेन बुद्बुदादिवत् अधार आधेयका सूक्ष्म बुद्धिसे ज्ञेय है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्मि १४ ॥ ९ ॥ अ० पृथिवीमें १। २ पवित्र ३ गन्ध ४ मैं हूं अर्थात् सुगन्ध ❀ अग्निमें ५ तेज मैं हूं ६। ७। ८ सब भूतोंमें ९ जीव १० मैं हूं ❀ तपस्वी पुरुषोंमें ११ तप मैं हूं १२। १३। १४ टी० तप दो प्रकारका है विचारको भी तप कहते हैं और द्वन्द्वके सहन को भी तप कहते हैं ॥ ९ ॥

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥ १० ॥

पार्थ १ सर्वभूतानाम् २ सनातनम् ३ बीजम् ४ माम् ५ विद्धि ६ बुद्धिमताम् ७ बुद्धिः ८ अस्मि ९ तेजस्विनाम् १० तेजः ११ अहम् १२ ॥ १० ॥ अ० हे अर्जुन ! १ सब भूतोंका २ सनातन ३ बीज ४ मुझको ५ जान तू ६ बुद्धिमानोंमें ७ बुद्धि ८ मैं हूं ९ तेजस्वी पुरुषोंमें १० तेज ११ मैं हूं १२ ॥ १० ॥

बलं बलवतां चाहङ्कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥ ११ ॥

कामरागविवर्जितम् १ बलवताम् २ च ३ बलम् ४ भरतर्षभ ५ धर्माविरुद्धः ६ भूतेषु ७ कामः ८ अस्मि ९ ॥ ११ ॥ अ० कामरागकरके वर्जित १ बलवानोंमें १। २ बल ४ मैं हूं और ❀ हे अर्जुन ! ५ धर्म से अविरुद्ध ६ भूतोंमें ७ काम ८ मैं हूं ९ ॥ ११ ॥

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि नत्वहं तेषु ते मयि ॥ १२ ॥

ये १ च २ एव ३ सात्त्विकाः ४ भावाः ५ राजसाः ६ ये ७ च ८ तामसाः ९ तान् १० मत्तः ११ एव १२ इति १३ विद्धि १४ तेषु १५ अहम् १६ न १७ तु १८ ते १९ मयि २० ॥ १२ ॥ अ० जो १। २। ३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सतोगुणी ४ भाव ५ शमदमादि ❀ रजोगुणी ६ हर्षदर्पादि ❀ और ७। ८ तमोगुणी ९ भाव शोकमोहादि ❀ तिनको १० मुझसे ११ ही १२। १३ जान तू १४ क्योंकि मेरी प्रकृतिके गुणोंका कार्य है शम हर्ष शोकादि ❀ तिन में १५ मैं १६ नहीं १७। १८ वर्तता हूं अर्थात् जीववत् तिनके आधीन मैं नहीं परंतु ❀ वे[1] १९ मुझ में २० मेरे आधीन हुये वर्तते हैं ॥ १२ ॥

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यःपरमव्ययम्॥ १३॥

एभिः १ त्रिभिः २ गुणमयैः ३ भावैः ४ इदम् ५ सर्वम् ६ जगत् ७ मोहितम् ८ एभ्यः ९ परम् १० माम् ११ अव्ययम् १२ न १३ अभिजानाति १४ ॥ १३ ॥ अ० इन १ तीन २ गुणमय ३ पदार्थोंकरके ४ यह ५ सब ६ जगत् ७ मोहित ८ सि० हो रहा है ८ इससे ९ परे १० मुझ ११ अव्ययको १२ नहीं १३ जानता है १४ तात्पर्य—कोई सतोगुणमें कोई तमोगुणमें मोहित हैं इनसे परे विलक्षण, निर्गुण, शुद्ध, सच्चिदानन्द, निराकार, निर्विकार, परमेश्वरको नहीं जानते परमेश्वरको भी सगुणही समझते हैं ॥ १३ ॥

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतान्तरन्ति ते ॥ १४ ॥

एषा १ मम २ माया ३ गुणमयी ४ दैवी ५ हि ६ दुरत्यया ७ ये ८

---

१ मरुभूमिमें प्राप्तजल प्रतीतिवत तथा रज्जुगत सर्वभ्रान्तिवत् नट कृतेन्द्र जालवत् भ्रम मात्रसे मेरेमें दीखते हैं वस्तुतस्तु (मायामात्रमिदं द्वैतं) इस श्रुतिसे मायाकार्य और माया मिथ्यात्वसे बाधित है।

२ अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय तथा स्थूलसूक्ष्मकारण शरीरत्रयकोही आत्माजानकर पंचकोशसे विलक्षण शरीरत्रितयसे इतर नित्य शुद्ध बुद्ध आनन्द घनपरमात्माको (इदमहं) यही हम हैं इसप्रकार नहीं जानता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माम् ९ एव १० प्रपद्यन्ते ११ एताम् १२ मायाम् १३ ते १४ तरन्ति १५ ॥ १४ ॥ अ० उ० अनादि अविद्या विना शुद्ध सच्चिदानन्द भगवत् भजनके दूर न होगी. यह कहते हैं ॥ यह १ मेरी २ माया ३ त्रिगुणवाली ४ अलौकिक ५ अर्थात् अद्भुतही ऐसी है ❀ (हि इस शब्दकातात्पर्य—यह है कि यह माया ऐसी है कि जो बात समझके योग्य है. उसको भी दिखासक्ती है. और जो न समझमें आवे. उसको भी दिखा सक्ती है. सो यह बात संसार में प्रसिद्ध है. इसी हेतुसे जगत् भ्रान्त हो रहा है विना परमेश्वरकी कृपा यह माया) ❀ दुस्तर है ७ विद्वानोंने ऐसा निश्चय किया है ❀ कि जो ब्रह्मतत्व के जिज्ञासु ८ मुझको ९ ही १० भजते हैं ११ इस १२ मायाको १३ वे १४ तरेंगे १५ अर्थात् मायाको माया समझ कर मुझ त्रिगुण रहित शुद्ध सचिदानन्दको प्राप्त होंगे १५ टी० दैवी देवसम्बन्धी अर्थात् ब्रह्मा विष्णु रामकृष्णादि और वैकुण्ठादि जिसका परिणाम है. उसको दैवी माया कहते है. यह विना ज्ञाननिष्ठा दूर नहीं होती ❀ मुझनिर्गुण शुद्ध सच्चिचदानन्दकोही जो चिन्तवन करेंगे सगुण पदार्थमें प्रीति नहीं करेंगे. वेही निर्गुणको प्राप्त होंगे और जो सगुण पदार्थोंमें प्रीति करेंगे उनको त्रिगुणवाली माया दूर न होगी. क्योंकि जिस पदार्थको त्यागना था. उसमें प्रीति करी फिर कैसे यह तीन गुण दूर होसक्ते हैं ❀ एक शब्दसे स्पष्ट प्रतीत होता है, कि माया शब्दका अर्थ इस जगह शुद्ध ब्रह्म ऐसा है मायोपहित वा लीलविग्रह सगुण नहीं. मायोपहित ईश्वर सगुणब्रह्मका जो आराधान करते हैं तो अवश्यही मायाका भी आराधना उसके साथ होताहै जिसका विशेष चिन्तवन रहेगा वह पदार्थ कैसे दूर होगा ❀ और जो सगुणब्रह्म काही आराधन करना है तो निष्काम होकर शुद्धब्रह्मकी जिज्ञासा करके आराधनकरे तो भी वह मार्ग कर्ममुक्तिका है और जिनको शुद्धब्रह्मकी जिज्ञासा तक नहीं, उनकी अविद्या कभी दूर न होगी ॥ १४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराऽधमाः ।
मायया ऽपहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः ॥ १५ ॥

नराधमाः १ माम् २ न ३ प्रपद्यन्ते ४ मूढाः ५ दुष्कृतिनः ६ मायया ७ अपहृतज्ञानाः ८ आसुरम् ९ भावम् १० आश्रिताः ११ ॥ १५ ॥ अ० उ० ❋ जो निर्भाग न निर्गुणब्रह्मका आराधन करते हैं, और न सगुण ब्रह्म का, उसमें यह कारण हैं ❋ नरोंमें अधम १ मुझको २ नहीं ३ भजते हैं ४ सि० इसमें यह हेतु है कि ❋ विवेकरहित हैं ५ इसमें क्या हेतु है कि ❋ दुष्ट खोटे कर्म करनेवाले हैं ६ अर्थात् शास्त्रोक्त मार्गमें नहीं चलते श्रुति, स्मृति परमेश्वरकी आज्ञाको छोड़ नानाप्रकारके कल्पित पन्थोंमें शिर मारते है सि०इसमें जो हेतु है सो सुन ❋ माया करके ७ दूर होगया है ज्ञान जिनका ८ अर्थात् तमोगुण, रजोगुणमें सत्त्वगुण उनका तिरोभाव हो रहताहै. इसमें यह हेतु है कि ❋ असुरभावको ९ । १० आश्रय कर रक्खा है उन्होंने ११ सि० सोलहवें अध्यायमें काम, क्रोध, दम्भ, दर्पादि असुरोंका स्वभाव कहेंगे अर्थात् भगवत्से विमुख सदा अनर्थोंमें फँसे रहते हैं जो पूर्वसंस्कारसे उनमें किसी समय सत्त्वगुणका अविर्भाव होता है फिरभी कुसंगके दोषसे भगवत्के सन्मुख नहीं होते है और न शुभकर्म करते हैं ११ सि० इसी हेतुसे उनको विवेक नहीं होता और इसी हेतुसे वे लोग सबसे अधम हैं ॥ १५ ॥

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।
आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥ १६ ॥

अर्जुन १ चतुर्विधाः २ सुकृतिनः ३ जनाः ४ माम् ५ भजन्ते ६ भरतर्षभ ७ आर्त्तः ८ अर्थार्थी ९ जिज्ञासुः १० ज्ञानी ११ च १२ ॥ १६ उ० ❋ जो निष्काम सगुणब्रह्मका भी आराधन होसके तो, सकामही परमेश्वरका आराधन करना योग्य है जो न निष्काम भजन करें न सकाम उन्होंसे सकाम पुरुषही भगवत्का आराधन करनेवाले श्रेष्ठ हैं इसीवास्ते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चारों प्रकारके मेरे भक्त सुकृती कहे जाते हैं. वे चार प्रकारके भक्त तारतम्यताके साथ उत्तरोत्तर ये हैं ❋अ० ❋हे अर्जुन ! १ चार प्रकारके २ सुकृतीजन ३ । ४ मुझको ५ भजते हैं ६ हे अर्जुन ! ७ वे यह हैं आर्त्त ८ अर्थार्थी ९ जिज्ञासु १० ज्ञानी ११ । १२ टी० ❋विपत्तिसमय में परमेश्वरको स्मरण करना उसको आर्त्तभक्त कहते हैं, जैसे द्रौपदी गजेन्द्रादि ८ स्त्री पुत्र राज्यादिकी कामनाकरके जो परमेश्वरका आराधन करते हैं वे अर्थार्थी, जैसे ध्रुवादि ९ ब्रह्मतत्त्वकी जिज्ञासा करके निष्काम जो नारायणका पूजन भजन करते हैं. वे जिज्ञासु, जैसे उद्धव सुदामादि १० शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार नित्यमुक्त परमात्माको आपसे अभिन्न अपरोक्ष जो जानते है वे ज्ञानी, जैसे शुकदेव, वामदेव, जनक, याज्ञवल्क्य, वशिष्ठ, सनकादि ११ चारों प्रकारके भक्तोंको उत्तरोत्तर श्रेष्ठ समझना ॥ १६ ॥

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ।
प्रियो हि ज्ञानिनोत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥१७॥

तेषाम् १ ज्ञानी २ विशिष्यते ३ नित्ययुक्तः ४ एकभक्तिः ५ अहम् ६ ज्ञानिनः ७ अत्यर्थम् ८ प्रियः ९ हि १० सः ११ च १२ मम १३ प्रियः १४ ॥ १७ ॥ अ० उ० ❋पूर्वोक्त भक्तोंमें ब्रह्मज्ञानी चार हेतु करके सबसे श्रेष्ठ हैं. यह कहते हैं ❋तिनके १ मध्यमें ❋ज्ञानी २ विशेष हैं ३ प्रथम तो तीनों अवस्थामें सच्चिदानन्द स्वरूपसे च्युत नहीं होता. इसवास्ते ज्ञानीको ❋नित्ययुक्त ४ सि० कहते हैं. अर्थात् सदा आनन्दस्वरूप ब्रह्मका उसको स्मरण रहता है, दूसरे यह कि एक अद्वैतमें ही है भक्ति जिसकी अर्थात् सिवाय सच्चिदानन्दपदार्थके और कोई पदार्थ दृश्य जड़ उसकी दृष्टिमें नहीं जिसकी दृष्टिमें दूसरा पदार्थ है बुरा व भला. बेसन्देह उसमें कभी कभी न मन जायगा. इसीवास्ते ज्ञानीको ❋एक भक्ति ५ सि०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहते हैं अर्थात् ज्ञानी परमानन्दकाही उपासक है. परमानन्दस्वरूप भगवत्ही उसके साधन है और परमानन्दही फल है औरोंके फल साधनोंमें भेद है तीसरे यह कि ❀मैं ६ ज्ञानीको ७ अत्यन्त बहुत ८ ही प्यारा ९। १० हूं क्योंकि परमानन्द बहुत प्यारा होता है. यह लोकमेंभी प्रसिद्ध है ज्ञानी मुझको परमानन्दरूप जानता है सि० आनन्दजनक जड़ दृश्यरूपवाला मुझको नहीं जानता. चौथे यह कि ❀सो ज्ञानी ११। १२ मुझको १३ सि० भी अत्यन्त ❀प्यारा १४ सि० है क्योंकि परात्पर पूर्णब्रह्म अखण्ड अद्वैत मुझको समझता है, सिवाय सच्चिदानन्दके और पदार्थका अत्यन्त अभाव जानता है. इसी हेतुसे वह मुझको प्रिय है, एक पदार्थ तो आनन्दजनक और एक पदार्थ निजानन्दरूप है, विचारो दोनोंमें कौनसा श्रेष्ठ है ?॥१७॥

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ॥
अस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम्॥१८॥

एते १ सर्वे २ एव ३ उदाराः ४ ज्ञानी ५ तु ६ मे ७ आत्मा ८ एव ९ मतम् १० हि ११ सः १२ युक्तात्मा १३ माम् १४ एव १५ आस्थितः १६ अनुत्तमाम् १७ गतिम् १८ ॥ १८ ॥ अ० उ० भगवत्विमुखोंसे सब भक्त सकाम और निष्काम श्रेष्ठ हैं और ज्ञानी तो साक्षात् नारायण-स्वरूप हैं यह कहते हैं. आगे बारहवें अध्यायमेंभी श्रीमहाराज कहैंगे, कि निर्गुणब्रह्मके उपासक तो मुझको प्राप्तही हैं जो मेरा स्वरूप है सोई उनका है ❀वे १ सि० पूर्वोक्त आर्तादि तीनोंभक्त ❀सब २ ही ३ श्रेष्ठ ४ सि० हैं परन्तु ❀ज्ञानी ५ तो ६ मेरा ७ आत्मा ८ ही ९सि० है अर्थात् ज्ञानी मुझसे दासवत् जुदा नहीं. स्वामीसेवकवत् पृथक् नहीं वह वनवृक्षवत् मेराही स्वरूप है ८।९ सि० यह मेरा ❀निश्चय १० सि० है क्योंकि ११ सि० वह यह समझता है कि मैं पूर्णब्रह्म, सच्चिदानन्द, नित्यमुक्त हूं. इस वास्ते ❀सो ज्ञानी १२ युक्तात्मा याने समाहित है १३ सि० है और ❀मुझको १४ ही १५ आश्रयकर रक्खा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है १६ सि० कैसा हूं मैं कि, नहीं है सिवाय मुझसे उत्तमगति कोई सावयव पदार्थ सो मैं ही अनुपमगति हूं यह समझकर मुझ❋अनुत्तमगतिको १७।१८ सि०आश्रयकर रक्खा है. अर्थात् मुझसे पृथक् कुछ और फल नहीं मानता. परात्परफल मैं ही सच्चिदानन्द हूं❋ ॥ १८ ॥

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ १९ ॥

बहूनाम् १ जन्मनाम् २ अन्ते ३ इति ४ सर्वम् ५ वासुदेवः ६ ज्ञानवान् ७ माम् ८ प्रपद्यते ९ सः १० महात्मा ११ सुदुर्लभः १२ ॥ १९ ॥ अ० उ० फिर भी ज्ञानीकी स्तुति करतेहुये यह कहते हैं, कि ऐसा ज्ञानी भक्त दुर्लभ है, बहुत १ जन्मोंके २ अन्तमें ३ अर्थात् सकाम निष्काम उपासना करते करते पिछले जन्ममें, कि जिस शरीरमें मोक्ष होना है. उस जन्ममें मुझको जो मेरा भक्त ऐसा समझता है कि❋ यह ४ सब ५ सि० जगत् चराचर अस्तिभाति प्रियरूप❋ वासुदेव सि० ६ है, इसप्रकार❋ज्ञानवान् ७ हुआ❋मुझको ८ भजता है ९ सि० जो भक्त❋सो १० महात्मा ११ बहुत दुर्लभ है १२ सि० अपरिच्छिन्न दृष्टि है, प्रायशः सब आत्माको और परमात्माको परिच्छिन्न समझते हैं प्रत्युत कोई कोई निर्भाग ज्ञानियोंकी प्रत्यक्ष वा किसी बहाने मिस करके असूया (बुराई) करते है. इस श्रीमहाराजके वाक्यका आदर नहीं करते. अपने आप अपनी जिह्वासे वारंवार यह कहें, कि मैं पापी पापात्मा पाप करता हूं, जो दूसरा कहै कि तुम पापी गुलामहो, तो उसी समय लड़नेको उद्यत होजावें ऐसे लोगोंको जो गति होगी. सो दृष्टान्तसे स्पष्ट किये देते हैं❋इतिहास—एक राजा भेदवादी भगवत्का उपासक सबसे यह प्रश्न किया करता था कि, हे महाराज जो पापी भगवत्से विमुख हैं उनका तो उद्धार श्रीनारायण अपने आप करेंगे, क्योंकि उनका नाम पतितपावन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधमउद्धारण करुणाकर है और जो भगवद्भक्त कर्मकाण्डी ज्ञानी योगी हैं वे भक्ति, ज्ञान, कर्म योगादिके आश्रयसे कृतार्थ होंगे, तो अब नरकमें कौन जावैंगे चौरासी लाख योनियोंमें कौन भ्रमेगे ? इस प्रश्नका उत्तर बहुत पण्डितोंको न आया एक ज्ञानी महात्मा राजाके पास पहुंचे राजाने उनका बहुत सन्मान करके यही प्रश्न उनसेभी किया प्रथम महात्माने यह कहा कि हे राजन् ! तुम बड़े सुकृती धर्मात्मा समझवाले भगवद्भक्त हो राजाने कहा कि, महाराज ऐसे तो आपही हैं मैं तो अधम पापात्मा हूं. महात्मा उसी समय वहांसे खड़े हो गये और राजाकी तरफसे मुख कहने लगे कि आज कैसे अधम पापात्मासे सम्भाषण हुआ. राजाको सुनतेही इन शब्दोंके क्रोध आगया और कहने लगा कि तू कैसा ज्ञानी है जो लोगोंको गालियां देता है, महात्माने कहा कि बच्चा, गालियां नहीं देता तेरे प्रश्नका उत्तर देता हूं. तात्पर्य—मेरे कहनेका समझ कि तुझसे तुझ सरीखे तुझ सदृश लोग नरकमें जावेंगे. आप तो अपने मुखसे सहस्र बार अपनेको पापी कहता है. "पापोऽहं पापकर्माहं पापात्मा पापसम्भवः" ॥ जो हमने एकबार कहा तो उसका इतना बुरा मानता है कि अभी तो हमको सुकृती धर्मात्मा भगवद्भक्त कहता था और अभी तू तडाक करने लगा. अब तू यह अपने आपहीको विचार, कि मैं पतित हूं वा धर्मात्मा हूं जो तू पतित है तो औरोंके कहनेका क्यों बुरा माना है और जो धर्मात्मा है तो शुद्धात्मा को पापात्मा क्यों कहता है ? अपनेको शुद्धात्मा समझ राजाका अज्ञान इतनेही स्वल्प उपदेशसे जाता रहा और जाना कि दास और पतित जो अपनेको कहते हैं यह ऊपरही की बोल चाल है दास पतित बनना तो कठिन है मुखसे तो यह कहै कि "सियाराममय सब जग जानी। करौं प्रणाम सप्रेस सुबानी" ॥ और ज्ञानियों की बुराई करे धन्य है ऐसी समझ की भला अर्थ समझा पूर्णताका यह इतिहास भले प्रकार विचारनेके योग्य है ॥ १९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कामैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥२०॥

अन्यदेवताः १ प्रपद्यन्ते २ तैः ३ तैः ४ कामैः ५ हृतज्ञानाः ६ स्वया ७ प्रकृत्या ८ नियताः ९ तम् १० तम् ११ नियमम १२ आस्थाय १३ ॥ २० ॥ अ० उ० ❋ सब भक्त निर्गुणब्रह्मकी निष्काम उपासना क्यों नहीं करते, अपनेसे अन्य देवताका क्यों आराधन करते हैं, इस अपेक्षा में यह कहते हैं चार मन्त्रोंमें ❋ परमेश्वरका भजन करके वैकुण्ठादिमें जावेंगे. वहांके दिव्यशब्दादि विषयोंका और स्त्री आदि पदार्थों को भले प्रकार भोग करैंगे अथवा इसी लोकमें स्त्री, पुत्र, धनादिकी प्राप्तिहोगी और प्रायशः वर्तमानकालमें भी देवतोंकी उपासनामें शब्दादि विषयोंको त्यागना नहीं पडता, प्रत्युत फूल बंगला, हिंडोरा, रासलीला, नृत्य, गानादि को उत्तमकर्म समझते हैं, सि० इन कामनाकरके जो आत्मासे भिन्न ❋ अन्य मूर्तिमान् देवताका १ भजन करते हैं सि० २ इसमें हेतु यह है कि ❋ तिन ३ तिन ४ कामना करके ५ हरा गया है आत्मज्ञान जिनका ६ सि० वे ❋ अपनी ७ प्रकृति करके ८ प्रेरेहुये ९ तिस १० तिस ११ नियमको १२ आश्रयकरके १३ सि० अन्यदेवताका भजन करते हैं अर्थात् रजोगुण तमोगुणके वश होकर जो जो नियम भेदउपासनामें हैं सबको अङ्गीकार करके आत्मा से अन्यदेवता ही को पूजते हैं जैसे कहते हैं कि " घरका योगी योगना आन गांव का सिद्ध " ऐसेही वे उपासक हैं शास्त्रका भी प्रमाण सुनो ❋ " वासुदेव परित्यज्य योन्यदेवमुपासते। तृषितो जाह्नवीतीरे कूपं खनति दुर्मतिः॥ " जो देव सबमें बस रहा है और साक्षात् चैतन्यानन्द अनुभव होता है उसको छोड, अन्यदेवकी उपासाना करते हैं वे ऐसे हैं कि जैसे प्यासा मूर्ख श्रीगङ्गाजीका जल छोड गङ्गातीर कूप खोदता है ऐसेही परमानन्दस्वरूप चैतन्यदेव आत्माको छोड तुच्छविषयानन्दके लिये प्रयत्न करते हैं॥ २० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्॥२१॥

यः १ यः २ भक्तः ३ श्रद्धया ४ या ५ याम् ६ तनुम् ७ अर्चितम्८ इच्छति ९ तस्य १० तस्य ११ अचलाम् १२ श्रद्धा १३ ता १४ अहम् १५ एव १६ विदधामि १७॥२१॥ अ० उ० सकाम आत्मासे अन्यदेवतों-के भक्तोंको पिछले मन्त्रमें परतन्त्र (प्रकृति के और वासना के वश) कहा अब अपने आधीन कहते हैं जो कोई यह शङ्का करे कि जब परमेश्वर अन्तर्यामी सबके प्रेरक हैं तो फिर अन्य देवतों के भक्तों को भी वासुदेव भगवान् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द आत्माके सन्मुख क्यों नहीं कर देते ? इस अपेक्षामें श्रीमहाराज यह कहैंगे कि जैसे जिसकी इच्छा होती है, उसके अनुसार उसकी श्रद्धा दृढ़ करदेताहूं निष्काम जो मेरा आराधन करते हैं उसको सन्मार्गमें लगा देताहूं. मुझको चिन्तामणिवत् समझना प्रसिद्ध वाक्य है "जैसे को हरि तैसे" सोई कहते हैं इस मन्त्रमें जो १ जो २ विष्णु, शिव, कृष्ण, इन्द्रादिका❀भक्त ३ श्रद्धा करके ४ जिस ६ मूर्त्तिको ७ पूजाकरने की ८ इच्छा करता है९ तिस १० तिसके विषय११ दृढ १२ श्रद्धा १३ जो है❀तिसको १४ मैं १५ ही १६ स्थिर करता हूं १७ अन्तर्यामीरूप होकर वेदशास्त्राचार्य द्वारा❀तात्पर्य—जो जिस मूर्त्ति-मान् देवतासे प्रीति करता है परमेश्वर सुधारते हैं सुख मानकर बहिर्मुख हुये बहिःसुख की इच्छा करते हैं वे कभी विषयी कहे जाते हैं॥ २१॥

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते।
लभते च ततः कामान्मयैव विहितान् हितान्॥२२॥

---

१ जिसप्रकार पिप्पल आम्रादि वृक्षोंके समान रूप करिकै प्राप्तजल तिस तिस वृक्षांकुरकी शक्तिको तत्तदाकार रूपसे परिणामी बनाता है तिसी प्रकार आपने इष्ट देवकी ध्यान शक्तिको अन्तःकरणमें परमात्मा भी तदाकारतासे दृढ होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सः १ तया २ श्रद्धया ३ युक्तः ४ आराधनम् ६ ईहते ७ ततः ८ कामान् ९ १० च ११ तान् १२ मया १३ एक १४ विहितान् १५ हि १६ ॥ २२ ॥ अ० उ० पूर्वपक्षकी श्रुति स्मृतिकोही सिद्धान्त समकक्षर उनमें श्रद्धासे सकाम परमेश्वरका आराधन करनेसे जो कभी कभी किसी किसीको फल भी प्रत्यक्ष होजाता है अर्थात् मूर्त्तिमान् परमेश्वरका दर्शन होजाना अथवा स्त्री, पुत्र, राज्य, स्वर्ग, वैकुण्ठादि की प्राप्ति होजानी यह सब फल उसको कामनाके अनुसार मैंही देता हूं क्योंकि कामियोंको रूपरसादि विषयही प्रिय होते हैं. जो यह फल प्रत्यक्ष किसीको भी न होय तो फिर वेदशास्त्रादिमें उनका विश्वास न रहेगा. जो उनका विश्वास वेद शास्त्रादिमें बना रहेगा. तो कभी न कभी सिद्धान्तकी श्रुति स्मृतियों में भी उनको विश्वास होजायगा. फिर मेरा निष्काम आराधन करके कृतार्थ होजावेंगे. उनको प्रत्यक्ष फल दिखाने में यह तात्पर्य—मेरा है इसवास्ते उसके वही श्रद्धा स्थिर करताहूं ❋ सो १ तिस २ श्रद्धा करके ३ युक्त ४ तिसका ५ ही ६ ❋ आराधन करता है ७ तिससे ८ ही कामनाको ९ प्राप्त होता है १० । ११ कैसी हैं वे कामना कि ❋ तिनको १२ मैंने १३ ही १४ रची हैं १५ निश्चय १६ तात्पर्य—सकाम भक्त पूर्वपक्षकी श्रुति स्मृतियोंमें श्रद्धा करके जिसभक्तकी जिस देवतामें प्रीति है उसकाही आराधन करता है उससेही मनोवाञ्छित फलको प्राप्त होता है वास्तव वे कामना रचीहुई परमेश्वर की हैं परमेश्वरनेही वह फल उनको दिया है परन्तु वे उस मूर्त्तिका दिया हुआ समझते हैं उसीको परात्पर समझलेते हैं इसी वास्ते वे जन्म मरणसे नहीं छूटते. इस बातको अगले श्लोकमें भले प्रकार स्पष्ट करेंगे ॥ २२ ॥

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् ।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि ॥ २३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अल्पमेधसाम् १ तेषाम् २ तत् ३ फलम् ४ अन्तवत् ५ तु ६ भवति ७ देवयजः ८ देवान् ९ यान्ति १० मद्भक्ताः ११ माम् १२ अपि १३ यान्ति १४ ॥२३॥ अ० उ० सच्चिदानन्द आत्मासे अन्य मूर्त्तिमान् परमेश्वरको परमेश्वर मानकर जो उनका आराधन करता है क्या उससे निर्गुण निराकार, सच्चिदानन्द की उपासना करने वाले कुछ अधिक फलको प्राप्त होते हैं? इस अपेक्षामें श्रीमहाराज यह कहते हैं कि हां बेसन्देह फलमें बड़ा अन्तर है. वह अन्तर यह है. परिच्छिन्न दृष्टि है जिनकी १ अर्थात् कम समझ जो परमेश्वरको एकदेशी समझते हैं❋तिनको २ जो फल होताहै मूर्त्तिमान् परमेश्वर दर्शनादि वैकुण्ठादिकी प्राप्ति स्त्री पुत्र राज्यादि की प्राप्ति❋सो ३ यह सब❋फल ४ अन्तवाला ५। ६ है ७ अर्थात् अनित्य है❋क्योंकि❋देवतोंके पूजनेवाले ८ देवतोंको ९ प्राप्त होते हैं १० और मुझ सच्चिदानन्द निराकार आत्माके भक्त ११ मुझ सच्चिदानन्द निराकारको १२ ही १३ प्राप्त होते हैं १४ विचार करो फलमें कितना बड़ा अन्तर है जो यह शङ्का करे कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज नित्य हैं उन्होंसे अन्य देवता अनित्य हैं तो फिर यह विचारना चाहिये कि देवतों की मूर्ति अनित्य हैं व उनका स्वरूप सच्चिदानन्द अनित्य है और श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी मूर्ति श्यामसुन्दर स्वरूप नित्य है व उनका स्वरूप सच्चिदानन्द नित्य है दोनों की मूर्तियों को जो नित्य कहैं तौ भी नहीं बनसक्ता और सच्चिदानन्द स्वरूप दोनोंको जो अनित्य कहैं तौ भी नहीं बनसक्ता क्योंकि वेद शास्त्रोंका यह सिद्धान्त है "यद्दृश्यं तत् अनित्यं" जो दृश्य है सो सब अनित्य है❋तदुक्तम् "गो गोचर जहँलग मन जाई। सो सब माया जानो भाई" और मां शब्दकी देव शब्दसे विलक्षणता है. तात्पर्य—यह बात स्पष्ट है कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द निराकार हैं सो नित्य हैं मूर्त्ति परमेश्वरकी मायिक होती हैं❋गीतामाहात्म्य पद्मपुराणमें लक्ष्मीजीसे श्रीनारायण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहते हैं "मायामयमिदं देवि वपुर्मे न तु तात्त्विकम्" अ० ❋ हे देवि! मेरा यह शरीर मायामय है वास्तव नहीं देव शब्दका तात्पर्य—मूर्तियोंमें है मां शब्दका तात्पर्य—सच्चिदानन्द निराकारमें है ॥ २३ ॥

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥ २४ ॥

अबुद्धयः १ माम् २ अव्यक्तम् ३ व्यक्तिम् ४ आपन्नम् ५ मन्यन्ते ६ मम ७ परम् ८ भावम् ९ अजानन्तः १० अव्ययम् ११ अनुत्तमम् १२ ॥ २४ ॥ अ० उ० निर्गुण ब्रह्मकी उपासनामें और सगुणब्रह्म लीलाविग्रह मूर्त्ति आदिकी उपासनामें यत्न सम होता है और फल निर्गुण उपासनाका आप विशेष और नित्य कहते हो फिर लीलाविग्रह मूर्त्तियों के उपासक भी आपके निरुपाधिक शुद्धस्वरूप सच्चिदानन्द निराकार ब्रह्मात्माकी क्यों नहीं उपासना करते हैं यह शङ्काकरके इस मन्त्रमें श्रीमहाराज यह कहेंगे कि कम समझ होनेसे मुझ परात्पर, निर्विकार, शुद्ध, सच्चिदानन्दको नहीं जानते मूर्तिमान्ही मुझको समझते हैं हे अर्जुन ? यह बड़े कष्टकी बात है इसप्रकार विचार करतेहुये श्रीभगवान् यह कहते हैं, अविवेकी विचाररहित १ मुझ २ निराकारको ३ मूर्त्तिमान् ४। ५ मानते हैं ६ मेरे ७ पर ८ प्रभावको ९ नहीं जानते १० कैसा है मेरा परम प्रभाव कि प्रथम तो ❋ निर्विकार ११ सि० और फिर ❋ अनुत्तम १२ अर्थात् उसके सिवाय और कोई पदार्थ उत्तम नहीं १२ टी० मूर्त्तिको ४ प्राप्त हुआ ५ ॥ २४ ॥

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् ॥ २५ ॥

सर्वस्य १ अहम् २ प्रकाशः ३ न ४ योगमायासमावृतः ५ अयम् ६ मूढः ७ लोकः ८ माम् ९ अजम् १० अव्ययम् ११ न १२ अभिजा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाति १३ ॥ २५ ॥ अ० सबको १ मैं २ प्रकट ३ नहीं ४ अर्थात् सब मुझको नहीं जान सक्ते मेरे भक्तही मुझको जान सक्ते हैं क्योंकि❀ योगमाया करके थकाहुआ हूं ५ अर्थात् मेरी योगमाया अचिन्त्य है उस मायाके सम्बन्धसे अभक्त अश्रद्धावान् मुझको नहीं पहचान सक्ते सि० इसी हेतुसे❀ यह ६ मूढ़ ७ जन ८ मुझ ९ अज १० अव्ययको ११ नहीं १२ जानता है १३ ॥ २५ ॥

वेदाहं समतीतानि वर्त्तमानानि चार्जुन ।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ॥ २६ ॥

अर्जुन १ समतीतानि २ वर्त्तमानानि ३ च ४ भविष्याणि ५ च ६ भूतानि ७ अहम् ८ वेद ९ माम् १० तु ११ कश्चन १२ न १३ वेद १४ ॥ २६ ॥ अ० उ० पीछे यह कहा, कि मैं योगमाया करके ढका हुआ हूं. सो वह योगमाया मुझको ज्ञानमें प्रतिबन्ध नहीं जीवकोही मोहनेवाली है जैसे बाजीगरकी माया बाजीगरको नहीं मोहती है औरों को ही मोहती है यह कहते हैं❀ हे अर्जुन ! १ पिछले २ और वर्त्तमान ३ । ४ और अगिले ५ । ६ भूतोंको ७ मैं ८ जानता हूं ९ और मुझको १० । ११ कोई १२ नहीं १३ जानता १४ अर्थात् सच्चिदानन्दसे पृथक् प्रथम तो कोई पदार्थ नहीं हैं और जो भ्रांतिजन्य हैं भी तो जड़ हैं वे कैसे चैतन्यको जान सक्ते हैं. तात्पर्य—आत्मासे पृथक् जो ईश्वरको कोई जाना चाहे वह मूर्खतम है क्योंकि स्पष्ट श्रीमहाराज कहते हैं कि मुझको कोई नहीं जानता. इस वाक्यका यही अभिप्राय है कि आत्मासे भिन्न मुझको कोई नहीं जानता ॥ २६ ॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत ।
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप ॥ २७ ॥

परन्तप १ सर्गे २ इच्छाद्वेषसमुत्थेन ३ द्वन्द्वमोहेन ४ भारत ५ सर्व-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूतानि ६ संमोहम् ७ यान्ति ८ ॥२७॥ अ० उ० ❋ जीवोंको जो अज्ञान दृढ़ हो रहा है और उनको विवेक नहीं होता उसमें कारण यह है, कि स्थूलशरीरके उत्पन्न होतेही अनुकुल पदार्थोंमें तो इच्छा और प्रतिकूल पदार्थोंमें द्वेष उत्पन्न होजाता है. इच्छा और द्वेष क्यों उत्पन्न होतेहै. इसमें हेतु यह है, कि शीतोष्णादि द्वन्द्वके निमित्त जो भ्रान्ति है अर्थात् विवेक नहीं. इसवास्ते इच्छा द्वेष उत्पन्न होते हैं तात्पर्य—शीतोष्णादिके दूर करनेके लिये जो प्रयत्न करना है सोई भ्रान्ति है. क्योंकि शीतोष्णादिकी प्राप्ति और उनका दूर होना प्रारब्धवशात् अवश्यभावी है जैसे दुःखके लिये कोई यत्न नहीं करता सुखकी रक्षामें सुखकी प्राप्तिके लिये दिनरात तत्पर रहते हैं. परन्तु दिनरातकी तरह दुःख सुख बनाही रहता है. जिनके यह विचार नहीं वे अविवेकी अपने अविवेकसे अज्ञानी बनरहे हैं यही बात इस मन्त्रमें कहते हैं ❋ हे अर्जुन ! ? स्थूलशरीरकी उत्पत्तिहुये सन्ते २ अर्थात् स्थूलशरीरकी उत्पत्तिके पीछे २ इच्छा द्वेषकरके उत्पन्न हुये द्वन्द्वके निमित्त जो मोह अर्थात् विवेक होनेसे ३ । ४ हे अर्जुन ! ५ सबजीव ६ अज्ञानको ७ प्राप्त हैं ८ तत्पर्य—द्वन्द्वके निमित्त जो प्रयत्न करना यह अविवेक है. विना इसका त्याग किये परमेश्वरका ज्ञान और अपना ज्ञान न होगा.इच्छा द्वेष यही दोनों संसारकी जड़ हैं. इनका त्याग अवश्य करना चाहिये ॥ २७ ॥

येषां त्वन्तर्गतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् ।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ॥ २८ ॥

येषां १ तु २ पुण्यकर्मणाम् ३ जनाना ४ पापम् ५ अन्तर्गतम् ६ ते ७ द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः ८ दृढव्रताः ९ माम् १० भजन्ते ११ ॥ २८ ॥ अ० उ० शुभकर्म करनेसे रजोगुण, कम होगया है जिनका, उनको द्वन्द्वके निमित्तभी मोह कम होता है वे मेरा भजन करसक्ते हैं और उनको मेरे स्व-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूपका थथार्थ ज्ञान होता है. यह कहते हैं ❀जिन १। २ पुण्यकारी ३ जनोंका ४ पाप ५ नष्ट होगया है ६ वे ७ द्वन्द्वके निमित्त जो मोह उससे छूटे हुये ८ और दृढहैं व्रत नियम जिनके वे ९ मुझको १० भजते हैं ११ टी० निष्काम शास्त्रोक्त सद्गुरुने उपदेश किया उसमें दृढ़ विश्वास रखना कि ऐसेही है उसके अनुसार अनुष्ठान करना यह दृढव्रत है जिनका ॥ २८ ॥

जरामरणमोक्षाय ममाश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् २९

ये १ माम् २ आश्रित्य ३ जरामरणमोक्षाय ४ यतन्ति ५ ते ६ तत् ७ ब्रह्म ८ विदुः ९ कृत्स्नम् १० अध्यात्मम् ११ अखिलम् १२ कर्म १३ च १४ ॥ २९ ॥ अ० उ० जिसवास्ते भजन करते हैं सो कहते हैं और भगवत्का भजन करनेवाले जाननेके योग्य जो पदार्थ सबको जानकर कृतार्थ होजाते हैं. यह भी कहते हैं दो श्लोकोंमें ❀जो १ सि०परमानन्दके जिज्ञासु ❀मुझ परमेश्वरको २ आश्रय करके ३ जरामरण छूटनेके वास्ते ४ अर्थात् जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि नाश होनेके लिये ४ प्रयत्न करते हैं ५ वे ६ तिस ७ ब्रह्मको८ जानते हैं ९ सि० अथवा जान जावेंगे कि जिस ब्रह्मके जाननेसे मुक्ति होती है और समस्त १० अध्यात्म ब्रह्म को ११ समस्त १२ कर्मोंको १३।१४सि० जानते हैं अर्थात् भलेप्रकार कर्म अध्यात्म ब्रह्मको जानते हैं इन शब्दोंका अर्थ श्रीमहाराज आठवें अध्यायमें निरूपण करैंगे ॥ २९ ॥

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः॥ ३०॥

युक्तचेतसः १ ये २ माम् ३ साधिभूताधिदैवम् ४ साधियज्ञम् ५ च ६ विदुः ७ ते ८ प्रयाणकाले ९ अपि १० च ११ माम् १२ विदुः १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ ३० ॥ अ० उ० भगवत् भक्त अन्तकालमें भी वेसन्देह भगवत्का चिन्तवन करके परमेश्वरको प्राप्त होंगे. भगवद्भक्तोंमें योगभ्रष्टकी भी शङ्का न करनी क्योंकि उनके अन्तःकरणका प्रेरक अन्तर्यामी उनका स्वामी अपनेमें मन आप लगा लेगा. सिवाय इसके वे आप परमेश्वरकी कृपासे समाहितचित्त होते हैं. सोई कहते हैं. समाहित है चित्त जिसका १ ऐसे जो २ मुझको ३ सहित अधिभूत और अधिदैवके और ४ सहितअधियज्ञके ५ । ६ जानते हैं ७ । ८ वे अन्तकालमें भी ९ । १० । ११ मुझको १२ जानेंगे १३ अर्थात् मेरे स्मरणका ज्ञान अन्तकालमें उनको बना रहेगा, क्योंकि उनका चित्त सावधान है अधिभूतादि शब्दोंका अर्थ श्रीमहाराज आपही आठवें अध्यायमें निरूपण करेंगे ॥ ३० ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेज्ञानविज्ञानयोगोनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टमोऽध्यायः ॥

अर्जुन उवाच—

किं तद् ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते ॥ १ ॥

पुरुषोत्तम १ तत् २ ब्रह्म ३ किम् ४ अध्यात्मम् ५ किम् ६ कर्म ७ किम् ८ अधिभूतम् ९ च १० किम् ११ प्रोक्तम् १२ अधिदैवम् १३ किम् १४ उच्यते १५ ॥ १ ॥ अ० उ० पिछले अध्यायमें श्रीभगवान्ने कहा कि जो मुझ परमेश्वरका आश्रय लेकर मुक्तिके लिये यत्न करते हैं, वे ब्रह्मादि सप्त पदार्थोंको मुझसहित अन्तकालमें भी जानेंगे क्योंकि मुक्ति विना ब्रह्मज्ञानके नहीं होती. यह वेदोंमें कहा है " ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः " इतिश्रुतिः इस वास्ते अर्जुन ब्रह्मादि सप्तपदार्थोंके जाननेकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इच्छाकरके प्रश्न करता है. हे पुरुषोत्तम ! १ सो २ ब्रह्म ३ क्या है ४ अर्थात् जिसके जाननेसे मुक्ति होती है. वह सोपाधिक ब्रह्म है, वा निरुपाधिक शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार है जो शुद्ध सच्चिदानन्दके जाननेसेही मुक्ति होती है, तो उसका अर्थ कृपाकरके मुझको समझाना चाहिये, मैं तो अबतक इसी श्यामसुन्दर मूर्तिको परात्पर परब्रह्म समझताथा और आपही हैं पूर्णब्रह्म परन्तु सोपाधिक और निरुपाधिकका भेद मैं जानना चाहता हूं कि किस प्रकार तो आप सोपाधिक हैं और किस प्रकार निरुपाधिक हैं, यह मेरा तात्पर्य है ? अर्थात् शुद्धस्वरूप आपका क्या है ? और इस प्रकार ❋ अध्यात्म ५ क्या है ? ६ कर्म ७ क्या है ? ८ और अधिभूतम् ९ । १० किसको ११ कहते हैं १२ अधिदैव १३ किसको १४ कहते हैं १५ तात्पर्य—अर्जुनका यह है, कि इन शब्दोंके अर्थ शास्त्रमें कै कै प्रकारके अर्थात् बहुत हैं और जैसे ब्रह्म शुद्धको भी कहते हैं और मायोपहितको और सगुण निर्गुणको भी ब्रह्म कहते हैं अब मैं यह जानना चाहता हूं, कि वह ब्रह्मपदार्थ क्या है ? जिसके जाननेसे मुक्त होता है, इस प्रकार कर्म और जीवादि पदार्थोंका क्या अर्थ है अर्जुन का तात्पर्य यह है कि मुक्तिका हेतु ब्रह्मादि पदार्थोंका ज्ञान मैं जानना चाहता हूं ॥ १ ॥

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेस्मिन्मधुसूदन ।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः॥ २॥

मधुसूदन १ अत्र २ देहे ३ अधियज्ञः ४ कः ५ कथम् ६ अस्मिन् ७ नियतात्मभिः ८ प्रयाणकाले ९ च १० कथं ११ ज्ञेयः १२ असि १३ ॥ २ ॥ अ० हे भगवन् ! १ इस २ देहमें ३ अधियज्ञ ४ कौन है ५ अर्थात् जो जो कर्म शरीर मन वाणीसे होता है, उसका फलदाता इस शरीरमें कौन है ५ सि० स्वरूप बूझकर उसके रहनेका प्रकार बूझता है कि ❋ किसप्रकार ६ इसमें ७ अर्थात् इस देहमें वह स्थित है और ❋ समाधान है अन्तःकरण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिनका. ऐसे पुरुषोंकरके ८ किसप्रकार देहावसानके समय९।१०।११जाननेके योग्य १२ हो. आप १३ अर्थात् समाधान अन्तःकरणवाले अन्तकालमें आपको किसप्रकार जानते हैं ? अर्थात् अन्तकालमें क्या उपाय सबसे श्रेष्ठ करना योग्य है जिस उपायके करनेसे मुक्त होजावे. तात्पर्य जिनका चित्त समाधान है उनकी उपासनामें तो सन्देह है नहीं. क्योंकि चित्तका निरोध होना ही उपासनाका फल है. अर्जुनका प्रश्न यह है, कि उसको अन्तकाल में क्या करना चाहिये ? इसहेतुसे स्पष्ट प्रतीत होता है, कि उपासनासे बढ़कर उपाय बूझता है. इन प्रश्नोंका अर्थ इनहीं प्रश्नोंके उत्तरमें सब स्पष्ट होजावेगा ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच—

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः ॥ ३ ॥

परमम् १ ब्रह्म २ अक्षरम् ३ उच्यते ४ स्वभावः ५ अध्यात्मम् ६ भूतभावोद्भवकरः ७ विसर्गः ८ कर्मसंज्ञितः ९ ॥ ३ ॥ अ० उ० तीन प्रश्नका उत्तर इस श्लोकमें है ब्रह्म अध्यात्मकर्म ❋ ब्रह्मको २ शुद्ध सच्चिदानन्द अक्षर अखण्ड नित्यमुक्त निराकार परात्पर ३ कहते हैं ४ और ५ अध्यात्म ६ कहते हैं ❋ भूतोंकी उत्पत्ति और उद्भव करनेवाला ७ सि० जो देवताओंका उद्देशकरके द्रव्यका ❋ त्याग सि० सो ❋ कर्मसंज्ञित है ९ टी० कर्म है संज्ञा जिसकी उसको कर्मसंज्ञित कहते हैं. तात्पर्य यज्ञमें है ९ " चैतन्यंयदाधिष्ठानं लिङ्गदेहश्च यः पुनः। चिच्छाया लिङ्गदेहस्था तत्संघोजीवउच्यते " अधिष्ठान जो चैतन्य और सूक्ष्मशरीर और सूक्ष्मशरीरमें उसी चैतन्यका प्रतिविम्ब इन सबके संघातको जीव कहते हैं ५ ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम्।
अधियज्ञोहमेवात्र देहे देहभृतांवर ॥ ४ ॥

क्षरः १ भावः अधिभूतम् ३ च ४ पुरुषः ५ अधिदैवतम् ६ हे देहभृतांवर ७ अत्र ८ देहे ९ अधियज्ञः १० अहम् ११ एव १२ ॥ ४ ॥ अ० उ० तीन प्रश्नका उत्तर इस मन्त्रमें है❋नाशवान् १ पदार्थको २ अधिभूत ३ कहते हैं❋पुरुषोंको ४। अधिदैव ६ कहते हैं❋हे देहधारियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन! ७ इस ८ देहमें ९ अधियज्ञ १० मैं अन्तर्यामी ११। १२ हूं❋टी० देहादि पदार्थ नाशवान् हैं १। २ जिस करके यह सब जगत् पूर्ण हो रहा है. अथवा सब शरीरोंमें जो विराजमान है उसको वैराजपुरुष हिरण्यगर्भभी कहते हैं. सूर्य्यमण्डलके मध्यवर्त्ति और व्यष्टि सब देवताओंका अधिपति समष्टि देवता है ४ पीछे अर्जुनने यहभी प्रश्न कियाथा कि किसप्रकार वह अधियज्ञ इस देहमें स्थित है और अधियज्ञ किसको कहते हैं. श्रीभगवान्ने कहा कि अन्तर्यामी अधियज्ञ मैं हूं. इसी कहने से यह जानलेना, कि ईश्वर अन्तर्यामी देहमें आकाशवत् स्थित हैं जो सबका साक्षी बुरे भले कर्मोंके फलका देनेवाला है और वह असंग है, यह समझना चाहिये, तात्पर्य यह है, कि ऐसा ईश्वरको समझने से मोक्षकी प्राप्ति होती है ॥ ४ ॥

अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति समद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥ ५ ॥

अन्तकाले १ च २ माम् ३ एव ४ स्मरन् ५ यः ६ कलेवरम् ७ मुक्त्वा ८ प्रयाति ९ सः १० सद्भावम् ११ याति १२ अत्र १३ संशयम् १४ न १५ अस्ति १६ ॥ ५ ॥ अ० उ० सातवें प्रश्नका उत्तर इसमन्त्रमें है अर्थात् मुक्तिका मुख्य उपाय यह है. अन्तकालमें १। २ मुझ अन्तर्यामीका ३ ही ४ स्मरण करता हुआ ५ जी ६ अर्थात् ब्रह्मका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिज्ञासु ६ शरीरको ७ त्यागकर ८ अर्चिरादि मार्गकरके ❋ जाता है ९ सो १० कारण ब्रह्मको ११ प्राप्त होता है १२ इसमें १३ संशय १४ नहीं १५ है १६ ॥ ५ ॥

यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥ ६ ॥

यम् १ यम् २ भावम् ३ स्मरन् ४ वा ५ अपि ६ अन्ते ७ कलेवरम् ८ त्यजति ९ कौन्तेय १० तम् ११ तम् १२ एव १३ एति १४ सदा १५ तद्भावभावितः १६ ॥६॥अ० उ० अन्तकालमें जिस पदार्थका चिन्तवनकरेगा. उसीको प्राप्तहोगा; यह कहते हैं ❋ जिस १ जिस २ पदार्थका ३ स्मरण करता हुआ ४ । ५ । ६ अन्तकालमें ७ शरीरको ८ त्यागता है ९ हे अर्जुन ! १० तिस ११ तिसको १२ ही १३ प्राप्त होता है १४सि० क्योंकि ❋ सदा १५ तिसका चिन्तवन करके बसगया है चित्त जिसका १६ अर्थात् सदा चिन्तवन रहेगा. वह पदार्थ उसके मनमें बसजायगा. इस हेतुसे अन्तकालमेंभी उसको वही स्मरण होगा " बद्धोबद्धाभिमानीस्यान् मुक्तोमुक्ताभिमानिकः । किंवदन्तीहसत्येवं या मतिः सा गतिर्भवेत् " यह कहानी सच्ची है कि जिसको यह अभिमान है अर्थात् यह मानता है, कि मैं बद्ध हूं, परतन्त्र परमेश्वरका दास हूं वह ऐसाही होगा. और जो आत्माको स्वतन्त्र असंग मुक्त मानता है. वह स्वतन्त्र मुक्त होगा. जैसी जिसकी समझ है उसको वही गति होगी, इस हेतुसे परमानन्दके उपासक परमानन्दकोही प्राप्त होंगे मूर्तियोंके उपासक मूर्तियोंको स्त्री छोकरोंके उपासक स्त्री छोकरों को प्राप्त होंगे ॥ ६ ॥

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयः ॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तस्मात् १ सर्वेषु २ कालेषु ३ माम् ४ अनुस्मर ५ युध्य ६ च ७ मयि ८ अर्पितमनोबुद्धिः ९ माम् १० एव ११ एष्यसि १२ असंशयः १३ ॥ ७ ॥ अ० उ० जब कि यह नियम है, कि सदा जिस पदार्थका चिन्तवन रहेगा, अन्तकालमें वह अवश्य याद आवैगा. इस वास्ते सदा परमेश्वरकाही चिन्तवन करना चाहिये और विना अन्तःकरण शुद्ध हुये परमेश्वरका स्मरण नहीं होसक्ता. इसवास्ते अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये स्वधर्मका अनुष्ठान करना चाहिये, यह कहते हैं❋तिसकारणसे १ सब कालमें २ । ३ मुझ अन्तर्यामीको ४ स्मरणकर ५ सि० जो न होसके तो❋युद्धकर ६ सि० क्योंकि युद्ध करनाही क्षत्रियोंका धर्म है. युद्ध करने से अन्तःकरण शुद्ध होता है क्षत्रियोंका❋मुझमें अर्पित करी हैं मन बुद्धि जिसने ९ सि० ऐसा होकर तू❋मुझको १० ही ११ प्राप्त होगा १२ है इसमें❋संशय नहीं १३ तात्पर्य—प्रथम अन्तःकरण शुद्ध होगा और फिर मेरा सदा स्मरण करके मुझको प्राप्त नहीं होगा परमेश्वरमें जो मन नहीं लगता है, इसमें यही हेतु है, कि अन्तःकरण शुद्ध नहीं प्रथम उपाय मुक्तिका यही है, कि निष्काम होकर भलेप्रकार कर्मोंका अनुष्ठान करे ॥ ७ ॥

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् ॥ ८ ॥

पार्थ १ अनुचिन्तयन् २ परमम् ३ पुरुषम् ४ दिव्यम् ५ याति ६ अभ्यस योग युक्तेन ७ चेतसा ८ न ९ अन्यगामिना १० ॥ ८ ॥ अ० उ० परमेश्वरका स्मरण करनेमें दो प्रकारके साधन हैं अन्तरङ्ग बहिरङ्ग यज्ञादि निष्काम कर्मोंका अनुष्ठान करना बहिरङ्ग साधन हैं और शमादि अन्तरङ्ग साधन हैं; क्रमसे दोनों प्रकारके साधनोंका अनुष्ठान करना आवश्यक है. इसीवास्ते पहले मन्त्रमें बहिरङ्ग साधन कहा अब अन्तरङ्ग साधन कहते हैं. हे अर्जुन ! १ सि० शास्त्र और गुरुसे जैसा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वरूप परमेश्वरका निश्चय किया है उसीप्रकार परमेश्वरका चिन्तवन करता हुआ २ परम ३ पुरुष ४ दिव्यको ५ प्राप्त होता है ६ अर्थात् कारण ब्रह्मको अर्चिआदि मार्ग करके प्राप्त होता है. ६ सि० उसका अन्तरङ्ग साधन यह है कि, स्त्रीधनादि पदार्थोंसे मन हटाकर परमेश्वरमें लगाना योग्य है, जब जब किसी पदार्थमें मनजावे उसी समय वहांसे हटाकर परमेश्वरमें लगाना इसको अभ्यासयोग कहते हैं. इस ❋ अभ्यासयोग करके युक्त ७ सि०जो चित्त ऐसे ❋ चित्त करके ८ सि०परमेश्वरका चिन्तवन हो सक्ता है और दूसरा विशेषण उस चित्तका यह है कि पीछे इस अभ्यासयोगके ❋ नहीं ९ रहता है. अन्यपदार्थमें जाननेका स्वभाव जिसका १० अर्थात् स्वाभाविक किसी पदार्थमें सिवाय परमेश्वरके मन नहीं जाता है ऐसे चित्तकरके कि जिसके ये दो विशेषण कहे हैं अर्जुन ? परमेश्वरको चिन्तवन करता हुआ परमेश्वरकोही प्राप्त होता है ॥

कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः । सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥ ९ ॥

कविम् १ पुराणम् २ अनुशासिताम् ३ अणोः ४ अणीयांसम् ५ सर्वस्य ६ धातारम् ७ अचिन्त्यरूपम् ८ आदित्यवर्णम् ९ तमसः १० परस्तात् ११ यः १२ अनुस्मरेत् १३ ॥ ९ ॥ अ० उ० ❋ उस परमपुरुषके ये विशेषण हैं, और इसमन्त्रका पिछले मन्त्रके साथ सम्बन्ध है कैसा है वह परमपुरुष ❋ सर्वज्ञ १ अनादिसिद्ध २ नियन्ता प्रेरक ३ सूक्ष्मसे ४ अतिसूक्ष्म ५ सबका ६ पालनेवाला ७ सि० अचिन्त्य शक्तिमान् होनेसे और अप्रमाण महिमा और गुण प्रभाव होनेसे ❋ अचिन्त्यरूप ८ आदित्यवत् स्वप्रकाशरूप ९ अर्थात् ज्ञानस्वरूप अग्निसूर्यवत् उसका प्रकाश नहीं समझना. केवल शुद्ध, ज्ञान, प्रज्ञाप्ति, चित्, चिती, चैतन्यमात्र अनुभव करना चाहिये.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर इसीको व्यतिरेकमुखकरके कहते हैं ❀ अज्ञानसे १० परे ११ सि० पूर्वोक्त ऐसे पुरुषोंको ❀ जो १२ शुद्ध ब्रह्मका जिज्ञासु ❀ स्मरण करता है १३ सो उसी परंपुरुष दिव्यको प्राप्त होता है. पिछले मन्त्रके साथ इसका अन्वय है. फिर शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको ज्ञानद्वारा प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

प्रयाणकाले मनसाचलेन भक्त्या युक्तो योग-बलेन चैव। भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥ १० ॥

प्रयाणकाले १ अचलेन २ मनसा ३ योगबलेन ४ च ५ एव ६ प्राणम् ७ भ्रुवोः ८ मध्ये ९ सम्यक् १० आवेश्य ११ भक्त्या १२ युक्तः १३ सः १४ तम् १५ परम् १६ पुरुषम् १७ दिव्यम् १८ उपैति १९ ॥ १० ॥ अ० उ० इस प्रकार सच्चिदानन्द पुरुषको जो स्मरण करता है सो तिसही सच्चिदानन्दको प्राप्त होता है. यह कहते हैं ❀ अन्तकालमें १ अचल २ मनकरके ३ योगके बलसे ४। ५। ६ प्राणको ७ दोनों भ्रूके ८ बीचमें ९ भलेप्रकार १० ठहराय कर ११ भक्तिकरके १२ युक्त १३ जो पुरुष जैसे पीछे कहा है. उस प्रकारका सच्चिदानन्दको स्मरण करता है ❀ सो १४ तिस १५ पर १६ सि० ऐसे ❀ पुरुष १७ दिव्यको १८ प्राप्त होता है १९ टी० सिवाय सच्चिदानन्द निराकारके किसी पदार्थ साकारमें स्त्री पुत्र धनादि मानापमानादिमें मन न जावे २। ३ आसन प्राणायामादिके बलसे ४ सुषुम्नामार्ग करके प्राणको स्थिर करके ७। ८। ९। १०। ११ उस समय सच्चिदानन्दका ध्यान करना यही भक्ति है, ऐसी भक्ति करता हुआ १२। १३ परमपुरुष सच्चिदानन्दकोही प्राप्त होगा. अर्थात् सच्चिदानन्दरूप हो जायगा ॥ १० ॥

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वीतरागाः । यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये ॥ ११ ॥

वेदवेदः १ यत् २ अक्षरम् ३ वदन्ति ४ वीतरागाः ५ यतयः ६ यत् ७ विशन्ति ८ यत ९ इच्छन्तः १० ब्रह्मचर्यम् ११ चरन्ति १२ तत् १३ पदम् १४ ते १५ संग्रहेण १६ प्रवक्ष्ये १७ ॥ ११ ॥ अ० उ० महावाक्योंका अर्थ विचारनेमें जो समर्थ हैं अर्थात् निर्मल और तीव्र बुद्धिवाले जो अन्तरमुख हैं, वे तो उत्तम अधिकारी हैं उनको ब्रह्मविद्याका श्रवण करना यही उपाय मुक्तिका मुख्य उनके वास्ते है और जो मन्दबुद्धि हैं. और मन्दवैराग्य हैं, गृहस्थ छोड़कर जिन्होंसे ब्रह्मवित्जनोंका सेवन नहीं हो सक्ता. अथवा ब्रह्मविद्याके पढ़नेवाले गुरु किसी कारणसे उनको प्राप्त नहीं होते, अथवा ब्रह्मविद्याके पढनेकी सामग्री (पुस्तकादि) नहीं मिलती है जिनको, ऐसे पुरुष मन्द और मध्यम अधिकारी हैं मोक्षमार्गमें उनके लिये परमकरुणाकर श्रीभगवान् ऐसा अच्छा उपाय बताते हैं, कि उसका अनुष्ठान करनेसे शीघ्र बेसन्देह ज्ञानद्वारा मुक्तिको प्राप्त होंगे. प्रथम उस मुक्तिपदकी स्तुति करते हैं. फिर आगे के दो श्लोकोंमें उसकी प्राप्तिका उपाय कहेंगे. वेदके जानने वाले १ जिसको २ अक्षर ३ कहते हैं ४ और दूर होगया है राग जिनका ५ सि० ऐसे ❀ संन्यासी ज्ञाननिष्ठ महात्मा ६ जहां ७ प्रवेश होते हैं ८ सि० और जिसकी ९ इच्छा करते हुए १० ब्रह्मचारी गुरुदेवजीके घर रहकर ❀ ब्रह्मचर्यव्रत ११ करते हैं १२ सो १३ पद १४ तेरे अर्थ १५ संक्षेप करके १६ कहूंगा १७ अर्थात् उस पदकी प्राप्तिका उपाय तुझसे कहूंगा कि जिस पदका वेदोंका तात्पर्य और सिद्धान्त जाननेवाले अक्षर ब्रह्म कहते हैं और पदार्थोंमें दूर होगया है. राग जिनका न इसलोकके किसी पदार्थमें राग है न परलोकके किसी पदार्थमें ऐसे विरक्त साधु सहात्मा विज्ञानी महापुरुष जिस परमपदमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रवेश होते हैं और जिस पदकी इच्छा करके ब्रह्मचारी काश्यादि क्षेत्रोंमें जाकर और वहां गुरुदेवकी टहल करके साङ्गोपाङ्ग वेदोंका अध्ययन करते हैं अर्थात् वेदशास्त्र भले प्रकार पढ़ते विचारते हैं ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थित रहते हैं ऐसे पदकी प्राप्तिका उपाय तुझसे कहूंगा. सावधान होकर सुन ॥ ११ ॥

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च ।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधार-
णाम् ॥ १२ ॥

सर्वद्वाराणि १ संयम्य २ मनः ३ हृदि ४ निरुद्ध्य ५ च ६ आत्मनः ७ प्रणम् ८ मूर्ध्नि ९ आधाय १० योगधारणम् ११ अस्थितः १२ ॥ १२ ॥ अ० उ० उत्तम उपासना सनातनकी यह है, सोई दो मन्त्रोंमें कहते हैं. सब इन्द्रियोंके द्वारोंको १ रोक कर २ और मनको ३ हृदयमें ४ रोककर ५ । ६ और अपने ७ प्राणको ८ मूर्द्धामें ९ ठहराय कर १० योगधारणको ११ आश्रय किया हुआ १२ सि० परमगतिको प्राप्त होता है. अगले मन्त्रके साथ इसका अन्वय है. टी० चक्षुरादिका रूपादिके साथ सम्बन्ध नहीं होने देना. इसीको इन्द्रियोंका रोकना कहते हैं अर्थात् देहयात्रासे सिवाय दर्शनादि क्रिया नहीं करना १ । २ अन्तःकरणको बहिर्मुख नहीं करना अर्थात् बाहरके शब्दादि पदार्थोंका सङ्कल्प विकल्प नहीं करना. सिवाय आत्माके किसी पदार्थ भूत भविष्यत् का चिन्तन नहीं करना. सिवाय आत्माके और किसी पदार्थमें निश्चयात्मिका बुद्धि नहीं करना अर्थात् यह पदार्थ सत्य है. तात्पर्य—सिवाय आत्माके और किसीको सत्य नहीं समझना और देहादिके साथ तादात्म्यता सम्बन्ध करके अहङ्कार नहीं करना. इसको अन्तःकरणका निरोध कहते हैं ३ । ४ ५ प्राणायामके अभ्याससे प्राणकी गतिको मस्तकमें निश्चल करना तात्पर्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणका निरोध करना चाहिये. प्राणके निरोध करनेसेही अन्तःकरणका निरोध होता है. मनकी और प्राणकी एक गति है। ७। ८। ९। १० यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार; धारणा, ध्यान, समाधि ये आठ अङ्ग योगके हैं इस योगका अवश्य आश्रय रखना चाहिये. अवश्य अनुष्ठान करना उचित है. जितनी अपनी सामर्थ्य हो इसका अनुष्ठान किये विना मन प्राणका निरोध कठिन है जब कि प्राण मनका निरोध न हुआ तो आत्मानन्दका सक्षात् होना बहुत कठिन है. और जीवन्मुक्तिका होना तो बहुतही दुर्लभ है. पूर्व संस्कार वा ईश्वर महात्माजनोंका अनुग्रह दूसरी बात है. मार्ग तो अपरोक्ष ज्ञानका यही है. इसके पीछे विचार है और इनका फल प्रत्यक्ष है जिसको यह योग थोडासाभी प्राप्त है, उसको बहुत पढ़ने सुननेकी आपेक्षा नहीं ॥ १२ ॥

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं सयाति परमां गतिम्॥ १३॥

ओम् १ इति २ एकाक्षरम् ३ ब्रह्म ४ व्याहरन् ५ माम् ६ अनुस्मरन् ७ यः ८ देहम् ९ त्यजन् १० प्रयाति ११ सः १२ परमाम् १३ गतिम् १४ याति १५ ॥ १३ ॥ अ० उ० ओम् इस शब्दका उच्चारण करना वेदोंमें बहुत जगह लिखा है और इसका बड़ा प्रत्यक्ष परिचय है❋ओम् १ यह २ एक अक्षर ३ सि० ब्रह्मका वाचक होनेसे❋ब्रह्मस्वरूप है सि० ४ इसको दीर्घ स्वरमें❋उच्चारण करता हुआ ५ सि० और इसका वाच्य जो ईश्वर मैं हूं❋हुआ सच्चिदानन्द ईश्वरको ६ स्मरण करता हुआ ७ जो ८ अर्थात् ब्रह्मका जिज्ञासु ८ शरीरको ९ छोडकर १० सि० अर्चिरादि मार्ग करके❋जाता है ११ सो १२ परम १३ गतिको १४ प्राप्त होता है १५ अर्थात् ऐसे उपासकका फिर जन्म नहीं होता. ब्रह्मलोकमें जाकर ज्ञानद्वारा परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त होता है❋जैसे घण्टाका शब्द एक बेर तो बढ़े

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चला जाता है फिर सहज सहजकम होकर जहां से उठा था वहांही समा-जाता है इसी प्रकार ओमकारका दीर्घ स्वरसे उच्चारण करना चाहिये थोडी-देर पीछे स्थित होकर मकारमें थमजाना यह उपासना बहुत बढकी है ❋ " ओंकारःसर्ववेदानां साररतत्त्वप्रकाशकः। तेनाचित्तसमाधानं मुमुक्षूणांप्रका-श्यते ॥ " असंख्यात श्लोकोंमें ' ओमकार ' का अर्थ है वेदशास्त्रोंमें बहुत जगह जो नाम उच्चारणका माहात्म्य लिखा है यहां तात्पर्य इसी नामके उच्चारण करनेसे है और तारक मन्त्र यही है. चारों वेद, षट्शास्त्र पुरा-णादि इसकी टीका हैं इसकी जप करने की विधि महात्माओं से श्रवण करके अवश्यही अनुष्ठान करना चाहिये. अन्तकालमें एकवार उच्चारण करनेसे जब परमगतिको प्राप्त होता है तो फिर क्या कहना है कि जो पहले से अभ्यास करनेवाले परमगतिको प्राप्तहों यह ओंकार सब वेदोंका सार ब्रह्मसत्त्वका प्रकाश करनेवाला और चित्तका समाधान करनेवाला है ॥ १३ ॥

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥ १४॥

अनन्यचेताः १ यः २ माम् ३ सततम् ४ नित्यशः ५ स्मरति ६ पार्थ ७ तस्य ८ नित्ययुक्तस्य ९ योगिनः १० अहम् ११ सुलभः १२ ॥ १४ ॥ अ० उ० ❋ इस प्रकार अन्तकालमें धारण करके मेरा स्मरण नित्य प्रति-दिन अभ्यास करनेवालाही करसक्ता है विना अभ्यास के अन्तकालमें मेरा स्मरण कठिन है यह बात पहले भी कहचुके हैं श्रीभगवान् फिरभी उसी-को स्मरण कराते हैं ❋ नहीं है अन्य पदार्थमें मन जिसका अर्थात् सिवाय परमेश्वरके और किसी पदार्थ (पुत्र, मित्र, स्त्री, धनादि) में नहीं है चित्त जिसका ऐसा ब्रह्मका जिज्ञासु ❋ जो २ मुझको ३ निरंतर ४ प्रतिदिन ५ स्मरण करता है ६ हे अर्जुन ! ७ तिस ८ नित्ययुक्त ९ योगीको १०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं सुलभ ११।१२ सि० हूं औरको नहीं टी० प्रातःकाल सायंकाल पर्यन्त और सायंकालसे प्रातःकाक पर्यन्त अन्तर न पड़े अर्थात् अष्टप्रहरके बीचमें निद्रा, शौच स्नान, भोजनादि प्रमितक्रिया के विना सिवाय नारायणके और किसी पदार्थका चिन्तवन न हो ४ जबतक जीवे कोई एकदिन वा महीना वा वर्ष वा शतवर्ष तबतक उसके बीचमें सिवाय सच्चिदानंदके और कहीं मन मुख्य होकर न जावे ५ ऐसे समाहित चित्तको मैं सुलभ हूं अर्थात् अन्तकालमें मेरी प्राप्ति उसको बेसन्देह सुखपूर्वक होगी ॥ १४ ॥

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् ।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमांगताः ॥ १५ ॥

महात्मानः १ माम् २ उपेत्य ३ पुनः ४ जन्म ५ न ६ आप्नुवन्ति परमाम् ८ संसिद्धिम् ९ गताः १० दुःखावलयम् ११ अशाश्वतम् १२ ॥ १५ ॥ अ० उ० ❋ आपकी प्राप्तिमें क्या लाभ है ? इस प्रश्नके उत्तरमें यह कहते हैं ❋ महात्मा विरक्त, वैराग्यवान् १ मुझको २ प्राप्त होकर ३ अर्थात् सच्चिदानन्दरूप होकर ३ फिर ४ जन्मको ५ नहीं ६ प्राप्त होते हैं सि० ७ क्योंकि वे जीवतेही ❋ परम ८ सिद्धिको ९ अर्थात् जीवन्मुक्तिको ८।९ प्राप्त होगये हैं १० सि० कैसा है वह जन्म ? ❋ दुःखोंकी खानि स्थान है ११ सि० फिरभी यह नहीं कि ऐसाही बना रहै क्योंकि दूसरा विशेषण उसका यह है कि ❋ अनित्य है अर्थात् क्षणभंगुर है दूसरे क्षणमें दूसरे जन्म होते देर नहीं लगती १२ ॥ १५ ॥

आब्रह्म भुवनाल्लोकाः पुनरावर्त्तिनोऽर्जुन ॥
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १६ ॥

अर्जुन १ आब्रह्मभुवनात् २ लोकाः ३ पुनरावर्तिनः ४ कौन्तेय ५ माम् ६ उपेत्य ७ तु ८ पुनः ९ जन्म १० न ११ विद्यते १२ ॥ १६ ॥ अ० उ० ब्रह्मलोकादिकी प्राप्तिमें क्या आपकी प्राप्ति नहीं. सच्चिदानन्द

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वरूप होनेमें ही आपकी प्राप्ति है. इस अपेक्षामें श्रीमहाराज कहते हैं क्योंकि❀हे अर्जुन ! १ ब्रह्मलोकसे लेकर २ सि० जितने सावयव❀ लोक ३ हैं सब❀पुनरावृत्तिवाले हैं अर्थात् सब लोकोंमें (वैकुण्ठादिमें भी) जाकर लौट आता है, मनुष्यलोकमें और जो ब्रह्माके साथ मुझ सच्चिदानन्द रूपको प्राप्त होता है, सो शुद्ध सच्चिदानन्द, निराकरका उपासकही प्राप्त होता है. उससे सिवाय सब लौट आते हैं, क्योंकि वे मुझ शुद्ध सच्चिदानन्दके उपासक नहीं अर्थात् ज्ञाननिष्ट वे नहीं. भेदवादी हैं और❀हे अर्जुन ! ५ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्दके उपासक तो❀मुझ सच्चिदानन्दरूपको ६ प्राप्त होकर ७ । ८ दूसरे ९ जन्मको १० नहीं ११ प्राप्त होते हैं १२ तात्पर्य—ब्रह्मलोकका अर्थ यह नहीं समझना कि वह लोक ब्रह्माजीका है उसमें केवल ब्रह्माजीके उपासक जाते है और राम, कृष्ण, विष्णु शिवादिके उपासक गोलोक, वैकुण्ठादिमें जाते हैं वे नित्य है यह सब अर्थवाद है और स्थूलबुद्धिवालोंके लिये स्थूल रोचक वाक्य हैं क्योंकि सब देवताओंके उपासक अपने अपने स्वामीके लोकको सबसे बड़ा और नित्य कहते हैं प्रत्युत यह कहते हैं. कि इससे सिवाय कोई दूसरा लोक है नहीं सिवाय इसके गोलोकादिका वर्णन वेदोंमें तो है नहीं. पुराणोंमें सुना जाता है स्वर्गका वर्णन वेदोंमें बहुत जगह है पूर्व मीमांसावाले वेदका प्रमाण देकर स्वर्गको नित्य अनादि कहते हैं अब विचार करना चाहिये, कि स्वर्गको श्रीभगवान्ने क्यों अनित्य कहा जो यह कहो कि स्वर्गके नित्य प्रतिपादन करनेमें जो श्रुति हैं वे रोचक वाक्य हैं उनको अर्थवाद समझना चाहिये. अब विचारो कि वेदकी श्रुतिको तो अर्थवाद और रोचक मान फिर पुराणोंके वाक्योंको रोचक और अर्थवाद माननेमें क्यों शंका करते हो, प्रत्युत पुराओंका वाक्य तब तक प्रमाणके योग्य नहीं कि जबतक उस वाक्यके अनुसार श्रुति न पावें क्योंकि कितने पुराण संधिग्ध हैं. स्पष्ट यह बात हम कहते हैं कि भागवत दो प्रसिद्ध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं उनमेंसे एक बेसन्देह मनुष्य कृत है जब कि एक पण्डितने एक पुराण बनाकर अठारह सहस्र श्लोकोंका प्रचार कर दिया तो क्यों न संशय पड़ेगा उन पुराणोंमें कि जो श्रुतिके अनुसार न होगा. तात्पर्य—ब्रह्मलोक पूर्णब्रह्मनारायणका लोक है पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्दके उपासक उस लोकमें जाते हैं जब वही अनित्य है तो और की अनित्यतामें क्या संदेह है ब्रह्मलोकमें जाकर कोई तो ब्रह्माजीके साथ मुक्त हो जाते हैं और कोई लौट आते हैं यह बात भी इसी अध्यायमें आगे कहेंगे ॥ १६ ॥

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः॥ १७॥

अहोरात्रविदः १ जनाः २ ते ३ ब्रह्मणः ४ यत् ५ अहः ६ सहस्र-युगपर्यन्तम् ७ विदुः ८ रात्रिम् ९ युगसहस्रान्ताम् १० ॥ १७ ॥ अ०उ० ब्रह्मलोकादि इस हेतुसे अनित्य हैं. दिनरातके जाननेवाले, अर्थात् कालकी संख्या करनेवाले १ सि० जो ❋पुरुष २ वे ३ ब्रह्माजीका ४ जो ५ दिन ६ सि० है उसको ❋सहस्र युग पर्यन्त ७ (४३२००००००) कहते हैं. ८ अर्थात् सत्ययुग (१७२८०००) त्रेता (१२९६०००) द्वापर (८६४०००) कलियुग (४३२०००) इन चारों युगोंका जोड़ (४३२००००) वर्ष होते हैं. ४३२०००० को १००० से गुणाजावे तो चार अरब बत्तीस करोड़ (४३२००००००) वर्ष होते हैं. चार अरब बत्तीसकरोड वर्षका ब्रह्माजीका एक दिन होता है ८ सि० और रात्रिभी इतनेही वर्षोंकी होती है ❋रात्रिको ९ भी ❋युगसहस्रान्ता १० सि० कहते हैं इसप्रकार महीनों और वर्षोंकी कल्पना करके शतवर्षकी अवस्था आयुष्य ब्रह्माजीकी है. जिस दिन ब्रह्माजी प्रयाण करते हैं. उसी दिन सब लोक सावयव नाश होजाते हैं. दिन रात ब्रह्माजी की आठ अर्ब चौंसठ करोड़ वर्षोंकी होती है (८६४०००००००) इस संख्याके निरूपण करनेका तात्पर्य वैराग्यमें हैं टी०हजारयुगोंपर अन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है. जिसका उसको सहस्रयुगपर्यन्त कहते हैं और हजार युगोंका अन्त है जिसका उसको युगसहस्रांता कहते हैं सहस्रयुग शब्द का तात्पर्य सहस्र चौकडीमें है ॥ १७ ॥

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके ॥ १८ ॥

अहरागमे १ सर्वाः २ व्यक्तयः ३ अव्यक्तात् ४ प्रभवन्ति ५ रात्र्यागमे ६ अव्यक्तसंज्ञके ७ तत्र ८ एव ९ प्रलीयन्ते १० ॥ १८ ॥ अ० उ० यह मनुष्यलोक और कईलोक इससे ऊपरके और नीचेके ब्रह्माजी की रातमेंही नाश होजाते हैं और रातभर कारण रूप हुये सब अविद्या में रहते हैं सि० फिर ❋ दिनके आगममें अर्थात् ब्रह्माजीका दिन उदय होतेही १ सब २ व्यक्ति ४ अर्थात् सब भूत आकाशादि कार्यके सहित ❋ अव्यक्तसे ४ अर्थात् कारणरूपसे प्रकट होजाते है ५ और रात्रिके आगम में ६ अव्यक्तसंज्ञा है जिसकी ७ तिसमें ८ ही ९ लय होजाते हैं १० टी० स्थावर जंगम सब ब्रह्माजीके स्वप्न अवस्थामें लय होजाते हैं और जाग्रत् अवस्थामें उसी स्वप्न सब प्रकट होजाते हैं. तात्पर्य—यह संसार ब्रह्मलोकादि और ब्रह्मादिके साहित सब स्वप्न है. यह समझकर सिवाय सच्चिदानन्द आत्माके अन्य किसी पदार्थमें प्रीति न करनी क्योंकि सब अनित्य हैं अनित्य पदार्थ वर्तमान कालमेंभी दुःखका हेतु होता है ॥ १८ ॥

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥ १९ ॥

अयम् १ भूतग्रामः २ सः ३ एव ४ अवशः ५ अहरागमे ६ भूत्वा ७ पार्थ ८ रात्र्यागमे ९ प्रलीयते १० भूत्वा ११ प्रभवति १२ ॥ १९ ॥ अ० उ० यह नहीं समझना कि नई सृष्टिमें नये जीव उत्पन्न होते हैं क्योंकि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीव नित्य और अनादि हैं और संसार अनादि शान्त है. इसवास्ते यह श्लोक वैराग्यके लिये कहते हैं. यह १ भूतोंका समूह २ सि० जो पूर्वकल्पमें लय होगया था❀सो ३ ही ४ परतन्त्र हुआ ५ अर्थात् अविद्याके वश हुआ ५ दिनके आगममें ६ प्रकट❀होकर ७ हे अर्जुन ! ८ रात्रिके आगममें ९ लय होजाता है १० सि० और फिर दिनके आगममें स्थूल सूक्ष्म❀होकर ११ प्रकट होता है १२ टी० भूत्वा भूत्वा दो बार कहने से यह अभिप्राय है कि जबतक ज्ञान नहीं होता तबतक यह चक्र च-लाही जाता है इसवास्ते अवश्य ज्ञानमेंही यत्न करना चाहिये. अथवा इस श्लोकका अन्वय ऐसे करना, कि हे अर्जुन ! यह भूतोंका समुदाय भी प्रथम कल्पमें था सोई अवश्य हुआ रात्रिके आगममें होकर फिर होकर लय होजाता है और दिनके आगममें प्रकट होजाता है. तात्पर्य इस अन्वयमें भी वही अक्षरोंका जोड़ और प्रकार है ॥ १९ ॥

परस्तस्मात्तु भावोऽन्यो व्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः।
यस्सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति ॥ २० ॥

तस्मात् १ अव्यक्तत् २ तु ३ यः ४ सनातनः ५ भावः ६ अव्यक्तः ७ सः ८ परः ९ अन्यः। १० सर्वेषु ११ भूतेषु १२ नश्यत्सु १३ न १४ विनश्यति १५ ॥ २० अ० उ० सावयव लोकोंको अनित्य कहकर शुद्ध-सच्चिदानन्द स्वरूपको परात्पर नित्य प्रतिपादन करते हैं और उसीको परमगति और अपना धाम अपनेसे अभिन्न कहते हैं, अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वरसे जुदा कोई धाम नहीं और न कोई जुदा मुक्ति पदार्थ है पूर्णब्रह्म शुद्धसच्चिदानन्द नित्यमुक्त आत्माको जानना, यही मुक्ति है और यही परमधाम है और यही परमेश्वरकी दर्शनप्राप्ति है. इससे भिन्न सब भ्रान्ति है यह कहते हैं दो श्लोकोंमें और तीसरे श्लोकमें प्रथम यह पदहै कि " पुरुषः सपरः " वहांतक अन्वय है❀चराचरका कारण जो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अव्यक्त❋तिससे १ अर्थात् पूर्वोक्त❋अव्यक्तसे २ भी ३ जो ४ सनातन ५ पदार्थ ६ अव्यक्त ७ है❋सो ८ श्रेष्ठ ९ और विलक्षण १० है कैसा है वह कि❋सर्व भूतोंके ११ । १२ नाश हुये भी १३ नहीं १४ नाश होता है १५ टी० सोपाधिक मायोपहित ब्रह्म को कारण अव्यक्त कहते हैं और शुद्ध सच्चिदानन्द अखण्ड नित्यमुक्त अद्वैत एकरस निराकर को शुद्ध अव्यक्त कहते ज्ञानकाल में उपाधि का नाश होजाता है फिर केवल अद्वैत मायारहित अखण्ड सच्चिदानन्द रहजाता है इसी को अव्यक्त निराकार कहते हैं ॥ २० ॥

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥ २१ ॥

अव्यक्तः १ अक्षरः २ इति ३ उक्तः ४ तम् ५ परमाम् ६ गतिम् ७ आहुः ८ तत् ९ मम १० परमम् ११ धाम १२ यम् १३ प्राप्य १४ न १५ निवर्तन्ते १६ ॥ २१ ॥ अ० उ० शुद्ध अव्यक्त सच्चिदानन्दको अद्वैत सिद्ध करते हैं सच्चिदानन्दसे जुदा कोई और पदार्थ नहीं❋अव्यक्तको १ सि० ही❋अक्षर २ ऐसा ३ कहा है ४ और तिसको ५ सि० ही❋परम ६ गति ७ मुक्ति ७ कहते हैं ८ और सोई ९ मेरा १० परम ११ धाम १२ सि० है कैसा है वह धाम कि❋जिसको १३ प्राप्त होकर १४ नहीं १५ लौट कर आते हैं १६ अर्थात् फिर सच्चिदानन्द जीवको उपाधिका सम्बन्ध नहीं होता. क्योंकि ज्ञानसे उपाधिका अत्यन्त अभाव होजाता है❋तात्पर्य—सब दुःखोंकी निवृत्तिको और परमानन्दकी प्राप्तिकोही परमगति और मुक्ति और परमधाम ऐसा कहते हैं गोलोक, सत्यलोक, वैकुण्ठ, अयोध्या, वृन्दावन, और कैलासादि सब इसी अव्यक्त सच्चिदानन्द परमधामके नाम हैं इसप्रकार समझकर जो वैकुंठादिको नित्य परात्पर कहे तो उसका कहना सत्य है और जो उनको सावयव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और सच्चिदानन्दसे भिन्न कहे अर्थात् वैकुण्ठादिको तो श्रेष्ठमन्दिर बतावे और विष्णु आदि देवतोंका उन मन्दिर लोकोंका स्वामी भिन्न बतावे. यह अर्थवाद है अधिकारी प्रति स्थूल रोचक वाक्य है इस मन्त्रमें यह अर्थ स्पष्ट है कि परमात्मासे परमात्माका धाम भिन्न नहीं. क्योंकि परमात्मा निराकार है आश्रय साकारों को चाहना है परमेश्वर अपनेको अव्यक्त, अमूर्त, अक्षर, अखण्ड, अविनाशी कहते हैं ऐसा अर्थ स्पष्ट सुन देखकर भी जो फिरभी परमेश्वरको और उनके धामको सावयव सिद्धान्त और परमार्थमें बतावे वह मूर्खतम विना पुच्छका पशु है. जिसका भगवद्-वाक्यमें विश्वास नहीं ॥ २१ ॥

पुरुषः सपरः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्॥२२॥

पार्थ १ सः २ परः ३ पुरुषः ४ भक्त्या ५ लभ्यः ६ तु ७ अनन्यया ८ यस्य ९ भूतानि १० अन्तःस्थानि ११ येन १२ इदम् १३ सर्वम् १४ ततम् १५ ॥ २२ अ० उ० ❀परमगतिकी प्राप्तिका उपाय सबसे श्रेष्ठ मुख्य ज्ञानलक्षणा अनन्य पराभक्ति है. इसीको उत्तमपुरुष और परमपुरुष परमात्मा कहते हैं❀" पुरुषान्नपरं किंचित्साकाष्ठासापरागतिः "❀ श्रुतिने यह कहा है. कि पुरुषसे परे श्रेष्ठ कुछ नहीं यही पुरुष परात्पर अवधि है और यही परमगति है❀हे अर्जुन ! १ सो २ परम ३ पुरुष ४ अर्थात् परब्रह्म पूर्ण नारायण सच्चिदानन्द ४ भक्ति करके ५ प्राप्त होता है ६ यह तु शब्द विलक्षण अर्थमें आता है. इसजगह विलक्षणता यह है, कि भजन कीर्तन सेवा प्रदक्षिणादि भक्तिका अर्थ नहीं. क्योंकि आगे उसके अनन्यया विशेषण है श्रीभगवान् कहते हैं की परमात्मा भक्ति उसके प्राप्त होती है परन्तु कैसी भक्ति करके कि❀अनन्य करके ७।८ अर्थात् सिवाय सच्चिदानन्दके अन्य अर्थात् दूसरा कोई और पदार्थ जिसकी वृत्तिमें नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहा ऐसी वृत्तिकरके परमात्मा प्राप्त होता है घण्टा बजाना परिक्रमा करनी यह तो बालक और मूर्ख बहिर्म्मुख विषयी भी करसक्ते हैं सुन्दर पदार्थमें सबकाही मन लगजाता है सिवाय इसके यह बात स्पष्ट है, कि श्रीभगवान् अर्जुनको उपदेश करते हैं श्यामसुन्दर स्वरूपतो अर्जुन को प्राप्तही है सच्चिदानन्द निराकार आत्माकाही उसको ज्ञान नहीं उसीको परमपुरुष श्रीभगवान् बताते हैं❋जिसके ९ भूत १० सि० आकाशादि❋ भीतर स्थित है ११ अर्थात सब जगत सोपाधिक सच्चिदानन्द कारण ईश्वरमें स्थित है और❋जिस करके १२ यह १३ सब १४ जगत १४ व्याप्त है १५ अर्थात सब जगतमें सच्चिदानन्द अस्ति भाति प्रिय होकर पूर्ण हो रहा है ॥ २२ ॥

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥ २३॥

यत्र १ काले २ तु ३ प्रयाताः ४ योगिनः ५ अनावृत्तिम् ६ आवृत्तिम् ७ च ८ एव ९ यान्ति १० भरतर्षभ ११ तम् १२ कालम् १३ वक्ष्यामि १४ ॥ २३ ॥ अ० उ०❋ज्ञानी जीतेही ब्रह्माजीसे प्रथमही स्वतन्त्र होकर मुक्त होता है और ब्रह्माका उपासक ब्रह्माजीके साथ परतन्त्र होकर मुक्त होता है और कर्म्मनिष्ठावाले और भेद उपासना वाले सदा परतन्त्र रहते हैं. स्वर्गादिमें जाकर सालोक्यादि मुक्तिको प्राप्त होकर फिर जन्म मरणचक्रमें घूमते हैं सो इन परतन्त्र मुक्तिवालोंका मार्ग मुझसे सुन, आगे दो श्लोकोंमें कहूंगा, विना ब्रह्मज्ञानके जो इनका हाल होता है बहिर्मुख विषयी पामरोंका तो कुछ प्रसंगही नहीं वे तो संसारमें डूबे रहते हैं❋जिस मार्गमें १। २। ३ जातेहुये ४ योगी ५ अनावृत्ति ६ और आवृत्तिको ७। ८। ९ प्राप्त होते हैं १० हे अर्जुन! ११ तिस १२ मार्ग को १३ कहूंगा मैं १४ सि० तुझसे आगे दो श्लोकोंमें अभिप्राय मेरा उन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मार्गोंके कहनेसे यह है, कि जबतक बने स्वतन्त्र होना चाहिये❀ "पराधीन सपनेहु सुख नाहीं। शोच विचार देखु मनमाहीं॥" टी० कर्मनिष्ठ और भेदवादी आवृत्ति मार्ग होकर ब्रह्मलोकमें जाते हैं ज्ञानी महात्मा स्वतन्त्र होकर सबसे पहले मुक्त होते हैं. वे किसीके घर नहीं जाते निजानन्दको प्राप्त होते हैं॥ २३॥

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः॥२४॥

अग्निः १ ज्योतिः २ अहः ३ शुक्लः ४ षण्मासाः ५ उत्तरायणम् ६ तत्र ७ प्रयाताः ८ ब्रह्मविदः ९ जनाः १० ब्रह्म ११ गच्छन्ति १२॥ २४॥

अ० उ० सच्चिदानन्द ब्रह्म निराकारके उपासकोंका अनावृत्ति मार्ग कहते हैं अर्थात् ब्रह्मपदकी मंजिल हैं. अग्नि १ ज्योति २ दिन शुक्लपक्ष ४ छः महीने उत्तरायण ५ इस मार्गमें ६ जाते हुये ७ ब्रह्मके जाननेवाले ८ अर्थात् ब्रह्मोपासक ९ जन १० क्रम क्रमसे अर्थात् उत्तरोत्तर मंजिल दरमंजिल❀ब्रह्मको १० प्राप्त होंगे ११ अर्थात् फिर उनका जन्म न होगा. ज्ञानद्वारा परमानन्द स्वरूप आत्माको प्राप्त होंगे १२ टी० अग्निके देवताको फिर ज्योतिके फिर दिनके फिर शुक्लपक्षके फिर उत्तरायणके देवताको प्राप्त होंगे. तात्पर्य यह है, कि पहिले अग्निके देवताके पास ब्रह्मउपासक पहुचेंगे, फिर वह देवता ज्योतिके देवताके पास पहुँचा देगा. इसीप्रकार आगेभी कल्पना करलेनी, इसी प्रकार ब्रह्मलोकमें पहुँचैंगे फिर ब्रह्माजीके साथ मुक्त हो जावेंगे अग्नि आदि शब्द देवतोंके उपलक्षण हैं तात्पर्य—देवतोंसे है यह मार्ग सनातन श्रौत उपासनाका है इसी प्रकारकी उपासना इन दिनोंमें बहुत कम करते हैं प्रत्युत इसके जाननेवालेभी कम कम हैं, हेतु इसमें यह है, कि रूप, रंग, नृत्यवाली उपासनामें आसक्त हो रहे हैं. यथार्थ उपासना और भक्ति यह है, कि जिस भक्ति उपासनाकी वेद शास्त्रोंमें बड़ाई है॥ २४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् ।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्त्तते ॥ २५ ॥

तथा १ धूमः २ रात्रिः ३ कृष्णः ४ षण्मासदक्षिणायनम् ६ तत्र ७ योगी ८ चान्द्रमसम् ९ ज्योतिः १० प्राप्य ११ निवर्तते १२ ॥ २५ ॥ अ० उ० कर्मनिष्ठावालोंका आवृत्तिमार्ग कहते हैं. अर्थात् वह रस्ता कि जिस रस्ते जाकर लौट आते हैं. जैसे अनावृत्ति मार्गवाले ब्रह्मविद् अग्नि आदि देवताओंको पहले प्राप्त होकर ब्रह्मको प्राप्त होते हैं फिर उनका जन्म नहीं होता ? तैसे १ सि० कर्मनिष्ठ आवृत्ति मार्गवाले धूमादि देवतोंको पहले प्राप्त होकर फिर स्वर्गलोकको प्राप्त होकर लौट आते हैं. उनकी मंजिल यह है❀धूम २ रात्रि ३ कृष्णपक्ष ४ छः महीने दक्षिणायन ५ । ६ इन रस्तोंमें ७ जाता हुआ❀कर्मयोगी ८ चान्द्रसम ९ अर्थात् स्वर्गको १० प्राप्त होकर ११ लौट आता है १२ मनुष्य लोकमें टी० पहिले धूमके देवताके पास जाता है फिर रात्रिके फिर कृष्णपक्षके फिर दक्षिणायन इस प्रकार उत्तरोत्तर क्रम क्रमसे मंजिल दर मंजिल स्वर्गमें पहुँचाता है तात्पर्य—जो निवृत्ति मार्गमें स्थित होकर अन्तरङ्ग उपासना करते हैं अर्थात् सच्चिदानन्द अक्षर निराकार आत्माका जो आराधन करते हैं वे क्रम क्रमसे ब्रह्मलोकमें पहुँचकर मोक्ष होंगे कर्मनिष्ठ वहांका भोगकर लौट आवेंगे. निषिद्ध कर्म करनेवाले नरकमें जाकर फिर मनुष्योंमें जन्म लेंगे और अतिनिषिद्धकर्म करनेवाले चौरासीलक्ष योनियोंमें भ्रमेंगे ॥ २५ ॥

शुक्लकृष्णे गतीह्येते जगतः शाश्वते मते ।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययाऽऽवर्त्तते पुनः ॥ २६ ॥

शुक्लकृष्णे १ एते २ गती ३ हि ४ जगतः ५ शाश्वते ६ मते ७ एकया ८ अनावृत्तिम् ९ याति १० अन्यया ११ पुनः १२ आवर्तते १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ २६ ॥ अ० उ० शुक्ल और कृष्ण १ ये २ दो गति ३। ४ जगत्की ५ अनादि ६ मानी हैं ७ सि० क्योंकि संसार अनादि है. इसवास्ते इन दोनों मार्गोंकोभी अनादि माना है. महात्मा हि यह शब्द स्पष्ट करता है, कि यह बात वेद शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है❀एक करके ८ अर्थात् शुक्ल मार्ग करके ८ अर्थात् शुक्ल मार्ग करके ९ अनावृत्तिको ९ प्राप्त होता है १० अर्थात् फिर उसका जन्भ नहीं होता. ब्रह्माजीके साथ मुक्त हो जाता है, जबतक ब्रह्मलोकमें दिव्य भोग भोगता है और ब्रह्मज्ञान श्रवण करता है १० सि० और❀अन्य करके ११ अर्थात् दूसरे कृष्णमार्ग करके फिर १२ जन्म मरणको प्राप्त होता है १३ अर्थात् कृष्णमार्ग करके जो स्वर्गादिमें जाता है वह लौट आता है और जो शुक्लमार्ग करके जाता है वह मुक्त होता है टी० जगत् कहनेसे सब जगत् नहीं समझना इस जगत्में ज्ञाननिष्ठ और कर्मनिष्ठ जो पुरुष हैं उनकी ये दो गति हैं. सब जगत्की नहीं भेदवादी उपासकादिका कर्मनिष्ठ पुरुषोंमें अन्तर्भाव है. ज्ञान प्रकार स्वरूप है इसवारते उसको शुक्ल कहा और कर्म तम जड़रूप है. इसवास्ते उनका मार्ग कृष्णकहा. स्पष्ट बात है, कि ज्ञानमार्ग अज्ञानको दूर कर सक्ता है. तात्पर्य—यह है, कि ज्ञानी प्रकाशवाले रस्ते जाते हैं और अज्ञानी (कर्मी) अन्धकारके रस्ते जाते हैं अब विचारना चाहिये, कि इन दोनों मार्गोंमेंसे श्रेष्ठ ज्ञानमार्ग है, व कर्ममार्ग है ॥ २६ ॥

नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्ज्जुन ॥ २७॥

पार्थ १ कश्चन २ योगी ३ एते ४ सृती ५ जानन् ६ न ७ मुह्यति ८ अर्जुन ९ तस्मात् १० सर्वेषु ११ कालेषु १२ योगयुक्तः १३ भव १४ ॥ २७ ॥ अ० उ० पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्दका ध्यान करनेवाला योगी इन दोनों मार्गोंमें प्रीति नहीं करता तात्पर्य—यह है, कि ब्रह्मलोकादिकमें जानेकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इच्छा नहीं करता. ब्रह्माजीसे पहलेही मुक्त हुआ चाहता है हे अर्जुन ! १ कोई २ योगी ३ इन दो ४ मार्गोंको ५ जानता हुआ ६ नहीं ७ मोहको प्राप्त होता है ८ सि० बहिर्मुख विषयी सब पदार्थोंके भोगनेकी इच्छा करते हैं. जैसे इसलोकके भोग वैसेही परलोकके क्योंकि दोनों अनित्य दुःखदायी हैं. जो कोई ब्रह्मलोकमें जाकर मुक्त होंगे उनको क्या दुःख है, इसका उत्तर यह है, कि जैसे व्यवहारमें राज्य करनेमें द्रव्य ऐश्वर्य ईश्वरताकी प्राप्तिमें और उनके साधनोंमेंभी तो सुख मानते हैं और कहते हैं, कि राज्य करनेमें क्या दुःख है ? ऐसाही यह प्रश्न है. विचार करो कि एकके मकानमें उसकी आज्ञामें रहना दुःख है व सुख है. जिन्होंने सदा स्त्री, धन, राज्यादिकी सेवा टहलकी है उनको सेवामेंही सुख प्रतीत होता है. इसी हेतुसे परमेश्वरकेभी दास बना चाहते हैं ❋ हे अर्जुन ! ९ तिस कारणसे १० सब कालमें ११ । १२ योगयुक्त १३ हो तू १४ टी० सच्चायोगी कोईभी ब्रह्मलोकादिकी इच्छा नहीं करता. क्योंकि इन मार्गोंको जानता है और समझता है कि जगह जगह धक्के खाकर ब्रह्मलोकमें पहुँचता है फिर वहां ब्रह्माजी बूझते हैं कि तू कौन है ऐसी तू तडाक नीच आदमी सहते हैं महात्मा ऐसी जगह नहीं जाते जहां कोई तू तडाग करे इसी वास्ते हे अर्जुन ! उत्साह और धीरजकी कमर बांध दिन रात्रि गङ्गा प्रवाहवत् शुद्ध सच्चिदानन्दका ध्यानकर पूर्ण सच्चिदानन्दकोही प्राप्त होगा ॥ २७ ॥

वेदेषु यज्ञेषु तपस्सु चैव दानेषु यत्पुण्यफलं प्रादिष्टम् । अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ॥ २८ ॥

यत् १ पुण्यफलम् २ वेदेषु ३ यज्ञेषु ४ तपस्सु ५ च ६ एव ७ दानेषु ८ प्रादिष्टम् ९ योगी १० इदम् ११ विदित्वा १२ तत् १३ सर्वम् १४ अत्येति १५ च १६ आद्यम् १७ परम् १८ स्थानम् १९ उपैति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२० ॥ २८ ॥ अ० उ० श्रद्धा बढ़ानेके लिये योगकी स्तुति करते है. श्रीभगवान् कहते हैं, कि हे अर्जुन ! सुन ध्याननिष्ठ योगीका माहात्म्य जो १ पुण्यफल २ वेदोंमें ३ सि० और यज्ञोंमें ४ और तपमें ५ । ६ । ७ सि० और दानमें ८ वेदशास्त्र और महात्माओंने ❋ कहा है ९ अर्थात् साङ्ग और सोपाङ्ग विधिवत् वेदोंके अध्ययन करनेमें जो पुण्यका फल होता है, कि जैसा शास्त्रने कहा है ❋ ध्याननिष्ठ योगी अर्थात् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द निराकाररूपका ध्यान करनेवाला १० यह ११ जानकर १२ अर्थात् जो पीछे कहा वह सब फल मुझको हुआ. यह समझकर अथवा सप्त प्रश्नोंका अर्थ भले प्रकार जानकर और उनका भले प्रकार अनुष्ठान करके ❋ तिस १३ सबको १४ उल्लंघ जाता है. १५ अर्थात् यह फल आवान्तर बीचका फल जिसको गौण कहते हैं. उसको उल्लंघकर उससे श्रेष्ठ फलको प्राप्त होता है १५ अर्थात् फिर १६ आदि १७ परम् १८ स्थानको १९ प्राप्त होता है २० अर्थात् कारण ब्रह्मको प्राप्त होता है ॥ २८ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेज्ञानविज्ञानयोगोनामअष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

॥ अथ नवमोऽध्यायः ॥

श्रीभगवानुवाच—

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे ।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥१॥

इदम् १ तु २ ज्ञानम् ३ विज्ञानसहितम् ४ गुह्यतमम् ५ ते ६ प्रवक्ष्यामि ७ अनसूयवे ८ यत् ९ ज्ञात्वा १० अशुभात् ११ मोक्ष्यसे १२ ॥ १ ॥ अ० उ० इस अध्यायमें अचिन्त्यप्रभाव और अपनी अचिन्त्यशक्ति निरूपण करके, तत्पदार्थको त्वम् पदार्थके साथ एकता लक्ष्यार्थमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिखाकर, उसकी प्राप्तिका सुलभ उपाय निरूपण करेंगे, और वह उपाय सबके वास्ते असाधारण है सि० जो इसअध्यायमें कहना है❀यह १ । २ ज्ञान ३ अनुभवके साथ ४ गुप्ततम ५ तेरे अर्थ ६ कहूंगा ७ सि० कैसा है तू कि❀असूयारहित है ८ अर्थात् किसीके गुणोंमें अवगुण आरोपण नहीं करता है तू किसीके गुणोंमें अवगुण आरोपण करना बड़ा अनर्थ है वह ब्रह्मविद्याका अधिकारी नहीं. इस विशेषणसे अर्जुनको ब्रह्मविद्याका अधिकारी दिखाया कैसा है वह ज्ञान कि❀जिसको ९ जान कर १० अर्थात् जिस ज्ञान करके आत्माको यथार्थ जानकर❀अशुभ (संसार) से ११ (तू) छूट जायगा १२ टी० तु यह शब्द ऐसी जगह विशेष आता है कि जहां पूर्वोक्तसे विलक्षण विशेष निरूपण होगा❀धर्मतत्त्व गुह्य है और उपासनाका तत्त्व गुह्यतर है और ज्ञानका तत्त्व गुप्ततम है ५ केवल तेरे कल्याणके अर्थ तुझसे कहूंगा; मेरा कुछ मतलब नहीं ६ ऐसे कौनहैं कि गुणोंमें अवगुण निकालें सुनो ज्ञाननिष्ठामें जो तर्क करते हैं श्रद्धा नहीं करते जान बूझ ब्रह्मविद्याका उलटा अर्थ करते हैं ८ तात्पर्य—ब्रह्मविद्याका अधिकारी जानकर तुझसे कहूंगा. तू मेरा भक्त है. इस ज्ञानके आसरेसे तू मुक्त होगा. कोई कोई जो यह कहते हैं, कि विना अद्वैत ब्रह्मज्ञानके भी मोक्ष होजाता है सो नहीं. किन्तु इसी ज्ञानसे जो विज्ञानके सहित मैं कहूंगा. जिससे आत्मा अद्वैत जाना जावे उससे मोक्ष होगा द्वैतज्ञान में तेरे सन्देह नहीं. साक्षात् द्वैत उपासनाका फल मैं प्रत्यक्ष हूं. आत्माका यथार्थ ज्ञान तुझको नहीं वह मैं विलक्षण कहूंगा. इसवास्ते (तु) यह पद इस श्लोकमें है ॥ १ ॥

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् ।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्त्तुमव्ययम् ॥ २ ॥

इदम्*१ राजविद्या २ राजगुह्यम् ३ पवित्रम् ४ उत्तमम् ५ प्रत्यक्षावगमम् ६ धर्म्यम् ७ कर्तुम् ८ सुसुखम् ९ अव्ययम् १० ॥ २ ॥ अ० उ०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस श्लोकमें ब्रह्मज्ञानके सब विशेषण हैं यह १ सि० ब्रह्मज्ञान❋सब विद्याका राजा है २ अर्थात् अठारह विद्या हैं प्रसिद्ध यह सबका राजा है और❋गुप्त पदार्थोंका भी राजा है ३ क्योंकि कोई बिरले महात्मा जानते हैं और यह❋पवित्र ४ है क्योंकि निरवयव पदार्थ है, चतुर्थ अध्यायमें श्रीभगवान्ने कहा है, कि ज्ञानके सदृश और कोई पदार्थ पवित्र नहीं और सबसे❋श्रेष्ठ ५ सि० है, क्योंकि अनेक जन्मोंके पापोंको अनादि कालकी अविद्याको एकक्षणमें नाश करदेता है❋दृष्टफल वाला है ६ सि० क्योंकि आत्माको जीते हुयेही अनुभव करा देते हैं अर्थात् ज्ञानीको परात्पर परमानन्द नित्यमुक्तकी प्राप्ति जीतेजी होती है, क्योंकि ज्ञानियोंको जीवन्मुक्त कहते हैं और❋सब धर्मोंका फल यही है, सब धर्म कर्म उपासना इसीके वास्ते हैं ७ सि० और❋कहनेको ८ अर्थात् अनुष्ठान करनेके लिये सुखवाला है ९ अर्थात् सुखपूर्वक इसका अनुष्ठान हो सक्ता है, क्योंकि अपना आत्मा सुखरूप है, सुखको सब जानते हैं सुख पदार्थके जाननेमें कुछ प्रयत्न नहीं करना पड़ता. केवल इतना और समझना चाहिये कि मेरे हृदयमें जो यह सुख प्रतीत होता है, इसका अखण्ड अद्वैत पुञ्ज मैं हूं वसिष्ठजीने श्रीरामचन्द्रजीसे कहा है, कि हे राम ! फूलके मलनेमें विलम्ब और यत्न होता है ज्ञानकी प्राप्ति उससे भी जल्दी होती है क्योंकि स्वयंशुद्ध आत्मा सदा प्राप्त है केवल अज्ञान दूर होनेमें पल भी नहीं लगती. मूर्ख बका करते हैं, कि अजी ? अज्ञान बड़ा कठिन है, देखो श्रीभगवान् उनके मुखपर क्या धूलि डालते हैं, जड़ पदार्थोंके जाननेमें ज्ञानकी इच्छा होती है ज्ञान स्वरूपके जाननेमें क्या प्रयत्न चाहिये, जैसे कोई कहे कि मैं अपनी आंख नहीं देखता हूं. उस मूर्खसे कहना चाहिये, कि जिससे तू सबको देखता है वह तेरी आँख है और जैसे कोई बोले और कहे कि मेरे मुखमें जीव है वा नहीं ऐसेही अज्ञानी कहते हैं कि ब्रह्मज्ञान हमको है वा नहीं सो निश्चय उन-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को ज्ञान नहीं और न होगा, क्योंकि ज्ञानस्वरूप आत्मासे पृथक् पदार्थ-को ब्रह्म जाना चाहते हैं. वह कैसे प्राप्त होगा ? सि० और इसका फल ❀अविनाशी १० सि० है क्योंकि आत्मा नित्य है आत्मासे पृथक् सब पदार्थ अनित्य हैं, प्रत्युत परमार्थ दृष्टि करके अभावरूप हैं ॥ २ ॥

अश्रद्दधानाः पुरुषां धर्मस्याऽस्य परन्तप ।
अप्राप्य मां निवर्त्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥ ३ ॥

परन्तप १ अस्य २ धर्मस्य ३ अश्रद्दधानाः ४ पुरुषाः ५ माम् ६ अ-प्राप्य ७ मृत्युसंसारवर्त्मनि ८ निवर्तंते ९ ॥ ३ ॥ अ० उ० जब कि यह ब्रह्मज्ञान सब गुणसम्पन्न है. तो बहुत लोग कर्मकाडी द्वैतवादी इसका क्यों नहीं आदर करते ? यह शङ्का करके कहते हैं. हे अर्जुन ! १ इस २ धर्मके ३ अश्रद्धावाले ४ पुरुष ५ अर्थात् जो ब्रह्मज्ञानमें श्रद्धा नहीं करते वे ५ मुझको ६ नहीं प्राप्त होकर ७ जन्ममरणरूप संसारमार्गमें ८ भ्रमा करते हैं ९ तात्पर्य—अन्तःकरण मैला होनेसे और कम समझसे ब्रह्मविद्याका कर्मकाण्डी, द्वैवतादी, उपासकादि श्रवण नहीं करते, इसी हेतु-से वे इस परमधर्मका अनुष्ठान नहीं करते और जो श्रवण भी करते हैं और पढ़ते भी हैं तो उसका अर्थ उलटा समझते हैं तात्पर्य—अभिप्राय-शास्त्रका नहीं समझते. रोचक अर्थवाद वाक्योंमें विश्वास करते हैं सिद्धान्त में श्रद्धा नहीं करते. इसी हेतुसे उलटाही फल उनको मिलता है. अर्थात् वेदोक्त अनुष्ठान करनेसे परमफल मुक्त होना चाहिये सो वे आप अपने मुखसे यह कहते हैं कि हम वृन्दावनके गीदड शृगाल होजावें. परन्तु मुक्ती हम नहीं चाहते. इस वाक्यको विचारो कि जिनकी मुक्तिफलमें श्रद्धा नहीं तो ज्ञाननिष्ठा तो मुक्ति का साधन है. उसमें उनकी श्रद्धा कब होसक्ती है चतुर्थ अध्यायमें कह चुके हैं, कि ज्ञानको श्रद्धावान् प्राप्त होता है. यह जो लोग बहिर्मुख हैं और रूप रसादिहीमें सुख समझते हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तर्मुख नहीं जानते यह बहुर्मुख होनाही ज्ञाननिष्ठामें अश्रद्धाका कारण है और यह न समझना चाहिये, कि भक्ति उपासनाके आश्रय सम्बन्ध आड मिस बहानेसे जो रूपका देखना और शब्दका सुनना है यह विषय विषवत् नहीं इनसे कुछ क्षति नहीं होती. किन्तु विषय सब बराबर हैं. केवल इतना भेद है. जैसे लोहेकी बेडी और सोनेकी बेडी तात्पर्य—लौकिक प्रसिद्ध विषयोंसे वे अच्छे हैं यह बात कुछ बुरे माननेकी नहीं विचार करिकै देखो कि रामलीलादिके देखनेवाले प्रायशः विषयी बहिर्मुख पामार होते हैं व प्रेमी वैराग्यवान् विवेकी साधनसम्पन्न हैं और शतपचास लोग जो नये श्रद्धापूर्वक ऐसी भक्तिमें लगेंगे ऐसी भक्तिको पुण्यजनक मोक्ष प्रदा, परात्पर समझ कर भी जो लगेंगे, व लगते हैं, तो वे परिणाममें बहिर्मुही रहते हैं व अन्तर्मुख शमदमादि साधनसम्पन्न होजाते हैं. तात्पर्य—यह है कि, जो ऐसा २ रस चखते हैं उनको ज्ञाननिष्ठा आपही फीकी लगेगी. यह व्यवस्था सुनी हुई लिखी है ऐसे आदमियोंके सामने ज्ञानका नामभी लेना दुःखका मूल है ॥ ३ ॥

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि नचाहं तेष्ववस्थितः ॥ ४ ॥

मया १ अव्यक्तमूर्त्तिना २ इदम् ३ सर्वम् ४ जगत् ५ ततम् ६ सर्वभूतानि ७ मत्स्थानि ८ अहम् ९ तेषु १० न ११ च १२ अवस्थितः १३ ॥ ३ ॥ अ० उ० ज्ञाननिष्ठाके अनिधिकारियोंको फलके साहित कहकर और अर्जुनको ज्ञाननिष्ठामें श्रद्धावान् असूयारहित समझकर अर्जुनको संमुख करके ब्रह्मज्ञान कहते हैं❋मुझ १ अव्यक्तमूर्त्ति करके अर्थात् सोपाधिक सच्चिदानन्द करके २ यह ३ सब ४ जगत् ५ व्याप्त हो रहा है ६ अर्थात् इन्द्रिय मनके विषय जो जो पदार्थ हैं सबमें निराकार सत् चित् आनन्द पूर्ण होरहा है. ऐसा कोई पदार्थ नहीं कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिसमें सत्ता चैतन्यता आनन्दता न हो सब भूत " सूक्ष्म स्थूल " मुझ सोपाधिका सच्चिदानन्दमें स्थित हैं अर्थात् कल्पित हैं ७ जैसे शुक्तिमें रजत और ❋ मैं ९ तिनमें १० नहीं ११ । १२ स्थित् हूँ १३ अर्थात् मैं असंगहूं मेरा किसीके साथ सम्बन्ध नहीं, जैसे यह कहते हैं, कि घटमें आकाश है सो नहीं वास्तव घटही आकाशमें है और जो भीतर भी प्रतीत होता है. तो भी निर्विकार असंग है ॥ ४ ॥

न च मत्स्थानिभूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् ।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्माभूतभावनः ॥ ५ ॥

भूतानि १ न २ च मत्स्थानि ४ न ५ च ६ भूतस्थः ७ मे ८ योगम् ९ ऐश्वरम् १० पश्य ११ ममात्मा १२ भूतभृत् १३ भूतभावनः १४ ॥५॥

अ० उ० परमानन्दस्वरूप नित्यमुक्त निराकार परमात्मामें त्रिगुणात्मक जगत् स्थूल सूक्ष्म और इन दोनोंका कारण अज्ञानकल्पित है. यह भी जिज्ञासुके समझानेके लिये आव्यारोपमें कहा जाता है. वास्तव तीनकालमें यह जगत् नहीं परमात्मा अखण्ड अद्वैत नित्यमुक्त है. कल्पितशब्दभी कल्पित है जो यह कहो कि इस कल्पनारूप क्रियाका कर्ता कर्म अधिकरण कौन है. सुनो यह सब अविद्या है अर्थात् कर्त्ता, कर्म, क्रिया, आधेकरण यह सब अविद्या है अर्थात् कल्पना करनेवाली भी अविद्या कल्पना भी अविद्या जो पदार्थ कल्पना किया जाता है सो भी अविद्या जिसमें कल्पना होती है सो भी अविद्या जिस करके, जिसके लिये, जिससे होती है, कल्पना वह सब अविद्या है आविद्याका लक्षण क्या है सुनो ❋ अविद्यायाअविद्यत्वामिदमेवाहिलक्षणम् " अविद्याका अविद्याही रूप है और जो कोई यह प्रश्न करे कि चैतन्यरूप आत्मामें अज्ञान होना असम्भव है उसीसे फिर बूझना कि जब तुम आपही कहते हो. हम तो प्रथमही कहचुके हैं, कि तीनकालमें अज्ञान है नहीं और जो यह कहो,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि अज्ञान हमको और बहुतलोगोंको प्रतीत होता है तो विचारना चाहिये कि आत्मा चैतन्य वा जड़ है, प्रत्यक्षमें प्रमाण और युक्तियोंकी क्या आकांक्षा है और तुम कैसे कहते हो कि ज्ञानरूपमें अज्ञान नहीं बन सक्ता है यह बातें अलौकिक हैं सि० सोई परमेश्वर इन मन्त्रमें कहते हैं कि वास्तवमें ❋ भूत १ न २। ३ मुझमें स्थित है ४ और न ५। ६ सि० मैं ❋ भूतोंमें स्थित हूं ७ हे अर्जुन! ❋ मेरे ८ सि० इस ❋ योग ९ और ईश्वरताको १० देख ११ सि० अर्थात विचार कर कि ❋ मेरा आत्मा अर्थात् मैंहीं १२ असङ्ग नित्यमुक्त नित्यमुक्त निर्विकारहूं और मैंहीं ❋ भूतोंको धारण करता हूं १४ सि० भूतोंको पालन करता हूं १५ टी० भूतोंको जो धारणकरे. उसको भूतभृत् कहते हैं. जो भूतोंको पालनकरे उसको भूतभावन कहते हैं. और योगशब्द जो इस मन्त्रमें है. उसका अर्थ अचिन्त्यशक्ति है जगत्की रचना स्थितिलयके विषय बुद्धिको बहुत श्रम देना चाहिये. केवल अपने कल्याणपर दृष्टि रखनी योग्य है. जीवको स्पष्ट प्रतीत यह होता है कि मैं अज्ञान करके जगत्में फँसरहा हूं. अपनी व्यवस्था और अपने घरकी व्यवस्था मुझको मालूम नहीं. फिर परमेश्वरकी व्यवस्था और उनकी लीलाकी व्यवस्था मैं कैसे जान सकूंगा. तात्पर्य—अज्ञानकी निवृत्तिका उपाय करना चाहिये. जो बूझो कि क्या उपाय है. स्पष्ट बात है, कि आज्ञान ज्ञान से दूर होता है जो बूझो ज्ञान किसको कहते हैं. उत्तर इसका बहुत सीधा और सहज है परन्तु अधिकारीकी समझमें आता है और इस गीताशास्त्रमें जगह २ ज्ञानका उपदेश है. प्रथम ज्ञानमें श्रद्धा करनी योग्य है. और जितेन्द्रिय तत्पर होना चाहिये. सद्गुरुकी कृपासे ज्ञान प्राप्त होजायगा. जो श्रीभगवान्ने ऊपर निरूपण किया सब समझमें आजागया. केवल इसबातमें विद्या और चर्चाका काम नहीं तीनों साधन जो पीछे कहे वे प्रथम हैं विद्या और चर्चा भी चाहिये ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्र गो महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय ॥ ६ ॥

यथा १ महान् २ सर्वत्रगः ३ वायुः ४ नित्यम् ५ आकाशस्थितः ६ तथा ७ सर्वाणि ८ भूतानि ९ मत्स्थानि १० इति ११ उपधारय १२ ॥ ६ अ० उ० दो श्लोकोंमें जो अर्थ पीछे निरूपण किया उसको दृष्टान्त देकर स्पष्ट करते हैं ❋ जैसे १ अप्रमाण २ सब जगत् ३ वायु ४ सदा ५ आकाशमें स्थित है ६ तैसेही ७ सब ८ भूत ९ मुझमें स्थित हैं १० यह ११ जान तू १२ ॥ ६ ॥

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम्।
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् ॥ ७ ॥

कौन्तेय १ कल्पक्षये २ सर्वभूतानि ३ मामिकाम् ४ प्रकृतिम् ५ यान्ति ६ कल्पादौ ७ पुनः ८ तानि ९ अहम् १० विसृजामि ११ ॥ ७ ॥ अ० उ० जगत् जैसे स्थित है सो व्यवस्था कहकर सृष्टि और लय कहते हैं अर्थात् श्रीभगवान् यह कहते हैं, कि जैसे जगत्की स्थितिकालमें मैं असंग हूं ऐसेही सृष्टि और प्रलयकालमें भी असंग हूं सि० हे अर्जुन ! १ कल्पके क्षयमें २ अर्थात् प्रलयकालमें ❋ सब भूत सिवाय ब्रह्मवित्के मेरी ४ प्रकृतिको ५ अर्थात् अपरा त्रिगुणात्मिका मायाको प्राप्त होते हैं ६ मायामें लय होजाते हैं सूक्ष्मरूप होकर और कल्पके आदिमें अर्थात् जगत्की सृष्टिसमय ७ फिर ८ तिनको ९ मैं १० रच देता हूं ११ प्रकट कर देता हूं इत्यभिप्रायः, तात्पर्य—माया और उसका कार्य और परा प्रकृति जीवरूप सब परतन्त्र है. स्वतन्त्र कोई नहीं. सब ईश्वराधीन है इसवास्ते सदा ईश्वरका आराधन करना योग्य है. जो स्वतन्त्र और मुक्त होना चाहते. हो तो सो ॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥ ८ ॥

स्वाम् १ प्रकृतिम् २ अवष्टभ्य ३ इमम् ४ कृत्स्नम् ५ भूतग्रामम् ६ पुनः७ पुनः ८ विसृजामि ९ प्रकृतेः १० वशात् ११ अवशम् १२ ॥ ८ अ० उ० निराकार निरवयव आप जगत्को कैसे रखते हो, यह शङ्का कहते हैं ॥ अपनी १ प्रकृतिको २ वशकरके ३ अर्थात् मायाके साथ सम्बन्ध करके इस ४ समस्त ५ भूतोंके समूहको ६ वारंवार ७ । ८ मैं रचता हूं ९ कैसा है यह भूतग्राम अर्थात् जगत❀ प्रकृतिके १० वश है ११ परतन्त्र है १२ यह जगत् अपने कर्मोंके वशमें है, स्वतन्त्र नहीं इत्यभिप्रायः टी० त्रिगुणात्मक जो अज्ञान है वह शुद्ध सत्त्व प्रधान हुआ माया कहा जाता है. उस मायाके सम्बन्धसे जगत् रचता हूं और उसके मैं वश नहीं वह मेरे आधीन है और वही अज्ञान मलिन सत्त्व प्रधान हुआ अर्थात् अविद्या कहाजाता है.यह समस्त जगत् अविद्याके आधीन होरहा है. अर्थात् अवश्य परतन्त्र होरहा है. उन कर्मोंके अनुसार वारंवार उनको मैं रचता हूं. वारंवार कहनेसे यह तात्पर्य है, कि यह जगत् अनादि है. असंख्यात बार उत्पन्न हुआ और नाश हुआ यह सब जगत् अविद्याके वशमें हैं और अविद्या ईश्वरके वशमें है ॥ ८ ॥

न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय ।
उदासीन वदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु ॥ ९ ॥

धनञ्जय १ तानि २ कर्माणि ३ माम् ४ न च ५ निबध्नन्ति ६ उदासीनवत् ७ आसीनम् ८ तेषु ९ कर्मसु १० असक्तम् ११ ॥ ९ ॥ अ० उ० जब कि रचना पालना संहार करना इन क्रियाके आप कर्त्ता हो, तो जीववत् आपको वे बन्धन कैसे नहीं करते. यह शङ्का करके कहते हैं. हे अर्जुन ! १ जगत्की रचनादि जो कर्म हैं❀ वे २ कर्म ३ मुझको ४ नहीं ५ बन्धन करते हैं ६ क्योंकि मैं उदासीनवत् ७ स्थित हूं ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और तिन ९ कर्मोंमें १० सक्त नहीं ११ टी० ❀ 'असक्त' और 'आसीन' ये दोनों 'माम्' शब्दके विशेषण हैं. उदासीन भी होना और कर्मभी करना इनका स्थितिगतिवत् विरोध है. इसवास्ते 'उदासीनवत्' कहा तात्पर्य—कर्म करनेसे जीव भी बन्धको नहीं प्राप्त होता है. कर्मोंमें सक्त हो जाना बन्ध है जो जीव कर्मोंमें सक्त न हो तो उसको भी कर्म्म बन्धन नहीं करसक्ते फिर मैं कैसे बद्ध हो सक्ता हूं ॥ ९ ॥

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते स चराचरम् ।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥ १० ॥

प्रकृतिः १ मया २ अध्यक्षेण ३ सचराचरम् ४ सूयते ५ कौन्तेय ६ अनेन ७ हेतुना ८ जगत् ९ विपरिवर्तते १० ॥ १० ॥ अ०उ० जगत्की रचनादि क्रियामें विषम दोष प्रतीत होता है, यह शङ्का करके कहते हैं. प्रकृति १ मुझ २ अध्यक्षरूप करके ३ अर्थात् मुझ निमित्तमात्र कारण करके ❀ सचराचर ४ जगत्को उत्पन्न करती है ५ हे अर्जुन! ६ इस ७ हेतु करके ८ जगत् वारंवार उत्पन्न होता है १० टी०जगत्की रचनादि क्रियामें प्रकृति उपादानकारण है और मैं निमित्तकारण हूं वह प्रकृति मेरी अचिन्त्य शक्ति है. मुझसे भिन्न नहीं इसवास्ते मैं अभिनिमित्तोपादान कारण हूं. यह बात दृष्टान्तके सहित भले प्रकार आनन्दामृतवर्षिणीके द्वितीय अध्यायमें लिखी है. निमित्तकारण होना और उदासीन रहना यह दोनों बनसक्ते हैं ऐसे जैसे प्रकाश व्यवहारमें निमित्त कारण है. विना प्रकाश कुछ व्यवहारभी नहीं होसक्ता और प्रकाशमें जो बुरा भला कर्मकरे वह प्रकाशको नहीं लगेगा. क्रिया करनेवालेको लगेगा. इसी प्रकार वह विषम दोष मायामें है ईश्वरमें नहीं. यह बात भले प्रकार विचारनेके योग्य है. जो ईश्वरको जगत्का कर्त्ता कहा जावे तो ईश्वरमें विषमदोष आता है और जो मायाको कर्त्ता कहाजावे तो वह जड़ है औ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो जगत्को अनीश्वर कहाजावे तो वेद शास्त्रादि सब व्यर्थ हुये जाते हैं. तात्पर्य यह है, कि ईश्वर जगत्के अभिन्ननिमित्तोपादानकारण है इसमें कोई दोष नहीं विना चैतन्यका आश्रय सम्बन्ध लिये स्वतन्त्र माया जगत्को नहीं रच सक्ती और प्रकाशवत् ईश्वरको निमित्तमात्र होनेमें कुछ दोष नहीं ॥ १० ॥

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् ।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् ॥ ११ ॥

मूढ़ाः १ माम् २ अवजानन्ति ३ मानुषीम् ४ तनुम् ५ आश्रितम् ६ मम ७ परम् ८ भावम् ९ अजानन्तः १० भूतमहेश्वरम् ११ ॥ ११ ॥ अ० उ० जैसा स्वरूप मैंने पीछे कहा बहुत जीव मुझको ऐसा नहीं जानते हैं मनुष्योंकी बराबर मुझको समझ कर मेरा निरादर करते हैं मेरे वाक्यमें जो श्रद्धा नहीं करते यही मेरी अवज्ञा है. मुझ निराकारको हठकरके अज्ञानसे मोहके वश होकर साकार कहते हैं❋विवेकरहित अर्थात् नित्य क्या है, और अनित्य क्या है. इसप्रकार आत्मा अनात्माका जिनको विचार नहीं ऐसे मूढ़ १ मुझको २ निरादर करते हैं अर्थात् मेरी अवज्ञा तिरस्कार करते हैं ३ कौनसे मेरे स्वरूपका अनादर करते हैं कि जो❋मनुष्यसम्बन्धी ४ शरीर ५ आश्रय किया है ६ अर्थात् दुष्टोंके नाशकरनेको और साधुजन अपनेभक्तोंकी रक्षा करनेको मनुष्य कैसा आकार वाला जो मैं प्रतीत होता हूं. उस स्वरूपको मूर्ख मनुष्य राजपुत्रादिही समझते हैं. यही मेरी अवज्ञा है❋मेरे ७ परम् ८ प्रभावको ९ नहीं जानते १० अर्थात् मुझको ऐसा नहीं समझते कि 'यह❋ भूतोंके महेश्वर हैं ११ सि० मुझ मनुष्याकारको मनुष्यही समझते हैं. यही मेरी अवज्ञा है❋तात्पर्य-अध्यारोप अपवादन्याय करके निष्प्रपञ्च वस्तु सच्चिदानन्दमें त्रिगुणात्मक जगत् प्रपञ्च निरूपण किया है. महात्मा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और वेदोंने वास्ते समझाने जिज्ञासुके जैसे तत्पदका वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ और त्वंपदका वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ अध्यारोपमें निरूपण किया है और ईश्वरको जगत्का अभिन्न निमित्तोपादानकारण वर्णन किया फिर लक्ष्यार्थमें दोनों पदोंकी एकता. जैसे कही तीन सम्बन्ध और लक्षणादि करके इसप्रकार जो जीव ईश्वरको नहीं जानते. अथवा जानबूझकर निरादर करते हैं. अर्थात् शास्त्रीयज्ञानहोभी जाता है शास्त्रके पढ़ने सुननेसे तो भी उसमें श्रद्धा नहीं करते. अध्यारोप और पूर्वपक्षकी श्रुति स्मृतियोंका प्रमाण दे देकर वृथा वाद करते हैं. यही ईश्वरकी अवज्ञा निरादर है और अपने मनुष्यशरीरमें जो सच्चिदानन्द आत्मा है. उसके परमप्रभावको नहीं जानते. वर्णआश्रम-वाला औरोंका दास सिद्धान्तमेंभी सदा समझते हैं. यह सच्चिदानन्दकी अवज्ञा तिरस्कार है. इतिहास-से इस बातको स्पष्ट करते हैं इतिहास एक साहूकार बालक लड़केको घरमें छोड़ परदेशमें चलागया लड़का तरुण होकर तलाश करनेके वास्ते अपने पिताके निकला और ढूंढता ढूंढ़ता पिताके पास पहुँच गया न पिताने पहचाना न लड़केने और उस लड़केको टहल करनेके लिये नौकर रखलिया. लड़केने कहाभी उस देवदत्त साहूकारका नाम लेकर कि मैं अमुक देवदत्त साहूकारका लड़का हूं अपने पिताकी तलाशकरनेको आयाहूं. उनका पता नहीं लगता. कोई कहीं बताता है और कोई कहीं और मैं महादीन होगया. वह साहूकारने सुना भी और कुछ विश्वास भी हुआ परन्तु मूर्ख सहवासियोंके उपदेशसे उसमें विश्वास न किया कि यही मेरा लड़का है. सदासे उसी लड़केकी तलाशमें था. दिनरात्रि चाहता था कि किसी प्रकार मेरा लड़का मुझको मिले. एक आदमी सच्चा सद्गुणाकर विद्वान् उस लडकेको पहचानता था उसी जग-हका रहनेवाला था जहां साहूकारका पहला घर था दैवयोगसे वह आदमी साहूकारके पास पहुँचा लड़केको देखा. पहँचाना परन्तु साहूकारकी प्रीति उस लड़केमें पुत्रवत् न देखी. इस हेतुसे और अन्यकारणसे भी साहूकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से यह न कहा, कि इसलड़केमें तेरी प्रीति पुत्रवत् क्यों नहीं और न कभी साहूकारने बूझा था. इसवास्ते भी कुछ न कहा. एकान्तमें साहूकारने उस आदमीसे अपने लड़केके स्नेहकी व्यवस्था कहकर लड़केका पता बूझा और लड़केके कहनेके अनुसार कुछ विश्वास हुआ था और मूर्ख सहवासियोंके कहनेसे लडकेमें विश्वास नहीं किया था. सब व्यवस्था कही. उस आदमीने कहा, कि तेरा लड़का बेसन्देह यही है. साहूकार यह सुनकर पुत्रानन्दमें मग्न होगया. लडकेको छातीमें लगाकर बहुत सन्मान किया और उन सहवासी उपदेश करनेवाले मन्त्रियोंको मूर्ख और लालची समझा. उस आदमीके साथ बहुत स्नेह किया अपना सुहृद हितकारी समझा इस दृष्टान्तके एक एक पदमें दार्ष्टान्तहैं. भलेप्रकार विचारो जैसे साहूकारने लड़केका तिरस्कार किया मूर्ख मन्त्रियोंके उपदेशसे इसी प्रकार अज्ञानी जीवनने तिरस्कार किया है. सच्चिदानन्द आत्माका मूर्खोंके उपदेशसे जो कोई कहे कि साहूकारके सहवासी मन्त्री उपदेष्टा तो मूर्ख अनजान थे उनका क्या दोष था उत्तर उसका यह है कि मूर्खोंको मन्त्री और उपदेष्टा बनाना किसने कहा है. दार्ष्टान्तमें साहूकारके उपदेश करनेवालोंकी जगह लोभी (लालची) कमसमझ विषयी बहिर्मुख प्रवृत्तिमार्गवाले उपदेश करनेवालोंको समझना चाहिये. जैसे साहूकारके सहवासी मन्त्रियोंने जानबूझकर अपने खानेपीनेका हर्ज समझकर लड़केमें विश्वास न होने दिया. इसीप्रकार प्रवृत्तिमार्गवाले उपदेष्टा आचार्य गुरु अपने विषयानन्दमें ब्रह्मज्ञानको विक्षेपका हेतु समझकर आत्मामें विश्वास नहीं होने देते नानाप्रकारकी युक्ति और तर्क सिखाते हैं तात्पर्य—ब्रह्मज्ञान में मोहनभोग और तस्मई आदि पदार्थ खानेको और फूल, बंगला, हिंडोला, नृत्यादि देखनेको रागादि सुननेको स्त्री छोकरे राजादि धनी विषयीजन चेली चेला करनेको नहीं मिलते हैं. इस हेतुसे ब्रह्मज्ञानको भूसे का कूटना बताते हैं. ऐसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुरुषोंके लक्षण और कर्मफलके सहित अगले मन्त्रमें श्रीभगवान् निरूपण करेंगे ॥ ११ ॥

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः ।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः ॥ १२ ॥

मोघाशाः १ मोघकर्माणः २ मोघकर्माणः २ मोघज्ञानाः ३ विचेतसः ४ राक्षसीम् ५ आसुरीम् ६ च ७ एव ८ प्रकृतिम् ९ मोहिनीम् १० श्रिताः ११ ॥ १२ ॥ अ उ० ❋जबतक शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म आत्माको नहीं जानता है. तबतक उनका कर्म और आशा ये सब निष्फल हैं. क्योंकि जो पदार्थ अनित्य है. अथवा दीवारमें प्रेतवत् प्रतीत होता है, ऐसे पदार्थोंकी आशा रखनी और उनके लिये प्रयत्न करना, ये सब निष्फल अनित्य फलकी जो प्राप्तिभी होजावें सो भी निष्फल है. प्रत्युत पहलेसे सिवाय दुःखकी हेतु है. प्राप्त होकर जो पदार्थ जाता रहे, उससे न मिलना उस पदार्थका अच्छा है. पिछले मन्त्रमें जो मूढ़ शब्द हैं उसीके इस मन्त्रमें विशेषण हैं कैसे हैं वे मूढ कि निष्फल है आशा जिनकी १ अर्थात् सच्चिदानन्द रूप आत्मासे अन्य ईश्वरके मिलनेकी जो आशा रखते है. यह आशा उनको निष्फल है. क्योंकि आत्मासे भिन्न परमार्थसे कोई ईश्वर नहीं और निष्फल है कर्म जिनके २ अर्थात् आत्मासे पृथक् ईश्वर वा स्वर्ग वैकुण्ठादिकी प्राप्तिके लिये जो प्रयत्न करते हैं वह भी निष्फल है. इसमें भी वही पहला हेतु है और निष्फल है ज्ञान जिनके ३ अर्थात् आत्मासे भिन्न जो जो पदार्थ उन्होंने सच्चे समझ रक्खे हैं. सब झूठे हैं. क्योंकि आत्मा अद्वैत एक है हम विशेषण से यह भी समझना चाहिये. कि वे बालकवत् मूढ़ अज्ञानी नहीं. अनात्म शास्त्रका उनको बहुत ज्ञान है अर्थात् अत्माको तो यथार्थ नहीं जानते. अनात्मपदार्थ बहुत जानते हैं. आत्माके यथार्थ न जाननेमें और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पोषाशादि होनेमें ये दो हेतु हैं प्रथम यह कि वे ❋विक्षिप्त चित्त हैं ४ अर्थात् बहिर्मुख विषयी मुर्खवत् रूप रसादि विषयोंकी इच्छा रखते हैं अंतःसुखमें वृत्ति नहीं लगाते. यह हेतुहेतुगर्भित विशेषण है अर्थात् इस हेतु दूसरा हेतु यह है कि ❋राक्षसी ५ और भी आसुरी ६। ७। ८ माया मोहमयीकी १० आश्रय कर रक्खा है ११ अर्थात् जैसे असुर और राक्षस देहाभिमानी होतेहैं ऐसेही अज्ञानी अनात्मदर्शी होते हैं क्योंकि जिसको अन्तरात्मानन्द प्राप्त न होगा. वह वेसन्देहही विषयानन्दकी कामना रक्खेगा. कामनासे क्रोधादि असुर राक्षसों कासा स्वभाव अवश्य होगा. तात्पर्य इन दोनों मन्त्रोंका ज्ञाननिष्ठामें प्रयत्नकरनेके लिये है. आनात्मदर्शियोंकी निष्ठा हटानेमें और उनकी निन्दा करनेमें तात्पर्य नहीं. क्योंकि प्रवृत्तिमार्गभी अधिकार प्रति मोक्षमार्ग है ॥ १२ ॥

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥१३॥

पार्थ १ महात्मानः २ तु ३ अनन्यमनसः ४ दैवीम् ५ प्रकृतिं ६ आश्रिताः ७ भूतादिम् ८ अव्यय ९ माम् १० ज्ञात्वा ११ भजन्ति १२ ॥ १३ ॥ अ० उ० ऐसेपुरुष परमेश्वरका आराधन करते हैं हे अर्जुन! महात्मा पुरुष २ तो ३ अनन्यमनहुये ४ दैवी ५ प्रकृतिको ६ आश्रय कियेहुये ७ आकाशादि भूतोंका कारण ८ अविनाशी ९ मुझको १० जानकर ११ सेवते हैं १२ टी० संसारको दुःख रूप मुझको मुख्य पुरुषार्थ समझकर संसारके विषयोंसे उपराम हुये मोक्षमें जो प्रयत्न करते हैं, वे महात्मा हैं १२ सिवाय श्रीनारायणके और किसी जगह पुत्र मित्र स्तुति मानादिमें नहीं है. मन जिनका ३ सोलहवें अध्यायमें छब्बीस लक्षण दैवीसम्पत्के कहेंगे. उस साधनों करके संपन्न अर्थात् धीरजवाले इन्द्रियों को विषयोंसे विमुख करनेवाले ऐसे लक्षण हैं जिनमें वे परमेश्वर कोही सेवते है. स्त्री छोकरोंको बहिर्मुख धनी कामीजनोंको नहीं सेवते ॥ १३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सततं कीर्त्तयन्तो मां यतंतश्च दृढव्रताः ।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते॥१४॥

सततम १ कीर्त्तयन्तः २ माम् ३ उपासते ४ नित्ययुक्ताः ५ भक्त्या माम् ७ च ८ नमस्यन्तः ९ यतन्त १० च ११ दृढव्रताः १२ ॥ १४ ॥ अ० उ० महात्मा इस प्रकार भजन करते हैं जैसा इन दो मन्त्रोंमें वर्णन करते हैं. महात्मा निरन्तर १ कीर्तन करते हुये २ मुझको ३ सेवते हैं ४ अर्थात् मोक्ष शास्त्रका पढाना. जिज्ञासुओंको सुनाना और विष्णुसहस्रनाम गीतादिका पाठ करना, नामोच्चारण करना, गुरुमन्त्र और गायत्री जपना और सबसे श्रेष्ठ यह है कि गायत्रीका जप करना. यही मेरी उपासना है. इस प्रकार महात्मा मेरी उपासना करते हैं ४ सि० कैसे हैं वे कि सदा ❋ युक्त हुये ५ प्रेमलक्षणा भक्ति करके ६ मुझको ७ । ८ नमस्कार करते हैं ९ अर्थात् सदायही स्मरण करते हैं कि, विश्वम्भर नारायण हमारे स्वामी हैं. यह समझकर बहुत प्रीति नम्रता के साथ " ॐनमोनारायणाय " इत्यादि मन्त्र पढ़कर वारम्वार नमस्कार करते हैं फिर कैसे हैं, कि मोक्षमार्गमें सर्वाङ्ग लगाकर सदा ❋ यत्न करते हैं १० । ११ जैसे धन स्त्रीकी चाहवाले रुपये स्त्रीके लिये प्रयत्न करते हैं और फिर कैसे हैं कि ❋ दृढ़व्रत हैं जिनके १२ अर्थात् ब्रह्मचर्यादि व्रतमें ऐसे दृढ हैं कि जहांतक बने स्वप्नमेंभी वीर्यको स्खलित नहीं होने देते. बुद्धिपूर्वक वीर्यका त्याग करना तो महापामरो पाजियोंका काम है यद्यपि गृहस्थोंके वास्ते अपनी स्त्रीका संग करना कहीं २ लिखा है परन्तु वहांभी तात्पर्य उनका वीर्यके निरोधमें ही है जो पुरुष वीर्यका निरोधन नहीं करसक्ता. उससे मोक्षमार्गमें प्रयत्न करना कठिन है, क्योंकि घरकी पूजीको तो वृथा व्यय करता है. फिर यह कैसा विश्वास हो कि यह कुछ बाहर से कमाई करके इकट्ठा करेगा. यह वीर्य एक अमोल प्रकाशमान रत्न है. जिसके भीतर यह बना रहेगा. वह भगवत्स्वरूपको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देख सकेगा. और जो यह रत्न खोदिया तो परमेश्वरके दर्शनसे निराश होवे इसी प्रकार खोटा धन अपने खर्चमें नहीं लाना. किसीको किसी प्रकार दुःख नहीं देना. प्रारब्ध परमेश्वर पर विश्वास रखना और भी बहुत ऐसे अनेक दृढ़व्रत नियम हैं जिनके यह सब परमेश्वरकी भक्ति है ॥ १४ ॥

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते।
एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् ॥ १५ ॥

ज्ञानयज्ञेन १ माम् २ यजन्तः ३ उपासते ४ अन्ये ५ च ६ अपि ७ एकत्वेन ८ पृथक्त्वेन ९ बहुधा १० विश्वतोमुखम् ११ ॥ १५ ॥ अ० सि० कोई महात्मा तो ❋ ज्ञानयज्ञ करके १ मुझको २ पूजते हुये ३ उपासना करते हैं ४ अर्थात् मुझ सच्चिदानन्दको सब भूतोंमें जानते हैं. साधु महात्मा भगवद्भक्तोंको जो पूजन करना उनकी सेवा उपासना करनी. उनको भगवत्स्वरूप समझना. यह मेरी उत्तम उपासना है. क्योंकि जैसे मेरे रामकृष्णादि निमित्त अवतार हैं ऐसेही साधु महात्मा मेरे भक्त नित्य अवतार हैं ❋ और कोई ५।६।७ सि० लक्ष्यार्थमें जीव ईश्वरको एक समझकर ❋ अभेद (अद्वैत भावना) करके ८ अर्थात् "सोहं ब्रह्माहमस्मि" यही निरन्तर निदिध्यासन करते रहते हैं और कोई ❋ पृथक् भावना करके ९ अर्थात् परमेश्वर सच्चिदानन्दघन सर्वज्ञता भक्तवत्सलता करुणादि अनेक गुण शक्तिकरके युक्त नित्यमुक्त प्रभु सगुण ब्रह्म है. यद्यपि मैं भी सच्चिदानन्द हूं. परन्तु अनादि त्रिगुणमय मायामें फँस रहा हूं. उस पूर्ण-ब्रह्म सगुणाकारकी कृपासे छूटूंगा और अपने परमानन्द स्वरूपको प्राप्त हूं. यह दोनों बातैं विना भगवत्की कृपा प्राप्त न होंगी. यह समझकर पूर्ण-ब्रह्म सच्चिदानन्दकी उपासना करते हैं और कोई ❋ बहुत प्रकारका १० सि० मुझको समझकर मेरी उपासना करते हैं अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, शक्ति, गणेश, अग्नि, चन्द्र, राम, कृष्णादिको मेराही रूप साक्षात् मुझ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सच्चिदानन्दको मूर्तिमान् समझकर मेरी उपासना करते हैं और कोई ❋ विराट्–विश्वरूप ११ मुझको समझकर मेरी उपासना करते हैं. अपने अपने अधिकारमें ये सब महात्मा हैं पूर्णब्रह्म, शुद्ध, सच्चिदानन्द, निराकार, निर्विकार, नित्ययुक्त मेरे स्वरूपको अवश्य काल पाकर प्राप्त होंगे ॥ १५ ॥

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ॥ १६ ॥

क्रतुः १ अहम् २ यज्ञः ३ अहम् ४ स्वधा ५ अहम् ६ अहम् ७ औषधम् ८ मन्त्रः ९ अहम् १० हुतम् ११ एव १२ आज्यम् १३ अहम् १४ अग्निः १५ अहम् १६ हुतम् १७ ॥ १६ ॥ अ० उ० पिछले मन्त्रमें दश अङ्कवाला जो (बहुधा) पद है. उसकी व्याख्या चार मन्त्रोंमें करते हैं ❋श्रौत यज्ञ १२ अग्निष्टोमादि ❋अहम् २ अर्थात् मैं हूं. सि० स्मार्त यज्ञ अतिथि, अभ्यागतकी पूजादि पञ्चयज्ञ ३ मैं हूं ४. पितरोंको जो अन्न दिया जाता है मन्त्रसे सो ५ मैं हूं. ६ मनुष्यादि जो यवादि भक्षण करते हैं सो मैं हूं. ७ । ८ यज्ञमें जो पढ़ जाते हैं. " ॐ नमःशिवाय " इत्यादि मन्त्र ९ मैं ही हूं. १० मैंही हूं. ११ । १२ होमादिका साधन १३ मैं १४ अग्नि हूं. १५ मैं १६ होम हूं. १७ तात्पर्य–ये सब अन्तःकरण शुद्धिके कारण हैं और मोक्षके साधन हैं ॥ १६ ॥

पिताऽमहस्य जगतो माता धाता पितामहः ।
वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्सामयजुरेव च ॥ १७ ॥

अस्य १ जगतः २ अहम् ३ पिता ४ माता ५ धाता ६ पितामहः ७ वेद्यम् ८ पवित्रम् ९ ॐकारः १० ऋक्सामयजुः ११ एव १२ च १३ ॥ १७ ॥ अ० इस ❋जगत्का १ । २ मैं ३ पिता ४ माता ५ विधाता ६ पितामह ७ सि० हूं. ❋जाननेके योग्य ८ पवित्र (शुद्ध) ९ प्रणव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१० ऋक् साम यजुः तीनों वेदभी ११ । १२ । १३ सि० मैं हूं. ❋टी० उत्पन्न करनेवाला, पालन करनेवाला, कर्मोंके फलको देनेवाला, वेदादि प्रमाणोंका विषय, प्रमेय, चैतन्य मैं ही हूं. सब वेद मुझकोही प्रतिपादन करते हैं. चकारसे अथर्वण वेदभी जानना चाहिये. ऋगादि वेद और ॐम् प्रणवभी मैं ही हूं और प्रमाता प्रमाणभी मैं ही हूं. इति तात्पर्यार्थः ॥१७॥

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् ।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् ॥ १८॥

गतिः १ भर्त्ता २ प्रभुः ३ साक्षी ४ निवासः ५ शरणम् ६ सुहृत् ७ प्रभवः ८ प्रलयः ९ स्थानम् १० निधानम् ११ अव्ययम् १२ बीजम् १३ ॥ १८ ॥ अ० कर्मोंका फल १ पोषण करनेवाला २ समर्थ स्वामी ३ शुभाशुभ देखनेवाला ४ भोगस्थान ५ रक्षा करनेवाला ६ वे प्रयोजन हित करनेवाला ७ जगत्का अविर्भाव है. जिससे ८ संहर्ता ९ सर्वभूत स्थित हैं जिसमें १० लयका स्थान ११ अविनाशी १२ बीज १३ सि० मैं हूं❋॥ १८ ॥

तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च ॥
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन ॥ १९ ॥

अहम् १ तपामि: २ वर्षम् ३ उत्सृजामि ४ च ५ निगृह्णामि ६ अमृतम् ७ च ८ एव ९ मृत्युः १० च ११ सत् १२ असत् १३ च १४ अहम् १५ अर्जुन १६ ॥ १९ ॥ अ० सि० ग्रीष्मऋतुमें सूर्यमें स्थित होकर मैं जगत्को तपाता हूं २ वर्षाको ३ वर्षाता हूं. ४ और ५ जब कभी प्रजा पुण्यकरना छोड़देती है तब वर्षाका❋निग्रह कर लेता हूं. अर्थात् पानी नहीं वर्षाता हूं. अमृत अर्थात् जीवना भी और मृत्यु अर्थात् भूतोंका अदर्शनभी ७ । ८ । ९ । १० । ११ मैं ही हूं और❋स्थूल १२ सूक्ष्म प्रपञ्च

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१३ । १४ मैंही हूं. १५ हे अर्जुन ! १६ तात्पर्य—बहुत महात्मा इसप्रकार मुझको जानकर सर्वात्मदृष्टि कर मेरी उपासना करते हैं ॥ १९ ॥

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते ॥ ते पुण्यमासाद्यसुरेन्द्रलोकम-श्नन्ति दिव्यान्दिवि देव भोगान् ॥ २० ॥

त्रैविद्याः १ सोमपाः २ पूतपापः ३ यज्ञैः ४ माम् ५ इष्ट्वा ६ स्वर्गतिम् ७ प्रार्थयन्ते ८ ते ९ पुण्य १० लोकम् ११ आसाद्य १२ दिवि १३ दिव्यान् १४ देवभोगान् १५ अश्नन्ति १६ ॥ २० ॥ अ० उ० जो कामना करके वेदोक्तभी कर्म करते हैं, उनका जन्यमरण विना ज्ञाननिष्ठाके दूर न होगा. प्राकृतोंका तो कुछ प्रसंगही नहीं. यह कहते हैं. दो श्लोकोंमें जो ❋तीन वेदके जानने १ अमृतके पान करनेवाले २ पवित्रजन ३ श्रौत स्मार्त ❋यज्ञों करके ४ मुझको ५ पूजन करके ६ स्वर्गकी प्राप्ति ७ चाहते हैं ८ वे ९ पुण्यफल १० स्वर्गलोकको ११ प्राप्त होकर १२ अर्थात् पुण्योंका फल जो स्वर्गलोक है. तिसमें बसकर १२ स्वर्गमें १३ दिव्य १४ अर्थात् अलौकिक जो इस लोकमें नहीं स्वर्गमें ही हैं. उन देवभोगोंको १५ भोगते हैं १६ टी० ऋक् साम यजुः इन तीन वेदके जाननेवाले अर्थात् अथर्वण वेदमें ब्रह्मविद्या विशेष है. उसको नहीं जानते १ यज्ञके शेष भागको अर्थात् यज्ञमेंसे बचा हुआ जो अन्न उसको अमृत कहते हैं. उस ब्रह्मके भोजन करनेवालोंका अन्तःकरण शुद्ध होजाता है जो निष्काम होकर करेंगे नहीं तो स्वर्गको प्राप्त होंगे. इत्यभिप्रायः २ बनज नौकरी आदि लौकिक कर्म करनेवालोंसे वैदिक कर्म करनेवाले अच्छे हैं इस हेतुसे वैदिक कर्म करनेवाले पवित्र कहे जाते हैं. ३ वेदोक्त कर्मोंका जो करना है. कर्मकाण्डी इसीको ईश्वर मानते हैं. अर्थात् कर्महीको स्वर्गफलदाता समझते हैं ४ । ५ । ६ तात्पर्य—वेदोक्त कर्मोंका निष्काम जो अनुष्ठान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करना है. अथवा भगवद्भक्ति और ज्ञाननिष्ठाके सम्बन्धी जो कर्म हैं उनका करना बन्धका हेतु नहीं. अन्तःकरणकी शुद्धि और जीवन्मुक्तिका हेतु है और मुक्तिके लिये भेद उपासना भी अच्छी है. वैकुण्ठादि लोकोंकी प्राप्तिके लिये जो मूर्त्तिमान् भगवत्की सकाम उपासना करते हैं. उनका भी इन्हीं लोगोंमें अन्तर्भाव है, कि जिनका बीसवें और इक्कीसवें दो श्लोकोंमें प्रसंग है जो फल अनित्य कर्मकाण्डियोंको होगा, वही फल भेदवादियोंको होगा, मूर्त्तिमान् परमेश्वरकी उपासनाभी निष्काम करनी चाहिये. रूप देखनेके वास्ते न करे उसका फल अनित्य और दुःखका हेतु होगा. जैसे प्रथम किसी समय दशरथ, कौशल्या, गोपी, यशोदा, नन्दादिको हुआ है और जो उसको दुःख न समझे वह बे सन्देह करे ॥ २० ॥

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ॥ एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं काम कामाऽलभन्ते ॥ २१ ॥

ते १ तम् २ विशालम् ३ स्वर्गलोकम् ४ भुक्त्वा ५ पुण्ये ६ क्षीणे ७ मर्त्यलोकम् विशन्ति ९ एवम् १० त्रयीधर्मम् ११ अनुप्रपन्नाः १२ काम-कामाः १३ गतागतम् १४ लभन्ते १५ ॥ २१ ॥ अ० उ० वे १ अर्थात् शब्द स्पर्शादि विषयोंको कामना वाले वेदोक्त कर्म करनेवाले सकामपुरुष१ तिस २ विशाल ३ स्वर्गको ४ भोग करके ५ अर्थात् अपने कर्मोंके फलको स्वर्गमें भोगकरके ५ पुण्य ६ नाश हो ही ७ ममुष्यलोकमें ८ प्राप्त होंगे ९ इस प्रकार १० वेदोक्तधर्म ११ करनेंवाले १२ भोगोंकी कामनावाले १३ गतागत को प्राप्त होते हैं १५ अर्थात् स्वर्गादिमें गये फिर वहां से धक्के खाकर मनुष्यलोकमें गये फिर भी वेही कर्म किये और जब खोटे कर्म बनगये, तब नरकमें गये सदा वे लोग कभी नरकमें कभी मनुष्ययोनि में कभी पशु पक्षियोंकी योनिमें भटकते फिराकरते हैं. सदा शुद्ध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सच्चिदानन्द भगवत्से विमुख होकर भोगों के वश में फँसे रहते है. जब कि ऐसे लोगों की व्यवस्था है तो जो सदा लौकिक बखेडों में ही लगा रहता है. उसकी व्यवस्था क्या कही जावै और यह एक बारीक बात सोचने के योग्य है, कि सकाम वैदिककर्म करनेवालोंकी तो यह व्यवस्था है पुराणोक्त सकामकर्म और सकाम उपासना जो करते हैं उनको क्या फल होगा ? अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार विचार करना चाहिये ! प्रकट करके लिखे देने में बहुतलोग कि जो मोक्षमार्गका आश्रय लेकर भोग भोगते हैं दुःख पावेंगे बुद्धिमान मनमें समझ लेते हैं इस शास्त्रमें जिस जगह सकाम कर्मका प्रसंग है तो उस जगह अर्थात् सकाम उपासनाको भी वैसाही समझना चाहिये और जिस जगह स्वर्गादि फलका प्रसंग है वहां वैकुण्ठादि फलको भी वैसाही समझना चाहिये ॥ २१ ॥

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥२२॥

ये १ जनाः २ अनन्याः ३ माम् ४ चिन्तयन्तः ५ पर्युपासते ६ तेषाम् ७ नित्याभियुक्तानाम् ८ योगक्षेमम् ९ अहम् १० वहामि ११ ॥ २२ ॥

अ० उ० जो ज्ञाननिष्ठ पुरुष अभेद भावना करके मेरी उपासना करते हैं. उनको इसलोकपरलोकके पदार्थ (मुक्तिपर्यन्त) देकर मैं ही रक्षा करता हूं यह कहते हैं ❋ जो १ जन २ अर्थात् कर्मफलके संन्यासी अभेद उपासक २ अन्य ३ मुझको ४ चिन्तन करते हुये ५ उपासना करते हैं ६ अर्थात् सदा वे यह चिन्तन करते रहते हैं, कि शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण से परे सच्चिदानन्द स्वरूप तीनों अवस्थाका साक्षी जो यह हमारा आत्मा है. यही पूर्ण ब्रह्म है. जिसको महावाक्य प्रतिपादन करते हैं. इससे अन्य जुदा और कोई सच्चिदानन्द ब्रह्म नहीं. इसप्रकार अनन्य हुये निदिध्यासन करते हैं. शरीरादि विजातीय पदार्थोंका तिरस्कार करके सजातीय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पदार्थ सच्चिदानन्द आत्मामें निर्मल अन्तःकरणकी वृत्तिका गंगावत् प्रवाह किया है जिन्हों ने ६ तिन ७ नित्य आत्मनिष्ठोंको ८ मैं सोपाधिक सच्चिदानन्द मायोपहित ईश्वर १० प्राप्त करता हूं ११ टी० अ० प्राप्त पदार्थको प्राप्त करना उसको योग करते हैं और प्राप्तपदार्थकी रक्षा करनी उसको क्षेम करते हैं. आत्मनिष्ठाको आत्मतत्त्वकी प्राप्ति मेरी कृपासे होती है. और मैंहीं उसकी रक्षाकरता हूं और करूंगा. यह मेरी प्रतिज्ञा है तब तक कि जब तक ज्ञाननिष्ठाका भलेप्रकार परिपाक न होगा. जो कोई यह शङ्का करे कि जो भगवद्भक्त नहीं उनको क्या पदार्थ रुपये आदि नहीं मिलते हैं और उनके क्या पदार्थोंकी रक्षा नहीं होती उत्तर इसका यह है कि जो भगवद्भक्त नहीं वे दिनारात्रि आप पदार्थोंके योगक्षेममें प्रयत्न करते हैं. फिरभी सन्देह रहता है और परमानन्द रूप मुक्तिमें सो वे सदा विमुख रहते हैं और जो भगवद्भक्त हैं उसको मुख्य फल पदार्थ परमानन्द स्वरूप मुक्ति तो अवश्यही मिलेगी. परन्तु गौणफल (शरीरयात्रा) के लिये अन्न वस्त्रादि उनको वे यत्न प्राप्तहोते हैं और उन की रक्षा अन्तर्यामी करता है. वे सदा बेसन्देह रहते हैं. जैसे कोई फलकी इच्छा करके बागमें गया वह फल तो उसको अवश्यही मिलेगा और रस्तेमें फुलबारीका देखना सुगन्धका सूंघना इत्यादि गौण कल उसको अपने आप मिल जाते हैं और मुख्यफलभी प्राप्त होता है. भक्त और अभक्तके योग क्षेम इतना भेद है ॥ २२ ॥

येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विता।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजंत्यविधिपूर्वकम् ॥ २३ ॥

कौन्तेय १ ये २ अपि ३ भक्ताः ४ श्रद्धया ५ अन्विताः ६ अन्यदेवताः ७ यजन्ते ८ ते ९ अपि १० माम् ११ एव १२ यजन्ति १३ अविधिपूर्वकम् १४ ॥ २३ ॥ अ० उ० जो भक्त आत्मासे जुदा विष्णु, महेश,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रामकृष्णादि देवताको समझकर भेदभावना करके व्यासादिके वाक्योंमें विश्वास करके रामकृष्ण इन्द्रादिकी उपासना करते है. वेभी परमेश्वरकाही भजन करते हैं. परन्तु वह निष्ठा उनकी अज्ञानपूर्वक है. उसको स्थिरता नहीं. यह बात इस मन्त्रमें श्रीभगवान स्पष्ट वर्णण करते हैं. हे अर्जुन! १ जो २। ३ भक्त ४ श्रद्धाकरके ५ युक्त ६ अन्य देवताका अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मासे अन्य (पृथक्) सावयव वा निरवयवका ७ भजन पूजा सेवा ध्यान करते हैं ८ वे ९ भी १० मेरा ही ११। १२ सि० यजन करते है १३ सि० परन्तु ❀ अज्ञानपूर्वक १४ सि० यजन करते हैं. तात्पर्य—उनके भजनमें तो सन्देह नहीं परन्तु वह भजन मेरा अज्ञानपूर्वक हैं. क्योंकि वास्तव न मेरा स्वरूप उन्होंने जान. न अपना परन्तु जो वह भजन निष्काम होगा. तो वे भी ज्ञानद्वारा अवश्य मुक्त होंगे और उनका योग क्षेमभी मैं ही करूंगा. जो निष्काम भजन करता है, विदेहमोक्षपर्यन्त पदार्थ उसको मैं देता हूं. और रक्षा करता तौभी पशुवृत्तिका त्यागना अवश्य चाहिये. जैसे पशु मनुष्योंका दास बना रहता है ऐसेही अल्प देवताका उपासकदेवताका पशु बना रहता है. जो आपको ब्रह्म नहीं जानता. वह निराकार सच्चिदानन्द होकर साकाररूपका सदा बनकर सकारोंके अधीन रहता है और अपभी साकार बनताहैं. इससे परे और क्या अज्ञान होगा. पूर्ण अनन्य ऐसो को परिछिन्न तुच्छ एकदेशीय मानना जड़ चैतन्य द्रष्टा और दृश्यको एक समझना. इससे परे और क्या अज्ञान होगा. तदुक्तम् "❀ अन्योऽसावहमन्योस्तेयोन्यदेवताम्। न स वेदनरोब्रह्मसदेवानां यथा पशुः" तात्पर्यार्थ इस मन्त्रका ऊपर लिखागया ॥ २३ ॥

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते॥२४॥

सर्वयज्ञानाम् १ भोक्ता २ च ३ प्रभुः ४ एव ५ च ६ अहम् ७ हि८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माम् ९ तत्त्वेन १० न ११ तु १२ अभिजानन्ति १३ अतः १४ ते १५ च्यवन्ति १६ ॥ २४ ॥ अ० उ० पिछले मन्त्रमें कहा कि भेदवादी अज्ञानपूर्वक मेरा भजन करते हैं. इस मन्त्रमें फिर उसी बातको स्पष्ट करते हैं❀सब यज्ञोंका एक भोक्ता २ । ३ और❀स्वामी ४ । ५ । ६ मैं ७ ही ८❀मुझको ९ तत्त्वसे १० नहीं ११ । १२ जानते १३ इस वास्ते १४ वे १५ गिर पडते हैं १६ तात्पर्य—श्रौतस्मार्त सब यज्ञोंका भोनेवाला और मालिक मैं सच्चिदानन्द हूं मुझको यथार्थ नहीं जानते. अर्थात् यह नहीं समझते कि फलदाता अन्तर्यामी सच्चिदानन्द (मायोपहित हुआ वही) एक शुद्ध सच्चिदानन्द रूप यज्ञोंका स्वामी और फलदाता है (अविद्योपहित हुआ) वही उस फलका भोक्ता है. और वह मुझ सच्चिदानन्दरूप आत्मासे कोई जुदा वास्तव सच्चिदानन्द नहीं इस प्रकार जो ईश्वरका स्वरूप नहीं जानते, वे इस हेतुसे जन्ममरणके चक्रमें घूमते हैं. इस मन्त्रमें प्रभु शब्द तत्पदका वाच्यार्थ है और भोक्ताशब्द त्वंपदका वच्यार्थ है. लक्ष्यार्थमें दोनोंकी एकता श्रीभगवान् स्पष्ट कहते हैं, कि प्रभुभी और भोक्ताभी दोनों मैं ही हूं. अहं शब्दका लक्ष्यार्थमें तात्पर्य है. अर्थात् श्रीभगवान् कहते हैं. कि मैं शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप मायोपहित हुआ तो सब यज्ञोंका स्वामी फलदाता हूं और अविद्योपहित हुआ उसी फलका मैंही भोक्ता हूं. अब विचार करना चाहिये, कि जप, स्वाध्याय, इन्द्रिय प्रणादिका निरोधादि जो यज्ञ चतुर्थ अध्यायमें श्रीभगवान्ने निरूपण करे हैं उनका भोक्ता ईश्वर है, वा जीव है ॥ १४ ॥

यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानियान्तिभूतेज्यायान्ति मद्याजिनोपि माम्॥२५॥

देवताः १ देवान् २ यान्ति ३ पितृव्रताः ४ पितॄन् ५ यान्ति ६ भूतेज्याः ७ भूतानि ८ यान्ति ९ मद्याजिनः १० माम् ११ अपि १२ यान्ति-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१३ ॥ २५ ॥ अ० उ०❋भेदभावना करके व अभेदभावना करके जो परमेश्वरका आराधन करते हैं. उन दोनोंका फल इस मन्त्रमें कहते हैं देवतोंके उपासक १ देवतोंको २ प्राप्त होते हैं ३ पित्रों के उपासक ४ पित्रोंको ५ प्राप्त होते हैं ६ भूतोंके उपासक ७ भूतोंको ८ प्राप्त होते हैं ९ मेरे उपासक १० मुझको ११ ही १२ प्राप्त होते हैं १३ टी० ब्रह्मा, ष्णु, महेश, राम, कृष्णादि और इन्द्रादि मूर्तिमान् देवतोंके आराधन करने वाले १ सालोक्य, सारूप्य, सामीप्य, सायुच्यको प्राप्त होते हैं २ विनायक मातृगण भूतोंके पूजने वाले मातृगण भूतोंमें जा मिलेंगे और इस कलियुगमें जो मीरा, गूंगादि, पीरोका (भूत प्रेतोंका) पूजन करते हैं वे उनकोही प्राप्त होंगे. अर्थात् मरकर सब भूत प्रेत बनेंगे ७ और शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माके यजन करनेवाले अर्थात् ज्ञाननिष्ठावाले १० मुझ नित्यमुक्त परमानन्दस्वरूप निराकार निर्विकारको ११ अवश्य निश्चय १२ प्राप्त होंगे १३ अर्थात् नित्यमुक्त परमानन्दस्वरूपही होजावेंगे १३ अर्थात् नित्यमुक्त परमानन्दस्वरूप ही होजावेंगे❋मां शब्दका अर्थ जो सावयव मूर्तिमान् वासुदेव किया जावे तो इस गीताशास्त्र को योगशास्त्र ब्रह्मविद्या कहना नहीं बनता क्योंकि इस इस. अर्थमें यह ग्रन्थ स्पष्ट एकदेशीय प्रतीत होताहै. मूर्तिमान् वासुदेव श्रीकृष्णचन्द्र महाराजके उपासकोंका यह ग्रन्थ हुआ औरों को इस से क्या प्रयोजन रहा यह बात नहीं किन्तु मां शब्दका अर्थ सच्चिदानन्द निराकार है सो वह नित्य हैं उससे पृथक् सब अनित्य है. इतनेमें ही तात्पर्यार्थ समझलेना श्रीमहाराजने आठवें अध्यायमें स्पष्ट कह दिया है. कि ब्रह्मलोकसे बड़ा और कोई लोक नहीं. क्योंकि उसका निरूपण वेदोंमें है. जब उसीको अनित्य कहा तो औरों को कैमुतिकन्यायसे अनित्य समझलेना चाहिये और ब्रह्म शब्दका अर्थ बड़ा बृहत् है इस प्रकार नहीं समझना कि ब्रह्मलोक केवल ब्रह्माजीके लोक कहते हैं. ब्रह्माजी से विष्णु महेश बड़े हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनके लोक जुदे हैं सो नहीं किन्तु पूर्णब्रह्म परमेश्वरके सावयव लोकका नाम ब्रह्मलोक है और वह एकही है सत्यलोक वैकुण्ठ कैलासादि यह पुराणोंकी प्रक्रिया है ॥ २५ ॥

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामिप्रयतात्मनः ॥ २६ ॥

यः १ पत्रम् २ पुष्पम् ३ फलम् ४ तोयम् ५ मे भक्त्या ७ प्रयच्छती ८ तत् ९ भक्त्या १० उपहृतम् ११ प्रयतात्मनः १२ अहम् १३ अश्नामि १४ ॥ १६ ॥ अ० उ० मैं परमेश्वरका दास हूं. इस प्रकार भेदभावना करके श्रद्धापूर्वक परमेश्वरकी जो भक्ति करते हैं. उनको ज्ञाननिष्ठाकी प्राप्तिका सुलभ उपाय श्रीभगवान् बताते हैं. जो १ सि० भक्त❋पत्र २ फूल ३ फल ४ जल ५ मेरे अर्थ ६ भक्ति करके ७ अर्पण करता है ८ सो ९ भक्ति करके १० अर्पण किया हुआ ११ सि० पदार्थ थोडाभी रूखा सूखा❋शुद्धान्तःकरणवाले अपने भक्तका १२ मैं १३ सि० आदरपूर्वक प्रीतिके साथ खाता हूं. अर्थात् ग्रहण करता हूं तात्पर्य—पत्र तुलसी बिल्वपत्रादि और जल सदाशिवजी पर जो चढ़ाते हैं उससे महेश्वर प्रसन्न होते हैं. श्रीमहाराज कहते हैं कि मैं फल भोजन करता हूं. फूल सूंघता हूं. पत्र ग्रहण करता हूं. जल पान करता हूं. जैसे गुलदस्तेमें फूलभी होते हैं. उसको हाथमें ग्रहण करके फूलोंको सूंघते और पत्रोंको देखते. दुर्योधनका मेवा त्यागी शाक विदुर घर खायो इसी प्रकार किसी जगह पत्रका भोजनभी होता है ॥ २६ ॥

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यासि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥ २७ ॥

कौन्तेय १ यत् २ करोषि ३ यत् ४ अश्नासि ५ यत् ६ जुहोषि ७ यत् ८ ददासि ९ यत् १० तपस्यसि ११ तत् १२ मदर्पणम् १३ कुरुष्व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१४ ॥ २७ ॥ अ० उ० परमकरुणाकर श्रीभगवान् उसमेंभी और सुलभ उपाय बताते हैं. पत्रादि करके जो श्रीनारायणका पूजन करना है सो परतन्त्र है. यह स्वतन्त्र उपाय सुन❀हे अर्जुन ! १ जो २ तू करता है ३ जो ४ तू खाता है ५ जो ६ तू होम करता है ७ जो ८ तू देता है ९ जो १० तप करता है तू ११ सो १२ सब मेरे❀अर्पण १३ कर तू १४ तात्पर्य—लौकिक वैदिक शुभाशुभ जो तू कर्म करता है. अर्थात् जो खाता है पहरता है होम करता है देता है तप करता है. हे अर्जुन ! सबको मेरे अर्पण कर तात्पर्य—निष्काम हो फलकी इच्छा मतकर " आत्मा त्वं गिरिजामतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः । संचारः पदयोः प्रदक्षिणाविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥ " यह शरीर आपका घर शिवालय है इस शरीरमें सदा शिवरूप सच्चिदानन्द आत्मा आपही बुद्धि श्रीपार्वतीजी हैं आपके साथ चलनेवाले नौकर प्राण हैं ये जो मैं विषयानन्दके वास्ते विषय भोगता हूं. खाता, पिता, देखता, सुनता, बोलता. स्पर्श करता हूं. यही मैं आपकी पूजा करता हूं. निद्रा मेरी समाधि है, फिरना मेरा आपकी प्रदक्षिणा है जो कुछ मैं बोलता हूं. यह सब आपकी स्तुति करता हूं. जो जो और भी मैं कर्म करता हूं. हे चन्द्रशेखर ! सब प्रकार आपकाही मैं आराधन करता हूं. आप आशुतोष हो जल्दी मुझपर कृपा करो विदेह मुक्तिको मैं प्राप्त हूं ॥२७॥

शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः ।
संन्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि ॥२८॥

एवम् १ शुभाशुभफलैः २ कर्मबन्धनैः ३ मोक्ष्यसे ४ संन्यासयोगयुक्तात्मा ५ विमुक्तः ६ माम् ७ उपैष्यसि ८ ॥ २८ ॥ अ० उ० निष्कामकर्म करनेवाले निष्फल नहीं रखते. उनको अनन्त अविनाशी परमानन्द

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फल प्राप्त होता है. इस हेतुसे हे अर्जुन ! इसप्रकार तू मेरी भक्ति करता हुआ. बेसन्देह मुक्त अविनाशी परमानन्दरूपको प्राप्त होगा. यह कहते हैं इस श्लोकसें ❋ कहते हैं सि० जैसे अवनिरूपण किया. इसप्रकार १ सि० मेरी भक्ति करता हुआ शुभ अशुभ फल हैं जिनके २ तिन कर्मबन्धनोंसे ३ छूट जायगा. तू ४ फिर पीछे ❋ संन्यासयोग करके युक्त है आत्मा अन्तःकरण जिसका ऐसा तू ५ होकर ❋ जीवन्मुक्त हुआ ६ शरीरपानके पीछे ❋ मुझ परमानन्दस्वरूप नित्ययुक्त पूर्णब्रह्म शुद्ध अनन्त आत्माको ७ प्राप्त होगा तू ८ तात्पर्य—निष्काम उपासना करनेसे चित्त शुद्ध होकर एकाग्र होजाता है. फिर कर्म उसको अपने आप बन्धन विक्षेपरूप प्रतीत होने लगते हैं. उन सब कर्मोंका त्याग करके विरक्त संन्यासी हो जाता है. तब विरक्त अवस्थामें ज्ञाननिष्ठा प्राप्त होती है. फिर जीते जी उस परात्पर परमानन्दको अनुभव करता है और जीवन्मुक्त हुआ विचरता है. प्रारब्ध-कर्म नाशहोनेके पीछे देहपात हो जाता है. मूलज्ञान कार्यसहित नाश होजाता है. यही सब अनर्थोंकी निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्ति है. इसीका नाम कैवल्ययुक्ति है ॥ २८ ॥

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्॥२९॥

सर्वभूतेषु १ अहम् २ समः ३ न ४ मे ५ द्वेष्यः ६ अस्ति ७ न ८ प्रियः ९ तु १० ये ११ माम् १२ भक्त्या १३ भजन्ति १४ ते १५ मयि १६ तेषु १७ च १८ अपि १९ अहम् २० ॥ २९ अ० उ० कोई प्राणी अपनेको बड़ी समझवाला समझकर भगवद्भक्तिरहित यह कहा कहते हैं ॥ " विना भक्ति तारो तो तारबो तिहारो है " ॥ यह आलसी विषयी बहिर्मुखोंकी बात है. इस वाक्यसे यद्यपि महिमा भगवत्की पाई जाती है. परन्तु भक्तिका महात्म्य जाता है. तात्पर्य—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस वाक्यका भगवत्माहात्म्यमें समझना चाहिये. इस जगह भक्तिके महात्म्यका प्रसंग है. क्योंकि भगवत् अपनेको राग द्वेषादिरहित सम कहते हैं, दूसरेका भला बुरा विना राग द्वेष नहीं होसक्ता. विना भक्ति भगवत् यदि किसीका भला करै तो बड़ी विषमताकी बात है अन्य जीव भक्ति फिर क्यों करेंगे. तात्पर्य—भगवद्भक्ति करनी आवश्यक है. सोई कहते हैं ❀ सब भूतोंमें अर्थात् भक्त असक्तोंमें १ मैं १ बराबर ३ सि० ❀ न ४ सि० कोई ❀ मेरा ५ वैरी ६ है ७ न ८ सि० कोई मेरा प्यारा ९ सि० है. परन्तु १० जो ११ मुझको १२ भक्ति करते १३ भजते हैं १४ अर्थात् मेरी भक्ति (सेवा) करते हैं १४ वे १५ मुझमें १६ सि० है और तिनमें १७ । १८ । १९ मैं २० सि० हूं अर्थात् वे मरे हृदय में हैं मुझको उनको उद्धार करनेका स्मरण सदा बना रहता है. और तिनके हृदयमें मैं सदा विराजमान रहता हूं. यह मेरी भक्तिका प्रताप है. जैसे अग्नि सम है उसका किसीसे रागद्वेष नहीं. परन्तु जो अग्निके पास जाता है. उसीका शीत दूर होता है. जो अग्निका सेवन नहीं करता. उसका शीत दूर नहीं होता. इसीप्रकार जो भगवत्की भक्ति करते हैं. वेही मोक्ष-होंगे तात्पर्यार्थ—यह हुआ, कि जनोंमें विषमता दोष हैं क्यों कि कोई भक्ती करता है. कोई नहीं जो दोपुरुष भक्ती करे एक मोक्षहो एक न हो तो ईश्वरमें विषमता आवे जो कोई यह शंकाकरे कि अजामीलादि बहुत जीव विना भक्ति मोक्ष हुये. यह झूठ उनके पहिले जन्मोंकी कथा श्रवण-करनी चाहिये. ये लोग योगभ्रष्ट थे ॥ २९ ॥

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥ ३०॥

चेत् १ अनन्यभाक् २ सुदुराचारः ३ अपि ४ माम् ५ भजते ६ सः ७ साधुः ८ एव ९ मन्तव्यः १० हि ११ स १२ सम्यग्व्यवसितः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१३ ॥ ३० ॥ अ० उ०भगवद्भक्तिका माहात्म्य और उसका अतर्क्य प्रभाव कहते हैं कदाचित् १ अनन्य भजन करने वाला अर्थात् सब तरफसे मनको रोककर केवल श्रीनारायणका जो आराधन करता है. वह लोकदृष्टिमें यदि २ अत्यन्त दुराचार भी है अर्थात् वह स्नानादि आचार नहीं भी करता. परन्तु अनन्य हुआ ३। ४ मुझको ५ भजता है ६ अर्थात् सदा नारायणका ध्यान श्रीकृष्णादिके चरित्रोंका स्मरण करता रहता है. अथवा ज्ञाननिष्ठ महापुरुष आत्मानन्दमें मग्न रहता है ६ सो ७ साधु ८ ही ९ मानना योग्य है १० कभी उसको बुरा नहीं समझना. मुखसे बुरा कहना तो बड़ाही अनर्थ है क्योंकि ११ सो १२ भले प्रकार बहुत अच्छे निश्चय वाला है १३ अर्थात् भीतरका निश्चय उसका अच्छा है. निश्चय यह बात है कि पार हुये पीछे नौकाका क्या काम है, आचार पूजा पत्री तब तक है, कि जबतक श्रीमहाराजके चरणकमलोंमें व आत्मस्वरूपमें मन अनन्य होकर नहीं लगा है ❋ "ज्ञाननिष्ठो विरक्तो वा मद्भक्तो वानपेक्षकः। सलिङ्गानाश्रमांस्त्यक्त्वा चरेदविधिगोचरः॥" इसश्लोकका तात्पर्य यह है कि ज्ञाननिष्ठ, विरक्त वा मेरा भक्त बेपरवाह सब दिखावटके चिह्न आश्रमोंको त्यागकर सिवाय भगवद्भजन व आत्मनिष्ठाके सब वेद शास्त्रकी विधिको नमस्कारकर पञ्चमाश्रम परमहंस अवस्थामें विचरे ❋ वेदमें भी यह लिखा है, कि जिसको वर्णाश्रमका अभिमान है. वह बेसन्देह श्रुतिस्मृतिका दास है, और जो वर्णाश्रम रहित अपनेको सर्वथा श्रीनारायणका दास व सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म आत्माको जानता है. वह श्रुतिमार्गको उल्लङ्घन करके बर्तता है. अर्थात् यह समझता है, कि वेदकी विधि तब तक है कि जबतक है स्त्री पुत्र धन राज्यादिका दास है. अनन्य नारायणका दास नहीं और आत्मनिष्ठ नहीं और यह प्रकार है कि यह कथा सच्चे पुरुषोंकी है विना भक्ति वा विना ज्ञानभ्रष्ट भी ऐसेही होते हैं तथाहि " वर्णाश्रमाभिमानेन श्रुतिदासो भवेन्नरः। वर्णाश्रमविहीनश्चवर्त्ततेश्रुतिमूर्द्धनि " ॥ ३० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति ।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥ ३१ ॥

धर्मात्मा १ भवति २ क्षिप्रम् ३ शश्वत् ४ शान्तिम् ५ निगच्छति ६ कौन्तेय ७ प्रतिजानीहि ८ मे ९ भक्तः १० न ११ प्रणश्यति १२ ॥ ३१ ॥ अ० सि० अर्जुन सुन भक्तिका माहात्म्य अनन्यभक्त दुराचारिभी ❋धर्मात्मा १ है २ शीघ्र (जल्दी) ३ नित्य ४ शान्तिको ५ अर्थात् उपराम उपशमको ५ प्राप्त होगा ६ हे अर्जुन ! ७ इस बातकी ❋तू प्रतिज्ञा कर ८ कि ❋मेरा ९ भक्त १० अर्थात् परमेश्वरका दुराचार भी भक्त १० नहीं ११ भ्रष्ट होता है. अर्थात् अधोगतिको नहीं प्राप्त होता है १२ उपासनाकाण्डका यह सूत्र है ॥ अथातो भक्तिजिज्ञासा" ❋पीछे धर्मके भक्तिकी जिज्ञासा होती है. इस हेतुसे प्रतीत होता है. कि पहले जन्मोंमें वह धर्म कर चुका इसी वास्ते श्रीमहाराजनेभी उसको धर्मात्मा कहा और अपने भक्तसे (भुजा उठाकर) कहते हैं, कि कुतर्कियोंकी सभामें यह प्रतिज्ञा करके भगवद्भक्त दुराचारभी नहीं दुर्गतिको प्राप्त होता है. भक्तिमार्ग वालोंका यह डङ्का बजता है ॥ ३१ ॥

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः ॥
स्त्रियोवैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परांगतिम् ॥ ३२ ॥

पार्थ १ ये २ अपि ३ पापयोनयः ४ स्युः ५ ते ६ अपि ७ माम् ८ हि ९ व्यपाश्रित्य १० तथा ११ शूद्राः १२ स्त्रियः १३ वैश्याः १४ पराम् १५ गतिम् १६ यान्ति १७ ॥ ३२ ॥ अ० उ० आचारभ्रष्टको जो मेरी भक्ति पवित्र कर दे तो इसमें क्या आश्चर्य मानता है. तू हे अर्जुन ! मेरी भक्ति रजोगुणी तमोगुणी जन्मके पापियोंको कृतार्थ कर देती है. हे अर्जुन ! १ जो २ निश्चय ३ जन्मके पापी ४ सि० भी ❋हैं ५ अर्थात् पापियोंके कुलमें अन्त्यज म्लेच्छ वर्णसङ्करोंमें उत्पन्न हुए हों ५ वे ६ भी ७ मुझको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

८ ही आश्रय करके १० सि० परमगति मुक्तिको प्राप्त १ होंगे. पहिले बहुत होगये अब हैं और होंगे और जैसे ये मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्त होते हैं❀तैसेही ११ शूद्र १२ स्त्री १३ वैश्य १४ परमगतिको १५। १६ प्राप्त होते हैं १७. अर्थात् रजोगुणी तमोगुणी मूर्ख पण्डित सब लोग लुगाई मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्त होते हैं. मेरी कृपा और भक्तिके प्रतापसे ज्ञानवान् होकर सब परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त होते हैं. मेरी भक्तिमें सबका अधिकार है. भक्तजनही मुझको प्यार है. मेरा भक्त व्यवहारमें कोई जाति कहलाता हो शूद्र वा म्लेच्छ वा वर्णसंकार जो वह मेरा भक्त है तो परमार्थमें उसको साधु संन्यासी समझना चाहिये. क्योंकि उत्तम पदका भागी वही है. ज्ञाता पुरुष (विद्वान्) व्यवहारमें भी उसको श्रेष्ठ जानते हैं. परमार्थमें तो वह बेसन्देह सबसे श्रेष्ठ है. बारहवें अंकसे सत्रहवें अंकतककी टीका लिखते हैं❀मैत्रेयी, गार्गी, मदालसा, मीरा, करमेति इत्यादि हजारों परमपदको प्राप्त हुई वर्त्तमानकालमें बहुतसी स्त्रियां उदार दात्री तपस्विनी ज्ञानिनी व भक्त प्रसिद्ध हैं. जिनकी सहायसे और मुख्य जिनके वास्ते यह टीका बनी वे बीबीबीरा और बीबीजानकी ये दोनों स्त्री ब्राह्मणी हैं जानकीके दो विशेषण विद्वानोंने दिये हैं. ' ब्राह्मणवंशविद्वज्जनैर्वन्दिता ' अर्थात् ब्राह्मणोंके वंशमें जो विद्वान् जन वे उसको भक्ति विरक्तके प्रतापसे वन्दना करते हैं और श्रीसम्प्रदाय चन्द्रिका अर्थात् श्रीसम्प्रदायकके प्रकट और प्रसिद्ध करनेके लिये यह जानकी चांदनीके सदृश है गुजरात देश अहमदाबाद नगरीकी रहनेवाली शंकरलाल विष्णु नागर ब्राह्मणकी बेटी मानकलाल प्रसिद्ध सांकललालकी पत्नी श्रीमान् उत्तम गुणोंकी खानि अब श्रीवृन्दावनचन्दमें वास करती है. घरमें इनका नाम पार्वती था श्रीसम्प्रदायकी जब ये शरणागतहुईं तब विधिवत् द्वितीय नाम बीबीजानकी रक्खा गया. बीबीबीराका द्वितीय नाम बीबीझुनिया भी प्रसिद्ध है. इन्होंने श्रीबीरविहारीजी और वीरेश्वर महादेवजीका मन्दिर बन-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाकर सर्वस्वदान कर दिया. यह भी वृन्दावनमें वास करती हैं. हरीराम सारस्वत ब्राह्मणकी बेटी शिवदत्तकी पत्नी हैं. सर्वस्वदानसे विशेष कोई दान नहीं. सर्वस्वदानका फल अक्षय है और जीते जी प्रत्यक्ष होता है. इसमें इतिहास यह है. श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य महाराज एक स्त्रीके घर भिक्षाके लिये गये. उस समय स्त्रीके घरमें कुछ न था. स्त्री बड़ी पछताई श्रीमहाराजको करुणा आई और कहा कि तेरे घरमें जो दाना अन्नका या कोई फल सूखा पड़ा हो ढूंढकर ला. एक अमला उस स्त्रीको मिला. अतिसंकोचके साथ महाराजके भिक्षा वस्त्रमें दिया जो कि उस स्त्रीके घरमें सिवाय उस आमलेके कुछ न था, श्रीमहाराजने सर्वस्वदानकी कल्पना कर लक्ष्मीजीका आवाहन किया श्रीजी आईं. महाराजने कहा ! इस स्त्रीको विशेष द्रव्य दो महारानीजीने कहा, हमको देनेमें इन्कार नहीं. परन्तु सप्तजन यह दरिद्री रहेगी. ऐसे इसके कर्म है और यह मर्यादभी आपकी बांधी हुई है. महाराजने कहा इसने इस समय सर्वस्व दान किया. इसका प्रत्यक्षशीघ्र मनोवाञ्छित फल होना चाहिये. देवीजी बोली कि सत्य है. जो आज्ञाहो महाराजने कहा कि इसका घर सोनेके आमलोंसे भर दो. उसी समय सोनेके आमले वर्षे उसका सब घर भरगया. श्रीमहाराज उस स्त्रीको सर्वस्वदानका माहात्म्य विचारकर परमपदकी प्राप्तिका वरदान दे गये. विचारो भक्तिमार्गमें तर्कका अवसर नहीं. स्त्री शूद्रादि भक्ति करके सब परमपदके अधिकारी हैं. भक्तिका फल प्रत्यक्ष देखनेके लिये बीबी जानकी और बीबीबीराकी कथा लिखी गई ❋ " भक्ति भक्त भगवन्त गुरु, चतुर्नाम वपु एक । तिनके पद वन्दन किये, नाशत विघन अनेक ॥ अथवा तिनके यश वर्णन किये, नाशत विघन अनेक ॥ " चारोंका प्रभाव इस टीकामें लिखा गया. ग्रन्थके बीचका यह मङ्गलाचरण है. आनन्द चन्द्रप्रभा ग्रन्थ वार्तिक भाषामें बीबीबीरा और जानकीने मिलकर बनाया है. संख्यामें दश हजार श्लोकोंसे कम नहीं. सिवाय होगा—अ—क—ह—इत्यादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अक्षरोंकी संख्या पर अकारसे हकार पर्यन्त कई सौ प्रमाणिक महानुभावोंकी कथा उसमें सिवाय वैराग्य विद्या भक्ति इत्यादिकोंसे विशेष लिखी हैं. उस ग्रन्थसे और शब्दादि प्रमाणों करके यह स्पष्ट प्रतीत होताहै. कि स्त्री शूद्रादि सब लोग लुगाईमात्र भक्तिके प्रतापसे परमगतिको प्राप्त होते हैं. जिससे परे अन्य श्रेष्ठ कोई गति नहीं. उसकोही परमगति कहते हैं ॥ ३२ ॥

किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्॥३३॥

तथा १ ब्राह्मणः २ राजर्षयः ३ पुण्याः ४ भक्ताः ५ पुनः ६ किम् ७ असुखम् ८ अनित्यम् ९ इमम् १० लोकम् ११ प्राप्य १२ माम् १३ भजस्व १४ ॥ ३३ ॥ अ० उ० व्यवहारमें जो ब्राह्मण, क्षत्रिय कहलाते हैं. यह मेरी भक्ति करके परमगतिको प्राप्तहो तो इस में क्या कहना है अर्थात यह बात बेसन्देह है. इसमें व्यवहार परमार्थ दोनोंका सम्मत हैं. परन्तु विना मेरी भक्ति हे अर्जुन ! जो तू चाहे कि मैं व्यवहारमें क्षत्रिय कहलाता हूं इस हेतुसे परमगतिको प्राप्त होजाऊंगा. इसका लेशमात्र भी भरोसा मत रख. मैं तुझको समझाता हूं कि यह व्यवहारिक जाति का अभिमान छोड़ जल्द मेरा भजन कर. शरीरोंका भरोसा नहीं शरीरका नाम दुःखालय हैं. अर्थात् यह शरीर दुःखोंका घर है. इसमें सुखकी आशा छोड़ वर्त्तमानमें जैसा तू है वैसाही भजन कर. तात्पर्य—इस श्लोक-का लिखा गया. अब अक्षरार्थ लिखते हैं. श्रीभगवान् कहते हैं कि जैसे व्यवहारमें जो शूद्र वर्णसंकरादि कहलाते हैं वे मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्त होंगे. अर्थात परमगतिको प्राप्त होते हैं. तैसेही व्यवहारमें जो ब्राह्म-ण २ और ❀राजऋषि क्षत्रिय ३ कहलाते हैं कैसे हैं यह कि व्यवहारमें भी उनको जन्मसेही पवित्र कहते हैं यह मेरे ४ भक्त ५ होकर अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरी भक्ति करके परमगतिको प्राप्तहों तो❀फिर ६ क्या ७ कहना है इस बातकाही अर्जुन निश्चय रख बेसन्देह तू भक्ति करके परमगतिको प्राप्त होगा. इस वास्ते❀अनित्य ८ और❀असुख अर्थात् नहीं है किसी कालमें सुख जिसमें ऐसे ९ इस १० शरीरको ११ प्राप्त होकर १ २मेरा १३ भजनकर १४ मुझको भजन. तात्पर्य—अनित्य होनेसे तू देर मत कर और असुख होनेसे यह मत समझ कि जिस कालमें सुख होगा. तब भजन करूंगा. इसमें कभी सुख होताही नहीं. सुख भजनमें ही है. व्यवहारकी जातिका आश्रय छोड़ भक्तिका आश्रय ले जिस भक्तिके प्रतापसे व्यवहारमें जो शूद्र वर्णसंकर कहेजाते हैं वे भी परमगतिको प्राप्त होते हैं. और तू तो व्यवहारमें भी उत्तम कहलाता है, तू क्यों देर करता है. जल्द भजन कर यह मतलब है. महाराजका ॥ ३३ ॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैव मात्मानं मत्परायणः ॥ ३४ ॥

मन्मनाः १ भव २ मद्भक्तः ३ मद्याजी ४ माम् ५ नमस्कुरु ५ एवम् ७ आत्मनम् ८ युक्त्वा ९ मत्परायणः १० माम् ११ एव १२ एष्यसि १३ ॥ ३४ ॥ अ० उ० भजनका प्रकार दिखलाते हुये फलपूर्वक इसप्रसंगको समाप्त करते हैं❀मुझमें है मन जिसका १ सि० ऐसा❀हो तू २ अर्थात् मुझमें ही मन लगा और मेरा भक्त ३ सि० हो और❀मेरा यजन करनेवाला ४ सि० हो तू अर्थात् मेरी पूजा कर और❀मुझको नमस्कार कर ६ इस प्रकार ७ मनको ८ सि० मुझमें❀लगा करके ९ मुझ परायण हुआ १० मुझको ११ ही १२ प्राप्त होगा तू १३ अर्थात् मुझ परमानन्द स्वरूपको प्राप्त होगा ॥ ३४ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन संवादेराजविद्याराजगुह्ययोगोनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ अथ दशमोऽध्यायः ॥

श्रीभगवानुवाच—

भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः।
यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया ॥ १ ॥

महाबाहो १ भूयः २ एव ३ मे ४ वचः ५ शृणु ६ यत् ७ परमम् ८ ते ९ प्रीयमाणाय १० हितकाम्यया ११ अहम् १२ वक्ष्यामि १३ ॥ १ ॥ अ० उ० सातवें नवें अध्यायमें संक्षेप करके तौ मैंने अपनी विभूतियोंका निरूपण किया. अब विस्तारपूर्वक कहता हूं. हे अर्जुन ! १ फिर २ भी ३ मेरा ४ वचन ५ सुन ६ कैसा है वह वचन कि❋जो ७ परमार्थ निष्ठावाला ८ अर्थात् मेरा वचन सुननेमें परमार्थमें निष्ठा होजाती है. वारंवार तुझसे इसलिये कहताहूं कि मेरे वचन सुननेमें तेरी प्रीति है❋ तुझ प्रीतिमान्के अर्थ ९।१० अर्थात् तू मेरे वचन में श्रद्धा करता है इस वास्ते तेरे अर्थ अर्थात् तुझ से❋हितकी कामना करके ११ अर्थात् तू मेरा प्यारा है मैं यह चाहता हूं कि तेरा पीछे भला हो इस वास्ते भी❋ मैं १२ कहूंगा १३ ॥ १ ॥

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥ २ ॥

मे १ प्रभवम् २ न ३ सुरगणाः ४ विदुः ५ न ६ महर्षयः ७ हि ८ सर्वशः ९ देवानाम् १ महर्षीणाम् ११ च १२ अहम् १३ आदिः १४ ॥ २ ॥ अ० उ०❋सिवाय मेरे प्रभावको कोई नहीं जानता. इस वास्ते भी कहूंगा मेरे १ प्रभावको २ न ३ देवतोंके समूह ४ जानते हैं ५ न ६ सि० महर्षि ७ क्योंकि ८ सब प्रकारसे ९ देवतोंका १० और महर्षियोंका भी ११। १२ मैं १३ आदि १४ हूं. तात्पर्य—प्रभुकी अचिन्त्य शक्ति और सामर्थ्यको जब देवता नहीं जानते तो फिर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनुष्य कब जानसक्ते हैं. क्योंकि कारणका कार्य आदि होजाता है. कार्य कारणको नहीं जानसक्ता. परन्तु कार्यसे कारणका आनुमान होसक्ता है तात्पर्य—सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मासे पृथक् कोई परमेश्वरको नहीं जानसक्ता ॥ २ ॥

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।
असंमूढः समर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

यः १ माम् २ अजम् ३ अनादिम् ४ च ५ लोकमहेश्वरम् ६ वेत्ति ७ सः ८ मर्त्येषु ९ असंमूढः १० सर्वपापैः ११ प्रमुच्यते १२ ॥ ३ ॥ अ० उ० मुझको इस प्रकार जो जानता है और वह ज्ञानी बेसंदेह मुक्त होगा ❋ जो १ मुझको २ अर्थात् सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको मुझसे अभिन्न ❋ जन्मरहित ३ अनादि ४ । ५ और सच्चिदानन्द सोपाधिक मायोपहित हुआ ❋ लोकोंका महेश्वर ६ सि० है इस प्रकार जो मुझको जानता है ❋ सो ८ मनुष्योंमें ९ अज्ञानरहित है १० सि० अर्थात् उसी का अज्ञान दूर हुआ वही ❋ सब पापों करके ११ अर्थात् समस्त कर्मोंके फल (अगले पिछलों) से ❋ मुक्त ११ होगा. बेसंदेह १२ जो इस श्लोकका अर्थ ऐसे किया जाय कि मुझ वासुदेवको अज अनादि लोकोंका महेश्वर जानता है. सो मनुष्यमें ज्ञानी है. सब पापों करके मुक्त होगा इस अर्थमें यह शङ्का है, कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज मूर्तिमान्को उपासक जन भी अजादि महेश्वर कहते हैं. और ज्ञाननिष्ठा वालेभी यही कहते हैं वे कौन कि जो श्रीमहाराजकी जन्मादि वाला जीव कहता है. प्राक्मूर्ख स्त्री बालक नास्तिकोका इस जगह कुछ प्रसंग नहीं कर्मी कर्महीको फलदाता जानते हैं. कर्मसे पृथक्को ईश्वर नहीं मानते ❋ विचारो कि यह उपदेश श्रीभगवान्का किस को है. तात्पर्य—मायोपहित सच्चिदानन्दको अविद्योपहित सच्चिदानन्दसे अर्थात् ईश्वरको जीवसे जो लक्ष्यार्थमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपृथक् समझते हैं, कि मायोपहित हुआ यही अविद्योपहित जीव सच्चिदानन्द महेश्वर है. इस हेतुसे अज अनादि है. जब ऐसा सच्चिदानन्द आत्माको जानेंगे. तब वे मुक्त होंगें. जो ज्ञान इस श्लोकमें कहा है वह कुछ सहज नहीं समझना, पिछले श्लोकमें श्रीभगवान् कह चुके हैं, कि मेरे प्रभावको ऋषि देवता भी नहीं जानते मनुष्य तो क्या जानेंगे. बेसन्देह ईश्वरसे अभिन्न निर्विकार आत्माको सच्चिदानन्द जानेगा वही भगवत्के प्रभावको जानेगा और जो आपको भक्त, ऋषि, देवता, मनुष्य जानेंगे वे नहीं जानेंगे. इसप्रकार समझना चाहिये ॥ ३ ॥

बुद्धिर्ज्ञानमसंमोहः क्षमा सत्यं दमः शमः।
सुखं दुःखं भवो भावो भयं चाभयमेव च ॥ ४ ॥

बुद्धिः १ ज्ञानम् २ असंमोहः ३ क्षमा ४ सत्यम् ५ दमः ६ शमः ७ सुखम् ८ दुःखम् ९ भवः १० भावः ११ भयम् १२ च १३ अभयम् १४ एव १५ च १६ ॥ ४ ॥ अ० उ० ❋ अब तीन श्लोकोंमें सोपाधिक अपने स्वरूपकी ईश्वरता प्रकट करते हैं. सारासारको भले प्रकार जाननेवाली अन्तःकरणकी वृत्ति १ आत्माको निश्चय करनेवाली आत्माकार अन्तःकरणकी वृत्ति २ जिस काममें प्रवृत्त होना, विवेकपूर्वक होना और उस जगह चित्त व्याकुल न होना. सदा चैतन्य रहना ३ पृथिवीवत् सहनशील होना ४ यथार्थ (सन्देहरहित) बोलना ५ इन्द्रियोंका निरोध ६ अन्तःकरणका निरोध ७ अनुकूल पदार्थमें जो अन्तःकरणकी वृत्ति ८ प्रतिकूलमें जो अन्तःकरणकी वृत्ति ९ उद्भव होना १० उद्भव न होना ११ त्रास होना १२ । १३ त्रास न होना १४ । १५ । १६ अगले श्लोकके साथ इसका सम्बन्ध है. अगले श्लोकमें श्रीभगवान् कहेंगे, कि यह शमादि पृथक् पृथक् भाव मुझ सोपाधिक ईश्वरसे होते हैं. अर्थात् शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मा निर्विकार है इसप्रकार निरुपाधिक और सोपाधिक सच्चिदानन्दको जानना भगवत्का जानना है ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अहिंसासमतातुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः।
भवन्ति भावाभूतानां मत्त एव पृथग्विधाः॥ ५॥

अहिंसा १ समता २ तुष्टिः ३ तपः ४ दानम् ५ यशः ६ अयशः ७ पृथग्विधाः ८ भावाः ९ भूतानाम् १० मत्तः ११ एव १२ भवन्ति १३ ॥ ५ ॥ अ० ❀ हिंसा राहित १ रागद्वेषादिरहित २ दैवयोगसे अपने आप जो पदार्थ प्राप्त होना उसीमें सन्तोष ३ इन्द्रियोंका निग्रह ४ सि० न्यायसे कमाया हुआ अन्न सुपात्रोंको देना ५ सत्कीर्त्ति अर्थात् सज्जनोंमें कीर्त्ति होनी ६ अकीर्त्ति ७ अर्थात् जो लोग भगवत्से विमुख हैं और भगवद्भक्तोंसे वैर रखते हैं इस हेतुसे उनकी बुराई होती है. उसको अकीर्त्ति कहते हैं. ये सब कीर्त्ति अकीर्त्ति नानाप्रकारके भाव ८। ९ सि० बुद्धि ज्ञानादि ❀ प्राणियोंके १० मुझसे ११ ही १२ होते हैं १३ तात्पर्य— सोपाधिक चैतन्यसे ये सब होते हैं. " हानि लाभ जीवन मरण, यश अपयश विधिहाथ "। पुराणोंमें कथा है कि पृथिवी पर भगवत् सम्बन्धी स्त्री पुरुषोंके मुखसे जब तक जिसका यश श्रवण करनेमें आता है. तबतक वे कीर्त्तिमान् स्वर्गमें निवास करते हैं ॥ ५ ॥

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा॥
मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः॥ ६॥

पूर्वे १ चत्वारः २ सप्त ३ महर्षयः ४ तथा ५ मनवः ६ मद्भावाः ७ मानसा ८ जाताः ९ येषाम् १० लोके ११ इमाः १२ प्रजाः १३ ॥ ६ ॥ अ० सि० मैथुनी सृष्टिसे ❀ पाहिले १ सि० जो हुये ❀ चार १ सनकादि ❀ और ❀ सात ३ भृगु आदि ❀ महर्षि ४ तैसेही ६ मनु ६ सि० स्वयम्भुव आदि मेराही है प्रभाव जिनमें ७ सि० मुझ हिरण्यगर्भात्माके ❀ संकल्पमात्रसे ८ उत्पन्न हुये हैं ९ अर्थात् उनके शरीरोंको मायामय समझना. सि० उनका प्रभाव यह है कि ❀ जिनकी १० लोकमें ११ यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१२ प्रजा १३ है❋तात्पर्य—प्रजा दो प्रकारकी हैं. निवृत्तिमार्गवाले एक प्रवृत्तिमार्गवाले दूसरे. निवृत्तिमार्गके आचार्य सनकादि. प्रवृत्तिमार्गके आचार्य भृगु आदि हैं. ये दोनों मार्ग अनादि हैं. सनकादि महाराजने प्रवृत्तिमार्गकी तरफ कभी किसी कालमें दृष्टिभी नहीं करी जबसे उनका आविर्भाव हुआ तबसेही बाल जितेन्द्रिय ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थित परमहंस हुये विचरते रहते हैं. जिस जगह जाते हैं. सब देवता विष्णु महेशादि उनके सामने खड़े हो जाते हैं और यह सामर्थ्य रखते हैं. चाहें जिस देवताको शाप दे दें अनुग्रह कर दें. यह प्रताप ज्ञाननिष्ठा और निवृत्तिका समझना मोक्षमार्ग निवृत्तिमार्गवाले संन्यासी परमहंसोंसेही मिलता हैं. जो आप प्रवृत्तिबन्ध हैं दूसरेको कैसे मुक्त करेंगे ॥ ६ ॥

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः ॥ ७ ॥

एताम् १ मम २ विभूतिम् ३ योगम् ४ च ५ यः ६ तत्त्वतः ७ वेत्ति ८ सः ९ अविकम्पेन १० योगेन ११ युज्यते १२ अत्र १३ न १४ संशयः १५ ॥ ७ ॥ अ० उ०❋यथार्थ ज्ञानका मुक्ति फल है सो दिखलाते हैं. इस १ मेरी २ विभूतिको और❋योगको ४ जो ५ यथार्थ ६ जानता है ७ सो ८ निश्चल ९ योग करके १० युक्त होजाता है ११ अर्थात् संशयविपर्ययरहित होजाता है❋इसमें १२ नहीं है १३ संशय १४ ॥ ७ ॥

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्त्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भाव समन्विताः॥८॥

सर्वस्य १ प्रभवः २ अहम् ३ मत्त ४ सर्वम् ५ प्रवर्तते ६ इति ७ मत्वा८भाव-समन्विताः ९ बुधाः १० माम् ११ भजन्ते १२ ॥ ८ ॥ अ०उ०❋संशयविपर्य-रहित भगवदुक्त ऐसा भगवत्को मानकर भजन करते हैं. यह बात फिर भगवत्-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृपासे उनको आत्मज्ञान होजाताहै. यह बात कहते हैं. चार श्लोकोंमें सबकी १ उत्पत्ति है जिससे २ सो मन्त्रादि❋मैं ३ हूं मुझ से ४ ही बुद्ध्यादि पदार्थ❋सब ५ चेष्टा ६ करते हैं. अर्थात् सबका प्रेरक अन्तर्यामी है❋यह ७ समझकर ८ श्रद्धापूर्वक ९ विद्वान् १० मुझको ११ भजते हैं १२ ॥ ८ ॥

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमंति च ॥ ९ ॥

माच्चिताः १ मद्गतप्राणाः २ परस्परम् ३ बोधयन्तः ४ नित्यम् ५ माम् ६ कथयन्तः ७ च तुष्यन्ति ९ च १० रमन्ति ११ च १२ ॥ ९ ॥ अ० उ० प्रीतिपूर्वक भजन करनेवालोंका लक्षण यह है, कि उत्तरोत्तर उनकी वृत्ति इस प्रकार भगवत् स्वरूपमें बढ़ती है. एक अङ्कमें प्रथम भूमिका वालों का लक्षण है. मुझ सच्चिदानन्दमें है चित्त जिनका १ मुझमें लगा दिया है प्राण जिन्होंने २ अर्थात् अपना जीवन मेरे आधीन समझते हैं परस्पर आपसमें ३ बोधन करते हैं ४ अर्थात् दो चार भक्त तत्त्वके जिज्ञासु मिलकर विचार करते हैं श्रुति स्मृति युक्ति इन प्रमाणों करके परस्पर बोधन करते हैं. कोई श्रुति प्रमाण देता है. कोई स्मृति, कोई युक्ति करके सिद्ध करते हैं. जब सब भक्तोंका और श्रुति स्मृति युक्तियों का शङ्का समाधानपूर्वक एक पदार्थ भगवत् तत्त्व में सम्मत हो जाता है. उसको जानकर जिज्ञासुओंसे❋नित्य सदा ५ मुझको ६ कहते हैं ७ ८ अर्थात् भक्तोंको भगवत्स्वरूपका उपदेश करते हैं और उसी भगवत् स्वरूपके आनन्द में❋सन्तोष करते हैं ९ । १० अर्थात् वह निरतिशय आनन्द है उस आनन्दसे परे विषयानन्दको तुच्छ समझते हैं. सदा उसी आनन्दमें❋रमते हैं ११ । १२ अर्थात् उसमें प्रीति रखते हैं. सच्चिदानन्द स्वरूपमें मग्न रहते हैं ॥ ९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥ १० ॥

सततयुक्तानाम् १ प्रीतिपूर्वकम् २ भजताम् ३ तेषाम् ४ तम् ५ बुद्धियोगम् ६ ददामि ७ येन ८ माम् ९ ते १० उपयान्ति ११ ॥ १० ॥ अ० ❋ निरन्तरयुक्त हुये १ प्रीतिपूर्वक २ जो मेरा ❋ भजन करते हैं ३ उनको ४ वह ५ ज्ञानयोग ६ दूंगा मैं ७ कि ❋ जिस करके ८ मुझको ९ वे १० प्राप्त होंगे ११ टी० ❋ सो ज्ञानयोग देता हूं ५। ६ ॥ १० ॥

तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥११॥

तेषाम् १ एव २ अनुकम्पार्थम् ३ अहम् ४ अज्ञानजम् ५ तमः ६ नाशयामि ७ आत्मभावस्थः ८ भास्वता ९ ज्ञानदीपेन १० ॥ ११ ॥ अ० उ० तिनके १ ही २ भलेके लिये ३ मैं ४ उत्पत्ति है जिसकी ऐसा जो तम ५। ६ अर्थात् संसार सि० तिसको ❋ नाश कर देता हूं, ७ बुद्धिकी वृत्तिमें स्थित होकर ८ प्रकाशरूप ज्ञानदीप करके ९। १० तात्पर्य—जो निरन्तर पूर्वरीतिकरके मेरा भजन करते हैं. उनको निरतिशय परमानन्दकी प्राप्तिके मूलाज्ञान और तूलाज्ञानको मैं नाश कर देता हूं. निर्मल बुद्धिकी वृत्तिमें स्थित होकर ऐसा प्रकाश करताहूं, कि सब संसार उसको मिथ्या प्रतीत होने लगता है और आत्मा शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द निराकार, निर्विकार, अपरोक्ष होजाता है ऐसा ज्ञानरूप दीपक उस के हृदयमें प्रज्वालित करता हूं कि अपने आप सब पदार्थ नित्य अनित्य भले प्रकार फुरने लगते हैं. फिर विवेक वैराग्यादि साधन चतुष्टय सम्पन्न होकर आत्मज्ञान द्वारा परमानन्दको प्राप्त होजाता है ॥ ११ ॥

अर्जुन उवाच—

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम् ॥ १२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्जुन उवाच❀भवान् १ परम् २ ब्रह्म ३ परम् ४ धाम् ५ परमम् ६ पवित्रम् ७ पुरुषम् ८ शाश्वतम् ९ दिव्यम् १० आदिदेवम् ११ अजम् १२ विभुम् १३ ॥ १२ ॥ अ० अर्जुन कहता, है सि० हे कृष्णमहाराज ❀आप १ पर २ ब्रह्म ३ पर ४ धाम ५ परम ६ पवित्र ७ सि० हो व्यासादि आपको ऐसा कहते हैं और❀पुरुष ८ नित्य ९ दिव्य १० आदिदेव ११ अज १२ व्यापक १३ सि० कहते हैं. इस श्लोकका अगले श्लोकके साथ सम्बध है❀॥ १२ ॥

आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा ।
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे ॥१३॥

सर्वे १ ऋषयः २ देवर्षिर्नारदः ३ तथा ४ असितः ५ देवलः ६ व्यासः ७ त्वाम् ८ आहुः ९ स्वयम् १० च ११ एव १२ मे ब्रवीषि १४ ॥ १३ ॥ अ० उ० इस श्लोकका पिछले श्लोकके साथ सम्बन्ध है❀सब १ ऋषि २ देवऋषि नारद जी ३ । ४ और ५ असित ६ देवल ७ व्यासजी ८ आपको ९ सि० ऐसा❀कहते हैं १० सि० कि जैसा पिछले श्लोकमें परब्रह्मसे लेकर विभुतक निरूपण किया❀और आपभी ११ । १२ । १३ मुझसे १४ अपने आपको वैसाही❀कहते हो १५ कि जैसा आपको व्यासादि कहते हैं❀॥ १३ ॥

सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वदसि केशव ।
न हि ते भगवन् व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः॥१४॥

केशव १ यत् २ माम् ३ वदसि ४ एतत् ५ सर्वम् ६ ऋतम् ७ मन्ये ८ भगवन् ९ हि १० ते ११ व्यक्तिम् १२ न १३ देवाः १४ विदुः १५ न १६ दानवाः १७ ॥ १४ ॥ अ०❀हे केशव ! १ जो २ मुझसे ३ आप कहते हैं ४ यह ५ सब ६ सत्य ७ मानता हूं मैं ८ हे भगवन् ! ९ बेसन्देह (यथार्थ) १० आपके ११ स्वरूपको वा प्रभावको १२ न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१३ देवता १४ जानते हैं १५ न १६ दानव १७ तात्पर्य—शुद्ध स्वरूप परमात्माका विषवत् कोईभी नहीं जानसक्ता. उपाधिसहित स्वरूप भगवतका विषयवत् जाना जाता है. आत्मा स्वयप्रकाश है ॥ १४ ॥

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावनभूतेश देवदेवजगत्पते॥ १५ ॥

पुरुषोत्तम १ भूतभावन २ भूतेश ३ देवदेव ४ जगत्पते ५ स्वयम् ६ एव ७ आत्मना ८ आत्मानम् ९ त्वम् १० वेत्थ ११ ॥ १५ ॥ अ० ❋ हे पुरुषोत्तम ! १ हे भूतभावन ! २ हे भूतेश ! ३ हे देवदेव ! ४ हे जगत्पते ! ५ आप ६ ही ७ आत्मा करके ८ आत्माको ९ आप १० जानते हो ११ तात्पर्य—जैसे स्वयंप्रकाश है सूर्यके देखनेमें किसी पदार्थकी इच्छा नहीं ऐसेही शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द भगवत्का आत्मा करके ही जाना जाता है. मन वाणी और उनके देवतोंका विषय नहीं फिर मनुष्यों का विषय ये कैसे हो सक्ता है ❋ टी० ❋ भूतोंके उत्पन्न करनेवाले भूतोंके ईश्वर ३ देवतोंके भी देवता ४ जगत्के स्वामी ५ ये सब हेतुगर्भित विशेषण हैं ॥ १५ ॥

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्याह्यात्म विभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥१६॥

आत्मविभूतयः १ दिव्याः २ हि ३ अशेषेण ४ वक्तुम् ५ अर्हसि ६ याभिः ७ विभूतिभिः ८ इमान् ९ लोकान् १० व्याप्य ११ त्वम् १२ तिष्ठसि १३ ॥ १६ ॥ अ० उ० जब कि, अपने स्वरूपको और अपने ऐश्वर्यको आपही जानते हो इसवास्ते आपसेही आपकी विभूति सुना चाहता हूं ❋ अपना ऐश्वर्य १ दिव्य २। ३ समस्त ४ कहनेको ५ योग्यता हो ६ अर्थात् जो जो आपकी दिव्य विभूति हैं वे समस्त मुझसे कहिये ❋ जिन विभूति करके ७। ८ इस लोकको ९ । १० व्याप्तकर ११ आप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१२ स्थित हो अर्थात् जिन जिन विभूति करके इस लोकमें आप व्याप्त हो रहे हो मैं उनका चिन्तन किया चाहता हूं. इसवास्ते मुझसे कहो ॥ १६ ॥

कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन् मया ॥१७॥

योगिन् १ कथम् २ त्वाम् ३ सदा ५ परिचिन्तयन् ५ अहम् ६ विद्याम् ७ भगवन् ८ मया ९ केषु ११ च १२ भावेषु १३ चिन्त्यः १४ असि १५ ॥ १७ ॥ अ० उ० हे योगीश्वर ! १ किस प्रकार २ आप शुद्ध सच्चिदानन्दको ३ सदा चिन्तन करता हुआ ५ मैं ६ जानूं ७ अर्थात् इस प्रकार मुझको उपदेश कीजिये कि जिस प्रकार आपका शुद्धस्वरूप जाना जाय❀हे कृष्णचन्द्र ! ८ मुझ करके ९ किन पदार्थोंमें १० । ११ । १२ । १३ चिन्तन करनेके योग्य १४ हो आप १५ अर्थात् किस पदार्थका चिन्तन करनेसे अन्तःकरण शुद्ध होकर आपका यथार्थ स्वरूप जाना जाता है. उन पदार्थोंको मैं जाना चाहता हूं. तात्पर्य—अन्तःकरणकी शुद्धि का उपाय अर्जुन बूझता है ॥ १७ ॥

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥१८॥

जनार्दन १ विस्तरेण २ आत्मनः ३ योगम् ४ विभूतिम् ५ च ६ भूयः ७ कथय ८ हि ९ अमृतम् १० शृण्वतः ११ मे १२ तृप्तिः १३ न १४ अस्ति १५ ॥ १८ ॥ अ० उ० जब मेरा चित्त बाहिर्मुख हो तब भी आपका चिन्तन करता रहूं. इस वास्ते❀हे प्रभो ! १ विस्तार करके २ अपना योग ३ । ४ और विभूति ५ । ६ फिर कहो ८ क्योंकि ९ अमृतरूप १० आपका वचन❀सुननेसे ११ मेरा १२ तृप्ति १३ नहीं १४ है १५ टी० ❀दुष्टजनोंको जो दुःख दे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वा भक्तजनोंको आनन्द दे व भक्तजन जिनसे मोक्षकी याचना करें उसको जनार्दन कहते हैं. यह नाम श्रीकृष्णचन्द्र महाराजका है १ सर्वज्ञतादि अचिन्त्य शक्तियोंको योग कहते हैं ५ ऐश्वर्यको योग कहते हैं. जैसे राजा हाथी, घोड़े, सेनादि ऐश्वर्यसे जाना जाता है. ऐसेही ईश्वर अपनी विभूतियों करके जानेजाते हैं और जैसे राजाके मन्त्रियोंका आश्रय लेनेसे राजा मिलजाता है. इसी प्रकार परमेश्वर प्राप्त जो आगे विभूति वर्णन करेंगे उनके आश्रयसे शुद्ध सच्चिदानन्द परमेश्वर प्राप्त होजाते हैं श्रीकृष्णचन्द्र इस अध्यायमें वासुदेव और रामचन्द्रादिको अपनी विभूति कहेंगे. इस बातका तात्पर्य समझना चाहिये अपनी बुद्धिके अनुसार ॥ १८ ॥

श्रीभगवानुवाच—

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ॥१९॥

श्रीभगवानुवाच। हन्त १ प्राधान्यतः २ दिव्याः ३ हि ४ आत्मविभूतयः ५। ६ कथयिष्यामि ७ कुरुश्रेष्ठ ८ मे ९ विस्तरस्य १० अन्तः ११ न १२ अस्ति १३ ॥ १९ ॥ अ० सि० जिज्ञासु जब प्रश्न करता है पीछे उनके गुरु जिस समय कृपा करके उत्तर दिया चाहते हैं तो उस प्रश्नके आदरार्थ और जिज्ञासुकी प्रसन्नताके लिये ऐसा बोलते हैं कि हन्त अर्थात् हां जो तुमने बूझा यह हमने अङ्गीकार किया अच्छा बूझा है अब उसका उत्तर सुनो १ प्रधान प्रधान २ जो जो❋दिव्य ३। ४ मेरी विभूति ५ हैं तिनको❋तुझसे कहूंगा ७ हे अर्जुन ! ८ मेरे ९ विस्तारका १० अर्थात् मेरी विभूतियोंके विस्तारका❋अन्त ११ नहीं १२ है १३ ॥ १९ ॥

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ॥ २० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुडाकेश १ सर्वभूताशयस्थितः २ आत्मा ३ अहम् ४ भूतानाम् ५ आदिः ६ च मध्यम् ८ च ९ अन्तः १० एव ११ च १२ ॥ २० ॥ अ० हे गुडाकेश ! सि० गुडाकेश यह जो शब्द है इस शब्दका अर्थ घनकेशभी है. अर्थात् गुंजान बाल हों जिसके उसको सि० घनकेश कहते हैं. यह नाम अर्जुनका है १ श्रीभगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन ! चैतन्य हो अपनी विभूति सुनाता हूं प्रथम सबसे श्रेष्ठ विभूतिको सुन❀सब भूतोंके हृदयमें विराजमान २ आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्दरूप ३ मैं ४ हूं, सदा इसीका ध्यान करना चाहिये और जो इसमें मन न लगे और समझमें न आवे तो स्थूल विभूति मेरी सुन❀भूतोंका ५ आदि ६ और ७ मध्य ८ और ९ अन्त १० मैंही ११ । १२ हूं. अर्थात् यह समझ कि ये सब भूत मुझसेही हुये मुझमेंही स्थित हैं मुझमेंही लय होंगे. तात्पर्य–ऐसा चिन्तन करना यही परमेश्वरकी उपासना है ॥ २० ॥

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान् ।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥ २१ ॥

आदित्यानाम् १ विष्णुः २ अहम् ३ ज्योतिषाम् ४ अंशुमान् ५ रविः ६ मरुताम् ७ मरीचिः ८ अस्मि ९ नक्षत्राणाम् १० शशी ११ अहम् १२ ॥ २१ ॥ अ०❀आदित्योंमें १ विष्णुनामवाला आदित्य २ मैं ३ सि० हूं❀ज्योतिषियोंमें ४ किरणवाले ५ श्रीसूर्यनारायणवाला पूर्णब्रह्म शुद्धसच्चिदानन्द मैं हूं. ६ मरुद्गणोंमें ७ मरीचि ८ मैं हूं. ९ नक्षत्रोंमें १० चन्द्र ११ मैं १२ हूं❀ ॥ २१ ॥

वेदानां सामवेदोस्मि देवानामस्मि वासवः ।
इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥ २२ ॥

वेदानाम् १ सामवेदः २ अस्मि ३ देवानाम् ४ वासवः ५ अस्मि ६ इन्द्रियाणाम् ७ मनः ८ च ९ अस्मि १० भूतानाम् ११ चेतना १२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस्मि १३ ॥ २२ ॥ अ० ❋वेदोमें १ सामवेद २ मैं हूं. ३ देवतोंमें ४ इन्द्र ५ मैं हूं. ६ इन्द्रियोंमें ७ मन ८ । ९ मैं हूं. १० प्राणियोंमें ११ ज्ञानशक्ति १२ मैं हूं. १३ ॥ २२ ॥

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम् ।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥ २३ ॥

रुद्राणाम् १ शंकरः २ च ३ अस्मि ४ यक्षरक्षसाम् ५ वित्तेशः ६ वसूनाम् ७ पावकः ८ च ९ अस्मि १० शिखरिणाम् ११ मेरुः १२ अहम् १३ ॥ २३ ॥ अ० रुद्रोंमें १ श्रीसदाशिवजी महाराज शङ्कर भगवान् शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म २ मैं हूं. ३ । ४ यक्षराक्षसोंमें ५ कुबेर ६ वसुओंमें ७ अग्नि मैं हूं. ८ । ९ । १० पर्वतोंमें ११ सुमेरु १२ मैं हूं १३ ॥ २३ ॥

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् ।
सेनानीनामहंस्कन्दः सरसामस्मि सागरः ॥ २४ ॥

पार्थ १ पुरोधसाम् २ बृहस्पतिम् ३ माम् ४ मुख्यम् ५ विद्धि ६ सेनानीनाम् ७ च ८ स्कन्दः ९ अहम् १० सरसाम् ११ सागरः १२ अस्मि १३ ॥ २४ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ पुरोहितोंमें २ बृहस्पति ३ मुझको ४ मुख्य ५ जान तू ६ और सेनाके सरदारोंमें ७ । ८ देवसेनापति स्वामिकार्तिक ९ मैं १० सि० हूं❋स्थित जलोंमें ११ समुद्र १२ मैं हूं १३ ॥ २४ ॥

महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम् ।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः॥२५॥

महर्षीणाम् १ भृगु २ अहम् ३ गिराम् ४ एकम् ५ अक्षरम् ६ अस्मि ७ यज्ञानाम् ८ जपयज्ञः ९ अस्मि १० स्थावराणाम् ११ हिमालयः १२ ॥ २५ ॥ अ० महर्षियोंमें १ भृगु २ मैं ३ हूं❋वाणीमें अर्थात् जो बो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लनेमें आवे उसमें ४ एक ५ अक्षर प्रणव ॐम् ६ मैं ७ हूं मैं ८ जप-यज्ञ ९ मैं १० सि० हूं ❋ स्थावरोंमें ११ हिमालयपर्वत १२ सि० मैं हूं ❋॥ २५ ॥

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥ २६ ॥

सर्ववृक्षणाम् अश्वत्थः ३ देवर्षीणाम् ३ च ४ नारदः ५ गन्धर्वाणाम् ६ चित्ररथः ७ सिद्धानाम् ८ कपिलः ९ मुनिः १० ॥ २६ ॥ अ० सब वृक्षोंमें १ पीपल २ देवऋषियों में ३ नारदजी ४ । ५ गन्धर्वोंमें ६ चित्ररथ ७ सिद्धोंमें ८ कपिलदेवजी ९ मुनि १० सि० मैं हूं ॥ २६ ॥

उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम् ।
ऐरावतं गजेन्द्राणां च नराणां च नराधिपम् ॥ २७ ॥

अश्वानाम् १ उच्चैःश्रवसम् २ माम् ३ विद्धि ४ अमृतोद्भवम् ५ गजेन्द्राणाम् ६ ऐरावतम् ७ नाराणाम् ८ च ९ नराधिपम् १० ॥ २७ ॥ अ० घोडोंमें १ उच्चैःश्रवानाम घोडा २ मुझको ३ जान तू ४ कैसा है वह घोड़ा कि जब ❋ अमृतके अर्थ समुद्र मथागयाथा उससमय समुद्रमें से निकला है यह विशेषण उच्चैःश्रवाका भी है और ऐरावेतका भी ५ हाथियों में ६ ऐरावतको ७ मेरी विभूति जान ❋ और नरोंमें राजाको ८ ९ । १० मेरी विभूति जान तू ॥ २७ ॥

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक् ।
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः ॥२८॥

आयुधानाम् १ अहम् २ वज्रम् ३ धेनूनाम् ४ कामधुक् ५ अस्मि ६ प्रजनः ७ च ८ कन्दर्पः ९ अस्मि १० सर्पाणाम् ११ वासुकिः १२ अस्मि १३ ॥ २८ ॥ अ० हथियारोंमें मैं २ वज्र ३ सि० हूं ❋ गौओं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में ४ कामधेनु ५ मैं हूं ६ प्रजाकी उत्पत्तिका जो हेतु ७। ८ कामदेव ९ सो मैं हूं १० विषबाले सर्पों में ११ वासुकि १२ मैं हूं १३ ॥ २८ ॥

अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणोयादसामहम्।
पितॄणामर्यमाचास्मि यमःसंयमतामहम् ॥ २९ ॥

नागानाम् १ अनन्तः २ च ३ अस्मि ४ यादसाम् ५ वरुणः ६ अहम् ७ पितॄणाम् ८ अर्यमा ९ च १० अस्मि ११ संयमताम् १२ यमः १३ अहम् १४ ॥ २९ ॥ अ० निर्विष नागोंमें १ शेषजी २। ३ मैं हूं ४ जलचरोंमें ५ वरुण ६ मैं हूं ७ पितरोंमें ८ अर्यमा नाम पितर ९। १० मैं हूं ११ दण्ड देनेवालों में १२ यमराज १३ मैं १४ हूं सि० ॥ २९ ॥

प्रल्हादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम्।
मृगाणाञ्च मृगेन्द्राणाम् वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥३०॥

दैत्यानाम् १ प्रह्लादः २ च ३ अस्मि ४ कलयताम् ५ कालः ६ अहम् ७ मृगाणाम् ८ च ९ मृगेन्द्रः १० अहम् ११ पक्षिणाम् १२ वैनतेयः १३ च १४ ॥ ३० ॥ अ० ❋ दैत्योंमें १ प्रह्लाद २। ३ मैं हूं. ४ संख्यावाले पदार्थोंमें ५ काल ६ मैं ७ हूं ❋ चौपायोंमें ८। ९ सिंह १० मैं ११ हूं. पक्षियोंमें १२ गरुड़जी १३। १४ सि० मैं हूं ॥ ३० ॥

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरश्चामि स्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥ ३१ ॥

पवताम् १ पवनः २ अस्मि ३ शस्त्रभृताम् ४ रामः अहम् ६ झषाणाम् ७ मकरः ८ च ९ अस्मि १० स्रोतसाम् ११ जाह्नवी १२ अस्मि १३ ॥ ३१ ॥ अ० ❋ वेगवालोंमें १ वायु २ मैं हूं. ३ शस्त्रधारियोंमें ४ श्रीरामचन्द्रजी महाराज शुद्ध-साच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म ५ मैं ६ सि० हूं. ❋ मछलियोंमें ७ मकर नामवाली मच्छी ८ मैं हूं. ९। १० बहनेवाले जलोंमें ११ श्रीगंगा भागीरथी १२ मैं हूं. १३ ॥ ३१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन ।
अध्यात्मविद्याविद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥ ३२ ॥

अर्जुन १ सर्गाणाम् २ आदिः मध्यम् ४ च ५ अन्तः ६ अहम् ७ विद्यानाम् ८ अध्यात्मविद्या ९ प्रवदताम् १० वादः ११ अहम् १२ ॥३२॥

अ० ❋ हे अर्जुन ! १ जगतका २ आदि ३ और मध्य ४ । ५ अन्त ६ मैं ७ सि० हूं ❋ विद्याके बीचमें ८ आत्मविद्या (वेदान्तशास्त्र) ९ सि० वेदान्तशास्त्रमें केवल आत्माके बन्ध मोक्षका विचार है. इसीवास्ते इसको अध्यात्मविद्या कहते हैं. मोक्षशास्त्र यही है विना इस शास्त्रके पढ़ने सुननेसे नाश होते हैं. इस शास्त्रका सेवन करना साक्षात् भगवत्का प्रत्यक्ष सेवन करना है ❋ चर्चा करनेवालोंमें १० वाद ११ मैं १२ सि० हूं. टी० चर्चा तीन प्रकारकी हैं. जल्प वितण्डावाद, जो केवल अपनेही पक्षमें श्रुत्यादिकोंका प्रमाण देकर युक्तियोंके सहित अपनेही पक्षको सिद्ध किये जाय दूसरे पक्षपर दृष्टि न दे उसको जल्प कहते हैं और जो दूसरेके पक्षमें दोषही कहता चला जाय अपने पक्षके दोषोंका स्मरण न करे उसको वितण्डा कहते हैं और जो अपने और दूसरे पक्षको शङ्का प्रमाणोंके साथ प्रतिपादन करे गुरु शिष्यको बोधके लिये उसको वाद कहते हैं. वाद परमार्थ निर्णयके लिये होता है. उसका फल परमानन्द है. जल्प, वितण्डा वाक्यवाद हैं उनका फल दुःख है. जिसका पक्ष चर्चामें दब जायगा. बेसन्देह वह दुःख पावेगा और जिसने विद्याके बलसे झूंठी बातको सिद्ध किया वह बेसन्देह पापका भागी होकर परलोकमें दुःख पावेगा. न्यायशास्त्रादि विद्या अन्यपदार्थ हैं और परमार्थका यथार्थ निर्णय अन्यपदार्थ है क्या हुआ जो किसीने अनजानके सामने अपना झूंठा पक्ष सिद्ध कर दिया. किसी दिन विद्वानोंके सामने दब जायगा चर्चाका सार सत्यार्थ है ॥ ३२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अक्षराणामकारोस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च।
अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतो मुखः॥ ३३॥

अक्षराणाम् १ अकारः २ अस्मि ३ सामासिकस्य ४ द्वन्द्वः ५ च ६ अहम् ७ एव ८ अक्षयः ९ कालः १० धाता ११ विश्वतोमुखः १२ अहम् १३ ॥ १३ ॥ ❋अ० अक्षरोंमें १ अकार २ मैं हूं ३ समासोंमें ४ द्वन्द्व समास ५ मैं ही हूं ६। ७। ८ अक्षय ९ काल १० सि० भी मैं हूं पीछे कालके कहा ११ कि जो संख्यामें आता है. पल घड़ी दिन रात्रि वर्ष योगोंको क्षतकाल कहते हैं यह अक्षय कालका विशेषण है अथवा परमेश्वरका नाम कालकाभी काल है कर्मफलविधाता ११ विराट् १२ मैं सि० हूं॥ ३३ ॥

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम्।
कीर्तिः श्रीर्वाक्चनारीणां स्मृतिर्मेधाधृतिः क्षमा॥३४॥

मृत्युः १ सर्वहरः २ च ३ अहम् ४ भविष्यताम् ५ उद्भवः ६ च ७ नारीणाम् ८ कीर्त्तिः ९ श्रीः १० वाक् ११ च १२ स्मृतिः १३ मेधा १४ धृतिः १५ क्षमा १६ ॥ ३४ ॥ अ० ❋मृत्यु १ सबका हरनेवाला २ मैं ३। ४ सि० ❋ होनेवाले पदार्थोंमें ५ अर्थात् बड़ाई होनेके योग्य जो पदार्थ हैं उनमें मोक्षकी प्राप्तिका हेतु ऊद्भव उत्कर्ष अभ्युदय ६। ७ सि० मैं हूं ❋स्त्रियोंमें ८ कीर्ति ९ अर्थात् महापुरुषोंमें शम, दम, औदार्य, दानादि गुणोंकी ख्याति होनी वह कीर्ति भगवत्की विभूति है ❋लक्ष्मी वा कान्ति वा शोभा १० मधुरवाणी ११। १२ बहुत दिनोंकी बात याद रहनी १३ ग्रन्थधारणशक्ति १४ क्षुत्पिपासादि समय चित्तमें क्षोभ न होना. १५ अपमानादि समय क्षोभ न होना. १६ सि० ये सब कीर्ति, श्री, वाक्, स्मृति, मेधा, धृति, क्षमा परमेश्वरकी विभूति हैं. जिनके आभास-मात्र सम्बन्धसे स्त्री पुरुष श्रेष्ठ कहलाते हैं ❋॥ ३४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बृहत्सामतथासाम्नां गायत्रीछन्दसामहम् ।
मासानां मार्गशीर्षोहमृतूनां कुसुमाकरः ॥ ३५ ॥

साम्नाम् १ तथा २ बृहत्साम ३ छन्दसाम् ४ गायत्री ५ अहम् ६ मासानाम् ७ मार्गशीर्षः ८ अहम् ९ ऋतूनाम् १० कुसुमाकरः ११॥३५॥ अ० उ० वेदोंमें सामवेद मैं हूं. यह श्रीभगवान्ने पीछे कहा अब कहते हैं कि❀सामवेदमें १ भी २ बृहत् साम ऋचा ३ सि० मैं हूं❀छन्दोंमें ४ गायत्री ५ मैं ६ हूं❀महीनोंमें ७ मार्गशीर्ष (अगहन) अर्थात् अगहन ८ मैं सि० हूं❀ऋतुमें १० वसन्त ऋतु ११ मैं हूं. मीन और मेषका सूर्य जबतक वर्तता है. इनहीं दोनों महीनोंको वसन्त कहते हैं. इसी ऋतुमें यह टीका बनी है❀॥ ३५ ॥

द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ।
जयोस्मि व्यवसायोस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम् ॥३६॥

छलयताम् १ द्यूतम् २ अस्मि ३ तेजस्विनाम् ४ तेजः ५ अहम् ६ जयः ७ अस्मि ८ व्यवसायः ९ अस्मि १० सत्त्ववताम् ११ अहम् १३ ॥ ३६ ॥ अ० छल करनेवालोंमें १ जुआ सि० २ मैं हूं. ३ तेजस्वी पुरुषोंमें ४ तेज ५ मैं ६ हूं❀जीतनेवालोंमें जय ७ मैं हूं. ८ निश्चय करनेवालोंमें❀आत्मनिश्चय ९ मैं हूं. १० सतोगुणी पुरुषोंमें ११ सत्त्व-गुण १२ मैं हूं. १३ टी० छलिया लोगोंके लिये जुआ अपनी विभूति परमेश्वरने कही है ॥ ३६ ॥

वृष्णीनां वासुदेवोस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः ।
मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशनाकविः ॥ ३७ ॥

वृष्णीनाम् १ वासुदेवः २ अस्मि ३ पाण्डवानाम् ४ धनञ्जयः ५ मुनीनाम् ६ अपि ७ अहम् ८ व्यासः ९ कवीनाम् १० उशना ११ कविः १२ ॥ ३७ ॥ अ० वृष्णियोंमें १ वासुदेव २ मैं हूं. ३ अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महाराज शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म मूर्त्तिमान् वसुदेवजीके पुत्र कि जो अर्जुनको उपदेश करते हैं यही वासुदेव हैं❋ पाण्डवोंमें ४ अर्जुन ५ कि जिसको भगवान् उपदेश करते हैं❋मुनीश्वरोंमें ६। ७ मैं ८ श्रीवेदव्यासजी ९ हूं❋ कवि पुरुषोंमें १० शुक्राचार्य ११ कवि १२ मैं हूं ॥ ३७ ॥

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम्।
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम् ॥ ३८॥

दमयताम् १ दण्डः २ अस्मि ३ जिगीषताम् ४ नीतिः ५ अस्मि ६ गुह्यानाम् ७ मौनम् ॥ च ९ एव १० अस्मि ११ ज्ञानवताम् १२ ज्ञानम् १३ अहम् १४ ॥ ३८ ॥ अ० निरोध करनेवालोंमें १ दण्ड २ मैं हूं ३ जीतने की इच्छावालोंमें ४ नीति ५ मैं हूं ६ गुप्त पदार्थोंमें चुप रहना ८।९।१० मैं हू ११ ज्ञानवालोंमें १२ ब्रह्मज्ञान १३ (आत्मज्ञान) मैं १४ स० हूं. तात्पर्य—दूसरे का स्वरूप और ऐश्वर्य जाननेसे किसीको क्या मिलता है और अपना ऐश्वर्य जानना चाहिये ॥ ३८ ॥ ॥

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन।
न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥३९॥

सर्वभूतानाम् १ यत् २ च ३ अपि ४ बीजम् ५ तत् ६ अहम् ७ अर्जुन ८ चराचरम् ९ भूतम् १० मया ११ विना १२ यत् १३ स्यात् १४ तत् १५ न १६ अस्ति १७ ॥ ३९ ॥ अ०❋सब भूतोंका १ जो २ ३। ४ बीज ५ सो ६ मैं ७ सि० हूं❋हे अर्जुन! ८ चराचर ९ सत्तामात्र १० मेरे ११ विना १२ जो १३ हो १४ सो १५ नहीं १६ है १७ तात्पर्य ऐसा पदार्थ कोई नहीं कि जिसमें सत् चित् आनन्द ये तीन अंश भगवान्के न हो ॥ ३९ ॥

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप।
एषतूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ॥ ४० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परन्तप १ मम २ दिव्यानाम् ३ विभूतीनाम् ४ अन्तः ५ न ६ अस्ति ७ एष ८ तु विभूतेः १० विस्तरः ११ उद्देशतः १२ मया १३ प्रोक्तः १४ ॥ ४० ॥ अ० हे अर्जुन ! १ मेरी २ दिव्य ३ विभूतियोंका ४ अन्त ५ नहीं ६ है ७ और जो वर्णन किया ❋ यह ८ तो ९ विभूतियोंका १० विस्तार ११ संक्षेप से १२ मैंने १६ कहा है १४ ॥ ४० ॥

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसम्भवम् ॥ ४१ ॥

यत् १ यत् २ सत्त्वम् ३ विभूतिमत् ४ श्रीमत् ५ वा ६ ऊर्जितम् ७ एव ८ तत् ९ तत् १० एव ११ मम १२ तेजोंशसंभवम् १३ त्वम् १४ अवगच्छ १५ ॥ ४१ ॥ अ० उ० जो तू मेरे ऐश्वर्यका विस्तार जाना चाहता है तो इसप्रकार जान ❋ अ० ❋ जो १ जो २ पदार्थ ३ ऐश्वर्यवान् ४ श्रीमान् ५ वा ६ सि० किसी अन्य गुणकरके ❋ श्रेष्ठ ७ ही ८ सि० कहलाता है ❋ तिस ९ तिसको १० ही ११ मेरे १२ तेजके अंश से उत्पन्न हुआ १३ तू १४ जान १५ तात्पर्य संसारमें जो जो पदार्थ श्रेष्ठ हैं सब भगवत् की विभूति है. जो जिस गुण करके श्रेष्ठ समझ जाता है वह गुण भगवत्काही अंश है. " आनन्दो ब्रह्म " इस श्रुतिसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि आनन्द ब्रह्म है तो फिर जो जो पदार्थ विशेष आनन्दजनक हैं सो भगवत् की विभूती हैं ॥ ४१ ॥

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञानेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ ४२ ॥

अर्जुन १ अथवा २ एतेन ३ बहुना ४ ज्ञानेन ५ तव ६ किम् ७ अहम् ८ इदम् ९ कृत्स्नम् १० जगत् ११ एकांशेन १२ विष्टभ्य १३ स्थितः १४ ॥ ४२ ॥ अ० ❋ हे अर्जुन ! १ अथवा २ इस ३ बहुत ४ सि० पृथक् पृथक् ❋ ज्ञानकरके ५ तुमको ६ क्या ७ काम है एसे समझ कि ❋

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं ८ इस ९ समस्त १० जगत् को ११ एक अंश से १२ धारण करके १३ स्थित हूं १४ तात्पर्य—यह सब जगत भगवत्के एक अंशमें कल्पित है भगवत्से जुदा नहीं. जगतमें जो आनन्द प्रतीत होता है यही प्रभुका अंश है. अंशसे अंशीका जान जल्द होता है ॥ ४२ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतियोगोनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

॥ अथैकादशोऽध्यायः ॥

अर्जुनउवाच—

मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम् ॥
यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम ॥ १ ॥

अर्जुनउवाच। मदनुग्रहाय १ परमम् २ गुह्यम् ३ अध्यात्मसंज्ञितम् ४ यत् ५ वचः ६ त्वया ७ उक्तम् ८ तेन ९ अयम् १० मम ११ मोहः १२ विगतः १३ ॥ १ ॥ अ० उ० पिछले अध्यायमें श्रीभगवान्ने कहा कि यह जगत् समस्त मेरे एक अंशमें कल्पित है. यह सुन अर्जुनको इच्छा हुई कि विश्वरूप श्रीभगवान्का देखना चाहिये. इस वास्ते अर्जुन श्रीभगवान्की स्तुति करता हुआ बोला है. चारमन्त्रोंमें ❀अ०❀ मेरे अनुग्रहके वास्ते अर्थात् मेरा शोक दूर करनेके लिये १ परमार्थ निष्ठावाला २ गुप्त ३ आत्मा अनात्माका ज्ञान हो जिससे ४ ❀सि०❀ ऐसा ❀जो ५ वचन ६ आपने ७ कहा ८ तिस वचन करके ९ यह १० मेरा ११ मोह १२ गया १३ अर्थात् इनको भी मैं मारता हूं ये मारे जाते हैं इस प्रकार जो शुद्ध निर्विकार आत्माको कर्त्ता कर्म समझता था यह भ्रान्ति मेरी आपकी कृपासे दूर हुई. मैंने जाना कि आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार है. कर्ता कर्म भ्रान्तिसे प्रतीत होता है. जैसे शुक्तिमें रजत, रज्जुमें सर्प, आकाशमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नीलता, नावमें बैठे मंदिरोंका चलना प्रतीत होता है इसी प्रकार आत्मा विकारवान् प्रतीत होता है. वास्तव आत्मा निर्विकार है यह मैं समझा ॥१॥

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया।
त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् ॥ २ ॥

कमलपत्राक्ष १ त्वत्तः २ मया ३ विस्तरशः ४ भूतानाम् ५ भवाप्ययौ ६ हि ७ श्रुतौ ८ माहात्म्यम् ९ च १० अपि ११ अव्ययम् १२ ॥ २ ॥ अ० ❀ हे भगवन्! १ आपसे २ मैंने ३ विस्तारपूर्वक ४ भूतोंकी ५ उत्पत्ति और लय ६ इन दोनोंको ❀ सुना ८ अर्थात् सब भूतोंकी उत्पत्ति आपसे ही है और तुम्हारे ही स्वरूपमें लय होजाते हैं सब भूत यह भी मैंने सुना और समझा ❀ और माहात्म्य ९। १० भी ११ आपका ❀ अक्षय सि० १२ सुना. तात्पर्य—आप जगत्को रचो भी हो और पालन संहार भी करो हो शुभाशुभ कर्मोंका फलभी देते हो बन्ध मोक्ष सब आपके आधीन हैं. जैसी भक्तोंकी इच्छा होती है उनके वास्ते वैसे ही नानारूप धारण करते हो वैसेही चरित्र करते हो ऐसे विषमव्यवहारमें भी आप सदा अकर्ता, निर्विकार, निर्लेप, उदासीन रहते हो यही आपका माहात्म्य है. करनेको न करनेको और का और करदेनेको जो समर्थ उसी को ईश्वर कहते हैं. ऐसे आपही हैं आपकी कृपासे मैंने अब आपका महात्म्य सुनकर आपको जाना ॥ २ ॥

एवमेतद्यथात्थत्व मात्मानं परमेश्वर।
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥

परमेश्वर १ यथा २ आत्मानम् ३ आत्थ ४ त्वम् ५ एतत् ६ एवम् ७ पुरुषोत्तम ८ ते ९ ऐश्वरम् १० रूपम् ११ द्रष्टुम् १२ इच्छामि १३ ॥ ३ ॥ अ० ❀ हे परमेश्वर! १ जैसा २ आत्माको ३ कहते हो ४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आप ५ यह ६ इसी प्रकार है ७ अर्थात् बेसन्देह आप अचिन्त्य शक्तिमान् हैं❀हे प्रभो ! ८ आपके ९ ऐश्वर्य १० रूपके ११ देखने की १२ इच्छा करता हूं १३ अर्थात् आपका ऐश्वर्य और विश्वरूप देखा चाहता हूं. ज्ञान ऐश्वर्य बल वीर्य शक्ति तेज इन करके युक्त आपका रूप देखा चाहता हूं. परमार्थदृष्टिमें आप निराकार पूर्ण हैं उसी स्वरूपको मूर्त्तिमान् देखा चाहता हूं यद्यपि यह बात असंभव है. परन्तु आप समर्थ हो दिखा सक्ते हो ॥ ३ ॥

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो।
योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥ ४ ॥

प्रभो १ योगेश्वर २ यदि ३ मया ४ तत ५ द्रष्टुम् ६ शक्यम् ७ मन्यसे ८ तथा ९ मे १० त्वम् ११ अव्ययम् १२ आत्मानम् १३ दर्शय १४ इति १५ ॥ ४ ॥ उ०❀यदि आपकी दृष्टि में उस रूपके देखने का मैं अधिकारी हूँ तो दिखाइये❀अ०❀हे समर्थ ! १ हे योगेश्वर ! २ यदि ३ मुझ करके ४ सो रूप ५ देखनेको ६ समर्थ ७ समझो ८ अर्थात् उस रूपको मैं इन नेत्रों करके देख सक्ता हूं❀तो ९ मुझे १० आप ११ निर्विकार १२ आत्माको १३ दिखाइये १४ यह १५ मेरा तात्पर्य है ॥ ४ ॥

श्रीभगवानुवाच—

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथसहस्रशः।
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ॥ ५ ॥

श्रीभगवानुवाच पार्थ १ शतशः २ अथ ३ सहस्रशः ४ दिव्यानि ५ मे ६ रूपाणि ७ पश्य ८ नाना ९ विधानि १० च ११ नाना १२ वर्णाकृतीनि १३ ॥ ५ ॥ अ० श्रीभगवान् बोले कि❀हे अर्जुन ! १ सैकरों हजारों २। ३। ४ दिव्य ५ मेरे ६ रूपोंको ७ देख ८ नानाप्रकारके ९ भेद हैं १० और ११ नानाप्रकारके १२ वर्ण नील पीतादि और आकृति हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिसमें १३ सि० ऐसा रूप देख वह विश्वरूप एकही था परन्तु नाना प्रकारके जो उसमें भेद थे इसवास्ते श्लोकमें रूपका बहुवचन है रूपाणि इति ❀ ॥ ५ ॥

पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानाश्विनौ मरुतस्तथा ।
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत ॥ ६ ॥

भारत १ आदित्यान् २ वसून् ३ रुद्रान् ४ अश्विनौ ५ मरुतः ६ पश्य ७ तथा ८ बहूनी ९ अदृष्टपूर्वाणि १० आश्चर्याणि ११ पश्य १२ ॥ ६ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ बारह सूर्योंको २ आठ वसुओंको ३ ग्यारह रुद्रोंको ४ दोनों आश्विनीकुमारोंको ५ उञ्चास मरुद्गणों को ६ देख ७ और ८ बहुत ९ पदार्थ जो तुमने और औरों ने कभी ❀ नहीं देखे हैं १० ऐसे ❀ आश्चर्यरूपोंको ११ देख १२ अब मैं दिखाता हूं ❀ ॥ ६ ॥

इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम् ।
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद् द्रष्टुमिच्छसि ॥ ७ ॥

गुडाकेश १ इह २ एकस्थम् ३ अद्य ४ मम ५ देहे ६ सचराचरम् ७ कृत्स्नम् ८ जगत् ९ पश्य १० यत् ११ च १२ अन्यत् १३ द्रष्टुम् १४ इच्छसि १५ ॥ ७ ॥ ❀ उ० समस्त भूत भविष्यत् वर्तमान कालकी व्यवस्था तुझको दिखता हूं. जो असंख्यात जन्मोंमें तू या और कोई नहीं देख सक्ता वह सब तनक देरमें दिखताहूं ❀ हे अर्जुन ! १ इसी जगह २ मुझ एकमें स्थित ३ अभी ४ मेरे ५ देहमें ६ स्थावर जंगम ७ सम्पूर्ण ८ जगत्को ९ अर्थात कार्य कारणके सहित समस्त जगतको ❀ देख १० और को ११ । १२ अन्य पदार्थके देखनेकी १३ । १४ इच्छा करता है तू १५ अर्थात इस जगत्का आसरा क्या है कैसे उत्पन्न हुआ है कैसे इसकी स्थिति है कैसे लय होता है उपादान इसका क्या है कैसे कैसे यह रूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बदलता है इस लढाईमें किसकी जीत होगी हे अर्जुन! जो तेरी इच्छा हो सब देख जो मैं अपनी इच्छासे दिखता हूं सो देख और जो तेरी इच्छा हो सो भी देखले ऐसा समय मिलना कठिन है ❋ टी० ❋ गुडाका नाम निद्राका है अर्जुनके निद्रा वशमें थी इस हेतुसे गुडाकेश अर्जुनका नाम है ॥ ७ ॥

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥ ८ ॥

अनेन १ चक्षुषा २ मां ३ एव ४ द्रष्टुम् ५ न ६ शक्यसे ७ ते ८ तु ९ दिव्यम् १० चक्षुः ११ ददामि १२ मे १३ योगम् १४ ऐश्वरम् १५ पश्य १६ ८ ॥ उ० ❋ अर्जुनने कहाथा कि वह रूप मैं देख सक्ताहूं या नहीं. श्रीभगवान् कहते हैं कि इन नेत्रोंसे तो नहीं देख सक्ता, दिव्यचक्षु मैं देता हूं तिनकरके देखेगा इन नेत्रोंकरके १। २ मुझको ३ बेसन्देह ४ देखने को ५ नहीं ६ समर्थ है तू ७ परन्तु तुझको ८। ९ दिव्यचक्षु १० ११ देता हूं १२ मेरे १३ योग १४ ऐश्वर्यको १५ देख १६ किसी लोकमें जो देखने सुननेमें न आवे उसको दिव्य अलौकिक कहते हैं. जो बात सम्भव न हो वह बात समझमें आजावे जिस करके उसको योग कहते हैं. जीवसे जो बात न हो सके ईश्वरहीमें वह बात पावे और जिस करके जीवसे जुदा ईश्वर पहँचाना जावे उसको ऐश्वर्य कहते हैं, कि जिसको असाधारण लक्षणभी ईश्वर कहते हैं ईश्वरका एक साधारण लक्षण है. एक असाधारण साधारण वह कि जो ईश्वरमेंभी पावे और जीवमें भी पावे जैसे कंसादिका मारना, गोवर्द्धनका उठालेना, बहुरूप होजाना इत्यादि कर्मतो जीव भी कर सक्ता है. रावणादिकी कथा कैलासका उठालेना इत्यादि बहुत प्रसिद्ध हैं. परन्तु विश्वरूप जीव नहीं दिखा सक्ता यह ईश्वरका असधारण लक्षण हैं ॥ ८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संजयउवाच—

एवमुक्त्वा ततो राजन् महायोगेश्वरो हरिः।
दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम् ॥ ९ ॥

संजय उवाच ॥ राजन् १ महायोगेश्वरः २ हरिः ३ एवम् ४ उक्त्वा ५ ततः ६ पार्थाय ७ परमम् ८ ऐश्वरम् ९ रूपम् १० दर्शयामास ११ ॥ ९ ॥ ❋उ० ❋संजय धृतराष्ट्रसे कहता है कि ❋अ० उ० हे राजन्! १ महायोगेश्वर २ व्रजचन्द्र ३ इस प्रकार ४ पूर्वोक्त ❋कहकर ५ फिर ६ अर्जुनको ७ परम ८ ऐश्वर्य ९ रूप १० दिखाते भये ११ टी० श्रीभगवानने परम अद्भुत रूप अर्जुनको दिखाया ८ ॥ ९ ॥

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम्।
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

अनेकवक्त्रनयनम् १ अनेकाद्भुतदर्शनम् २ अनेकदिव्याभरणम् ३ दिव्याने कोद्यतायुधम् ४ ॥ १० ॥ अ० उ० ❋उस विश्वरूपके ये विशेषण हैं. अनेक मुखनेत्र हैं जिसमें १ अनेक अद्भुत आश्चर्य करनेवाले दर्शन हैं जिसमें २ अनेक दिव्य गहने हैं जिसमें ३ अनेक दिव्य शस्त्र उठाये हुये हैं जिसमें ४ ऐसा रूप श्रीमहाराजका था कि, जो अर्जुनने देखा ॥ १० ॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतो मुखम् ॥ ११ ॥

दिव्यमाल्याम्बरधरम् १ दिव्यगन्धानुलेपनम् २ सर्वाश्चर्यमयम् ३ देवम् ४ अनन्तम् ५ विश्वतोमुखम् ६ ॥ ११ ॥ अ० दिव्य माला वस्त्र धारण कर रक्खे हैं जिसने १ दिव्य गन्धका लेपन है जिसके २ सब आश्चर्य रूप हैं ३ प्रकाशरूप ४ नहीं है अन्त जिसका ५ सब ओर हैं मुख जिसमें ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भास्तस्य महात्मनः॥१२॥

यदि १ दिवि २ सूर्यसहस्रस्य ३ युगपद् ४ उत्थिता ५ भवेत् ६ तस्य ७ महात्मनः ८ भासः ९ सा १० भाः ११ सदृशी १२ स्यात् १३ ॥१२॥ अ० उ० उस विश्वरूपका प्रकाश ऐसा था❀अ० उ० जो १ आकाशमें २ हजार सूर्यकी ३ एक बारही ४ प्रभा उदय ५ हो ६ सि० तो❀ तिस ७ महात्माकी ८ प्रभाको ९ सो १० प्रभा ११ बराबर १२ हो १३ न भी हो इत्यभिप्रायः क्योंकि यह अनुपमरूप है❀ ॥ १२ ॥

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा॥ १३ ॥

तत्र १ एकस्थम् २ अनेकधा ३ प्रविभक्तम् ४ कृत्स्नम् ५ जगत् ६ तदा ७ पाण्डवः ८ देवदेवस्य ९ शरीरे १० अपश्यत् ११ ॥ १३ ॥ अ०❀तिस विश्वरूपमें १ एककेही विषे स्थित २ अनेक प्रकारका ३ जुदा जुदा ४ समस्त ५ जगत्को ६ तिस कालमें ७ अर्जुन ८ देवतोंके भी जो देवता उन देवदेवके ९ शरीरमें १० देखता भया ११❀टी०❀ पितर मनुष्य गन्धर्वादिको ३। ४ जगत्में जितने पदार्थ हैं अर्जुनको सब भगवत्के शरीरमें देखते थे इत्यभिप्रायः ॥ १३ ॥

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः।
प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत॥ १४ ॥

ततः १ सः २ धनञ्जयः ३ विस्मयाविष्टः ४। ५ हृष्टरोमा ६ कृताञ्जलिः ७ देवम् ८ शिरसा ९ प्रणम्य १० अभाषत ११ ॥ १४ ॥ उ०❀ जब अर्जुनने ऐसा स्वरूप देखा❀अ०❀पीछे उसके १ अर्जुन आश्चर्य करके युक्त हुआ ४। ५ अर्थात् आश्चर्य मानता हुआ❀ऐसा बली प्रफु-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ल्लित हो गये हैं. रोम जिसके ६ करी है अञ्जलि जिसने ७ अर्थात् दोनों हाथ जोडकर उसी ❋ देवको ८ शिरसे ९ प्रणाम करके १७ अर्थात् शिर झुकारकर नमस्कार करके ❋ बोलता भया ११ अर्थात् यह बोला कि जो आगे सत्रह श्लोकोंमें कहना है ॥ १४ ॥

अर्जुनउवाच—

पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूतविशेष-सङ्घान् । ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥ १५ ॥

अर्जुनउवाच ॥ देव १ तव २ देहे ३ सर्वान् ४ देवान् ५ तथा ६ भूतविशेषसङ्घान् ७ कमलासनस्थम् ८ ईशम् ९ ब्रह्माणम् १० च ११ सर्वान् १२ ऋषीन् १३ दिव्यान् १५ उरगान् १५ च १६ पश्यामि १७ ॥ १५ ॥ उ० ❋ जैसा विश्वरूप अर्जुनको दीखा उसको कहता है सत्रह श्लोकमें ❋ अ० ❋ हे देव ! १ आपके २ शरीरमें ३ सब देवतोंको ४ । ५ और भूतोंके विशेष समुदायोंको अर्थात् राजादिकोंको ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ । सब १२ वशिष्ठादि ❋ ऋषियोंको १३ दिव्य १४ तक्षकादि ❋ नागोंको १५ भी १६ देखता हूं मैं १७ ❋ टी० ❋ आपकी नाभिमें जो कमल उसपर ब्रह्माजी को विराजमान देखताहूं ॥ १५ ॥

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्त रूपम् । नान्तन्नमध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥ १६ ॥

विश्वेश्वर १ विश्वरूप २ तव ३ न ४ आदिम् ५ पुनः ६ न ७ मध्यम् ८ न ९ अन्तम् १० पश्यामि ११ सर्वतः १२ अनन्तरूपम् १३ त्वाम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१४ अनेक बाहूदरवक्त्रनेत्रम् १५ पश्यामि ॥ १६ ॥ अ० हे विश्वके ईश्वर ! १ हे विश्वरूप ! २ आपका ३ न ४ आदि ५ और ६ न ७ मध्य ८ न ९ अन्त १० देखता हूं ११ सब ओर से १२ अनन्त रूपवाला १३ आपको १४ अनेक हाथ, पेट, मुख नेत्र हैं जिसके १५ ऐसा आपको ❀ देखता हूं ॥ १६ ॥

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम्। पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ता-द्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥ १७ ॥

त्वाम् १ समन्तात् २ किरीटिनम् ३ गदिनम् ४ चक्रिणम् ५ च ६ तेजोराशिम् ७ सर्वतः ८ दीप्तिमन्तम् ९ दुर्निरीक्ष्यम् १० दीप्तानलार्कद्यु-तिम् ११ अप्रमेयम् १२ पश्यामि १३ ॥ १७ ॥ अ० आपको १ सबओ-रसे २ मुकुटवाला ३ गदावाला ४ चक्रवाला ५ और ६ तेजका पुञ्ज ७ सब ओरसे ८ दीप्तिमान् ९ दुःखकरके देखा जाता है अर्थात् उसका दे-खना बहुत कठिन प्रतीत होताहै १० चैतन्य अग्नि सूर्यकी प्रभावत् प्रभाहै उसकी ११ प्रमाण नहीं हो सक्ता उसका कि इस स्वरूपकी इतनी चौ-डाई लम्बाई १२ सि० ऐसा आपको ❀ देखताहूं १३ तुमको 'पश्यामि' यह क्रिया सबके साथ लगती है. जितने त्वाम् एक अंकवाले पदके विशे-षण हैं उनके ॥ १७ ॥

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्। त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सना-तनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥ १८ ॥

त्वम् १ परमम् २ अक्षरम् ३ वेदितव्यम् ४ त्वम् ५ अस्य ६ विश्वस्य ७ परम् ८ निधानम् ९ त्वम् १० अव्ययः ११ शाश्वतधर्मगोप्ता १२ स-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नातनः १३ पुरुषः १४ त्वम् १५ मे १६ मतः १७ ॥ १८ ॥ अ० उ० आपकी यह योगशक्ति देखने से तौ मैं अब यह अनुमान करताहूं कि आप १ परम २ ब्रह्म ३ सि० हो मुमुक्षु करके❀जाननेके योग्य ४ आप ५ सि० ही हो इस ६ विश्वका ७ परम् ८ आसरा ९ भी आपही हो❀और❀आप १० नित्य धर्मके पालन करनेवाले १२ सनातन १३ पुरुष १४ आप १५ ही हो❀मेरी १६ समझसे १७ सि० वेदभी ऐसाही प्रतिपादन करते हैं❀॥ १८ ॥

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् । पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥ १९ ॥

त्वाम् २ पश्यामि २ अनादिमध्यान्तम् ३ अनन्तवीर्यम् ४ अनन्तबाहुम् ५ शशिसूर्यनेत्रम् ६ दीप्तहुताशवक्त्रम् ७ स्वतेजसा ८ इदम् ९ विश्वम् १० तपन्तम् ११ ॥ १९ ॥ अ० आपको १ सि० ऐसा❀देखताहूं मैं २ कि जिसके विशेषण ये हैं❀नहीं है आदि मध्य अन्त जिसका ३ अनन्त पराक्रम है जिसका ४ अनन्त भुजा हैं जिसकी ५ चन्द्र सूर्य नेत्र हैं जिसके ६ जलती हुई लपट उठती हुई अग्नि मुखमें है जिसके ७ अपने तेजकरके ८ इस विश्वको ९ । १० तपातेहुये ११ मुझको दीखते हो ॥ १९ ॥

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः । दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥ २० ॥

महात्मन् १ द्यावापृथिव्योः २ इदम् ३ अन्तरम् ४ एकेन ५ त्वया ६ हि ७ व्याप्तम् ८ सर्वाः ९ दिशः १० च ११ तव १२ इदम् १३ अद्भुतम् १४ उग्रम् १५ रूपम् १६ दृष्ट्वा १७ लोकत्रयम् १८ प्रव्यथितम् १९

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ २० ॥ अ० हे भगवन्! १ आकाश पृथिवीका २ यह ३ अन्तरिक्ष ४ अकेले ५ आप करके ६ ही ७ व्याप्त ८ सि० है और पूर्वादि दशों दिशा १० । ११ भी आप करके व्याप्त होरही हैं. अर्थात् सब जगत् में आपही पूर्ण हो रहे हो❋आप का १२ यह १३ अद्भुत १४ क्रूर १५ रूप १६ देखकर १७ तीनों लोक १८ भयको प्राप्त हैं १९. तात्पर्य ऐसा मैं आपको देखता हूं ॥ २० ॥

अमी हि त्वां सुरसंघा विशन्ति केचिद्भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति । स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः ॥ २१ ॥

अमी १ सुरसंघाः २ त्वाम् ३ हि विशन्ति ५ केचित् ६ भीताः ७ प्राञ्जलयः ८ स्वस्ति ९ इति १० उक्त्वा ११ गृणन्ति १२ महर्षिसिद्धसंघाः १३ पुष्कलाभिः १४ स्तुतिभिः १५ त्वाम् १६ स्तुवन्ति १७ ॥ २१ ॥ अ०❋वे १ देवतोंके समूह २ तुमकोही ३ । ४ प्रवेश होते हैं ५ अर्थात् आपको देवतोंने अपना आश्रय समझ रक्खा है. आपकी शरणको प्राप्त हैं सि० और उनमेंसे❋कोई ६ भयको प्राप्त हुये ७ दोनों हाथ जोड रक्खे हैं जिन्होंने ८ स्वस्ति ९ यह १० सि० शब्द❋कहकर ११ अर्थात् आपका कल्याण भला हो यह कहते हुये आपकी❋प्रार्थना कर रहे हैं १२ अर्थात आपकी जय हो जय हो आप हमारी रक्षा करो. यह कह रहे और❋बडे बडे ऋषीश्वर सिद्धोंके समूह १३ बडे बडे १४ स्तोत्रों करके १५ आपकी १६ स्तुति कर रहे हैं १७ ॥ २१ ॥

रुद्राऽऽदित्या वसवो ये च साध्या विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च । गन्धर्वयक्षाऽसुरसिद्धसंघा वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे ॥ २२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रुद्रादित्यावसवः १ साध्याः २ च ३ ये ४ विश्वे ५ अश्विनौ ६ मरुतः ७ च ८ ऊष्मपाः ९ च १० गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसंघाः ११ च १२ सर्वे १३ एव १४ विस्मिताः १५ त्वाम् १६ वीक्षन्ते १७ ॥ २२ ॥ अ० ❋ ग्यारह रुद्र, बारह सूर्य, आठ वसु १ और साध्य देवता २ । ३ जो ४ हैं ❋ विश्वेदेव ५ अश्विनीकुमार ६ और उनचास मरुद्गण ७ । ८ और पितर ९ । १० और गन्धर्व हूहू हाहादि यक्ष कुबेरादि असुर विरोचनादि सिद्ध कपिल देवादि इन सबके समूह ११ । १२ कहां तक कहूं सब १३ ही १४ आश्चर्य हुये १५ आपको १६ देखते हैं १७ इस प्रकारका रूप मैं आपका देखता हूं ❋ टी० ❋ उष्मपाः पितरोंका नाम इसवास्ते है कि वे गरम गरम भोज भागी हैं जब तक अन्न गरम रहता है और जब तक ब्राह्मण चुपचाप भोजन करता रहे बोले नहीं तब तकही पितर भोजन करते हैं ॥ तदुक्तं ❋ यावदुष्णंभवेदन्नं यावदश्नन्ति वाग्यताः । पितरस्तावदश्नन्तियावन्नोक्ताहविर्गुणाः " ॥ २२ ॥

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं महाबाहो बहुबाहूरुपादम् । बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम् ॥ २३ ॥

महाबाहो १ ते २ महत् ३ रूपम् ४ दृष्ट्वा ५ लोकाः ६ प्रव्यथिताः ७ तथा ८ अहम् ९ बहुवक्त्रनेत्रम् १० बहुबाहूरुपादम् ११ बहुदंष्ट्राकरालम् १२ ॥ २३ ॥ अ० ❋ हे महाबाहो ! १ आपका २ बडा ३ रूप ४ देखकर ५ लोक ६ भयको प्राप्त हो रहे हैं. ७ सि० और जैसे और लोक भयभीत हो रहे हैं ❋ तैसेही ८ मैं ९ सि० भी भयको प्राप्त हूं. क्योंकि वह रूपही आपका ऐसा है कि जिसके ये विशेषण है ❋ बहुत मुख नेत्र हैं जिसके १० बहुत भुजा जंघा चरण हैं जिसके ११ बहुत पेट हैं जिसके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१२ बहुत विकराल कठिन डाढ हैं जिसकी १३ ऐसा आपका रूप है कि जिसको देखकर मैं डराहूं ॥ २३ ॥

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं व्यात्ताननं दीप्तविशाल-नेत्रम् । दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा धृतिं न विन्दामि शमञ्च विष्णो ॥ २४ ॥

विष्णो १ त्वाम् २ नभःस्पृशम् ३ दीप्तम् ४ अनेकवर्णम् ५ व्यात्ता-ननम् ६ दीप्तविशालनेत्रम् ७ दृष्ट्वा ८ हि ९ प्रव्यथितान्तरात्मा १० धृतिम् ११ शमम् १२ च १३ न १४ विन्दामि १५ ॥ २४ ॥ अ० ❋ हे विष्णो ! १ आपको २ आकाशके साथ स्पर्श करता हुआ अर्थात् समस्त आकाशमें व्याप्त ३ तेजरूप ४ अनेकवर्ण वाला ५ फैला हुआ है मुख जिसका ६ प्रज्वलित हो रहे हैं बल रहे हैं बडे बडे नेत्र जिसके ७ ऐसा आपको ❋ देखकर ८ ही ९ बहुत भयको प्राप्त हुआ है. अन्तःकरण मेरा १० और उपशमको १२ । १३ नहीं १४ प्राप्त होता हूं १५ अर्थात् मुझको न धीरज बँधता है न मनमें संतोष होता है ऐसा स्वरूप आपका देख मेरा चित्त घबराता है ॥ २४ ॥

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि दृष्ट्वैव कालानल-सन्निभानि । दिशो न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥ २५ ॥

देवेश १ जगन्निवास २ ते ३ मुखानि ३ कालानलसन्निभानि ५ दृष्ट्वा ६ एव ७ च ८ दंष्ट्राकरालानि ९ दिशः १० न जाने ११ शर्म १२ च १३ न १४ लेभे १५ प्रसीद १६ ॥ २५ ॥ अ० हे देवताओंके ईश्वर ! १ हे जगत् के आश्रय ! २ आपके ३ मुख ४ प्रलयाग्निकी सम ५ देख-कर ६ । ७ कैसेको ९ नहीं १० जानता हूँ. मैं ११ अर्थात् मुझको यही

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं प्रतीत होता कि पूर्व किधर उत्तर किधर पृथिवी कहां आकाश कहां हैं ❋ और सुखको १२ नहीं १३ प्राप्त हू मैं १४ अर्थात् मेरा अन्तःकरण विक्षेपको प्राप्तहै ❋ प्रसन्न हूजीये १५ आप ॥ २५ ॥

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्रा सर्वे सहैवावनिपाल संघैः । भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः ॥ २६ ॥

अमी १ च २ सर्वे ३ धृतराष्ट्रस्य ४ पुत्राः ५ अवनिपालसंघैः ६ सह ७ भीष्मः ८ द्रोणः ९ तथा १० असौ ११ सूतपुत्रः १२ अस्मदीयैः १३ अपि १४ योधमुख्यैः १५ सह १६ त्वाम् १७ एव १८ ॥ २६ ॥ अ० उ० श्रीभगवान्ने कहा था कि इस संग्राम में जो जीतेगा हे अर्जुन ! सो भी देख वही बात अर्जुन देखताहुआ कहताहै पांच श्लोकोंमें ❋ अ० और वे १ । २ सब ३ धृतराष्ट्रके ३ पुत्र ५ राजों के समूह सहित ६ । ७ भीष्मपितामह ८ द्रोणाचार्य ९ और १० वह ११ कर्ण १२ सि० और हमारे १३ भी १४ मुख्य योधाओं के साथ १५ । १६ तुमको १७ ही १८ सि० प्रवेश होते हैं अर्थात् आपके मुखमें प्रवेश होते हैं. इस श्लोकका अगले श्लोकके साथ सम्बन्ध है. तात्पर्य कुछ यह नहीं कि दुर्योधनादि आपके मुखमें प्रवेश होते हैं किन्तु हमारी ओरके भी सब राजा आपके मुखमें दौड दौड प्रवेश होते हैं यह आश्चर्य मैं देखता हूँ ॥ २६ ॥

वक्त्राणि ते त्वरमाणो विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि । केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु संदृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः ॥ २७ ॥

त्वरमाणः १ ते २ वक्त्राणि ३ विशन्ति ४ दंष्ट्राकरालानि ५ भयानकानि ६ केचित् ७ चूर्णितैः ८ उत्तमाङ्गैः ९ दशनान्तरेषु १० विलग्नाः ११ संदृश्यन्ते १२ ॥ २७ ॥ अ० यह सब योधा ❋ दौडे हुये १ आपके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२ मुखोंमें ३ प्रवेश होते हैं ४ सि० कैसे हैं वे मुख कि ❋ कठिन डाढ दांतहैं जिनमें ५ भयानकरूप ६ जो मुखमें प्रवेश होते हैं उनमें ❋ कोई ७ सि० तौ ऐसे हैं कि ❋ चूर्ण होगये हैं शिर जिनके ८। ९ वे ❋ दांतों के बीचमेंही १० लटके हुये ११ दीखते हैं १२ तात्पर्य जैसे अन्न भोजनान्त दांतोंमें रह जाता है (जिसको तिनकेसे निकालते हैं) इस प्रकार बहुत शूरवीर श्रीमहाराजके दांतोंकी सन्धिमें उलझे हुये दीखते हैं॥ २७॥

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगा समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति। तथा तवामी नरलोकवीरा विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति॥ २८॥

यथा १ नदीनाम् २ बहवः ३ अम्बुवेगाः ४ समुद्रम् ५ एव ६ अभिमुखाः ७ द्रवन्ति ८ तथा ९ अमी १० नरलोकवीराः ११ तव १२ अभिविज्वलन्ति १३ वक्त्राणि १४ विशन्ति १५॥ २८॥ अ० उ० अर्जुन दृष्टान्त देते हैं कि इस प्रकार आपके मुखमें प्रवेश होते हैं. जैसे १ नदीके २ बहुत ३ जलका वेग ४ समुद्रके ५ ही ६ सम्मुख ७ दौडता है ८ तैसे ९ वे १० नरलोकवीर ११ आपके १२ सब ओरसे जरते हुये १३ मुखोंमें १४ प्रवेश होते हैं १५ तात्पर्य—आपका मुख तौ सब ओरसे प्रज्वलित हो रहा है उसमें दौड दौड गिरते हैं महाराजके मुखमें सब ओरसे अग्नि जलती हुई प्रतीत होती है जैसे कहते हैं कि दीपक जल रहा है ऐसे यहां कहा कि महाराजका मुख प्रज्वालित होरहा है॥ २८॥

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः। तथैव नाशायविशन्ति लोकास्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः॥ २९॥

यथा १ समृद्धवेगाः २ पतङ्गाः ३ नाशाय ४ प्रदीप्तम् ५ ज्वलनम् ६ विशन्ति ७ तथा ८ एव ९ समृद्धवेगाः १० लोकाः ११ नाशाय १२ अपि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१३ तव १४ वक्त्राणि १५ विशन्ति १६ ॥ २९ ॥ अ० उ० नदीके दृष्टान्तसे तौ यह प्रकट किया कि परवश हुये आपके मुखमें प्रवेश होते हैं अब पतङ्गोंके दृष्टान्तसे यह दिखाताहै कि जानबूझ आपके मुखमें प्रवेश होते हैं बहुत शूर जैसे १ समृद्ध वेग है जिनका अर्थात् शीघ्रचाल है जिनकी दौडते उडते हुये २ छोटे २ जानवर ३ मरनेके लिये ४ प्रदीप्त ५ अग्निमें ६ अर्थात् जलतीहुई अग्नि या दीपककी अग्निमें ❀ प्रवेश होते हैं ७ तैसे ८ ही ९ बडा वेग है जिनका १० सि० ऐसे ❀ लोग शूरवीर ११ मरनेके लिये १२ ही १३ आपके १४ मुखमें १५ प्रवेश होते हैं १६ ॥ २९ ॥

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भिः । तेजोभिरापूर्यजगत्समग्रं भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो ॥ ३० ॥

ज्वलद्भिः १ वदनैः २ समग्रान् ३ लोकान् ४ समन्तात् २ ग्रसमानः ३ लेलिह्यसे ७ विष्णो ८ तव ९ उग्राः १० भासः ११ तेजोभिः १२ समग्रम् १३ जगत् १४ आपूर्य १२ प्रतपन्ति १६ ॥ ३० ॥ अ० ❀ दीप्तिमान् १ मुखोंकरके २ सब लोकोंको ३ । ४ अर्थात् महा महा इन शूरवीरोंको ❀ सब ओरसे ५ ग्रास करतेहुये ६ भलेप्रकार भक्षण कर रहेहो ७ हे पूर्णब्रह्म व्यापक ! ८ आपकी ९ तीव्र १० प्रभा ११ सि० अपने ❀ तेजसे १२ समस्त १३ जगत्को १४ व्याप्त करके १५ जल रही है १६ अर्थात आपके तेजकी किरण सब जगत्में फैलकर जलारही है सब जगत् को चटनीकी तहर चाटरही है. आप ऐसे मुझको दीखतेहो ॥ ३० ॥

आख्याहि मे को भगवानुग्ररूपो नमोस्तु ते देववर प्रसीद । विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ॥ ३१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगवान् १ उग्ररूपः २ कः ३ मे ४ आख्याहि ५ नमः ६ अस्तु ७ देववर ८ प्रसीद ९ भवन्तम् १० आद्यम् ११ विज्ञातुम् १२ इच्छामि १३ तव १४ प्रवृत्तिम् १५ नहि १६ प्रजानामि १७ ॥ ३१ ॥ अ० ❋ आप १ उग्ररूप कौन ३ सि० हो यह ❋ मुझसे ४ कहो ५ मेरा आपको ❋ नमस्कार ६ हो ७ हे देवतों में श्रेष्ठ ! ८ प्रसन्न हो ९ आप आद्य हो अर्थात् सबसे पहले आपही इस बातको १० । ११ भले प्रकार जाननेकी १२ इच्छा करताहूं अर्थात् आदिपुरुष जो आपही आपको भले प्रकार जाना चाहता हूं ❋ आपकी १४ प्रवृत्तिको १५ नहीं १६ जानताहूं १७ अर्थात् यह ऐसा स्वरूप आपने क्यों धारण किया है ॥ ३१ ॥

श्रीभगवानुवाच—

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तु-
मिहप्रवृत्तः। ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे
येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः ॥ ३२ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ लोकक्षयकृत् १ प्रवृद्धः २ कालः ३ अस्मि ४ लोकान् ५ समाहर्तुम् ६ इह ७ प्रवृत्तः ८ त्वाम् ९ ऋते १० अपि ११ ये १२ सर्वे १३ योधाः १४ प्रत्यनीकेषु १५ अवस्थिताः १६ न १७ भविष्यन्ति १८ ॥ ३२ ॥ अ० उ० ❋ हे अर्जुन ! जो तू बूझता है तो सुन कि जो मैं हूं और जिस वास्ते मैंने यह रूप धारण किया है तीन श्लोकोंमें कहते हैं ❋ लोकोंका नाश करनेवाला १ अति उग्र २ काल ३ मैं हूं ४ लोकोंके नाश करनेको ५ । ६ इस लोकमें ७ प्रवृत्त सि० ८ हुआहूं तूने जो बूझाथा कि आप कौनहो और किसवास्ते आपकी यह प्रवृत्ति है सो समझ और सुन ❋ तेरे ९ विना १० भी ११ ये १२ सब १३ योद्धा १४ दोनों सेनामें सि० १५ जो ❋ स्थित हैं १६ नहीं १७ होंगे १८ अर्थात् तू

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो यह शंका करताहै कि मैं इनका मारनेवाला हूं ये सब तेरे विना मारेभी सब मरैंगे जो ये सब दीखते हैं मुझ कालरूपसे कोई भी नहीं बचैगा क्षत्रिय जातिमें तू मेरा भक्त है तुझको तो यह एक यश देताहूं ॥ ३२ ॥

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून्भुंक्ष्व राज्यं समृद्धम्। मयैवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् ॥ ३३ ॥

तस्मात् १ त्वम् २ उत्तिष्ठ ३ यशः ४ लभस्व ५ शत्रून् ६ जित्वा ७ समृद्धम् ८ राज्यम् ९ भुंक्ष्व १० एते ११ एव १२ पूर्वम् १३ एव १४ मया १५ निहताः १६ सव्यासाचिन् १७ निमित्तमात्रम् १८ भव १९ ॥ ३३ ॥ ❋ अ० ❋ तिस कारणसे १ तू २ खडा हो ३ युद्धके लिये ❋ यशको ४ प्राप्त हो ५ जो भीष्मपितामह द्रोणादि देवतोंसे भी जीते न जावें उनको अर्जुनने जीता इस यशको प्राप्त हो पीछे उसके ❋ वैरियों-को ६ जीतकर ७ पदार्थोंका भराहुआ ८ राज्य ९ भोग १० ये ११ तो १२ पहले १६ ही १४ मैंने १५ मार रक्खे हैं १६ हे अर्जुन ! १७ निमित्तमात्र १८ होजा तू १९ अर्थात् इनका तो काल आपहुँचा प्रत्यक्ष देखताहै तू कि यह कालके मुखमें अपने आप दौडे जाते हैं. तूतो केवल एक नाममात्र मारनेवाला हो यश लेले ❋ टी० बायें हाथसे भी अर्जुन धनुष खैंचकर तीर चलाता था, सइ वास्ते अर्जुनका नाम सव्यसाची है ॥ ३३ ॥

द्रोणं भीष्मं च चयद्रथं च कर्णं तथान्यानपि योधवीरान्। मया हतांस्त्वज्जहि माव्यथिष्ठा युद्ध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान् ॥ ३४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्रोणम् १ च २ भीष्मम् ३ च ४ जयद्रथम् ५ च ६ कर्णम् ७ तथा ८ अन्यान् ९ अपि १० योधामुख्यान् ११ मया १२ हतान् १३ त्वम् १४ जहि १५ मा व्यथिष्ठाः १६ युध्यस्व १७ रणे १८ सपत्नान् १९ जेता २० असि २१ ॥ ३४ ॥ अ० उ० ❀ पीछे हे अर्जुन ! तुमने यह कहाथा कि मैं यह नहीं जानता ये हमको जीतेंगे या हम इनको वह अब सब तूने प्रत्यक्ष देखलिया कि बेसन्देह तूही जीतेगा ❀ अ० ❀ द्रोणाचार्य १ । २ और भीष्मपितामह ३। ४ और जयद्रथ ५। ६ कर्ण ७ तैसेही ८ औरोंकी ९ भी १० सि० कि जो जो ❀ योद्धामुख्य है ११ सि० इन सब ❀ मेरे १२ मारेहुओं को १६ तू मार १५ भय मतकर १६ सि० इनके साथ ❀ युद्ध कर १७ रणमें १८ वैरियोंको १९ जीतेगा तू २० । २१ ॥ ३४ ॥

संजय उवाच—

एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी। नमस्कृत्वा भूय एवाहकृष्णं सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य ॥ ३५ ॥

संजय उवाच ॥ किरीटी १ केशवस्य २ एतत् ६ वचनम् ४ श्रुत्वा ५ कृताञ्जलिः ६ वपेमानः ७ नमः८ कृत्वा ९ आह १० भूयः११ एव १२ भीतभीतः १६ सगद्गदम् १४ कृष्णम् १५ प्रणम्यम् १६ ॥ ६४ ॥ अ० उ० ❀ सञ्जय धृतराष्ट्रसे कहता है कि हे राजन् ! ❀ अ० ❀ मुकुटवाला अर्जुन १ भगवान्का २ यह ३ वचन ४ सुनकर ५ करी है अञ्जलि जिसने ६ अर्थात् दोनों हाथ जोड़े हुये ❀ कम्पता हुआ ७ नमस्कार ८ करके ९ बोला १० फिर ११ भी १२ बहुत रडताहुआ १३ गद्गद कण्ठ हो रहाहै जिसका १४ श्रीकृष्णजीको १५ प्रणाम करके १६ सि० यह बोला कि जो आगे ग्यारह श्लोकोंमें कहना है. तात्पर्य—वारंवार "नमो नमो नारायणाय" यह कहकर स्तुति करता है ॥ ३५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्जुन उवाच—

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च । रक्षांसि भीतानि दिशोद्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः ॥ ३६ ॥

अर्जुन उवाच ॥ हृषीकेश १ तव २ प्रकीर्त्या ३ जगत् ४ प्रहृष्यति ५ अनुरज्यते ६ च ७ भीतानि ८ रक्षांसि ९ दिशः १० द्रवन्ति ११ सर्वे १२ च १३ सिद्धसंघाः १४ नमस्यन्ति १५ स्थाने १६ ॥ ३६ ॥ अ० हृषीक नाम इन्द्रियोंका हैं. इन्द्रियोंका जो स्वामी प्रेरक अन्तर्यामी उसको हृषीकेश कहते हैं. अर्जुन कहता है कि हे श्रीकृष्णचन्द्रजी ! १ सि० आपकी २ प्रकीर्ति करके ३ अर्थात् आपका माहात्म्य कहने सुननेसे ❀ जगत् आनन्दित होता है और अनुरागको प्राप्त होता हैं अर्थात् आप में जगत ४ प्रीति करता है ५ । ६ । ७ सि० और ❀ डरते हुये ८ राक्षस ९ पूर्वादि दिशाओं को १० दौडते हैं ११ सि० कोई पूर्वको कोई उत्तरको भागताहै ❀ और सब १२ । १३ सिद्धोंके समूह १४ सि० आपको ❀ नमस्कार करते हैं १५ यह सब युक्त है १६ अर्थात् यह बात ऐसी ही चाहिये १६ ॥ ३६ ॥

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन् गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे । अनन्तदेवेशजगन्निवास त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् ॥ ३७ ॥

महात्मन् १ अनन्त २ देवेश ३ जगन्निवास ४ कस्मात् ५ ते ६ न ७ नमेरन् ८ ब्रह्मणः ९ अपि १० गरीयसे ११ च १२ आदिकर्त्रे १३ यत् १४ सत् १५ असत् १६ परम् १७ अक्षरम् १८ तत् १९ त्वम् २० ॥ ३७ ॥ ❀ उ० ❀ आपको नमस्कार करनेमें ये नव हेतु हैं फिर यह कब हो सक्ता है कि यह सब जगत आपको नमस्कार न करै ❀

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अ० ❋हे महात्मन्! १ हे अनन्त! २ हे देवेश! ३ हे जगन्निवास! ४ किस हेतुसे ५ आपको ६ नहीं ७ नमस्कार करैं ८ सि० आपके सामने नम्र होनेमें चार हेतु तो मैंने कहे कि आप महात्मा हो अनन्त देवेश जगत् का आसरा हो और पांच मुनिये प्रथम यह कि आप ब्रह्माजी के ९ भी १० गुरुतर ११ सि० हो दूसरे यह कि ब्रह्माजीके कर्ता भी आपही हो. इसी वास्ते १२ आपको ❋ आदिकर्त्ता १३ कहते हैं तुम्हारे अर्त्य नमस्कार हो आदिकर्त्रे और गरीयसे ये दोनों ❋ते ❋छठें अंकवाले पदके विशेषण हैं. तीनों पदोंमें चतुर्थी विभक्ति है सोई अर्थ समझना चाहिये ❋तीसरे यह कि ❋जो १४ सत् व्यक्त १५ असत् अव्यक्त १६ और इन दोनोंसे ❋परे १७ सि० जो ❋अक्षर ब्रह्म १८ सो १९ आप २० ही हो अर्थात् तीसरे यह कि जो व्यक्त मूर्तिमान् हो सो भी आपहो यह कि जो अव्यक्त स्वरूप आपका है सो भी आपहो. पांचवें यह कि जो व्यक्त और अव्यक्तसे परे अक्षर पूर्णब्रह्म शुद्धसच्चिदानन्द है सो भी आपहो ॥ १८ ॥ ३७ ॥

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परंनिधानम्। वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप॥ ३८॥

त्वम् १ आदिदेवः २ पुराणः ३ पुरुषः ४ त्वम् ५ अस्य ६ विश्वस्य ७ परंनिधानम् ८ वेत्ता ९ असि १० वेद्यम् ११ च १२ परम् १३ च १४ धाम १५ त्वया १६ विश्वम् १७ ततम् १८ अनन्तरूप १९ ॥ ३८ ॥ अ० उ० ❋और आपके सामने नम्र होनेमें सात हेतु और भी ये हैं. प्रथम यह कि ❋आप १ आदिदेव २ पुराण ३ पुरुष ४ सि० हो दूसरे यह कि ❋आप ५ इस विश्वके ६ । ७ लयका स्थान ८ सि० हो ❋ अर्थात् प्रलय समय यह सब जगत् मायोपहित आपके स्वरूपमेंही लय हो जाता है. सि० तीसरे यह कि सब पदार्थोंके ❋ जाननेवाले ९ हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आप १० चौथे यह कि ❀ जाननेके योग्य ११ भी १२ सि० आपहीहो अर्थात् आपकाही जानना श्रेष्ठ है और सब पाण्डिताई वृथा है. पांचवें यह कि ❀ परमधामभी १३ । १४ । १५ सि० अर्थात् परमहंसोंका पदभी आपही हो छठे यह कि ❀ आप करके १६ यह समस्त ❀ विश्व १७ प्राप्त १८ सि० हो रहा हैं. सातवें यह कि आप ❀ अनन्तरूप १९ सि० हो हे अनन्त देव! इन हेतु करके आप हमारे पूज्य हो इस वास्ते हम आपको वारंवार नमस्कार करते हैं ॥ ३८ ॥

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च॥ नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोपि नमो नमस्ते ॥ ३९ ॥

वायुः १ यमः २ अग्निः ३ वरुणः ४ शशाङ्कः ५ प्रजापतिः ६ प्रपितामहः ७ त्वम् ८ ते ९ नमः १७ नमः ११ च १२ अस्तु १३ सहस्रकृत्वः १४ भूयः १५ च १६ अपि १७ पुनः १८ ते १९ नमः २० नमः २१ ॥ ३९ ॥ अ० उ० ❀ अनन्त सातवें हेतुका इस श्लोकमें विस्तार करके कहता है ❀ अ० ❀ पवन १ यमराज २ अग्नि ३ वरुण ४ चन्द्रमा ५ ब्रह्मा ६ ब्रह्माके भी पितामह ७ आप ८ सि० हो अर्थात् आप असंख्यात रूप हो ❀ आपको ९ वारंवार नमोनमः १० । ११ । १२ हो १३ हजारबार १४ फिरभी १५ । १६ । १७ वारंवार १८ आपको १९ नमोनमः २० । २१ अर्थात् जैसे आप अनन्तरूप हो वैसेही मेरी अनन्त नमस्कार हैं. असंख्यात (वारंवार) नमस्कार करनेसे अति श्रद्धाभक्ति श्रीमहाराजमें प्रकट करता है ॥ ३९ ॥

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व । अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥ ४० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्व १ पुरस्तात् २ ते ३ नमः ४ अथ ५ पृष्ठतः ६ ते ७ नमः ८ अस्तु ९ सर्वतः १० एव ११ अनन्तवीर्य १२ त्वम् १३ अमितविक्रमः १४ सर्वम् १५ समाप्नोषि १६ ततः १७ सर्वः १८ असि १९ ॥ ४० ॥ अ० उ० फिरभी और प्रकारसे नमस्कार करता हुआ श्रीमहाराजकी स्तुति करता है. हे सर्व ! १ अर्थात् सर्वरूप सबके आत्मापूर्वकी ओरसे २ आपको ३ नमस्कार ४ और ५ पिछली ओरसे ६ आपको ७ नमस्कार ८ हो ९ सब ओर से १० ही ११ आपको नमस्कार करता हूं इत्यभिप्रायः ❀ हे अनन्तवीर्य ! १२ आप १३ बेमर्याद पराक्रमवाले १४ हो ❀ सब १५ जगत्में ❀ भले प्रकार आप व्याप्त हो १६ तिस कारणसे १७ सर्वरूप १८ आप हो १९ टी० कोई कोई वीर्यवान् अर्थात् बलवान् होते हैं परन्तु समयपर पराक्रम नहीं करते. वीर्य और विक्रम पराक्रम शब्दोंमें यह भेद इस जगह समझना. तात्पर्य—यह है कि श्रीभगवान् अनन्तवीर्य भी हैं और अनन्तपराक्रमवाले भी हैं ॥ ४० ॥

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति। अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥ ४१ ॥

सखा १ इति २ मत्वा ३ प्रसभम् ४ यत् ५ उक्तम् ६ हे कृष्ण ७ हे यादव ८ हे सखे ९ इति १० अजानता ११ तव १२ इदम् १३ महिमानम् १४ मया १५ प्रमादात् १६ वा १७ प्रणयेन १८ अपि १९ ॥ ४१ ॥ अ० उ० अर्जुन श्रीकृष्णचन्द्र महाराजको पहले सदासे अपना सखा समझता था. हँसी चौहलके समय जो चाहता था सोई कह देता था. अब श्रीमहाराजकी यह महिमा देख उस अपराधको क्षमा कराता है. दो श्लोकोंमें सि० आपको प्राकृतवत् अपना ❀ सखा १ ही २ समझकर ३ हठपूर्वक ४ जो ५ सि० मैंने ❀ कहा ६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सि० सो आप क्षमा कीजिये. क्या क्या कहा मैंने सो सुनो❀ हे कृष्ण ! ७ मेरा कहा नहीं मानता. इस प्रकार आधा नाम लेकर आपको बोला❀ हे यादव ! ८ सि० यहां नहीं आता❀ हे सखा ! ९ तू क्या करता है. इसप्रकार १० सि० प्राकृतोंकी तरह आपको संबोधन किया❀ नहीं जाननेवाला मैं ११ आपकी १२ इस महिमाका १३ । १४ था अर्थात् इस आपकी महिमा को मैं नहीं जानता था इसहेतुसे❀ मैंने १५ प्रमादसे १६ आपको ऐसा कहा❀ अथवा १७ स्नेहसे १८ भी १९ ऐसा कहना बनसक्ता है ॥ ४१ ॥

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासनभोजनेषु । एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ॥ ४२ ॥

भोजनेषु १ एकः २ अथवा ३ तत्समक्षम् ४ अपि ५ अवहासार्थम् ६ यत् ७ च ८ असत्कृतः ९ असि १० अच्युत ११ तत् १२ त्वाम् १३ अहम् १४ क्षामये १५ अप्रमेयम् १६ ॥ ४२ ॥ अ० उ० विहार शय्या आसन भोजनके समय १ अकेले २ अथवा ३ तिन मित्रोंके सामने ४ भी ५ आपके और अपने हँसानेकेलिये ६ जो ७ जो ८ असत्कार कियाहै ९ । १० सि० मैंने आपका❀ हे निर्विकार ! ११ सो १२ आपसे १३ मैं १४ क्षमा कराता हूं १५ सि० आप क्षमा कीजिये. कैसे हैं आप कि❀ नहीं है प्रमाण आपका १६ अर्थात् आप अप्रमेय हो १६ आपकी महिमाका पारावार नहीं इत्यभिप्रायः. आपकी लीला चरित्रोंमें जो तर्क करते हैं वे बडे मूर्ख हैं. आप अचिन्त्यशक्तिमान् हो. टी० सैर करना खेलना इत्यादि क्रियाको विहार कहते हैं. पलँगपर लेटना, उस समयको शय्याका समय कहते हैं. मसनद गद्दी तकिये लगेहुये बिछौने पर बैठना उसको आसनका समय कहते हैं. भोजनका समय प्रसिद्ध स्पष्ट है. इन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समयमें अर्जुन व्रजचन्द्र भी औरों के सामने चौहल हँसी किया करताथा. श्रीमहाराज कभी चुप होजाते थे. कभी आपभी छेड छाड करने लगतेथे. इस भक्तिकी महिमाके प्रतापपर और मेरे इस संक्षेप लिखने पर सोचना चाहिये, कि निर्भाग यह माहात्म्य भगवत्का सुनते भी हैं. परन्तु संसारसे छूटकर नारायणके चरणकमलोंमें प्रीति नहीं करते. न जानिये, फिर कौनसा मुहूर्त आवेगा जिसदिन भगवत्में ऐसे श्रोताओंकी प्रीति होगी ॥ ४२ ॥

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् । न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभावः ॥ ४३ ॥

अस्य १ चराचरस्य २ लोकस्य ३ त्वम् ४ पिता ५ असि ६ पूज्यः ७ च ८ गुरुः ९ गरीयान् १० त्वत्समः ११ न १२ अस्ति १३ अन्यः १४ अभ्यधिकः १५ कुतः १६ अप्रतिमप्रभावः १७ लोकत्रये १८ अपि १९ ॥ ४३॥ अ० उ० श्रीभगवान्का अचिन्त्य प्रभाव निरूपण करता है. इस १ चराचर २ लोकके ३ आप ४ जनक ५ हो ६ और पूजनेके योग्य ७ । ८ गुरुः ९ गुरुतर १० सि० भी आप हो. जिससे एक अक्षरभी सीखा जावे उसको भी गुरु कहते हैं. या जिससे कोई लौकिक विद्या सीखी जाय. पुरोहित संस्कार करानेवालेको भी गुरु कहते हैं. एक कुलगुरु होते हैं जैसे इन दिनोंमें कण्ठी बांधनेका रिवाज प्रचार है. कण्ठी बंधभी गुरु कहलाते हैं और एक सद्गुरु होते हैं कि जो जिज्ञासुका अज्ञान संशय विपर्य्यय अपने ज्ञानके प्रतापसे दूर करके परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त करते हैं. ऐसे गुरुतर दुर्लभ हैं. श्रीसदाशिवजी कहते हैं कि हे पार्वतीजी! धनके हरनेवाले गुरु बहुत हैं. शिष्यका सन्ताप हरनेवाले गुरुतर दुर्लभ हैं ❀ तदुक्तम् " गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः । दुर्लभः स गुरुर्देवि शिष्यसन्तापहारकः ॥ " अर्जुन कहताहै कि महाराज ❀ आपके समान ११ नहीं १२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है १३ सि० कोई भी फिर ❋दूसरा १४ अधिक १५ कहांसे १६ हो❋हे अनुपमप्रभाववाले ! १७ तीन लोकमें १८ भी १९ सि० कोई न आपके सदृश न आपसे अधिक. जैसा आपका प्रभाव है ऐसा प्रभाववाला कोई उपमाकेवास्ते भी नहीं ॥ ४३ ॥❋

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादयेत्वा महमीशमीड्यम् । पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रिय प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥ ४४ ॥

तस्मात् १ त्वाम् २ अहम् ३ प्रसादये ४ ईशम् ५ ईड्यम् ६ कायम् ७ प्रणिधाय ८ प्रणम्य ९ पुत्रस्य १० पिता ११ इस १२ सख्युः १३ सखा १४ इव १५ प्रियः १६ प्रियायाः १७ देव १८ सोढुम् १९ अर्हसि २० ॥४४॥ अ० ❋ अनजान में मुझसे दोष हुआ तिस कारणसे १ आपको २ मैं ३ प्रसन्न कर्त्ता हूं ४ सि० आप❋ईश्वर ५ स्तुति करनेके योग्य हैं ६ इस वास्ते❋शरीरको ७ नीचा झुकाकर ८ बहु नम्र होकर ९ सि० आपसे यह प्रार्थना करता हूं कि❋पुत्रका १० सि० अपराध❋पिता ११ जैसे १२ मित्रका १३ सि० अपराध❋मित्र १४ जैसे १५ पुरुष १६ स्त्रीका १७ सि० अपराध जैसे क्षमा करता है इसीप्रकार❋हे देव ! १८ मेरा पिछला अपराध❋क्षमा करनेको १९ योग्य हो आप २० अर्थात् पीछे मुझसे जो जो दोष हुये आप कृपा करके अब क्षमा कीजिये. आपसे मैं इस समय बहुत डरता हूं. अब कभी आपकी हँसी नहीं करूंगा न औरोंसे कराऊंगा इत्यभिप्रायः ॥ ४४ ॥

अदृष्टपूर्व्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ॥ तदेव मे दर्शय देव रूपं प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥ ४५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देव १ देवेश २ जगन्निवास ३ तत् ४ एव ५ रूपम् ६ मे ७ दर्शय ८ प्रसीद ९ अदृष्टपूर्वम् १० दृष्ट्वा ११ हृषितः १२ अस्मि १३ भयेन १४ च १५ मे १६ मनः १७ प्रव्यथितम् १८ ॥ ४५ ॥ ❋ अ० उ० ❋ अपराध क्षमा कराके प्रार्थना करता है. इस प्रकार अब आज्ञा नहीं करता है, कि मेरे रथको दोनों सेनाके बीचमें खड़ा करो. हे देव ! १ हे देवेश ! २ हे जगन्निवास ! ३ सोई ४ । ५ रूप ६ मुझको ७ दिखाइये ८ सि० कि जो श्यामसुन्दर रूप पहले मैंने देखा था ❋ आप प्रसन्न हो जाइये ९ नहीं देखाथा पहले मैंने १० सि० यह रूप आपका इस वास्ते जो इसको ❋ देखकर ११ आनन्दित होता हूं मैं १२ । १३ सि० परन्तु इस रूपसे भय करके १४ । १५ मेरा १६ मन १७ डरता है १८ सि० भय इस वास्ते लगता है कि आप कालरूप भयंकर मूर्त्तिमान् हो रहे हैं ❋ ॥ ४५ ॥

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव । तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्त्ते ॥ ४६ ॥

सहस्रबाहो १ विश्वमूर्त्ते २ तथा ३ एव ४ किरीटिनम् ५ गदिनम् ६ चक्रहस्तम् ७ त्वाम् ८ अहम् ९ द्रष्टुम् १० इच्छामि ११ तेन १२ एव १३ चतुर्भुजेन १४ रूपेण १५ भव १६ ॥ ४६ ॥ अ० उ० माधुर्यरूप श्रीमहाराजका अर्जुन सदा जो देखा करताथा उसीको देखा चाहताहै हे सहस्रबाहो ! १ हे विश्वमूर्त्ते ! २ तैसे ३ ही ४ किरीटवाला ५ गदावाला ६ चक्र है हाथमें जिनके ७ सि०ऐसा ❋ आपको ८ मैं ९ देखने की १० इच्छा करता हूं ११ तिस तिसही १२ । १३ चतुर्भुजरूपवाले १४ । १५ हो जाइये १६ अब इस हजारों भुजावाले विश्वरूपको शान्त कीजिये. अर्जुन को सदा श्रीकृष्णचन्द्र महाराज चतुर्भुज दीखा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करते थे. अर्जुन उसी रूपका उपासक है इसवास्ते अर्जुको वही रूप प्यारा लगता है ॥ ३६ ॥

श्रीभगवानुवाच—

मयाप्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्म-योगात् । तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं यन्मे त्वद-न्येन न दृष्टपूर्वम् ॥ ४७ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ अर्जुन १ मया २ प्रसन्नेन ३ आत्मयोगात् ४ तव ५ इदम् ६ यत् ७ मे ८ आद्यम् ९ अनन्तम् १० तेजोमयम् ११ परम् १२ विश्वम् १३ रूपम् १४ दर्शितम् १५ त्वदन्येन १६ न १७ दृष्टपूर्वम १८ ॥ ४७ ॥ अ० श्रीभगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन ! १ मैंने २ प्रसन्न होकर ३ अपने योग से ४ तुझको ५ यह ६ जो ७ अपना ८ आदि ९ अनन्त १० तेजोमय ११ परम १२ विश्वरूप १३ । १४ दिखाया १५ सि० सिवाय तेरे अर्थात् सिवाय तुझ सदृश भक्तोंके १६ नहीं १७ देखा है पहले १८ सि० किसी अभक्तने. योगमायादि अनेक अचिन्त्य शक्ति हैं श्रीमहाराज व्रजचन्द्रमें उन शक्तियोंकरके जब चाहैं विश्वरूप दिखा सक्ते हैं ॥ ४७ ॥

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैर्न च क्रियाभिर्न तपो-भिरुग्रैः । एवं रूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर ॥ ४८ ॥

कुरुप्रवीर १ नृलोके २ त्वदन्येन ३ एवम् ४ अहम् ५ रूपः ६ द्रष्टुम् ७ न ८ वेदयज्ञाध्ययनैः ९ न १० दानैः ११ नच १२ क्रियाभिः १३ न १४ उग्रैः १५ तपोभिः १६शक्यः १७ ॥ ४८ ॥ अ० उ० यह मेरा विश्व-रूप विना मेरी कृपाके वेदोक्त कर्म्मोंका अनुष्ठान करनेसे कोई नहीं देख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सक्ता. हे अर्जुन ! १ मर्त्यलोकमें २ सिवाय तेरे ३ इस प्रकार ४ मेरा ५ रूप ६ देखनेको ७ न ८ वेद यज्ञोंका अध्ययन करके ९ न १० दान करके ११ न १२ क्रियाकरके १३ न १४ अत्यन्त तप करके १५।१६ कोई ❋ समर्थ १७ हुआ, न होगा ❋ टी० यज्ञ एक विद्या है उस विद्याका नाम यज्ञभी है ॥ ४८ ॥

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृङ्ममेदम् । व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य ॥ ४९ ॥

ईदृक् १ मम २ इदम् ३ घोरम् ४ रूपम् ५ दृष्ट्वा ६ ते ७ व्यथा ८ मा ९ विमूढभावः १० च ११ मा १२ व्यपेतभीः १३ प्रीतमनाः १४ पुनः १५ त्वम् १६ मे १७ तत् १८ एव १९ रूपम् २० इदम् २१ प्रपश्य २२ ॥ ४९ ॥ अ० उ० ❋ श्री भगवान्ने विश्वरूपकी बहुत स्तुति भी करी परन्तु अर्जुनका डर न गया. तब श्री महाराजने अर्जुनसे कहा कि हे अर्जुन ! क्यों डरता है ? फिर वही श्यामसुन्दर स्वरूप जो प्यारा लगता है देख. इस प्रकार १ मेरा २ यह ३ घोर ४ रूप ५ देखकर ६ तुमको ७ व्यथा ८ मत ९ हो और मूढता १० । ११ मत १२ हो. मूढतासे दुखः भय होता है. भय दूर कर १३ मनमें प्रीति कर १४ फिर १५ तू १६ मेरा १७ सोई १८।१९ रूप २० यह २१ देख २२. यह कहकर श्रीभगवान् उसी समय श्यामसुन्दर स्वरूप हो गये कि जो अर्जुनको प्रिय लगाता था ॥ ४९ ॥

संजय उवाच—

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः । आश्वासयामास च भीतमेनं भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा ॥ ५० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संजय उवाच ॥ वासुदेवः १ इति २ अर्जुनम् ३ उक्त्वा ४ भूयः ५ तथा ६ स्वकम् ७ रूपम् ८ दर्शयामास ९ पुनः १० च ११ महात्मा १२ सौम्यवपुः १३ भूत्वा १४ एनम् १५ भीतम् १६ आश्वासयामास १७ ॥ ५० ॥ अ० उ० संजय धृतराष्ट्रसे कहता है कि हे राजन्! श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने फिर अपना वही सुन्दरस्वरूप अर्जुनको दिखाया. वासुदेव १ इस प्रकार २ अर्जुनसे ३ कह कर ४ जैसे पाहिले थे किरीटादियुक्त❀ फिर ५ तैसेही ६ अपना ७ रूप ८ दिखाते भये ९ और फिर करुणाकर १२ शान्त प्रसन्नरूप १३ होकर १४ इस भगवान्को १५ । १६ अर्थात् अर्जुनको ❀ आश्वास करते भये १७. तात्पर्य— श्रीभगवान्जीने कहा कि हे अर्जुन ! अब डर मतकर प्रसन्न हो ॥ ५० ॥

अर्जुन उवाच—

दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन ।
इदानीमास्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिङ्गतः ॥ ५१ ॥

अर्जुन उवाच ॥ जनार्दन १ तव २ इदम् ३ सौम्यम् ४ मानुषं ५ रूपम् ६ दृष्ट्वा ७ इदानीम् ८ सचेताः ९ संवृत्तः १० अस्मि ११ प्रकृतिम् १२ गतः १३ ॥ ५१ ॥ अ० उ० अर्जुन श्रीमहाराजसे कहता है कि हेजनार्दन १ आपका २ यह ३ शान्त ४ मनुष्य ५ रूप ६ देखकर ७ अब ८ प्रसन्नचित्त ९ हुआ १० हूं मैं ११ सि० और अपने ❀ स्वभावको १२ प्राप्त हुआ १३ ॥ ५१ ॥

श्रीभगवानुवाच—

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकांक्षिणः ॥ ५२ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ इदम् १ यत २ मम ३ रूपम ४ दृष्टवान् ५ असि ६ सुदुर्दर्शम् ७ अस्य ८ रूपस्य ९ देवाः १० अपि ११ नित्यम् १२ दर्शनकाक्षिणः १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection, Digitized by eGangotri

॥ ५२ ॥ ❀ अ० ❀ श्रीभगवान् कहते सि० कि हे अर्जुन! ❀ यह १ जो २ मेरा ३ रूप ४ देखा है ५ तुमने ६ सि० इसका ❀ देखना बहुत कठिन है ७ इस ८ रूपको ९ देवता १० भी १ सदा १२ दर्शनकी इच्छावाले १३ सि० रहते हैं अर्थात् देवता भी इस रूपके देखनेकी सदा इच्छा करत हैं ११। १२। १३ सि० परन्तु यह विश्वरूप उनको दीखता नहीं ॥ ५२ ॥

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा॥ ५३॥

यथा १ माम् २ दृष्टवान् ३ असि ४ एवंविधः ५ अहम् ६ न ७ वेदैः ८ न ९ तपसा १० न ११ दानेन १२ नच १३ इज्यया १४ द्रष्टुम् १५ शक्यः १६ ॥ ५३॥ ❀ अ० उ० यह दर्शन बहुत दुर्लभ था कि जो तुमने देखा सोई कहते हैं. जैसा १ मुझको २ देखा ३ है तुमने ४ इस प्रकारका ५ मुझको ६ न ७ वेदोंकरके ८ न ९ तप करके १० न ११ दान करके १२ और न १३ यज्ञ करके १४ देख १५ सक्ता है १६ कोई. तात्पर्य—भगवत्के दर्शनमें भक्ति मुख्य साधन है; तप दानादि गौण साधन हैं ॥ ५३ ॥

भक्त्या त्वनन्यया शक्यो ह्यहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुन्द्रष्टुञ्च तत्त्वेन प्रवेष्टुञ्च परन्तप॥ ५४॥

अर्जुन १ परन्तप २ हि ३ एवंविधः ४ अहम् ५ अनन्यया ६ भक्त्या ७ तु ८ तत्त्वेन ९ ज्ञातुम् १० द्रष्टुम् ११ च १२ प्रवेष्टुम् १३ च १४ शक्यः १५ ॥ ५४ ॥ अ० उ० अनन्यभक्ति करके भगवत्का स्वरूप देखा जाता है, जाना जाता है, प्राप्त होता है, सोई कहते हैं श्रीभगवान्—हे अर्जुन! १ हे परन्तप! २ निश्चय ३ इस प्रकार ४ अर्थात् जैसा विश्वरूप पीछे दिखाया ❀ मुझको ५ अनन्य ६ भक्ति- करके ७ तो ८ परमार्थसे ९ जाननेको १० और देखनेको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

११ । १२ और सि० प्रवेश होनेको १३ । १४ शक्य १५ है. टी० औरोंको अपने तपके सामने तपानेवाला अर्थात् अर्जुनके तपको देखकर अन्य राजा मनमें तपा करते थे कि—हाय ! ऐसा तप हमारा नहीं कि जैसा अर्जुनका है, कि जिस तपके प्रतापसे प्रभु अर्जुनको अपना परम प्यारा मित्र समझकर उसकी इच्छाके अनुसार वर्तते हैं. परमार्थसे भगवत्का जानना यह है, कि परमेश्वर निराकार नित्यमुक्त निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म मुझसे अभिन्न हैं और देखना यह है, कि आत्माको पूर्वोक्त विशेषणोंकरके विशिष्ट साक्षात् अपरोक्ष देखना, अनुमानादि प्रमाणोंकरके देखना और सावयव मूर्त्तिमान्का देखना नहीं कहलाता और प्रवेश होना यह है, कि अविद्या कार्यके सहित नाश होजावै पीछे शुद्धपरमानन्दस्वरूप रहजाना यही परमेश्वरमें प्रवेश होना है. ऐसा नहीं समझना कि, ज्योतिमें ज्योति जा मिलती है. जैसे थोडा जल समुद्रमें जाकर प्रवेश होजाता है. यह नहीं समझना ॥ ५४ ॥

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः ।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ॥ ५५ ॥

पाण्डव १ यः २ मद्भक्तः ३ मत्कर्मकृत् ४ मत्परमः ५ सङ्गवर्जितः ६ सर्वभूतेषु ७ निर्वैरः ८ सः ९ माम् १० एति ११ ॥ ५५ ॥ ❀ अ० उ० सब शास्त्र साधनों का सार मुक्तिके साधन कहते हैं, हे अर्जुन ! १ जो २ मेरा भक्त ३ मेरे अर्थ कर्म करता है ४ मैं ही हूं परम पुरुषार्थ जिसके ५ पुत्रादिमें आसक्तिरहित ६ सब भूतोंमें ७ निर्वैर ८ सो ९ मुझको १० प्राप्त होता है. ११ तात्पर्य जो कर्म करना सो भगवत्में प्रीति बढने के लिये करना. प्राणीमात्रसे वैर नहीं करना इति सिद्धान्तः ॥ ५५ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विश्वरूपदर्शनो नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ अथ द्वादशोऽध्यायः ॥

अर्जुन उवाच—

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्य्युपासते।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥ १॥

अर्जुन उवाच ॥ एवम् १ सततयुक्ताः २ ये ३ भक्ताः ४ त्वाम् ५ पर्युपासते ६ ये ७ च ८ अपि ९ अक्षरम् १० अव्यक्तम् ११ तेषाम् १२ के १३ योगवित्तमाः १४ ॥ १ ॥ अ० उ० अर्जुन कहता है, सि० कि हे नारायण ! ❀ इस प्रकार १ सदायुक्तहुये २ जो ३ भक्त ४ आपकी ५ उपासना करते हैं ६ और जो ७ । ८ निश्चय ९ अक्षर १० अव्यक्त की ११ सि० उपासना करते हैं ❀ तिनमें १२ कौनसे १३ योगवित्तम हैं ? १४ टी० कोई तौ आपको शिव, विष्णु, रामकृष्णादि मूर्त्तिमान् समझते हैं और कोई विश्वरूप, विराट् हिरण्यगर्भ और कोई कर्महीको आपका रूप समझते हैं. कोई अंश अंशीभावसे आपकी उपासना करता है. कोई पुरुष ईश्वरादि जानकर जिस प्रकार कि प्रथम अध्यायसे लेकर ग्यारहवें तक आपने उपदेश किया. इस प्रकार सदा आपके उपदेशका अनुष्ठान करते हैं इसीको उपासना कहते हैं जो भक्त आपकी ऐसी उपासना करते हैं,अर्थात् किसीकी सांख्य पातञ्जल योगमें निष्ठा है किसीकी शाण्डिल्यविद्यामें निष्ठा है अनुक्तभी आपकी उपासनाके बहुत मार्ग हैं अर्थात् जो मैंने नहीं कहे. अब इस अध्यायमें और यह भी निश्चय है कि बहुत महात्मा आपको निर्गुण नित्यमुक्त अद्वैत समझकर आप की उपासना करते हैं और चतुर्थादि अध्यायोंमें आपने श्रीमुखसे निर्गुण उपासकों को आर्त्तादि सब भक्तोंसे विशेष श्रेष्ठ कहा और कर्म्मनिष्ठ योगियोंकी सगुण ब्रह्मके उपासकोंकी भी आपने बहुत स्तुति करी पिछले अध्यायोंमें अब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं यह समझा चाहता हूं कि कर्मीयोगी सगुण ब्रह्मके उपासक जो भक्त और निर्गुण के जो उपासक इन सब में कौन अच्छी तरह भलेप्रकार योगको जानते हैं ? योगका अक्षरार्थ एकता है. वितका अर्थ ❀ जानता है ❀ यह है. योगको जो जानता है उसको योगवित् कहते हैं. तर तम ये दोनों शब्द विशेषार्थमें आते हैं अर्थात् योग के जाननेवालोंमें विशेष श्रेष्ठ कौन है पूर्व्वोक्त इन सबमें इत्यभिप्रायः ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच—

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ ये १ परया २ श्रद्धया ३ उपेताः ४ मनः ५ मयि ६ आवेश्य ७ नित्ययुक्ताः ८ माम् ९ उपासते १० ते ११ मे १२ युक्त-तमाः १३ मताः १४ ॥ २ ॥ ❀ अ० उ० ❀ अर्जुन का प्रश्न और यह उसका उत्तर ऐसे समझो कि जैसी ये दो कथा पुरानी हम लिखते हैं. ❀ राजाने सूरदासजीसे बूझा कि कविता आपकी अच्छी है या तुल-सीदासजीकी ? उत्तर दिया कि मेरी. राजाने फिर बूझा कि तुलसीदासजी-की कविता कैसी है ? उत्तर दिया कि तुलसीदासजीकी कविता नहीं. मन्त्र हैं. आपका प्रश्न कविताके विषयमें है विचारो इस बोली में बडाई किस की हुई. ❀ एक भक्तने देवीसे बूझा कि कवि कालीदासजी श्रेष्ठ हैं या दण्डी स्वामी ? उत्तर दिया कि दण्डी स्वामी और इस वाक्यको सर-स्वतीजीने तीन बार उच्चारण किया " कविदण्डी कविर्दण्डी न संशयः " कालिदासजीने बूझा कि हे देवि ! क्या मैं कवि नहीं देवीजीने कहा कि आप तो मेरा स्वरूपही हो. प्रश्न कविविषय है ❀ इसी प्रकार अर्जुनने उपासना अनुष्ठान या विषय प्रश्न किया है ज्ञानी महात्मा क्रियावान् उपासक नहीं होते " ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति " ब्रह्मका जाननेवाला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मही है. अर्जुनसे श्रीभगवान्ने कहा कि❋ जो १ परम श्रद्धा करके २। ३ युक्त ४ मनको ५ मुझमें ६ प्रवेश करके ७ नित्ययुक्त हुये ८ मुझ सगुण ब्रह्मकी ९ उपासन करते हैं १० वे ११ मुझको १२ युक्ततम १३ सम्मत १४ सि० हैं. अर्थात उनको युक्ततम मानता हुं. युक्त योगी का नाम है योगियोंमें श्रेष्ठ है इति तात्पर्यार्थः. और जो कोई यह प्रश्नकरे कि निर्गुण ब्रह्मके उपासक युक्ततम हैं या नहीं ? इसका उत्तर पहलेही दो कथाओंके प्रसङ्गमें होचुका कि वे युक्तयोगी नहीं श्रीभगवान् चौथे मंत्रमें कहैंगे कि वे तो मुझको प्राप्तही हैं उनका यहां क्या प्रसङ्ग है ? तीसरे चौथे मन्त्रमें और तेरहवें मन्त्रसे लेकर अध्यायकी समाप्ति पर्यन्त निर्गुण उपासकोंके लक्षण कहैंगे सगुण उपासकोंको जो कहना था सो कहा यह उत्तर सूरदासजी और देवीके उत्तरके सदृश समझना चाहिये. इस मन्त्र में यह अर्थ किसी प्रकार नहीं जाना जाता कि निर्गुण उपासकोंसे सगुण ब्रह्मके उपासकोंको श्रेष्ठ श्रीभगवान्ने कहा❋श्रेष्ठ वे सन्देह हैं परन्तु किनसे श्रेष्ठ हैं? योगियोंसे कर्मनिष्ठोंसे विषयी पामरोंसे श्रेष्ठ हैं इत्यभिप्रायः ॥ २ ॥

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥ ३ ॥
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥ ४ ॥

दो श्लोकोंका एक अन्वय है❋सर्वत्रसमबुद्धयः १ सर्वभूतहिते २ रताः ३ इन्द्रियग्रामम् ४ संनियम्य ५ ये ६ अनिर्देश्यम् ७ अव्यक्तम् ८ अक्षरम् ९ सर्वत्रगम् १० अचिन्त्यम् ११ च १२ कूटस्थम् १३ अचलम् १४ ध्रुवम् १५ पर्युपासते १६ ते १७ तु १८ माम् १९ प्राप्नुवन्ति २०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एव २१ ॥ ३ । ४ ॥ अ० उ० ❀ निर्गुण उपासकोंका माहात्म्य सुन ❀ सब कालमें समान ज्ञान रहता है जिनका १ सब भूतोंके भले में २ प्रीति रखते हैं अर्थात् सबका भला चाहते हैं ❀ इन्द्रियोंके समूह को ४ निरोध करके ५ जो ६ महात्मा निर्गुण उपासक ❀ अनिर्देश्य ७ अव्यक्त ८ अक्षर ९ सर्वत्रग १० अचिन्त्य ११ और १२ कूटस्थ १३ अचल १४ ध्रुवकी १५ उपासना करते हैं १६ अर्थात् आत्माको ऐसा जानकर कि जैसा सातके अङ्कमे पन्द्रहके अङ्कतक कहा और संसारको 'इन्द्रजालवत्' शक्तिमें 'रजतवत्' समझकर उसी परमानन्दस्वरूप आत्मामें मग्न रहते हैं १६ सि० अपने स्वरूप जान लेना यथार्थ जैसा ऊपर कहा यही उनकी उपासना है जो ऐसी उपासना करते हैं वे १७ तो १८ मुझको १९ प्राप्त हैं २० ही निश्चय २१ अर्थात् जब कि उनका स्वरूप अनिर्देश्य है, कहने में नहीं आता, इस हेतुसे उनको योगवित्तम और युक्ततम श्रेष्ठादि शब्दों करके निर्देश करना नहीं बनता. यही समझना चाहिये कि वे मेरा स्वरूप हैं. जैसा मैं मन वाणी का विषय नहीं ऐसेही वे हैं २०।२१ सि० उनको उपासक कहना यह एक बोली है ❀ टी० ❀ सदा सुख दुःख इष्ट अनिष्टादिकी प्राप्तिमें आत्माको एकरस जानते हैं. ब्रह्मज्ञानी १ कहनेमें नहीं आता है, कि वह ऐसाहै ७ रूपरसादिवत् वह प्रकट नहीं ८ कभी कम नहीं होता ९ सब जगह प्राप्त है १० उसका चिन्तन नहीं हो सक्ता क्योंकि वह चित्तसे भी सूक्ष्म परे है ११ और १२ निर्विकार १३ निश्चल १४ नित्य १५ ॥ ३ ॥ ४ ॥

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥ ५ ॥

अव्यक्तासक्तचेतसाम् १ तेषाम् २ अधिकतरः ३ क्लेशः ४ अव्यक्ता ५ हि ६ गतिः ७ देहवद्भिः ८ दुःखम् ९ अवाप्यते १० ॥ ५ ॥ जब कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निर्गुण ब्रह्मके उपासक ब्रह्मरूप होते हैं तो सगुणब्रह्मकी उपासना छोडकर निर्गुण ब्रह्मकी उपासना करनी चाहिये यह शङ्का करके श्रीभगवान् कहते हैं कि ❋ अ० उ० अव्यक्तमें असक्त हैं चित्त जिनका १ और उस उपासनाके योग्य वे अभी हुये नहीं ❋ तिनको २ बहुत अत्यन्त ३ दुःख ४ होता है. क्योंकि रूप रसादि विषयोंसे प्रीति दूर होनी सहज नहीं ❋ "अव्यक्ता हि गतिः" अर्थात् अव्यक्त की प्राप्ति ५ । ६ । ७ देहाभिमानियोंको ८ अर्थात् जो आत्माको क्रियावान् समझते हैं, शुद्ध सच्चिदानन्द आत्माको पूर्णब्रह्म नहीं समझते तिनको दुखःसे ९ प्राप्त होती है. १० तात्पर्य—उनको बहुत प्रयत्न करना पडता है. देहाभिमानियोंके वास्ते अन्य उपाय श्रीभगवान् अभी इस मन्त्र से आगे सात श्लोकोंमें बारहके श्लोक तक कहैंगे ❋ उसका अनुष्ठान करनेसे निर्गुण ब्रह्मकी प्राप्ति उनको सुलभ हो जायगी. निर्गुण ब्रह्मके उपासकोंने भी पहिले वही अनुष्ठान किया है जब उनको परमानन्दस्वरूप आत्माकी प्राप्ति हुई है. आत्मनिष्ठाकी क्रिया समझना न चाहिये. सगुण ब्रह्मकी उपासनावत् सगुणब्रह्मकी उपासनाका फल समझना. सगुण ब्रह्मके उपासकका यावत् देहमें अध्यास बनार है देह इन्द्रियादिके साथ ममता तादात्म्यता एकता बनी रहै विवेक वैराग्यादि साधन न हों तबतक वे निर्गुण ब्रह्मकी उपासनाके योग्य नहीं, जो निर्गुण ब्रह्मकी महिमा सुनकर उस उपासनामें चित्तको आसक्त करेंगे, उनको प्रथम तो बहुत दुःख होगा. क्योंकि—निर्गुणब्रह्म आत्मा अति सूक्ष्म देहेन्द्रियादिसे विलक्षण है. देहाभिमानीको उसकी प्राप्ति होनी बहुत कठिन है वह ब्रह्मको आत्मासे जुदा समझता है ❋ इस प्रकरणका अर्थ जो हमने लिखा है सो तो श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीशङ्कराचार्य महाराजजीके भाष्यानुसार और श्रीस्वामी आनन्दगिरिजीने भाष्यपर जो टीका बनाई है और श्रीशंकरानन्दी और मधुसूदनी आदि टीकाओंके अनुसार यथामति लिखा है. कोई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोई भेदवादी जानकर या भूलकर या आमर्ष ईर्षादिसे जो इस प्रकरणका अनर्थ करते हैं सोभी संक्षेप करके लिखाजाता है. लीलाविग्रह मूर्तिमान् राम कृष्णादिकी उपासना पुराणोक्त है. मन्द मध्यम अधिकारियोंके लिये अन्तःकरणकी शुद्धिका साधन है. इस हेतुसे साधनोंके प्रकरणमें जितनी उस उपासनाकी स्तुति महिमा बडाई लिखी जावे वह सब सत्य प्रमाण है. परन्तु वे लोग निर्गुणउपासनाकी प्रत्यक्ष निन्दा (असूया) करते हैं और कोई अर्थका अनर्थ करते हैं. अक्षरोंका अर्थ फेर देते हैं. क्या अनर्थ करते हैं वे इस प्रकरणका, सो सुनो. अर्जुनने श्रीकृष्णचन्द्रजीसे प्रश्न किया कि सगुण ब्रह्मके उपासक श्रेष्ठ हैं या निर्गुण ब्रह्मके ? श्रीभगवान्ने उत्तर दिया कि सगुण ब्रह्मके उपासक श्रेष्ठ हैं. यद्यपि निर्गुण ब्रह्मके उपासकभी मुझकोही प्राप्त होंगे परन्तु उनको उस उपासनामें बहुत दुःख होता है. क्योंकि—देहधारीसे निर्गुणकी उपासना होनी बहुत कठिन है और जो सगुण ब्रह्मके उपासक हैं उनको जल्दी विनाश्रम संसारसे मैं उद्धार करूंगा यह अर्थ करते हैं वे लोग (तन्न) अर्थात् सो नहीं है अर्थ इस प्रकरणका क्यों नहीं सो सिद्धान्त कहते हैं विचारो कि अर्जुनका प्रश्न यह है कि तिनमें योगवित्तम कौन है ? योगवित्तमका अर्थ जो हमने किया उसको विचारो और जो वे कहते हैं, उसको विचारो. श्रीभगवान्ने उत्तर दिया कि सगुणब्रह्मके उपासक युक्ततम है मेरे मतमें और निर्गुण ब्रह्मके उपासक तो मुझको प्राप्त हैं ही निश्चय युक्ततमका अर्थ जो हमने किया सो विचारो और जो वे करते हैं सो विचारो यह अर्थ कैसे निकलता है कि सगुण-वर्त्तमान क्रियाका अर्थ सगुणोपासक भविष्यत् अर्थ करदेते हैं और ' तु ' इस शब्दका भी यह अर्थ करते हैं अर्थात् वेभी मुझको प्राप्त होंगे अब एक तो इस अर्थको विचारो कि वे तौ मुझको प्राप्त हैं हीं निश्चय और एक इस अर्थको विचारो कि वे तौ मुझको प्राप्त हैं.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कितना अन्तर पड गया और अर्थका अनर्थ हुआ या नहीं मुझ पुरुषोंका साधक कह दिया और 'तू' इस शब्द का तो यह अर्थ छोडकर भी यह अर्थ कर दिया कि परमेश्वरकी प्राप्तिमें भी 'भी' यह शब्द सन्देह उत्पन्न करता है और उसी जगह 'एव' यह शब्द है उसका अर्थ ❋ निश्चय ❋ और 'हि' यह होता है उसको छोड देते हैं उसका कुछ अर्थ करतेही नहीं. प्रकरणका अर्थ स्पष्ट है निर्गुण ब्रह्मके उपासक भगवत्को जीतेजी प्राप्त हैं किसी साधनकी उनको अपेक्षा नहीं और सगुण ब्रह्मके उपासक युक्ततम हैं. उत्तम योगी साधक-का नाम युक्ततम है साधक योगियोंमें श्रेष्ठ हैं यह अर्थ है. युक्ततमका निर्गुण उपासकोंसे कभी श्रेष्ठ नहीं हो सक्ते. क्योंकि ज्ञानीलोग भगवत्रूप हैं. चौथे अध्यायमें श्रीभगवान्ने स्पष्ट कहा है कि ज्ञानी मेरा आत्मा है. तीसरे अध्यायमें यह कहा है कि मैंने दोनों निष्ठा कही हैं; विरक्तोंके वास्ते ज्ञान-निष्ठा, अज्ञानियोंके लिये कर्मनिष्ठा. यह जो तू बूझता है कि दोनोंमें श्रेष्ठ क्या है? यह प्रश्नही बे योग है क्योंकि अधिकार प्रति दोनों श्रेष्ठ हैं. अर्थात् ज्ञाननिष्ठाके श्रेष्ठ होनेमें तो कुछ सन्देह है नहीं. क्योंकि वह कर्मनिष्ठा का फल है. मोक्षदाता है विषयी बहिर्मुखोंकी निष्ठासे कर्मनिष्ठा श्रेष्ठ है. कर्म-निष्ठामेंही उपासना का अन्तर्भाव है जैसा प्रश्न अर्जुनने तीसरे अध्यायमें किया कि ज्ञाननिष्ठा और कर्मनिष्ठा इन दोनोमें से कौनसी निष्ठा श्रेष्ठ है? ऐसेही यह प्रश्न किया कि उपासकोंमें कौन श्रेष्ठ है? प्रश्न अनजान में होता है. अर्जुनने ज्ञाननिष्ठाकोभी साधन समझा श्रीभगवान्ने यह तो कहा कि यह प्रश्न वे योग है परन्तु उसी प्रश्नका अनुसार प्रकरणको पृथक् करके ऐसा उत्तर दे दिया कि किसीने अपनेको निकृष्ट न समझा पांचवें मन्त्रका वे यह अर्थ करते हैं. निर्गुण ब्रह्मके उपासकोंको दुःख बहुत होता है, यहभी असत्य है. क्योंकि दुःख साधकोंको होता है निर्गुण ब्रह्मके उपासक साक्षात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परमानन्दको प्राप्त हैं. श्रीभगवान्‌ने उसी मन्त्रमें विशेषण दिया कि जिनको देहका अभिमान है, उनको दुःख होता है. विचारो देहाभिमानी ज्ञानी होते हैं या उपासक विना देहाभिमान उपासना नहीं बन सक्ती और विना देहाभिमान गये साक्षात् निर्गुण ब्रह्मकी उपासना नहीं बन सक्ती यह नियम है और जिसको देहाभिमान है उसको हम ज्ञानी निर्गुण ब्रह्मका उपासक नहीं कहते. यहां प्रसंग सच्चे उपासकोंका है. जो कोई वेषधारीमें देहाभिमानकी शङ्का करै तो हम तिलक मालाधारीमें हजार शङ्का अभक्ति पाखण्डकी कर सक्ते हैं. विचारो, एक तो साक्षात् परमानन्दको प्राप्त है. परमानन्दरूप आत्माको अपरोक्ष समझ कर उपासना करते हैं और एक आनन्दकी इच्छा करते हुये आनन्दजनक रामकृष्णदिकी उपासना करते हैं. दृष्टान्तमें समझो कि एक तो भोजन कर रहा है और एक भोजन बना रहा है, दोनोंमें दुःख किसको है और जो सगुण ब्रह्मके उपासक यह कहैं कि हमारे इष्ट देव श्रीराम कृष्णादि आनन्दरूप मूर्त्तिमान् हैं सो नहीं हो सक्ता. आनन्द पदार्थ सदा निरवयव रहता है लक्ष्यरूप रामकृष्णादिका आनन्दरूप है सो उनको परोक्ष है और वह ज्ञानियोंको अपरोक्ष है और यही भेद भी है सगुण ब्रह्मकी उपासना और निर्गुण ब्रह्मकी उपासनामें और जो वे यह कहैं कि हमको भी आनन्दरूप अपरोक्ष है तो हम उनको ज्ञानी निर्गुण ब्रह्मके उपासक कहैंगे यही सिद्धान्त है कि जिनको परमानन्द अपरोक्ष नहीं उनको दुःख है और परमानन्दके अपरोक्ष होनेमें यही परीक्षा है कि जिनको देहाभिमान वर्णाश्रम जाति दास स्वामी भावका अभिमान है, भेदभाव जिनमें प्रतीत होता है ऐसे देहाभिमानियोंको परमानन्द अपरोक्ष कहा है ❀ सगुणोपासक निर्गुणोपासनाको समूल खण्डन करते हैं. क्योंकि परमानन्दकी प्राप्ति उन्होंने केवल सगुणोपासनासे मानी कि जिसको परमपद मुक्ति कहते हैं और निर्गुण उपासनाका फल दुःख बनाया तो निर्गुणोपासना आपही खण्डन हो गई और निर्गुणोपासक सगुणोपासनाका ❀ खण्डन नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करते न उनको बुरा कहते हैं जब सगुणोपासक वृथा निर्गुणोपासकोंसे तकरार वाद करने लगते हैं तब निर्गुणोपासक यथार्थ व्यवस्था कह देतेहैं इसी हेतुसे यह प्रसंग हमने भी लिखाहै. समझो और विचारो कि जो निर्गुण ब्रह्मकी उपासनामें दुःख होता तो वे सगुणोपासनाको छोडकर क्यों अङ्गीकार करते ? दूसरे यह कि निर्गुणोपासक तो दोनों उपासनाका आनन्द जानते हैं सगुणोपासक एककाही जानते हैं जो अनुभव करी हुई बर्तीहुई बात कहै उसके वाक्यमें श्रद्धा होती है. तीसरे यह कि जो ज्ञानी होगा, वह बेसन्देह विद्यमान है. विना ब्रह्मविद्या भगवत्की पहिंचान नहीं हो सक्ती. चौथे निर्गुण उपासनामें प्रवृत्ति नहीं. सगुण उपासनामें अत्यंत प्रवृत्ति है जहां प्रवृत्ति होगी और जहां द्रव्य गहने वस्त्रादिका सम्बन्ध होगा वहां सब अनर्थ होंगे. पांचवें सगुणोपासक बहुत सगुणोपासनाको छोड निर्गुणोपासना करने लगते हैं. निर्गुणोपासक कभी न सुना होगा कि उसने अपनी उपासना छोडकर सगुणोपासना करीहो. मूर्खोंका यहां प्रसंग नहीं. आनन्दको छोडकर दुःखमें कोई नहीं प्रवृत्त होता. दुःखको छोड आनन्दमें सब प्रवृत्त होते हैं. इस हेतुसे विचार करो कि दुःख किस उपासनामें है और आनन्द किस उपासनामें है. छठें भगवद्गीता अद्वैतामृतवर्षिणी है इसमें जो द्वैतसिद्धान्त समझते हैं वे अद्वैतामृतवर्षिणी का अर्थ करैं ❋ तात्पर्य सगुणोपासना साधन है; निर्गुणोपासना फल है इत्यभिप्रायः ॥ ५ ॥

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ ६ ॥

सर्वाणि १ कर्माणि २ तु ३ मयि ४ संन्यस्य ५ ये ६ मत्पराः ७ अनन्येन ८ योगेन ९ एव १० माम् ११ ध्यायंतः १२ उपासते १३ ॥ ६ ॥ अ० उ० सगुण ब्रह्म उपासकोंके वास्ते निर्गुणब्रह्मकी प्राप्तिका उपाय अधिकारभेदसे कई प्रकारका कहते हैं. छः श्लोकोंमें भगवत् पर जैसी अपनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सामर्थ्य जाने सोई उपाय करै सब कर्मोंको १ । २ तो ३ मुझमें ४ संन्यास करके ५ जो ६ मुझपरायण ७ अनन्ययोग करके ८ । ९ निश्चय १० मेरा ११ ध्यान करतेहुये १२ उपासना करते हैं १३ सि० मेरी तिनका मैं उद्धार करूंगा. इस श्लोकका अगले श्लोकके साथ सम्बन्ध है. तात्पर्य, इस श्लोकमें उन भक्तोंका प्रसंग है कि जिन्होंने इस जन्ममें या पिछले जन्मोंमें अग्निहोत्रादि कर्मोंका अनुष्ठान करके अन्तःकरण शुद्ध कर लिया है. उन कर्मोंको तो संन्यास करके दिन रात्रि गङ्गाप्रवाहवत सगुणब्रह्मका ध्यान करते हैं सिवाय परब्रह्मके और कुछ अपना आश्रय नहीं जानते; भगवद्भक्तकोही सार सिद्धान्त समझते हैं. दूसरे मतको बुरा कहना न भला कहना यह लक्षण उत्तम सगुण ब्रह्मके उपासकोंका है, ऐसे भक्तोंका ब्रह्मविद्या द्वारा अनायास जल्द परमेश्वर उद्धार करते हैं ॥ ६ ॥

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ।
भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥ ७ ॥

पार्थ १ मयि २ आवेशितचेतसाम् ३ तेषाम् ४ मृत्युसंसारसागरात् ५ न ६ चिरात् ७ समुद्धर्त्ता ८ अहम् ९ भवामि १० ॥ ७ ॥ अ० उ० भक्तोंको धीरज बांधनेके लिये अपनी छातीपर हस्तकमल रखकर प्रतिज्ञा करते हैं कि—अर्जुन ! १ मुझमें २ लगरहा है चित्त जिनका ३ तिनका ४ मृत्युसंसारसमुद्रसे ५ जल्दी ६ च ७ उद्धार करनेवाला ८ मैं ९ हूं १० । तात्पर्य—जो श्रीकृष्णचन्द्र रामचन्द्रादि सदाशिवादिके भक्त हैं वे जल्दी संसारसमुद्रसे पार होंगे. जैसे, कोई मणिकी प्रभाको मणि समझकर लेनेके लिये दौडता है प्रभा तो मणी न थी परन्तु उस जगहसे सच्ची माणि दीख पडती है जब उस मणिका मिलना सहज हो जाता है इसी प्रकार सगुण ब्रह्मकी उपासना करते करते शुद्ध सच्चिदानन्दका ज्ञान होजाता है. भगवत्का जानना यही संसारसे उद्धार होना है फिर उसके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जन्म मरण नहीं होता. श्रीभगवान् इस प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेके लिये अपना यथार्थ स्वरूप तेरहवें अध्यायमें निरूपण करैंगे जिसके जाननेसे जल्द उद्धार होजावे ॥ ७ ॥

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥ ८ ॥

मयि १ एव २ मनः ३ आधत्स्व ४ मयि ५ बुद्धिम् ६ निवेशय ७ अतः ८ ऊर्ध्वम् ९ मयि १० एव ११ निवसिष्यसि १२ न १३ संशयः १४ ॥ ८ ॥ अ० उ० " जिनका मन मुझमें आसक्त है उनका मैं उद्धार करूंगा " यह मैंने प्रतिज्ञा करी है. इस वास्ते हे अर्जुन ! तूभी मुझमें १ ही २ मनको ३ स्थिर कर ४ मुझमें ५ बुद्धिको ६ प्रवेश कर ७ इससे ८ पीछे ९ मुझमें १० ही ११ वास करेगा तू १२ नहीं १३ संशय १४ इस वाक्यमें तात्पर्य, वेदकी यह श्रुति है " देहान्ते देवः परं ब्रह्म तारकं व्याचष्ट " इति। अर्थात देहके अंत समय परंब्रह्म अपने इष्टदेव तारक मन्त्र ओंकार का उपदेश करते हैं. उसी समय ब्रह्मज्ञान होकर परमानन्द को प्राप्त होजाता है यही परमेश्वरमें वास करना है ॥ ८ ॥

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय ॥ ९ ॥

धनञ्जय १ अथ २ मयि ३ चित्तम् ४ समाधातुम् ५ न ६ शक्नोषि ७ स्थिरम् ८ ततः ९ अभ्यासयोगेन १० माम् ११ आप्तुम् १२ इच्छा १३ ॥ ९ ॥ अ० उ० पूर्वोक्त उपायसे भी सुगम उपाय कहते हैं—हे अर्जुन ! १ और जो २ मुझमें ३ चित्त ४ समाधान करनेको ५ नहीं ६ समर्थ है तू ७ स्थिर ८ नहीं करसक्ता है मनको तो ९ अभ्यासयोग करके १० मेरी ११ प्राप्तिकी १२ इच्छा कर १३ ❋ मूर्तिमान् परमेश्वरमें या विश्वरूपमें जो दिन रात्रि चित्त स्थिर न रहै तौ वारंवार यह अभ्यास कर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ना कि जब मन दूसरे पदार्थमें जावे उसी समय वहांसे हटाकर उसी स्वरूपमें समाधान करै इसीको अभ्यासयोग कहते हैं. तात्पर्य—अभ्यास करते करते अवश्य मन एक जगह निश्चल हो जाता है. अभ्यासमें जल्दी न करे असंख्यात वर्षोंसे मन भगवत्से विमुख हो रहा है. अबभी जो दो चार वर्षमें अभ्यासके बलसे भगवत्के समुख हो जा तौभी बडी बात है. अभ्यासमें प्रथम दुःख प्रतीत होता है, दुःख समझकर अभ्यास नहीं छोड देना ॥ ९ ॥

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव ।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिमवाप्स्यसि ॥ १० ॥

अभ्यासे १ अपि २ असमर्थः ३ असि ४ मत्कर्मपरमः ५ भव ६ मदर्थम् ७ अपि ८ कर्माणि ९ कुर्वन् १० सिद्धिम् ११ अवाप्स्यसि १२ ॥ १० ॥ उ० ❋ उससे भी सुगम उपाय कहते हैं. अ० उ० अभ्यासमें १ भी २ असमर्थ ३ है तू ४ तो ❋ मत्कर्मपरायण ५ हो तू ६ अर्थात् साधुओंकी शिर आंखोंसे टहल करनी, दिन रात्रि उनकी सेवामें लगा रहना, शिवालय केशवालय बनाने, मन्दिरोंमें बुहारी देना, लीपना, ठाकुरसेवाके बर्तन मांजना, शुद्धजल अपने हाथसे लाना, बहुत क्रियाके साथ रसोई बनाना प्रथम परमेश्वरको भोग लगाना और ढूंढ़कर साधुको जिमाना ऐसे २ बहुत कर्म हैं. साधु महात्मा बतासक्ते हैं ऐसे कर्मोंमें तत्पर होना चाहिये. श्रीभगवान् कहते हैं कि ❋ मेरे अर्थ ७ भी ८ कर्मोंको ९ करता हुआ १० अन्तःकरणशुद्धिद्वारा ज्ञानको प्राप्त होकर ❋ मोक्षको ११ प्राप्त होगा तू १२। तात्पर्य—भगवत् भजन और भगवत्सेवा संबंधी जो कर्म हैं, सब अन्तःकरणको शुद्ध कर सक्ते हैं ॥ १० ॥

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः ।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथ १ एतत् २ अपि ३ कर्तुम् ४ असक्तः ५ असि ६ ततः ७ मद्योगम् ८ आश्रितः ९ सर्वकर्मफलत्यागम् १० कुरु ११ यतात्मवान् १२ ॥ ११ ॥ अ० उ० ❋ उससेभी सुगम उपाय कहते हैं. उ० जो १ यह २ भी ३ करनेको ४ असमर्थ ५ है तू ६ तो ७ भक्ति योगको ८ आश्रय करके ९ सि० सब कर्मोंके फलका त्याग १० कर तू ११ मनको जीतकर १२ अर्थात् अब तू फिर संकल्प विकल्प कुछ मतकर जो कुछ नित्य निमित्त प्रायश्चित्तादि कर्मोंका अनुष्ठान होसके वही कर उसके फलमें आसक्ति मत कर. यह समझ कि मैं तौ तन, मन, धन करके भगवत्की शरण हूं. मैं तो उसका दास हूं. वे महाराज अन्तर्यामी हैं, जैसा चाहैं मुझसे शुभाशुभ कर्म करावें और जैसा चाहैं उन कर्मोंका फल दें मुझको तो सिवाय परमेश्वरके और कुछ किसी तरहका आसरा नहीं. परन्तु यह प्रकट रहै कि धनादिकी प्राप्तिके लिये जहांतक होसके राजादि मनुष्योंका दास जान बूझकर न बने व्ययहारका भार तो परमेश्वरको सौंप देना और परमार्थमें मोक्षके लिये जहांतक बनसके प्रयत्न करना चाहिये. उलटा ऐसा नहीं समझना कि परलोकका भार तौ परमेश्वरको सौंप देना अर्थात् यह समझना कि परमेश्वर जो चाहैं सो करें. मेरे करनेसे क्या होता है ? यह मोक्ष मार्गमें नहीं समझना. व्यवहारमें यह समझना कि मेरे करनेसे कुछ नहीं होता. जो प्रारब्धमें लिखा गया वही होगा. मोक्षमार्गमें पुरुषार्थ मुख्य है. व्यवहारमें प्रारब्ध मुख्य है इत्यभिप्रायः ॥ ११ ॥

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् १२

अभ्यासात् १ ज्ञानम् २ श्रेयः ३ हि ४ ज्ञानात् ५ ध्यानम् ६ विशिष्यते ७ ध्यानात् ८ कर्मफलत्यागम् ९ त्यागात् १० अनन्तरम् ११ शान्ति. १२ ॥ १२ ॥ अ० उ० ❋ सब कर्मोंके फलका त्याग इस हेतुसे श्रेष्ठ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है ❋ अभ्याससे १ ज्ञान २ श्रेष्ठ है ३ निश्चय ४ शास्त्रीय ज्ञानसे ५ ध्यान ६ विशेष है ७ ध्यानसे ८ कर्मोंके फलका त्याग ९ श्रेष्ठ है ❋ त्यागसे १० पीछे ११ शान्ति १२ होती है ❋ टी० विना भलेप्रकार वेदोंका तात्पर्य जाने हुये जो किसी कर्मके अनुष्ठानमें अभ्यास करना उससे प्रथम वेदोंका तात्पर्य समझना जानना ज्ञान श्रेष्ठ है. क्योंकि, जिसको परोक्ष ज्ञान यथार्थ होगया, वह अवश्यही कभी न कभी उसका अनुष्ठान भी करेगा. अविद्यावान्के अनुष्ठान करनेसे अविद्यावान् विना अनुष्ठान किये भी श्रेष्ठ है. क्योंकि वह एक मार्गपर है. अविद्यावान् मूर्खको कहां विचार है कि मुझको किस कर्मका अधिकार है ? जो उसको प्रिय लगता है वही करने लगता है, इसी हेतुसे कर्मोंका फल उनको प्रत्यक्ष नहीं होता ❋ और पण्डित ज्ञानियोंसे अर्थात् परोक्षक ज्ञानियोंसे विद्यावान् रामकृष्णादिके ध्यान-वाले श्रेष्ठ हैं ❋ मूर्तिमान् परमेश्वरके ध्यान करनेवालोंसे भी जो विद्यावान् कर्मोंका निष्काम अनुष्ठान करते हैं; अर्थात् श्रौत, स्मार्त, कर्म और भगवत् आराधन और हिरण्यभर्भ सूर्यादिकी उपासना और श्रीभगवत् सम्बन्धी जो कर्म इन सब कर्मोंके फल त्याग करते हैं वे श्रेष्ठ हैं. क्योंकि शान्ति कर्मोंका फल त्यागनेसे होती है विना त्याग संसारसे चित्त उपशम नहीं होता. लौकिक वैदिक दोनों कर्मोंके फलसे जब चित्त उपराम होता है, दोनों कर्मोंके फलसे जब वैराग्य होता है, तब शान्ति उपरति होती है. वैराग्य—उपरति ये दोनों ज्ञाननिष्ठाके अंतरंग मुख्य साधन हैं फिर ज्ञाननिष्ठ होकर कृतार्थ हो जाता है. अर्थात् परमानन्दको प्राप्त होजाता है ॥ १२ ॥

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी ॥ १३ ॥

सर्वभूतानाम् १ अद्वेष्टा २ मैत्रः ३ करुणः ४ एव ५ च ६ निर्ममः ७ निरहंकारः ८ समदुःखसुखः ९ क्षमी १० ॥ १३ ॥ अ० उ० ❋ शान्तपु-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रुप ज्ञाननिष्ठ महापुरुषोंके लक्षण श्रीभगवान् सात श्लोकोंमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ कहेंगे सि० ज्ञानी जन सब भूतोंके १ साथ (इसप्रकार बर्तते हैं जो कि आपसे जातिरूप धनादिनमें बडे हैं) उनके साथ तौ द्वेष नहीं करते २ बहुवचन आदरके लिये लिखते हैं ❋ बराबरके साथ मित्रता ३ रखते हैं, छोटोंपर दया ४ करते हैं. चाहते हैं कि जैसे हम विद्यावान् धनवाले हैं परमेश्वर करे ये भी वैसेही होजावें और जहांतक होसके यथा शक्ति उनका उपकार करते हैं और दुष्टजन चोर जार पापीजनों के साथ उपेक्षा करते हैं अर्थात् उनको बुरा कहना न भला कहना न उपकार करना न अपकार करना। " खल परिहरिय श्वान की नाई " ❋ दुष्टों को कुत्तेकी सदृश समझते हैं. कुत्तेका टूक डालनेमें क्षति नहीं इत्याभिप्रायः ५। ६ पुत्र, स्त्री, मित्र, धन मंदिरादिमें ❋ ममतारहित ७ सि० यह समझते हैं कि शरीर मन तो हमारे है नहीं पुत्रादि हमारे क्या होंगे ऐसे होकर फिर ❋ अहङ्काररहित ८ कभी वाणीसे तौ क्या कहना कि हम ऐसे हैं चित्त में अनुसंधान भी न रखना और सम हैं दुःखसुख जिनके ९ यही समझते हैं कि सुख दुःख दोनों अनित्य हैं. जैसे, दुःख विना संकल्प और विना यत्न आता है ऐसेही सुख आता है और जैसे सुख चला जाता है वैसेही दुःख भी चला जाता है. दुःख की निवृत्तिके लिये और सुखकी प्राप्तिके लिये कुछ यत्न नहीं करते और जो कोई बेप्रयोजनभी अपने स्वभावके अनुसार उनको वाणी शरीरादि करके दुःख देय है उसको ❋ क्षमा करते हैं १०। यह समझते हैं कि यह प्रारब्धका भोग है. आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक भी सहने पडते हैं जैसे उनको सहते हैं ऐसेही इसको चाहिये उनहीं तीनों तापमें एक यह भी आधिभौतिक ताप है हमारेही कर्मों का फल है. कोई दुःख देनेवाला नहीं. हमारा मनही कारण है दुःख सुख देनेमें ऐसे क्षमावान् १० ॥ १३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥ १४ ॥

सततम् १ सन्तुष्टः २ योगी ३ यतात्मा ४ दृढनिश्चयः ५ मयि ६ अर्पितमनोबुद्धिः ७ यः ८ मद्भक्तः ९ सः १० मे ११ प्रियः १२ ॥१४॥ अ० सदा १ संतुष्टः २ अर्थात् कभी किसीकालमें किसी पदार्थकी चाहना न होनी सदा छके रहना ❀ अष्टाङ्गयोगवान् अर्थात् यम नियमादिपरायण ३ जीता है स्वभाव जिसने पूर्वावस्थामें जो प्राकृतवत् स्वभावतः उसको जीतकर सौम्य शान्तस्वभाव करलिया है जिसने उसको यतात्मा कहते हैं ४ दृढ निश्चय है जिसका ५ सि० आत्मामें वेद शास्त्रोंमें कभी जिनको, संशय-विपर्यय उदय होताही नहीं वेदोक्त आत्मा को शुद्धसच्चिदानन्द बेसन्देह जानते हैं मुझ आत्मामें ६ अर्पित किया है मन बुद्धि जिसने ७ अर्थात् अन्तःकरणकी वृत्तियोंको आत्माकार करदिया है जिसने ऐसा जो ८ मेरा भक्त ९ सो १० मुझको ११ प्यारा है १२ । चौथे अध्यायमें श्रीभगवान्ने कहा था कि ज्ञानी मुझको बहुत प्यारा है, उसीका इन सातश्लोकोंमें उपसंहार करते हैं. जिस श्लोकमें प्रिय यह पद नहीं तौ भी वहां समझ लेना चाहिये. तेरह अठारहके मन्त्रमें यह पद नहीं और पांचों मन्त्रोंमें है ॥ १४ ॥

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥ १५ ॥

यस्मात् १ लोकः २ न ३ उद्विजते ४ यः ५ च ६ लोकात् ७ न ८ उद्विजते ९ हर्षामर्षभयोद्वेगैः १० च ११ यः १२ मुक्तः १३ सः १४ मे १५ प्रियः १६ ॥ १५ ॥ अ० जिससे १ जीवमात्र २ ❀ न ३ उद्वेग करे ४ अर्थात् किसी प्रकार जिससे अपनी हानि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समझकर चित्तमें कोई प्राणी क्षोभ न करे❀और जो ५।६ किसी जीवसे ७ न ८ उद्वेग करे ९ और हर्ष, अमर्ष, भय, उद्वेग इन चारों से १०।११ जो १२ छूटा हुआ १३ सो १४ मुझको १५ प्रिय १६ है। टी० इष्ट वस्तुके देखने सुननेमें रोमांचका खड़ा होजाना, मनमें रङ्ग न होने लगना इसको हर्ष कहते हैं. दूसरेको विद्यावान् रुपयेवाला देख सुनकर मन मैला उदास हो जाना, इसको आमर्ष कहते हैं. किसी-प्रकारकी मनमें शङ्का होनी उसको भय कहते हैं. चित्तका एक जगह स्थिर न होना उसको उद्वेग कहते हैं. तात्पर्य, ऐसा व्यवहार (चाल चलन) जिन महापुरुषोंका है, कि जिनसे कोई किसी प्रकार बुरा न माने वेही भगवत् के प्यारे हैं ॥ १५ ॥

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥ १६ ॥

अनपेक्षः १ शुचिः २ दक्षः ३ उदासीनः ४ गतव्यथः ५ सर्वारम्भ-परित्यागी ६ यः ७ मद्भक्तः ८ सः ९ मे १० प्रियः ११ ॥ १६ ॥ अ० उ० जो पदार्थ अपनेआप प्राप्त हों उनकी भी इच्छा नहीं करनी उपेक्षा करते हैं १ पवित्र २ रहते हैं बाहर भीतरसे जल बाहर मृत्ति-कादि करके शुद्ध रहना, वस्त्रादि निर्मल रखने; भीतर राग द्वेषादि नहीं रखने ३ चतुर ४ व्यवहार परमार्थको बातों में व्यवहारके समय व्यव-हारकी बात करनी, परमार्थके समय परमार्थकी; प्रथम व्यवहार शुद्ध करना चाहिये, तब परमार्थ सिद्ध होता है. व्यवहारकी जिनको समझ नहीं उनका परमार्थ कभी नहीं सुधरेगा. परमार्थमें जीवका कुछ नहीं बिगड़ा व्यवहार बिगड़ गया है उसीको सुधारना चाहिये. व्यवहारमें परमार्थ, परमार्थमें व्यवहार नहीं मिलाते हैं चतुर महात्मा❀उदासीन ४ अर्थात् किसी मत पन्थ पक्षका खण्डन प्रतिपादन नहीं करना आनन्द

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मत रखना जिसमें सबका सम्मत है ❋ मनमें किसी प्रकारका खेद नहीं रखते ५ जितने इस लोक परलोक के निमित्त आरम्भहैं सबके त्यागी ६ ऐसा ❋ जो ७ मेरा भक्त ८ सो ९ मुझको १० प्यारा ११ है ॥ १६ ॥

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः स मे प्रियः ॥१७॥

यः १ न २ हृष्यति ३ न ४ द्वेष्टि ५ न ६ शोचति ७ न ८ काङ्क्षति ९ शुभाशुभपरित्यागी १० यः ११ भक्तिमान् १२ सः १३ मे १४ प्रियः १५ ॥ १७ ॥ अ० जो १ न २ हर्ष करता है ३ न ४ द्वेष करता है ५ न ६ शोच करता है ७ न ८ इच्छा करता है ९ शुभ अशुभ दोनों के त्यागनेका स्वभाव है जिसका १० ऐसा ❋ जो ११ भक्तिमान् १२ सो १३ मुझको १४ प्यारा है १५ । टी० इष्टपदार्थके मिलनेसे आनन्द नहीं होता अनिष्ट पदार्थोंसे द्वेष नहीं करता पिछली बातोंका शोच नहीं करता आगेको कुछ चाहता नहीं शुभ अशुभ पदार्थ ये दोनों अज्ञानके कार्य्य हैं दोनों को अनित्य समझकर दोनों को त्यागकर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मामें भक्ति प्रीति जो रखता है, श्रीभगवान् कहते हैं—ऐसा महापुरुष मुझको प्रिय है शुभ वैदिक मार्गका त्याग उनके वास्ते अच्छा है कि जो आत्मनिष्ठ है जैसे लक्षण ऊपर कहे येभी सब हों विना ज्ञान शुभमार्ग त्याग देना मूर्खोंका काम है विना ज्ञान कभी शुभमार्ग नहीं त्यागना और ज्ञान हुये पीछे सिबाय आत्माके किसीको उत्तम शुभ श्रेष्ठ समझना नहीं सबको त्याग देना ॥ १७ ॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः संगविवर्जितः ॥ १८ ॥

शत्रौ १ च २ मित्रे ३ च ४ समः ५ तथा ६ मानापमानयोः ७ शीतोष्णसुखदुःखेषु ८ समः ९ संगविवर्जितः १० ॥ १८ ॥ अ० शत्रुमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और मित्रमें १। २। ३। ४ बराबर ५ तैसेही ६ मान अपमान में ७ समान ❋शीत-गरमी, दुःख-सुखमें ८ समान ९ शरीर-इन्द्रिय-प्राण-अन्तःकरणका जो ❋संग उस करके वर्जित १०। तात्पर्य्य, शरीर-इन्द्रिय-प्राण-अन्तःकरणके साथ जब आत्माका संग होता है, तब आत्माकी शरीरादि में आसक्ति होती है; फिर शीतादि में इष्टानिष्टकी भ्रान्ति होती है; शत्रु-मित्रकी समतामें संगवर्जित यही हेतु है. आत्मनिष्ठ जो महापुरुष हैं वे शरीरादि में अध्यास नहीं रखते इसी हेतुसे शत्रुमित्रादि में उनकी विषमता दूर हो जाती है. जैसे, उनको मानादि वैसेही अपमानादि. मानाप-मानादि यह सब अन्तःकरणाका धर्म है. आत्मनिष्ठ अपनेको सबसे पृथक् जानते हैं. बिना आत्मनिष्ठाके देहाभिमानियोंसे पूर्वोक्त लक्षणोंका अनुष्ठान नहीं हो सक्ता. यह सब लक्षण ज्ञाननिष्ठाहीमें बन सक्ते हैं॥१८॥

तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येनकेनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः॥१९॥

तुल्यनिन्दास्तुतिः १ मौनी २ येनकेनचित् ३ सन्तुष्टः ४ अनिकेतः ५ स्थिरमतिः ६ भक्तिमान् ७ नरः ८ मे ९ प्रियः १०॥ १९॥ अ० ❋समान है निन्दा-स्तुति जिसके १ चुपरहना या वेदान्तशास्त्रका मनन करना उसको मौनी कहते हैं २ जो पदार्थ प्रारब्धशात् विना यत्न थोड़ा बहुत प्राप्त होजावे उसी करके ३ संतोष करना ४ ऐसे पुरुषको संतुष्ट कहते हैं, एक जगहके रहनेको नियम नहीं करना उसको अनि-केत कहते हैं ५ ❋अपने स्वरूपमें ❋निश्चल है बुद्धि जिसकी ६ ऐसा ❋भक्तिमान् ७ पुरुष ८ मुक्तको ९ प्यारा है १०। "येनकेनचिदाच्छन्नौ येनकेनाचिदाशिनः। यत्रकुत्र स यायी स्यात् तं देवा ब्राह्मणं विदुः" ❋महाभारतका यह श्लोक है. तात्पर्य, पूर्वोक्त लक्षण ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानी भक्तोंके हैं. अर्जुनने बूझा था कि "अक्षर ब्रह्म उपासक कैसे हैं?" श्रीमहा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजने उत्तर दिया कि ऐसा होते वे ऐसे नहीं होते कि रासलीलामें तमाशा तौ आप देखैं. राधा कृष्णको बसमझलोग अन्यमतवाले बुराक है और अच्छे पदार्थोंका मोहन भोग नाम रखकर आपही चटकर जाना साधु अभ्यागतको न देना. इस अध्यायमें भक्तोंके लक्षण जैसे श्रीमहाराजने कहे हैं, जिसमें ये होंगे वही भक्त भगवान्को प्राप्त होगा; अन्य नहीं इत्यभिप्रायः ॥ १९ ॥

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥ २० ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

मत्परमाः १ ये २ श्रद्दधानाः ३ भक्ताः ४ इदम् ५ धर्म्यामृतम् ६ यथा ७ उक्तम् ८ पर्युपासते ९ ते १० तु ११ अति १२ इव १३ मे १४ प्रियाः १५ ॥ २० ॥ अ० ॥ मैं हूं परेसे परे जिनके ऐसे १ जो २ श्रद्धावान् ३ भक्त ४ इस धर्म करके युक्त अमृतको ५।६ जैसे ७ कहा है ८ पीछे हम उसका ❋अनुष्ठान करते हैं ९ वे १० भक्त तो ❋११ बहुतही १२। १३ मुझको १४ प्यारे हैं १५ अर्थात् भक्त जिन का नाममी है जो नाममात्र भक्त हैं वे भी भगवान्को प्यारे हैं और अद्वेष्टादि लक्षणोंकरके जो सम्पन्न हैं वे तौ अत्यन्त प्यारे हैं ॥ "प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः" यह जो सातवें अध्याय में उपक्रम किया था उसीका उपसंहार है, पुनरुक्ति नहीं. सब धर्मोंका सार सिद्धान्त अमृतरूप यह उपदेश है. विचारना चाहिये कि ये लक्षण अनिकेत मौनादि निवृत्तिमार्गवाले ज्ञाननिष्ठ संन्यासी महापुरुषोंमें पाते हैं या जो घण्टा घड़ियाल बजाते हैं नृत्य देखते हैं उनमें पाते हैं वास्ते उदाहरणके श्रीस्वामी पूर्णाश्रमजी महाराज संन्यासी परमहंस ज्ञाननिष्ठ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नग्न मौन हुये श्रीभागीरथी गंगाजीके तीरही विचरते रहते हैं जितने लक्षण सात श्लोकोंमें श्रीभगवान्ने कहे सब उन महाराजमें प्रत्यक्ष हैं जो चाहे दर्शन करो. चैत्रसुदी रामनवमी संवत् १९२१ में इस श्लोक का अर्थ मुझ आनन्दगिरि ने लिखा है. श्रीमहाराज पूर्वोक्त परमहंसजी विद्यमान हैं और भी बहुत महात्मा हैं सिवाय संन्यासियों के कोई तो बताये कि ऐसा कौन हुआ है पहले भी और अब आंखोंसे तो कौन दिखा सक्ता है ? इतने पर भी जो विरक्तोंका माहात्म्य न समझेगा तो वह वे सन्देह प्रवृत्त लोकोंके पंजेमें फँसेगा ॥ २० ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

॥ त्रयोदशोऽध्यायः ॥

अर्जुन उवाच—

प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च ।
एतद्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव ॥ १ ॥

अर्जुनउवाच ॥ केशव १ प्रकृतिम् २ पुरुषम् ३ च ४ एव ५ क्षेत्रम् ६ क्षेत्रज्ञम् ७ एव ८ च ९ ज्ञानम् १० ज्ञेयम् ११ च १२ एतत् १३ वेदितुम् १४ इच्छामि १५ ॥ १ ॥ यह श्लोक किसी राजा ने बनाकर श्रीभगवद्गीता की पोथियों में लिखवा दिया है. जो अज्ञान हैं वे इस श्लोकको भी व्यासकृत समझते हैं. व्यासजीने सातसौ ७०० श्लोक बनाये हैं उनमें यह मिलानेसे सातसौ एक होजाते हैं। अर्थ इसका यह है कि—अ० हे केशव ! १ प्रकृति २ और पुरुष ३ । ४ । ५ क्षेत्र ६ और क्षेत्रज्ञ ७ । ८ । ९ ज्ञान १० और ज्ञेय ११ । १२ इनके १३ जानने की १४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इच्छा करता हूं मैं १५। तात्पर्य, क्षेत्रादि पदोंका अर्थ जानना चाहता हूं ❋ इस प्रश्नकी कुछ आकाङ्क्षा न थी. क्योंकि—श्रीभगवान्ने बारहवें अध्याय में आप यह कहा है कि "भक्तोंका मैं शीघ्र उद्धार करूंगा" जो इस प्रश्नमें पद हैं विना उनके अर्थ जाने ज्ञाननिष्ठा नहीं हो सक्ती और विना ज्ञाननिष्ठा के संसारसे उद्धार नहीं होता इस वास्ते ये सब पदार्थ श्रीमहाराजने विना प्रश्न कहे. जो टीकासहित पोथी हैं उनमें यह श्लोक नहीं और बहुत विद्वान् मूल पोथियोंमें भी नहीं लिखते; कोई कोई मूल पोथियों में लिख देते हैं ॥ १ ॥

इस यन्त्रके अनुसार सातसौ श्लोक हैं गीताके अठारह अध्यायोंमें ॥

अ०	श्लो०	अ०	श्लो०	
१	४७	१०	४२	
२	७२	११	५५	
३	४३	१२	२०	श्लोक
४	४२	१३	३४	७००
५	२९	१४	२७	
६	४७	१५	२०	समस्तजोड़
७	३०	१६	२४	
८	२८	१७	२८	
९	३४	१८	७८	
जो.	३७१	जो	३२८	

श्रीभगवानुवाच—

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते। एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञमिति तद्विदः ॥ २ ॥

श्रीभगवानुवाच ❋ कौन्तेय १ इदम् २ शरीरम् ३ क्षेत्रम् ४ इति ५ अभिधीयते। ६ यः ७ एतत् ८ वेत्ति ९ तम् १० तद्विदः ११ क्षेत्रज्ञम् १२ इति १३ प्राहुः १४ ॥ २ ॥ उ० ❋ बारहवें अध्याय में श्रीभगवान्ने कहा था कि भक्तोंका उद्धार संसारसे शीघ्र करूंगा मैं जो कि विना आत्मज्ञानके उद्धार नहीं होता. इसवास्ते इस अध्यायमें ब्रह्मज्ञान साधनसहित कहते हैं। अ० हे अर्जुन ! १ इस २ शरीरको ३ क्षेत्र ४ । ५ कहते हैं ६ जो ७ इसको ८ जानता है ९ तिसको १० तिनके ज्ञाता ११ अर्थात

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्षेत्र, क्षेत्रज्ञके जाननेवाले क्षेत्रज्ञ १२ । १३ कहते हैं १४। तात्पर्य, स्थूल शरीर क्षेत्र खेतकी बराबर है पाप पुण्य इसमें उत्पन्न होते हैं इसी हेतुसे इसको क्षेत्र कहते हैं, जो इसका अभिसानी उसको क्षेत्रज्ञ कहते हैं. क्षेत्रज्ञ वास्तव शुद्ध सच्चिदानन्द असंग नित्यमुक्त है. अविद्योपहित हुआ व्यष्टि स्थूल—सूक्ष्म—कारण—शरीरोंका अभिमानी बनकर विश्व, तैजस, प्राज्ञ कहा जाता है और मायोपहित हुआ समष्टि स्थूल—सूक्ष्म——कारणशरीरोंका अभिमानी बनकर विराट, हिरण्यगर्भ, ईश्वर कहा जाता है और वह माया अविद्यारहित शुद्ध सच्चिदानन्द नित्यमुक्त है अध्यारोप अपवाद न्याय करके सिद्धांत यही है ॥ २ ॥

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत!।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥ ३ ॥

भारत १ सर्वक्षेत्रेषु २ क्षेत्रज्ञम् ३ माम् ४ च ५ अपि ६ विद्धि ७ यत् ८ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः ९ ज्ञानम् १० तत् ११ ज्ञानम् १२ मम १३ मतम् १४ ॥ ३ ॥ उ० तत् त्वम् पदोंका अर्थ पिछले मन्त्रमें पृथक् पृथक् निरूपण किया, अब महावाक्यार्थ निरूपण करते हैं श्रीभगवान् स्पष्ट. जीव ईश्वरकी लक्ष्यार्थमें एकता दिखाते हैं. अ० हे अर्जुन ! १ सब क्षेत्रों में २ क्षेत्रज्ञ ३ मुझको ही ४ । ५ । ६ जान तू ७ और जगह मत ढूंढ़ इत्यभिप्रायः ❀ इस प्रकार ❀ जो ८ क्षेत्र—क्षेत्रज्ञका ९ ज्ञान १० सो ११ ज्ञान १२ मेरा १३ मत १४ है। तात्पर्य्य, तत्—त्वम् पदोंके लक्ष्यार्थको ग्रहण करके वाच्यार्थको त्यागकर सामान्याधिकरण्य, विशेषण—विशेष्यभाव, लक्ष्य—लक्षणभाव इन तीन सम्बन्ध करके और भागत्याग—लक्षणा करके 'सो यह देवदत्त है' इस लौकिक वाक्यवत् क्षेत्रज्ञ और मां पदकी लक्ष्यार्थमें एकता है, इस बातको इस जगह स्पष्ट करने में बहुत विस्तार होता है. आनन्दामृतवर्षिणीके द्वितीय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अध्यायमें विशेष लिखा है. वेदान्तशास्त्रके जितने ग्रन्थ हैं सब इसीकी टीका हैं. ऐसा ज्ञान जिसको हुआ वही ज्ञानी परमपदका भागी होगा. इस लोकमें अनेक विद्या हैं सब लोक किसी न किसी विद्याके जानने वाले नाई धोबी वैश्यादि एक प्रकारके ज्ञानी हैं. ब्रह्मविद्या के विना सब लौकिक विद्या लोगोंको रिझानेके लिये शिश्नोदरकी तृप्तिके लिये वाह वाहके लिये हैं; जिनका फल दुःख—श्रम है. जो इस शरीरमें सच्चिदानन्द क्षेत्रज्ञ है, वही वासुदेव है. आप श्रीमहाराज अपने मुखारविन्दसे कहते हैं ॥ ३ ॥

तत् क्षेत्रं यच्च यादृक् च यद्विकारि यतश्च यत् ।
स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु ॥ ४ ॥

तत् १ क्षेत्रम् २ यत् ३ च ४ यादृक् ५ च ६ यद्विकारि ७ यतः ८ च ९ यत् १० सः ११ च १२ यः १३ यत्प्रभावः १४ च १५ तत् १६ समासेन १७ मे १८ शृणु १९ ॥ ४ ॥ ❀उ०❀प्रथम द्वितीय मन्त्रोंमें जो संक्षेप करके कहा है उसी को विस्तार करके फिर श्रीभगवान् कहा चाहते हैं महाराजने यह जाना कि अभी अर्जुनकी समझमें नहीं आया इसवास्ते अर्जुनसे फिर कहते हैं—ऋषीश्वरों मुनीश्वरों की अपेक्षासे फिर भी संक्षेपहीकरके कहते हैं. श्रीभगवान् इस मन्त्रमें प्रतिज्ञा करते हैं कि—हे अर्जुन ! इतने शब्दोंका अर्थ तुझसे कहूंगा वे शब्द ये हैं ❀अ०❀सो १ स्थूलशरीर २ जड़दृश्य स्वभाववाला ३ और ४ इच्छादि धर्मवाला ५ और ६ इन्द्रियादि विकार करके युक्त ७ प्रकृति पुरुष के संयोग से होता है ८ और ९ स्थावर जंगम भेद करके भिन्न १० क्षेत्रज्ञ ११ । १२ स्वरूप से १३ और अचिंत्य ऐश्वर्य योगशक्ति आदि प्रभावकरके युक्त १४ । १५ इन सबका अर्थ १६ संक्षेपसे १७ मुझसे १८ सुन १९ ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥ ५ ॥

ऋषिभिः १ बहुधा २ गीतम् ३ छन्दोभिः ४ विविधैः ५ पृथक् ६ हेतुमद्भिः ७ ब्रह्मसूत्रपदैः ८ च ९ एव १० विनिश्चितैः ११ ॥ ५ ॥ उ० ❋जो ज्ञान मैं तुझसे कहता हूं यही ज्ञान अनादि वेदोक्त है विद्वानों ने यही निश्चय किया है ❋अ० ❋ऋषीश्वरों ने १ बहुत प्रकारसे २ इसी ज्ञानको ❋निरूपण कियाहै ३ वे दोनों ४ भी ❋पृथक् पृथक् करके ५ पृथक् ६ कहा है और ❋हेतुवाले ब्रह्मसूत्रपदों करके ७ । ८ । ९ । १० कहा गया है. कैसे हैं वे सूत्रपद कि ❋बहुत भले प्रकार निश्चय किये गये हैं। ११ टी० वसिष्ठादिने ध्यानधारणादि साधनों और प्रकृति पुरुषोंके विवेकसे ब्रह्मकी प्राप्ति होती है इस प्रकार ऋषियोंने निरूपण किया है और कर्महीं फलदाता है. यज्ञादि करनेसे, देवतोंका पूजन करनेसे, परमपद स्वर्गकी प्राप्ति है. बहुत जगह वेदोंमें इसप्रकार निरूपण किया है और व्यासजीने ब्रह्मसूत्र पदोंको संक्षेपकरके सूत्र बनाये हैं कि जिनसे यथार्थ प्रभुका स्वरूप जाना जाता है. ब्रह्म जाना जावे तटस्थलक्षणा और स्वरूपलक्षणाकरके जिनसे उनको ब्रह्मसूत्र कहते हैं ॥ ५ ॥

महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च।
इन्द्रियाणि दशैकञ्च पञ्च चेन्द्रियगोचराः ॥ ६ ॥

महाभूतानि १ अहङ्कारः २ बुद्धिः ३ अव्यक्तम् ४ एव ५ च ६ इन्द्रियाणि ७ दश ८ एकम् ९ च १० पञ्च ११ च १२ इन्द्रियगोचराः १३ ॥ ६ ॥ उ० क्षेत्रका लक्षण दो श्लोकों में कहते हैं ❋अ० ❋आकाशादि पञ्चीकृत १ भूतोंका कारण २ महत्तत्व ३ मूलाज्ञान ४ । ५ । ६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्द्रिय ७ दश ८ एक ९ मन १० और पञ्चतन्मात्रा अपञ्चीकृत सूक्ष्म-भूत ११ । १२ और ❋इन्द्रियोंके विषय शब्दादि पञ्च १३ इन सबका भेद और अर्थ आनन्दामृतवर्षिणीके द्वितीय अध्याय में लिखा है ॥ ६ ॥

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना धृतिः ।
एतत् क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् ॥ ७ ॥

इच्छा १ द्वेषः २ सुखम् ३ दुःखम् ४ संघातः ५ चेतना ६ धृतिः ७ एतत् ८ क्षेत्रम् ९ समासेन १० सविकारम् ११ उदाहृतम् १२ ॥ ७ ॥ अ० ❋इस लोक वा परलोकके पदार्थोंकी चाह १ अपने इष्टमें जो विघ्नकारी प्रतीत होता हो उसमें जो अन्तःकरणकी वृत्ति २ सुख (तीन प्रकारका अठारहवें अध्यायमें निरूपण होगा) ३ विक्षेप प्रतिकूल जिसको दुःख कहते हैं ४ स्थूलशरीर ५ ज्ञानात्मिका अन्तःकरण की वृत्ति कि जिसके प्रकट होनेसे सब अनर्थों की निवृत्ति हो जाती है. संसार, कार्य-कारणसहित अत्यन्ताभावको प्राप्त हो जाता है ६ धृति तीन प्रकार की अठारहवें अध्याय में निरूपण होगी ७ यह ८ क्षेत्र ९ संक्षेप करके १० विकारवान् ११ कहा है १२ । तात्पर्य, क्षेत्र विकारवान् है, क्षेत्रज्ञ निर्विकार है मूलाज्ञान से क्षेत्रज्ञ भी विकारवान् प्रतीत होता है ॥ ७ ॥

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् ।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्य्यमात्मविनिग्रहः ॥८॥

अमानित्वम् १ अदम्भित्वम् २ अहिंसा ३ क्षान्तिः ४ आर्जवम् ५ आचार्योपासनम् ६ शौचम् ७ स्थैर्य्यम् ८ आत्मविनिग्रहः ९ ॥ ८ ॥ उ० ❋आगे क्षेत्रज्ञका लक्षण कहना है उसके समझनेके लिये सतोगुणी अन्तर्मुख सूक्ष्मवृत्ति चाहिये इस वास्ते उसका साधन कहते हैं पांच श्लोकोंमें. जिसके ये बीस साधन होंगे उसकी समझ में क्षेत्रका स्वरूप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आवेगा. प्रथम इन साधनोंमें प्रयत्न करना योग्य है ❋अ० ❋मानरहित १ दम्भरहित २ हिंसारहित ३ क्षमा ४ कोमलता ५ सद्गुरु की सेवा ६ पवित्र बाहर भीतर ७ सन्मार्गमें स्थिरता ८ शरीरका निग्रह ९ इन सब साधनोंका अर्थ आनन्दामृतवर्षिणीके चतुर्थ अध्यायमें भले प्रकार लिखा है और उनका पृथक् पृथक् माहात्म्य फल जैसा शास्त्रोंमें लिखा है, वह प्रत्यक्ष होता है. इन साधनोंका ऐसा फल नहीं कि—जैसा एकादशीका फल परोक्ष है और ये साधन साधारण हैं. ब्राह्मण से लेकर चाण्डालपर्यन्त इनमें सबका अधिकार है ॥ ८ ॥

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ९ ॥

इन्द्रियार्थेषु १ वैराग्यम् २ अनहङ्कारः ३ एव ४ च ५ जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ६ ॥ ९ ॥ अ० इन्द्रियों के अर्थोंमें १ वैराग्य २ अहङ्काररहित ३ । ४ । ५ जन्म मृत्यु जरा व्याधि इन चारोंमें दुःख और दोषोंको सदा देखते रहना ॥ ६ ॥ ९ ॥

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ १० ॥

पुत्रदारगृहादिषु १ असक्तिः २ अनभिष्वङ्गः ३ इष्टानिष्टोपपत्तिषु ४ नित्यम् ५ समचित्तत्वम् ६ च ७ ॥ १० ॥ अ० पुत्रस्त्रीगृहादि में १ सक्त न होना २ पुत्रादिके दुःख—सुखमें अपनेको सुःखी नहीं मानना ३ इष्ट अनिष्टकी प्राप्ति में ४ दास ५ समचित्तरहना ६ । ७ ॥ १० ॥

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मयि १ च २ अनन्ययोगेन ३ अव्यभिचारिणी ४ भक्तिः ५ विविक्त-देशसेवित्वम् ६ जनसंसदि ७ अरतिः ८ ॥ ११ ॥ अ० मुझमें १ । २ अनन्ययोगकरके ३ अव्यभिचारीणी ४ भक्ति ५ विविक्तदेशमें रहनेका स्वभाव ६ प्राकृतजनों की सभामें ७ प्रीतिरहित ८ ॥ ११ ॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् ।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥ १२ ॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम् १ तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् २ एतत् ३ ज्ञानम् ४ इति ५ प्रोक्तम् ६ यत् ७ अतः ८ अन्यथा ९ अज्ञानम् १० ॥ १२ ॥ अ० वेदान्तशास्त्र को नित्य पढ़े, सुने, विचारे १ तत्व पदोंके अर्थ जाननेमें सदा निष्ठा रखनी २ यह ३ ज्ञान ४ यहां तक ५ कहा ६ जो ये भी साधन कहे उनको ज्ञान कहते हैं. इस जगह ज्ञानका अर्थ यह है कि—सच्चिदानन्दस्वरूप जाना जावे जिस करके उसको ज्ञान कहते हैं ब्रह्मज्ञानके ये अन्तरङ्ग साधन हैं इस वास्ते उनको भी ज्ञान कहा ❋ जो ७ इससे ८ उलटा है ९ तिसको ❋ अज्ञान १० कहते हैं अर्थात् जिसमें ये साधन नहीं वह अज्ञानी है. मान—दम्भादि को अज्ञानका कार्य होनेसे उसको भी अज्ञानही कहते हैं ॥ १२ ॥

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ।
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ॥ १३ ॥

यत १ ज्ञेयम् २ तत् ३ प्रवक्ष्यामि ४ यत् ५ ज्ञात्वा ६ अमृतम् ७ अश्नुते ८ अनादिमत् ९ परम् १० ब्रह्म ११ तत् १२ न १३ सत् १४ न १५ असत् १६ उच्यते १७ ॥ १३ ॥ उ० क्षेत्रज्ञ परमानन्दस्वरूप ब्रह्म आत्मा का लक्षण कहते हैं । अ० जो १ पूर्वोक्त साधनों करके ❋ जानने के योग्य २ तिसको ३ भले प्रकार कहूंगा ४ जिसको ५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानकर ६ अमृत को ७ प्राप्त होता है ८ अर्थात् जन्ममरणसे छूट सच्चिदानन्द स्वरूपको प्राप्त होता है❋फल निरूपण करके स्वरूपका वर्णन करते हैं❋अनादि ९ परेसे परे १० बड़ोंसे बड़ा ११ सो १२ न १३ सत् १४ न १५ असत् १६ कहा जाता है १७। तात्पर्य, जो उसको सत् कहैं तो असत् एक पदार्थ अर्थसे प्रतीत होता है और मन—वाणी का विषय भी प्रतीत होता है, जो जो पदार्थ मन वाणी के विषय हैं, सब अनित्य हैं. यह दोष ब्रह्म में भी आता है और इस बोलीसे अद्वैत सिद्ध नहीं होता और जो असत् कहैं तो यह अनर्थ है. क्योंकि, उनकी सत्तासे झूंठे से झूंठे पदार्थ सच्चे प्रतीत होवे हैं और जो कुछ भी न कहै तो अज्ञानियोंका संसार कैसे निवृत्त हो? तात्पर्य्य, वह ऐसा अचिन्त्य शक्तिमान् है कि—वास्तव मन—वाणीका विषय नहीं, परन्तु उसके भक्त तो उसको निरूपण करते हैं ॥ १३ ॥

सर्वतःपाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतःश्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ १४ ॥

तत् १ सर्वतःपाणिपादम् २ सर्वतोक्षिशिरोमुखम् ३ सर्वतःश्रुतिमत् ४ लोके ५ सर्वम् ६ आवृत्य ७ तिष्ठति ८ ॥ १४ ॥ उ० ❋अचिन्त्य अद्भुत शक्ति ब्रह्मकी निरूपण करते हैं❋अ०❋सो १ ब्रह्म ऐसा है कि❋सब तरफ हाथ पैर हैं जिसके २ सब ओर आंख शिर मुख हैं जिसके ३ सब ओर कान हैं जिसके ४ जगत् में ५ सबको ६ व्याप्तकर ७ स्थित है ८ अर्थात् सब प्राणियों की अन्तःकरण की वृत्तिमें प्राणादि की क्रिया में नखसे शिखापर्य्यन्त व्याप्त है, जिसको कूटस्थ कहते हैं. हस्तचरणादिसे जो क्रिया कि जाती हैं यह उसीकी सत्ता है. आंख—कान—नाकसे जो देखा, सुना, सूंघा जाता है यह उसीकी चैतन्यता है. अन्तःकरणमें जो सुख प्रतीत होता है यह उसी आनन्दकी छाया है.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जैसे, दर्पणमें अपना मुख देखकर अपना ज्ञान होता है ऐसेही अन्तःकरणकी वृत्तिमें उस आनन्दकी छाया देख वास्तव सच्चिदानन्दका ज्ञान होता है, इस प्रकार वह विषय भी है ॥ १४ ॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ॥ १५ ॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासम् १ सर्वेन्द्रियविवर्जितम् २ असक्तम् ३ सर्वभृत् ४ च ५ एव ६ निर्गुणम् ७ गुणभोक्तृ ८ च ९ ॥ १५ ॥ अ० सब इन्द्रियोंके शब्दादि विषयों में विषयाकार होकर प्रतीत होता है १ और वास्तव❋सब इन्द्रियोंकरके रहित २ वास्तव❋असक्त ३ है परन्तु❋सबका आधार पालनेवाला ४ । ५ । ६ कहा जाता है❋वास्तव❋सत्वादिगुणोंकरके रहित ७ है, परन्तु❋गुणोंका भोक्ता ८ । ९ प्रतीत होता है. विषयजन्य सुख—दुःखादिका अनुभव करता हुआ प्रतीत होता है ॥ १५ ॥

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥ १६ ॥

भूतानाम् १ अन्तः २ बहिः ३ च ४ अचरम् ५ चरम् ६ एव ७ च ८ सूक्ष्मत्वात् ९ तत् १० अविज्ञेयम् ११ च १२ अन्तिके १३ दूरस्थम् १४ च १५ तत् १६ ॥ १६ ॥ अ०❋भूतोंके १ भीतर २ और बाहर ३ । ४ भी है. जैसे, चांदनी सब जगह व्याप्त है, उपाधिके सम्बन्धसे किसी किसी जगह दीख पड़ती है कहीं नहीं दीखती इसी प्रकार ज्ञानचक्षुरहित पुरुषोंको नहीं प्रतीत होता है; ज्ञानियोंको प्रतीत होता है❋अचर ५ भी है और❋चर ६ भी ७ । ८ है जङ्गमोंके साथ सम्बन्ध होनेसे चर प्रतीत होता है, स्थावरोंके साथ सम्बन्ध होनेसे अचर प्रतीत होता है यह. वह वास्तव अचर है ऐसे कहो❋सूक्ष्म होनेसे ९

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साकार प्रमेय नहीं इस हेतुसे❋सो १० नहीं जाननेके योग्य है ११। १२ बहिर्मुख स्थूलबुद्धिवालोंको❋समीप १३ भी है❋और दूर स्थित है १४। १५ सो १६ क्षेत्रज्ञ परमात्मा—जो उसको अपना आत्माही जानते हैं कि क्षेत्रज्ञ परमानन्द स्वरूप हमारा आत्माही है, आत्मासे पृथक् कोई पदार्थ नहीं—उनको समीप है और जो बहिर्मुख विषयी उसको रूपादि मान वा बुद्ध्यादिका विषय अपनेसे पृथक् जानकर उसकी प्राप्तिके लिये दौड़ धूप करते हैं उनको कभी नहीं मिलैगा. जैसे, मृग कस्तूरीकी गन्धके वास्ते भटकता फिरता रहता है, वैसेही अज्ञानी भटकते रहेंगे ॥ १६ ॥

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम्।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ॥ १७॥

तत् १ ज्ञेयम् २ अविभक्तम् ३ च ४ भूतेषु ५ विभक्तम् ६ इव ७ च ८ स्थितम् ९ भूतभर्तृ १० च ११ ग्रसिष्णु १२ च १३ प्रभविष्णु १४ ॥ १७ ॥ अ० सो १ क्षेत्रज्ञ २ वास्तव❋पृथक् नहीं ३ और ४ भूतों में ५ पृथक् पृथक् ६ वत् ७। ८ स्थित ९ है❋भूतों का पालनेवाला १० स्थितिकाल में विष्णुरूप होकर और ११ प्रलयकाल-में❋नाश करनेवाला १२ रुद्ररूप होकर❋और १३ उत्पत्ति काल-में❋उत्पत्ति करनेवाला १४ ब्रह्मारूप होकर. तात्पर्य, सो क्षेत्रज्ञ सब भूतोंमें एक है, उपाधि के सम्बन्धसे पृथक् पृथक् प्रतीत होता है. वास्तव सो निर्विकार है ॥ १७ ॥

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य धिष्ठितम् ॥१८॥

तत् १ ज्योतिषाम् २ अपि ३ ज्योतिः ४ तमसः ५ परम् ६ उच्यते ७ ज्ञानम् ८ ज्ञेयम् ९ ज्ञानगम्यम् १० सर्वस्य ११ हृदि १२ धिष्ठितम् १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ १८ ॥ अ० सो १ ज्योतिका २ भी ३ ज्योति ४ है अर्थात चन्द्रसूर्य्यादि का भी प्रकाशक आत्माही है इसी हेतु से❋अज्ञान से ५ परे ६ कहा है ७ अज्ञानका कार्य बुद्ध्यादिका विषय नहीं; अज्ञान के कार्य से जानने में नहीं आता है. वह अपनेआप❋ज्ञानस्वरूप है ८ और अमानित्वादि साधनों करके❋ जानने योग्य है ९ तत्त्वज्ञानसेही जाना जाता है १० सबके ११ हृदय में १२ विराजमान है १३ ॥ १८ ॥

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ।
मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते ॥ १९ ॥

इति १ क्षेत्रम् २ तथा ३ ज्ञानम् ४ ज्ञेयम् ५ च ६ समासतः ७ उक्तम् ८ मद्भक्तः ९ एतत् १० विज्ञाय ११ मद्भावाय १२ उपपद्यते १३ ॥ १९ ॥ अ० यह १ क्षेत्र २ और ३ ज्ञान ४ और ज्ञेय ५ । ६ संक्षेप करके ७ तुझ से❋कहा ८ मेरा भक्त ९ इसको १० जानकर ११ मेरे भावको १२ प्राप्त होता है १३ । तात्पर्य, अमानादिसाधनसम्पन्न 'तत् त्वम्' पदोंके अर्थको जान, कृतार्थ होकर सच्चिदानन्द अपने स्वरूपको प्राप्त हो जाता है ॥ १९ ॥

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि ।
विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान् ॥२०॥

प्रकृतिम् १ पुरुषम् २ च ३ एव ४ उभौ ५ अपि ६ अनादी ७ विद्धि ८ विकारान् ९ च १० गुणान् ११ च १२ एव १३ प्रकृतिसंभवान् १४ विद्धि १५ ॥ २० ॥ अ० ईश्वरकी अचिंत्य शक्ति माया १ और सच्चिदानन्द ब्रह्म आत्मा २ । ३ ये ४ दोनों ५ ही ६ अनादि ७ हैं यह❋जान तू ८ देह इन्द्रियादि ९ और सुख दुःख मोहादि को १० । ११ । १२ । १३ प्रकृति से उत्पन्न हुआ १४ जान तू १५ । यह सृष्टिप्रकार आनन्दामृतवर्षिणीके द्वितीय अध्यायमें भले प्रकार लिखा है ॥ २० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥ २१ ॥

कार्यकारणकर्तृत्वे १ हेतुः २ प्रकृतिः ३ उच्यते ४ सुखदुःखानाम् ५ भोक्तृत्वे ६ हेतुः ७ पुरुषः ८ उच्यते ९ ॥ २१ ॥ अ० कार्यकारण के करने में १ अर्थात् शरीरादि की उत्पत्ति में❋ हेतुः २ प्रकृति ३ कही है ४ सुख-दुःखों के ५ भोगने में ६ हेतु ७ पुरुष ८ कहा है ९। टी० अन्तः-करणविशिष्ट चैतन्यपुरुष भोक्ता कहा जाता है. यद्यपि प्रकृति जड़ है, उसको शरीरादिकी उत्पत्ति में केवल हेतु कहना बेयोग है; परन्तु चैतन्यके सम्बन्धसे उसको जगत्का उपादान कारण कहते हैं और पुरुष निर्विकार है. उसको सुखादि के भोगमें हेतु कहना बेयोग है परन्तु प्रकृतिसन्बध से वह भोक्ता प्रतीत होता है. जैसे, चुम्बककी सन्निधिसे लोहा चेष्टा करता है, ऐसेही प्रकृति पुरुषकी व्यवस्था है और जैसे, मित्र-पुत्रादिके साथ स्नेह ममता करनेसे उनके सुखदुःखमें आपभी सुखदुःखका भोक्ता हो जाता है, ऐसेही जीव पुरुष देह इन्द्रियादि के साथ अध्यास आसक्ति करके दुःखा-दिका भोक्ता प्रतीत होने लगता है; वास्तव शुद्ध परमानन्दरूप है ॥ २१ ॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान्।
कारणं गुणसंगोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥ २२ ॥

पुरुषः १ प्रकृतिस्थः २ हि ३ प्रकृतिजान् ४ गुणान् ५ भुङ्क्ते ६ सदसद्योनिजन्मसु ७ अस्य ८ कारणम् ९ गुणसंगः १० ॥ २२ ॥ अ० आत्मा १ देहादि के साथ तादात्म्य अध्यास करके २ ही ३ प्रकृति से उत्पन्न हुये ४ सुख दुःखोंका ५ भोक्ता है ६ वास्तव अभोक्ता है❋ देवता मनुष्यादि योनियों के विषय जो इसका जन्म ७ इसका ८ कारण ९ गुणोंका संग १० सतोगुणके सम्बन्धसे देवता, रजोगुणके सम्बन्धसे मनुष्य, तमोगुणके सम्बन्धसे पशु कहा जाता है ॥ २२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपद्रष्टाऽनुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः॥ २३॥

अस्मिन् १ देहे २ पुरुषः ३ परः ४ उपद्रष्टा ५ अनुमन्ता ६ च ७ भर्त्ता ८ भोक्ता ९ महेश्वरः १० परमात्मा ११ इति १२ च १३ अपि १४ उक्तः १५ ॥ २३ ॥ उ० जो आत्मा है वह परमात्मा है और जिसको परमात्मा परमेश्वर कहते हैं, वह यही आत्मा है. जीव—ब्रह्मकी एकता स्पष्ट श्रीव्रजराज इस श्लोकमें दिखाते हैं। अ० इस १ देहमें २ जो❀ जीव ३ है सोई❀ परे से परे ४ द्रष्टा इव द्रष्टा ५ है साक्षात् द्रष्टा नहीं. क्योंकि दृश्य पदार्थ जब सच्चे हों तब उसको द्रष्टा सो वास्तव कहाजाय. दृश्य पदार्थ आविद्यक हैं इस वास्ते मायोपहित होने से उस को उपद्रष्टा कहते हैं❀ और कर्मजन्य सुख में सुख मानकर आनन्द को प्राप्त होताहै वास्तव आप आनन्दस्वरूपहै इस वास्ते उसको अनुमन्ता कहते हैं ६।७ और मायोपहित हुआ यही सच्चिदानन्द अविद्योपहित सच्चिदानन्द जीव का❀ पालन पोषण करनेवाला है ८ और वही भोक्ता है ९ महेश्वर १० और परमात्मा यह भी ११। १२। १२। १४ कहा जाता है १५ तात्पर्य, शुद्ध सच्चिदानन्दकी माया अविद्याके सम्बन्धसे जीव ईश्वर कहते हैं. जब दोनों उपाधि ब्रह्मज्ञान से नाश हो जाती हैं; फिर केवल शुद्ध सच्चिदानन्द एकही रह जाता है॥ २३ ॥

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह।
सर्वथा वर्त्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते॥ २४॥

यः १ एवम् २ पुरुषम् ३ वेत्ति ४ प्रकृतिम् ५ च ६ गुणैः ७ सह ८ सः ९ सर्वथा वर्तमानः १० अपि ११ भूयः १२ न १३ अभिजायते १४ ॥ २४ ॥ अ० जो १ इस प्रकार २ आत्मा को ३ जानता है ४ और प्रकृतिको ५। ६ गुणों के साथ ७। ८ जानता है, अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकृतिके स्वरूप को सत्त्वादिगुण और इन्द्रियार्थ के सहित जो जानता है❋सो ९ सर्वथा वर्तमान १० भी ११ फिर १२ नहीं १३ जन्म लेता १४। टी० वेदोक्त मार्गपर चलो अथवा प्रारब्धवशात् जैसी उसकी इच्छा हो वह तो मुक्तिमें सन्देह नहीं यह बात आनन्दामृतवर्षिणी के तीसरे अध्याय में स्पष्ट लिखी है ॥ २४ ॥

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ।
अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥ २५ ॥

केचित् १ आत्मानम् २ आत्मना ३ आत्मनि ४ ध्यानेन ५ पश्यन्ति ६ अन्ये ७ सांख्येन ८ योगेन ९ च १० अपरे ११ कर्मयोगेन १२ ॥ २५ ॥ अ० कोई १ आत्माको २ अन्तर्मुख निर्मल अन्तःकरणकी वृत्ति करके ३ इस देहमें ४ आत्माकारवृत्तिकरके ५ अर्थात् 'अहं ब्रह्मास्मि' इसका गङ्गावत् प्रवाह सदा बनारहे इसको ध्यान कहते हैं इस ध्यान करके❋देखते हैं ६ कोई ७ सांख्ययोग करके ८ अर्थात् प्रकृति-पुरुष विवेकद्वारा अथवा वेदान्तशास्त्रद्वारा❋और कोई अष्टाङ्गयोग करके ९ । १० अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि द्वारा❋और❋कोई ११ कर्म्मयोग करके १२ देखते हैं. यह क्रिया सब के साथ लगती है. कर्म्म दो प्रकार के हैं; गौण और मुख्य. स्नान श्राद्धादि बहिरङ्ग कर्म्म गौण हैं. शम दमादि अन्तरङ्ग कर्म्म मुख्य हैं. मुख्य साधनों में सबका अधिकार है ॥ २५ ॥

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वाऽन्येभ्य उपासते ।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥ २६ ॥

अन्ये १ तु २ एवम् ३ अजानन्तः ४ अन्येभ्यः ५ श्रुत्वा ६ उपासते ७ ते ८ अपि ९ च १० मृत्युम् ११ अतितरन्ति १२ एव १३ श्रुतिपरायणाः १४ ॥ १६ ॥ अ० और कोई १ । २ इस प्रकार ३ अर्थात् ध्यानरहित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्मा को ❋ नहीं जानते हुये ४ सद्गुरु महापुरुषों से ५ श्रवण करके ६ उपासना करते हैं ७ अर्थात् आत्मा को साक्षात् अपरोक्ष तौ नहीं जानते परन्तु वेद शास्त्र सद्गुरु द्वारा यह सुना है कि 'मैं ब्रह्म हूं.' 'अहं ब्रह्मास्मि' यही जप करतेहुये आत्मा की उपासना करते हैं ❋ वे ८ भी ९ । १० संसार को ११ उल्लंघ जाते हैं १२ निश्चय १३ क्योंकि ❋ श्रवणपरायण हैं १४ । कमसमझ यह कहा करते हैं कि विना ब्रह्म के जाने आपको ब्रह्म कहना चाहिये इस में पाप होता है. तुम्हारे में ब्रह्म की क्या शक्ति प्रतीत होती है ? ये लोग या तो ईर्षा—आमर्ष से कहते हैं या भगवत्वाक्यमें उनकी किञ्चित् श्रद्धा नहीं या मूर्ख हैं. क्योंकि, इस मन्त्र में श्रीभगवान् स्पष्ट कहते हैं कि—अनजान ब्रह्म का उपासक जो "अहं ब्रह्मास्मि" यह उपासना करता है, वह परंगतिको प्राप्त होता है. फिर न जानिये मूर्ख इस श्लोक का क्या अनर्थ करते हैं जब कि अनजान अवस्था में यह उपासना न करी तौ ज्ञान अवस्था में वे क्यों करेंगे ? उपासना साधन है; फल की प्राप्तिके वास्ते करते हैं. मूर्ख साधन से पहिलेही फल चाहते हैं. वे यह कहते हैं कि जब हम को ब्रह्म साक्षात् अपरोक्ष होगा तब "अहम्ब्रह्मास्मि" यह कहैंगे. विचारना चाहिये कि विना साधन कहीं फल मिलता है और भेद उपासना ज्ञान के गौण साधन हैं मुख्य साधन ज्ञाननिष्ठा का यही है कि "अहं ब्रह्मास्मि" यह महावाक्य श्रवण करके इसी का सदा जप किया करे वेदवाक्य भी इस में प्रमाण है ॥ २६ ॥

यावत्संजायते किञ्चित्सत्वं स्थावरजङ्गमम् ।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ ! ॥ २७ ॥

यावत् १ किञ्चित् २ सत्वम् ३ स्थावरजङ्गमम् ४ सञ्जायते ५ भरतर्षभ ६ तत् ७ क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात् ८ विद्धि ९ ॥ २७ ॥ अ० जहांतक १

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो कुछ २ पदार्थ ३ स्थावर जङ्गम ४ उत्पन्न होता है ५ हे अर्जुन! ६ तिस को ७ क्षेत्र क्षेत्रज्ञ के संयोग से ८ जान तू ९ ॥ २७ ॥

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥२८॥

सर्वेषु १ भूतेषु २ विनश्यत्सु ३ परमेश्वरम् ४ समम् ५ अविनश्यन्तम् ६ तिष्ठन्तम् ७ यः ८ पश्यति ९ सः १० पश्यति ११ ॥ २८ ॥ उ० विना विवेक संसार है यह पीछे कहा; अब उसकी निवृत्ति के लिये विवेक बुद्धि बताते हैं कि ऐसे आत्माका स्वरूप जानना चाहिये तब जानना कि अब ज्ञान हुआ। अ० सब भूतों में १। २ भूतों का❀नाश होते सन्ते भी ३ आत्मा को ४ सम ५ अविनाशी ६ स्थित ७ जो ८ देखता है ९ सो १० देखता है ११। तात्पर्य, आत्मा को जो अविनाशी पूर्णब्रह्म परमेश्वर जानते हैं देहादि के नाश में भी उसको अविनाशी जानते हैं वे आत्मा को यथार्थ जानते हैं ॥ २८ ॥

समं पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम्।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम्॥२९

ईश्वरम् १ समवस्थितम् २ सर्वत्र ३ समम् ४ पश्यन् ५ हि ६ आत्मना ७ आत्मानम् ८ न ९ हिनस्ति १० ततः ११ पराम् १२ गतिम् १३ याति १४ ॥ २९ ॥ अ० ईश्वर को १ निश्चल २ सर्वत्र ३ सम देखताहुआ ४। ५। ६ आत्माकरके ७ आत्मा को ८ नहीं ९ मारता है १० फिर ११ परम् १२ गतिको १३ प्राप्त होता है १४। तात्पर्य, जो ईश्वर को या जीव को विकारवान् विषम देखता है सो भेदवादी अपने आप अपना नाश करता है और ईश्वरको भी आत्मासे जुदा समझकर परिच्छिन्न अल्प प्रमेय करता है और आत्मा को भी इस हेतु से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महाहत्या आत्महत्या में जो पाप होता है सो पाप भी भेदवादीको लागता है इसी अर्थको व्यतिरेक मुख्य करके भगवत्ने इस में कहा है अर्थात् जो ईश्वर आत्मा को सर्वत्र देखता है सो आत्महत्यारा नहीं जो आत्माको विषम प्रमेय अल्प देखता है वह आत्महा है इत्यभिप्रायः ॥ २९ ॥

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।
यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति ॥ ३० ॥

सर्वशः १ क्रियमाणानि २ कर्माणि ३ प्रकृत्या ४ एव ५ च ६ यः ७ पश्यति ८ तथा ९ आत्मानम् १० अकर्तारम् ११ सः १२ पश्यति १३ ॥ ३० ॥ अ० सब प्रकार १ क्रियामाण २ कर्मों को ३ प्रकृति करके ४ ही ५ । ६ जो ७ देखता है ८ तैसेही ९ आत्माको अकर्ता ११ देखता १२ है १३ । तात्पर्य्य, सब कर्म धुरे भले शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण करके किये जाते हैं. 'आत्मा अकर्ता है' इस प्रकार जो आत्माको अकर्ता देखता है वह आत्माको भले प्रकार पहँचानता है ॥ ३० ॥

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ।
अत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा ॥ ३१ ॥

यदा १ भूतपृथग्भावम् २ एकस्थम् ३ अनुपश्यति ४ अतः ५ एव ६ च ७ विस्तारम् ८ तदा ९ ब्रह्म १० सम्पद्यते ११ ॥ ३१ ॥ अ० जिसकालमें १ भूतोंके पृथग्भावको २ आत्माके विषय ३ देखता है ४ और तिससेही ५ । ६ । ७ विस्तार ८ तिस कालमें ९ ब्रह्मको १० प्राप्त होता है ११ तात्पर्य अपने अज्ञानसेही सब जगत् विस्तार प्रतीत होता है और जब आत्माकार वृत्ति होती है, उस कालमें सब जगत् अत्यन्त अभावको प्राप्त हो जाता है. एक जीववादको जो जानते हैं, वे इस बातको समझ सक्ते हैं कि—अपना अज्ञान नाश हुये समस्त जगत्का अभाव हो जाता है ॥ ३१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्माऽयमव्ययः।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय! न करोति न लिप्यते॥ ३२॥

कौन्तेय ! १ अयम् २ परमात्मा ३ शरीरस्थः ४ अपि ५ अनादित्वात् ६ निर्गुणत्वात् ७ अव्ययः ८ न ९ करोति १० न ११ लिप्यते १२ ॥ ३२ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ यह २ परमात्मा ३ शरीरमें ४ भी ५ अनादि होनेसे ६ निर्गुण होनेसे ७ निर्विकार ८ है❋न ९ करता है १० न ११ लिपायमान होता है १२। तात्पर्य—देहादिकी क्रियामें आत्मा कर्ता नहीं और कर्मोंके न करनेसे अज्ञानीवत् पापके साथ स्पर्श नहीं करता ॥ ३२॥

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते॥ ३३ ॥

यथा १ आकाशं २ सर्वगतम् ३ सौक्ष्म्यात् ४ न ५ उपलिप्यते ६ तथा ७ आत्मा ८ सर्वत्र ९ देहे १० स्थितः ११ न १२ उपलिप्यते १३ ॥ ३३ ॥ अ० जैसे १ आकाश २ सर्व जगह व्याप्त है ३ सूक्ष्म होनेसे ४ किसीजगह❋नहीं ५ लिपायमान होता है ६ तैसे ७ आत्मा ८ सब जगह ९ देह में १० स्थित है ११ कर्मोंके साथ और कर्मों के फल के साथ❋नहीं १२ लिपायमान होता है १३ ॥ ३३ ॥

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत!॥ ३४॥

यथा १ एकः २ रविः ३ इमम् ४ कृत्स्नम् ५ लोकम् ६ प्रकाशयति ७ तथा ८ क्षेत्री ९ कृत्स्नम् १० क्षेत्रम् ११ प्रकाशयति १२ भारत १३ ॥ ३४ ॥ अ० जैसे १ एक २ सूर्य ३ इस ४ सम्पूर्ण ५ लोक को ६ प्रकाश कर रहा है ७ तैसेही ८ क्षेत्रज्ञ ९ समस्त क्षेत्रको १० प्रकाश कर रहा है ११। तात्पर्य—जो ज्ञान आनन्द देहमें प्रतीत होता है, सब उसी ज्ञानानन्दकी छाया है ॥ ३४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा ।
भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् ॥ ३५॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञानेर्देशयोगोनाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

ये १ एवम् २ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः ३ अन्तरम् ४ ज्ञानचक्षुषा ५ भूतप्रकृतिमोक्षम् ६ च ७ विदुः ८ ते ९ परम् १० यान्ति ११ ॥ ३५ ॥ अ० जो १ इसप्रकार २ पूर्वोक्त रीति करके ❋ क्षेत्र क्षेत्रज्ञका ३ भेद ४ ज्ञानचक्षु करके ५ देखते हैं ❋ और भूतोंकी जो प्रकृति—ध्यान विवेकादि—तिनके सकाश ते मोक्षको ६ ❋ ७ जानते हैं ८ वे ९ परमानन्दस्वरूप आत्माको १० प्राप्तवत् ❋ प्राप्त होते हैं ११ । तात्पर्य—बन्धका हेतुभी प्रकृति और मोक्षका हेतुभी प्रकृति है. तमोगुण रजोगुणके साथ सम्बन्ध करनेसे बन्धको प्राप्त होता है. सतोगुणके साथ सम्बन्ध करनेसे मोक्षको प्राप्त होता है. इसी अर्थको चतुर्दश अध्यायमें श्रीभगवान् स्पष्ट निरूपण करते हैं ॥ ३५ ॥

इति श्रीस्वामीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

॥ चतुर्दशोऽध्यायः ॥

श्रीभगवानुवाच—

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ भूयः १ ज्ञानानाम् २ उत्तमम् ३ ज्ञानम् ४ परम् ५ प्रवक्ष्यामि ६ यत् ७ ज्ञात्वा ८ सर्वे ९ मुनयः १० पराम् ११ सिद्धिम् १२ इतः १३ गताः १४ ॥ १ ॥ उ० सतोगुण के बढानेसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और रजोगुण तथा तमोगुण को कम करनेसे ज्ञानद्वारा परमानन्दकी प्राप्ति होती है, इस वास्ते इस अध्यायमें सत्त्वादिका भेद कहते हैं। अ० हे अर्जुन !❀फिर १भी❀ज्ञानी में २ जो❀उत्तम ३ ज्ञान ४ परमार्थनिष्ठ ५ तिसको मैं कहूंगा ६ इस अध्याय में तुझसे❀ जिसको ७ जानकर ८ सब मुनीश्वर ९। १० परमसिद्धिको ११। १२ इस देहसे पीछे १३ प्राप्त हुये १४। तात्पर्य—ज्ञान कै प्रकारका है ? कर्म उपासनादिका अर्थ जाना जाता है जिन ज्ञान करके उनको भी ज्ञान कहते हैं और परमानन्द परमस्वरूप आत्माका साक्षात् अपरोक्ष होता है जिस ज्ञानकरके एक यह उत्तम आत्मज्ञान है. सब ज्ञानोंमें आत्मज्ञान उत्तम है. क्योंकि, वह साक्षात् मुक्ति का मुख्य हेतु है और परब्रह्मकी निष्ठा प्राप्त करनेवाला है. इसी ज्ञान करके बहुत साधु महात्मा स्थूल-देहको त्यागकर परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त हुये हैं. हे अर्जुन ! तू मेरा प्यारा है, इस वास्ते यह उत्तम ज्ञान फिर भी तुझसे कहूंगा; यद्यपि पहले कहा है, परन्तु अब अन्य रीतिसे कहूंगा कि—जो शीघ्र समझमें आ जावे ॥ १ ॥

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥ २ ॥

इदम् १ ज्ञानम् २ उपाश्रित्य ३ मम ४ साधर्म्यम् ५ आगताः ६ सर्गे ७ अपि ८ न ९ उपजायन्ते १० प्रलये ११ च १२ न १३ व्यथन्ति १४ ॥ २ ॥ अ० इस १ ज्ञानको २ आश्रय करके ३ अर्थात् यह जो ज्ञान साधनसहित इस अध्याय में कहते हैं तिसका अनुष्ठान करके❀ मेरे ४ स्वरूप को ५ प्राप्त हुये ६ अर्थात् शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप हुये❀सृष्टि समय ७ भी ८ अर्थात् जब यह जगत् प्रलय होकर फिर उत्पन्न होगा उस समय भी❀नहीं ९ उत्पन्न होंगे १० अर्थात्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मायाके सम्बन्धी स्थूलादि देहोंको नहीं प्राप्त होंगे. क्योंकि, मायाके सम्बन्धसे दुःख होता है; मायाका ज्ञानसे नाश हो जाता है ॥ २ ॥

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ।
संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ! ॥ ३ ॥

मम १ योनिः २ महद्ब्रह्म ३ तस्मिन् ४ गर्भम् ५ दधामि ६ अहम् ७ भारत ८ ततः ९ सर्वभूतानाम् १० संभवः ११ भवति १२ ॥ ३ ॥ उ० श्रोताको सम्मुख करके सोई ज्ञान कहते हैं । अ० मेरी १ योनि (बीज धारण करने का स्थान–सब भूतों का कारण) २ प्रकृतिमाया ३ तिस में अर्थात् उस त्रिगुणात्मिका माया में ४ चिदाभासको ५ धारण करता हूं मैं ६ । ७ हे अर्जुन ! ८ मायोपहित ब्रह्मसे ९ सब भूतोंका १० आविर्भाव ११ होता है १२ अर्थात् मायामें जब सच्चिदानन्द की छायावत् छाया पड़ती है, तब सब भूत सूक्ष्म स्थूल प्रकट होते हैं. तात्पर्य–प्रभु जगत्के अभिन्ननिमित्तोपादान कारण है, नहीं है भिन्न निमित्त और उपादान कारण जिन्होंसे ॥ ३ ॥

सर्वयोनिषु कौन्तेय ! मूर्तयः सम्भवन्ति याः ।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥ ४ ॥

कौन्तेय ! १ सर्वयोनिषु २ याः ३ मूर्तयः ४ सम्भवन्ति ५ तासाम् ६ योनिः ७ महद् ८ ब्रह्म ९ अहम् १० बीजप्रदः ११ पिता १२ ॥ ४ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ सब भूतो में २ जो ३ मूर्ति ४ उत्पन्न होती हैं ५ तिनकी ६ योनि ७ प्रकृति ८ । ९ है और ❋ मैं १० बीज देनेवाला ११ पिता १२ । तात्पर्य–जो मूर्त्ति ब्रह्माजीसे ले चींटी पर्यन्त जंगम स्थावर जिस जिस जगह उत्पन्न होती हैं, तिनकी प्रकृति उपादान कारण है, ईश्वर निमित्त कारण है ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो! देहे देहिनमव्ययम्॥ ५॥

सत्वम् १ रजः २ तमः ३ इति ४ गुणाः ५ प्रकृतिसम्भवाः ६ महाबाहो ७ देहे ८ अव्ययम् ९ देहिनम् १० निबध्नन्ति ११॥ ५॥ उ० सत्त्वादि गुणोंने आत्मा को बन्धन कर रक्खा है यह कहते हैं। अ० सत्व १ रज २ तम ३ यह ४ गुण ५ प्रकृति से प्रगट होते हैं ६ हे अर्जुन! ७ इस ❀ देहमें ८ निर्विकार ९ जीव को १० बन्धन करते हैं ११। तात्पर्य—जीवके स्वरूप को भुला देते हैं आनन्दको अपने से जुदा पदार्थ जन्य जानकर जीव भ्रान्त हो जाता है। गुणों के सम्बन्धसे आनन्दस्वरूप अपने स्वरूपको भूल जाता है॥ ५॥

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ!॥ ६॥

अनघ! १ तत्र २ सत्त्वम् ३ निर्मलत्वात् ४ प्रकाशकम् ५ अनामयम् ६ सुखसंगेन ७ ज्ञानसंगेन ८ च ९ बध्नाति १०॥ ६॥ उ० सतोगुणका लक्षण और बन्धन प्रकार कहते हैं। अ० हे अर्जुन! १ तीनों गुणों में २ सतोगुण ३ निर्मल होनेसे ४ प्रकाशरूप ५ शान्तरूप ६ है ❀ सुखके साथ ७ और ज्ञान के साथ ८। ९ बन्धन करता है १० आत्मा को सत्त्वगुण ❀ तात्पर्य, सुख और ज्ञान ये दोनों अन्तःकरण की वृत्ति हैं मिथ्या अनात्मा मायाके कार्य हैं. मैं सुखी, मैं ज्ञानी, यह समझ कर जीव वृथा भ्रान्तिमें फँसता है. जिस कालमें सतोगुण तिरोभाव होजाता है, तमोगुण और रजोगुण प्रकट हो जाते हैं, तब यह ज्ञान और सुखभी जाता रहता है; दुःख शोकादिमें फँस जाता है॥ ६॥

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय! कर्मसङ्गेन देहिनम्॥ ७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कौन्तेय १ रजः २ रागात्मकम् ३ विद्धि ४ तृष्णासंगसमुद्भवम् ५ तत् ६ देहिनम् ७ कर्मसंगेन ८ निबध्नाति ९ ॥ ७ ॥ उ० रजोगुणका लक्षण और बन्धन प्रकार कहते हैं ❋ अ० हे अर्जुन ! १ रजोगुणको २ रागात्मक ३ जान तू ४ अर्थात् जिस समय स्त्रीमित्रादि पदार्थों का श्रवण स्मरण दर्शनादि करके अन्तःकरणकी वृत्ति में स्नेह उत्पन्न होता है और मन रञ्जन होने लगता है, इसीको रागात्मक कहते हैं. रजोगुणका यही स्वरूप है और ❋ तृष्णासंगकी उत्पत्ति है जिसमें ५ अर्थात् जब रजोगुणका आविर्भाव होता है, तब जो जो पदार्थ देखने सुननेमें आता है सबमें अभिलाषा होने लगती है. मनमें ये संकल्प विकल्प उत्पन्न होने लगते हैं कि—अमुक पदार्थ जो हमको मिलैगा तो उसमें हमको यह आनन्द मिलैगा. जब वह पदार्थ मिल जाता है तब उसमें आसक्ति हो जाती है. उसके वियोगमें दुःख होता है. ऐसे ऐसे रजोगुणाके कार्यसे रजोगुणाका ज्ञान होता है ❋ सो ६ रजोगुण ❋ जीव को ७ कामोंमें आसक्त करके ८ बन्धन करता है ९ । वेदोक्त कर्मोंमें और उनके फल में फँसजाता है जीव. रजोगुण ज्ञान के सम्मुख नहीं होने देता है ॥ ७ ॥

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् ।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत! ॥ ८ ॥

भारत १ तमः २ तु ३ अज्ञानजम् ४ सर्वदेहिनाम् ५ मोहनम् ६ विद्धि ७ तत् ८ प्रमादालस्यनिद्राभिः ९ निबध्नाति १० ॥ ८ ॥ उ० तमोगुणका लक्षण और बन्धनप्रकार कहते हैं । अ० हे अर्जुन ! १ तमोगुणको २ । ३ आवरणशक्ति प्रधान ४ सब जीवोंको ५ भ्रान्ति करनेवाला ६ जान तू ७ सो ८ निद्रा आलस्य प्रमाद करके ९ बन्धन करता है १० ॥८॥

सत्त्वं सुखे संजयति रजः कर्मणि भारत ।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत ॥ ९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारत १ सत्त्वम् २ सुखे ३ संजयति ४ रजः ५ कर्माणि ६ तमः ७ तु ८ ज्ञानम् ९ आवृत्य १० प्रमादे ११ संजयति १२ उत १३ ॥ ९ ॥ उ० सत्त्वादि अपने अपने आविर्भाव में जो करते हैं उनकी सामर्थ्य दिखाते हैं। अ० हे अर्जुन! १ सतोगुण २ सुखमें ३ लगाता है ४ अर्थात् जिससमय सतोगुण आविर्भाव होता है उससमय सुखके सम्मुख करता है और ❀ रजोगुण ५ कर्मोंमें ६ लगाता है ❀ और तमोगुण ७।८ ज्ञानको ९ ढूंढ़कर १० प्रमाद में ११ जोड़ता है १२। आनन्दामृतवर्षिणीके पांचवें अध्यायमें ये सब अर्थ स्पष्ट लिखे हैं ॥ ९ ॥

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत!।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा ॥ १० ॥

रजः १ तमः २ च ३ आभिभूय ४ सत्वम् ५ भवति ६ भारत ७ सत्वम् ८ तमः ९ च १० एव ११ रजः १२ सत्वम् १३ रजः १४ तथा १५ तमः १६ ॥ १० ॥ उ० एकगुण प्रकट रहता है, दो तिरोभाव रहते हैं; यह नियम है सोई इस मन्त्रमें कहते हैं। अ० रज १ और तमको २। ३ दबाकर ४ सत्व ५ प्रकट होता है ६ हे अर्जुन! ७ सत्व ८ और तमको ९। १०। ११ दबाकर ❀ तमोगुण १२ प्रकट होता है ❀ और सत्व रजको १३। १४। १५ दबाकर ❀ तमोगुण १६ प्रकट होता है ❀ जिस समय जो गुण प्रकट होगा उस समय वैसेही बात प्यारी लगेगी; दूसरे गुणका कार्य उस समय अच्छा नहीं लगेगा. जैसे, रजोगुण के आविर्भावमें नाच तमाशा स्त्री शब्दादि प्रिय लगते हैं; निद्रा आलस्य शम दमादि अच्छे नहीं लगते. सतोगुण के आविर्भाव में स्त्री आदि पदार्थ अच्छे नहीं लगते; सत्य दया संतोषादि अच्छे लगते हैं ॥ १० ॥

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन् प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदा १ अस्मिन् २ देहे ३ सर्वद्वारेषु ४ प्रकाशः ५ ज्ञानम् ६ उपजायते ७ तदा ८ सत्वम् ९ विवृद्धम् १० विद्यात् ११ इति १२ उत १३ ॥ ११ ॥ उ० जब शरीरमें सतोगुण बढा रहता है, उसका लक्षण यह है—अ० जिस कालमें १ इस देहके विषय २ । ३ सर्व द्वार श्रोत्रादि में प्रकाश अज्ञानात्मक ६ उत्पन्न होता है ७ तिस कालमें ८ सतोगुण ९ बढाहुआ १० जान ११ इत्यभिप्रायः १२ । १३ । ॥ ११ ॥

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा ।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ! ॥ १२ ॥

कुरुनन्दन १ रजसि २ विवृद्धे ३ एतानि ४ जायन्ते ५ लोभः ६ प्रवृत्तिः ७ आरम्भः ८ कर्मणाम् ९ अशमः १० स्पृहा ११ ॥ १२ ॥ उ० जब शरीरमें रजोगुण बडा रहता है उसका लक्षण यह है—अ० हे अर्जुन ! जब शरीरमें ❋ रजोगुण २ बढनेमें ३ ये ४ लोभादि ❋ उत्पन्न होते हैं ५ ज्यों ज्यों धनादिकी प्राप्ति हो त्यों त्यों अभिलाषा बढती है ६ धनादिकी प्राप्तिके लिये ऐसे तन्मय होकर प्रयत्न करते रहना कि—स्वप्नमें भी चित्त शान्त न हो ७ मन्दिर उपवनादि का जो प्रारम्भ कर रक्खा है सो तो पूरा हुआ नहीं दूसरा और प्रारम्भ कर दिया ८ कर्मोंका ९ अशम १० अर्थात् यह काम करके वह काम करूंगा ❋ बुरा भला कुछ न स्मरण करना जैसे बने यही इच्छा रखनी किसी प्रकार धनादि प्राप्त हों ११ ॥ १२ ॥

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च ।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ! ॥ १३ ॥

कुरुनन्दन १ तमसि २ विवृद्धे ३ एतानि ४ जायन्ते ५ अप्रकाशः ६ अप्रवृत्तिश्च ७ । ८ प्रमादः ९ मोहः १० एव ११ च १२ ॥ १३ ॥ उ० जब शरीरमें तमोगुण बढा रहता है उसका लक्षण यह है । अ० हे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्जुन ! १ तमोगुण बढ़नेमें २ । ३ ये ४ अप्रकाशादि ❋ उत्पन्न होते हैं ५ अविवेक ६ और इसलोक परलोक के निमित्त प्रयत्न न करना ७ । ८ और करना तौ यह करना कि ❋ द्यूतादि खेल खेलने ९ और अपनी उलटी समझसे ऐसे काम करने कि—उनका न इस लोकमें फल, न परलोकमें; क्रोधादि, अन्यकी हानिके लिये यत्न करना, किसीको बुरा कहना इत्यादि १० । ११ । १२ ॥ १३ ॥

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् ।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ॥ १४ ॥

सत्त्वे १ प्रवृद्धे २ तु ३ यदा ४ देहभृत् ५ प्रलयम् ६ याति ७ तदा ८ अमलान् ९ उत्तमविदाम् १० लोकान् ११ प्रतिपद्यते १२ ॥१४॥ उ० मरण समय जो गुण बढ़ा होवेगा ❋ उसका फल होगा कि जो अब दो श्लोकों में कहते हैं । अ० सतोगुण बढेहुये सन्ते १ । २ । ३ जिस काल में ४ जीव ५ मृत्युको ६ प्राप्त होता है ७ तिस काल में ८ निर्मल उत्तम उपासकोंके ९ । १० लोकों को ११ प्राप्त होता है १२ । तात्पर्य, हिरण्यगर्भादिके उपासक जिन निर्मल लोकोंमें जाते हैं, उन्ही लोकोंको वह प्राप्त होता है कि—जिसके अन्तकाल में सतोगुण बढा रहै ॥ १४ ॥

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसंगिषु जायते ।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते ॥ १५ ॥

रजसि १ प्रलयम् २ गत्वा ३ कर्मसंगिषु ४ जायते ५ तथा ६ तमसि ७ प्रलीनः ८ मूढयोनिषु ९ जायते १० ॥ १५ ॥ अ० रजोगुणमें १ मृत्युको २ प्राप्त होकर ३ कर्मसंगी मनुष्यों में ४ उत्पन्न होता है ५ तैसेही ६ तमोगुणमें ७ मराहुआ ८ पशु पक्षी मूढयोनियोंमें ९ जन्म लेता है १० ॥ १५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम्।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥ १६ ॥

सुकृतस्य १ कर्मणः २ निर्मलम् ३ सात्त्विकम् ४ फलम् ५ आहुः ६ रजसः ७ तु ८ फलम् ९ दुःखम् १० तमसः ११ फलम् १२ अज्ञानम् १३ ॥१६॥ उ० इस देहमें अपने आप विनायत्न सत्त्वादि जिस हेतुसे बर्तते हैं उसका कारण यह है। अ० सतोगुणी कर्मका १। २ कि जिसका लक्षण अठारहवें अध्याय में कहें गे अर्थात पिछले जन्ममें जो सतोगुणी कर्म किये हैं, उन शुभ कर्मोंका ❋ निर्मल ३ सतोगुण ४ फल ५ कहते हैं ६ और रजोगुणी का फल ७। ८। ९ दुःख १० है ❋ तमोगुण फल ११। १२ अज्ञान १३ है। तात्पर्य, कोई प्रयत्न करके सतोगुणको बढ़ाते हैं. किसीके स्वाभाविक शमदमादि देखनेमें आते हैं, सो पिछले सतोगुणी कर्मका फल समझना चाहिये. इस प्रकार रजोगुण-तमोगुणकी व्यवस्था है ॥१६॥

सत्त्वात्संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥ १७ ॥

सत्वात् १ ज्ञानम् २ संजायते ३ रजसः ४ लोभः ५ एव ६ च ७ प्रमाद-मोहौ ८ तमसः ९ भवतः १० अज्ञानम् ११ एव १२ च १३ ॥ १७ ॥ अ० सतोगुणसे १ ज्ञान २ उत्पन्न होता है ३ रजोगुणसे ४ लोभ ५ उत्पन्न होता है ६। ७ प्रमाद मोह ८ तमोगुणसे ९ होते हैं १० और अज्ञानभी ११। १२। १३ तमोगुणसे होजाता है ❋ तात्पर्य-ज्ञान, लोभ, अज्ञान, प्रमाद, मोहके उपलक्षण हैं. ज्ञानादि कहनेमें सत्वादि तीनों गुणोंका समस्त कार्य समझलेना चाहिये ॥ १७ ॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः॥१८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्वस्थाः १ ऊर्ध्वम् २ गच्छन्ति ३ राजसाः ४ मध्ये ५ तिष्ठन्ति ६ जघन्यगुणवृत्तिस्थाः ७ तामसाः ८ अधः ९ गच्छन्ति १० ॥ १८ ॥ उ० मरकर सत्वादि गुणों की तारतम्यता के लेख से फल होता है इस मन्त्र में यह कहते हैं। अ० सतोगुणी १ ऊपरके लोकोंको २ प्राप्त होते हैं ३ रजोगुणी ४ मध्यमें ५ स्थित रहते हैं ६ निकृष्ट गुणमें वर्तनेवाले ७ तमोगुणी ८ अधः (नीचे को) ९ प्राप्त होते हैं १०। इस जगह तारतम्यताका जो विचार है, सो आनन्दामृतवर्षिणीके पञ्चम अध्यायमें लिखा है ॥ १८ ॥

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टाऽनुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति॥ १९॥

यदा १ द्रष्टा २ गुणेभ्यः ३ अन्यम् ४ कर्तारम् ५ न ६ अनुपश्यति ७ गुणेभ्यः ८ च ९ परम् १० वेत्ति ११ सः १२ मद्भावम् १३ अधिगच्छति १४ ॥ १९ ॥ उ० गुणों के सम्बन्ध में ऐसा है यह बात पीछे कही. अब यह कहते हैं कि विवेकी गुणों से पृथक् है। अ० जिस काल में १ विवेकी २ गुणों से ३ पृथक् ४ कर्त्ता को ५ नहीं ६ देखता है ७ अर्थात् गुणही कर्त्ता है आत्मा साक्षीमात्र है जो ❀गुणोंसे ८। ९ परे १० आत्मा को ❀जानता है ११ सो १२ मेरे भावको १३ प्राप्त होता है १४ अर्थात शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप को प्राप्त होता है ॥ १९॥

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते॥ २० ॥

देही १ देहसमुद्भवान् २ एतान् ३ त्रीन् ४ गुणान् ५ अतीत्य ६ जन्ममृत्युजरादुःखैः ७ विमुक्तः ८ अमृतम् ९ अश्नुते १० ॥ २० ॥ अ० जीव १ देहाकार को प्राप्त हुये २ इन ३ तीन ४ गुणों को ५ उल्लंघकर ६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जन्ममृत्युजराव्याधि से ७ छुटा हुआ ८ नित्यानन्दस्वरूप को ९ प्राप्त होता है १०। तात्पर्य—येही तीनों गुण देहाकार हो रहे हैं, इनके साथ ममता संग अध्यास छोड़ देना यही इनका उल्लंघन करना है. जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि इनकेही सम्बन्धसे होते हैं और इनके सम्बन्धमें अपने शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूपको भूल जाता है. इनके त्यागमें प्रयत्न है. परमानन्दकी प्राप्तिमें कुछ यत्न नहीं ॥ २० ॥

अर्जुन उवाच—

कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो !।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्त्तते ॥ २१ ॥

अर्जुन उवाच❋प्रभो ! १ कैः २ लिङ्गैः ३ एतान् ४ त्रीन् ५ गुणान् ६ अतीतः ७ भवति ८ किमाचारः ९ कथम् १० च ११ एतान् १२ त्रीन् १३ गुणान् १४ अतिवर्तते १५ ॥ २१ ॥ अ० अर्जुन प्रश्न करता है कि❋हे समर्थ ! १ किन चिह्न करके २। ३ इन तीन गुणोंसे ४। ५। ६ अतीत ७ होता है ? ८ यह लक्षण प्रश्न है, अर्थात कैसे प्रतीत हो कि अमुक गुणातीत है वा मैं गुणातीत हूं वे कौन से लक्षण हैं और❋क्या आचार है उसका ९ अर्थात उसका व्यवहार चाल चलन कैसा होता है. यह आचारप्रश्न है❋और किस प्रकार १०। ११ इन तीन गुणोंका १२। १३। १४ उल्लंघन करता है ? १५ यह उपायप्रश्न है अर्थात वह क्या साधन है कि जिस करके पुरुष गुणातीत हो जावे ॥ २१ ॥

श्रीभगवानुवाच—

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव !।
न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कांक्षति ॥ २२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीभगवानुवाच ❋ प्रकाशम् १ च २ प्रवृत्तिम् ३ च ४ मोहम् ५ एव ६ इति ७ पाण्डव ८ संप्रवृत्तानि ९ न १० द्वेष्टि ११ निवृत्तानि १२ न १३ काङ्क्षति १४ ॥ २२ ॥ उ० द्वितीय अध्याय में भी अर्जुन ने यही प्रश्न किया अन्य रीतिकरके और श्रीमहाराजने उत्तर भी दिया भलेप्रकार. अब श्रीमहाराज ने यह समझा कि उस रीतिसे अर्जुनकी समझमें नहीं आया; अब अन्य रीतिसे कहना चाहिये. इस वास्ते इस बातको संक्षेप करके अन्य रीतिसे कहते हैं श्रीभगवान्, कि—जिससे जल्दी समझमें आ जावे. ऐसे करुणाकरको छोड़ जो अन्य उपायसे मोक्ष चाहते हैं, उनके अन्तःकरणमें रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति बढ़ी हुई हैं. अ० प्रकाश १ और प्रवृत्ति २ । ३ और मोह ४ । ५ । ६ । ७ ये तीन तीनों गुणों के कार्य हैं ये तीनों उपलक्षण हैं अर्थ से सत्त्वादि गुणोंका जितना कार्य है सब समझ लेना. जो ये अपने आप ❋ हे अर्जुन ! ८ भलेप्रकार बर्तरहे हों ९ तौं इनसे ❋ नहीं १० वैर करता है ११ अर्थात् उनकी प्रवृत्तिका कुछ उपाय नहीं करता है ❋ और फिर जब अपने आप दूर होजाते हैं तब ❋ निवृत्तों की १२ नहीं १३ चाह करता है १४ । यह लक्षणप्रश्नका उत्तर है । तात्पर्य, ब्रह्मज्ञानी न किसी गुणमें प्रीति करताहै, न वैर करताहै. सतोगुणमें प्रीति, रजोगुण में द्वेष जिज्ञासुका होता है. यह लक्षण स्वसंवेद्य है, पर संवेद्य नहीं, अर्थात् ऐसे महात्माको दूसरा नहीं पहंचान सक्ता. क्योंकि—वे आपं आपको छिपाये रखते हैं ॥ २२ ॥

उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते ।
गुणा वर्तन्त इत्येवं योऽवतिष्ठति नेङ्गते ॥ २३ ॥

यः १ उदासीनवत् २ आसीनः ३ गुणैः ४ न ५ विचाल्यते ६ गुणाः ७ वर्तन्ते ८ इति ९ एवम् १० यः ११ अवतिष्ठति १२ न १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इङ्गते १४ ॥ २३ उ० गुणातीतका क्या आचार है इस प्रश्नका उत्तर देते हैं । यह लक्षण ज्ञातीका परसंवेद्यभी है । अ० जो १ उदासीनवत् २ स्थित ३ गुणों करके ४ नहीं ५ विचलताहै ६ गुण वर्तरहे हैं ७ । ८ यह ९ समझता है कि मेरा गुणों से क्या सम्बन्ध है❋इसप्रकार १० जो ११ स्थित १२ अपने स्वरूप से❋नहीं १३ चलता है, १४ उसको गुणातीत कहते हैं ॥ २३ ॥

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥२४॥

समदुःखसुखः १ स्वस्थः २ समलोष्टाश्मकाञ्चनः ३ तुल्यप्रियाप्रियः ४ धीरः ५ तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ६ ॥ २४ ॥ अ० सुख–दुःखमें सम १ अर्थात् सुख–दुःखका प्रतीत होना यह अन्तःकरणका धर्म है यावत अन्तःकरण है तावत् बेसंदेह धर्मोंको अपना धर्म प्रतीत होगा. जिस धर्म से वह धर्मी कहाजाताथा जो वह धर्म न बर्तें तो फिर उसको उस धर्मवाला क्यों कहेंगे ? दुःख सुख ज्ञानीको अवश्य प्रतीत होता है. समताका यह अर्थ नहीं कि दुःख सुख प्रतीत न होवे. तात्पर्य यह है कि दुःख–सुख परमानन्दस्वरूप आत्माको कम सिवाय नहीं करसक्ते❋ अपने स्वरूपमें स्थित २ सम है लोहा पत्थर सोना जिसके ३ सम है प्रिय अप्रिय जिसके ४ धैर्यवाला ५ सम है अपनी निन्दा स्तुति जिसके ६ उसको गुणातीत कहते हैं । टी० जो आत्माकी निन्दा करता है वह अपनी पहले करता है और जो शरीरोंकी करता है, तो सहाय करता है और जो निन्दा करता है, वह अवगुणोंको सब बुरा कहते हैं सिवाय इसके अवगुण कहनेसे दूर हो जाता है इस बातको इतिहाससे स्पष्ट कहते हैं–एक राजाने बहुत ब्राह्मणोंको एकदिन जिमाया. भोजन किये पीछे वे सब ब्राह्मण मरगये. मर जानेका कारण यह हुआ कि–मैदानमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खीर हो रही थी. आकाश में चील सर्पको लिये जाती थी. सर्पके मुखमेंसे विष टपक खीरमें जा पड़ा. किसीने न देखा. नगरमें यह चर्चा हुई कि—राजाने ब्राह्मणोंको विष दे दिया. बहुत लोगोंका इसमें सम्मत न हुआ. तब एक दुष्टने यह बारीकी निकाली कि—राजा अमुक ब्राह्मणकी स्त्रीसे प्रीति रखता है. अकेला उस ब्राह्मणको मरवाना राजाने योग्य न समझ बहुतोंके साथ उसको भी न्यौतकर विष दे दिया. इस बात में बहुत लोगोंको निश्चय हो गया. जगह जगह यही चर्चा होने लगी. राजा बिचारा अकृतदोष इस निन्दाका मारा नगर छोड़ वनमें चला. वनमें आकाशवाणी हुई—'हे राजन् ! तेरा कुछ दोष नहीं; यह व्यवस्था ऐसे है—चील—सर्प—विषकी सब कथा सुनाई कि इस कथाको उन निन्दक दुष्टोंने भी सुना. वह हत्या राजाको छोड़ परमेश्वरके पास पहुंची. कहा कि—मुझको अब जगह बतलाइये. प्रभुने कहा कि, जिन्होंने राजाको दोष लगाया और कहा या सुना तुझको वहां रहना योग्य है, इसमें न राजाका दोष, न चीलका, न सर्पका, न रसोइयाका. राजा इसमें निमित्त था, सो उसको फल हो गया. राजा अपछू घर आया और हत्या निन्दकोंके मुखपर पहुँची. उस दिनसे हत्या निन्दकोंके मुखपर और जो किसी की बुराई मन लगाकर सुनते हैं उनके मुखपर वास करती है प्रत्यक्ष देख लो कि जिस समय किसी की कोई निन्दा करता हो या सुनता हो, दोनों की सुरत हत्यारोंकीसी होगी ॥ २४ ॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते ॥ २५ ॥

मानापमानयोः १ तुल्यः २ तुल्यः ३ मित्रारिपक्षयोः ४ सर्वारम्भपरित्यागी ५ गुणातीतः ६ स ७ उच्यते ८ ॥ २५ ॥ अ० मान—अपमान में १ सम २ मित्र—अरि के पक्ष में सम ३ । ४ सब शुभ—अशुभ कर्मों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के आरम्भ का त्यागी ५ सो❋गुणातीत ६। ७ कहा है ८। जीवन्मुक्त ज्ञानीको गुणातीत कहते हैं ॥ २५ ॥

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ २६॥

यः १ च २ माम् ३ अव्यभिचारेण ४ भक्तियोगेन ५ सेवते ६ सः ७ एतान् ८ गुणान् ९ समतीत्य १० ब्रह्मभूयाय ११ कल्पते १२ ॥ २६ ॥ उ० गुणातीत होनेका उपाय श्रीभगवान् कहते हैं। अ० जो १। २ मुझको ३ अव्यभिचारी भक्तियोग करके ४। ५ सेवन करता है ६ अर्थात् परमेश्वरकी ऐसी उपासना करे कि वह दिन दिन बढ़े कम न होनेपाई. अन्य काम बीचमें न हो उसको अव्यभिचारिणी भक्ति कहते हैं❋सो ७ इन गुणों को ८। ९ उल्लंघ करके १० ब्रह्मभाव को ११ प्राप्त होते हैं १२। तात्पर्य, परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्तिका उपाय जैसा भक्ति है और विशेष इस समयमें ऐसा अन्य उपाय शीघ्र प्रत्यक्ष जीतेजी फलका देनेवाला नहीं. यह अवतार श्री व्रजचन्द्र महाराजका इसी समय के लोगोंके उद्धार करने के लिये हुआ है. जैसे, इस समयके पाप बलवान् हैं, ऐसेही श्रीभगवान्का यह अवतार इन पापोंके नाश करनेमें समर्थ है ॥ २६ ॥

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥२७॥

अव्ययस्य १ अमृतस्य २ ब्रह्मणः ३ हि ४ अहम् ५ प्रतिष्ठा ६ च ७ शाश्वतस्य ८ च ९ धर्मस्य १० च ११ एकान्तिकस्य १२ सुखस्य १३ ॥ २७ ॥ अ० निर्विकार १ अविनाशी २ ब्रह्मकी ३ ही ४ मैं ५ मूर्ति ६। ७ हूं❋और सनातन धर्म की ८। ९। १० भी ११ अखण्डसुखकी १२। १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी मैं मूर्ति हूं। तात्पर्य—जो निराकार ब्रह्मको और अधर्म को और परमानन्दको नहीं जानते हैं, श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी उपासना दिन रात्रि करते हैं, वे ब्रह्मको अवश्य प्राप्त होते हैं. गुणातीत होनेका उपाय अर्जुनने जो बूझा था उसका उत्तर यह दो श्लोकों करके दिया, अर्थात् श्रीव्रजचन्द्र की भक्ति करनी गुणातीत होनेका उपाय है. यावत् निराकार निर्गुण परमानन्दस्वरूप आत्माका साक्षात्कार न हो तावत् साकार मूर्तिका आश्रय रखना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥ २७ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागो नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

॥ अथ पंचदशोऽध्यायः ॥

श्रीभगवानुवाच—

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ ऊर्ध्वमूलम् १ अधःशाखम् २ अश्वत्थम् ३ अव्ययम् ४ प्राहुः ५ यस्य ६ छन्दांसि ७ पर्णानि ८ यः ९ तम् १० वेद ११ सः १२ वेदवित् १३ ॥ १ ॥ उ० वैराग्य विना ज्ञान नहीं होता इस वास्ते संसार को वृक्षवत् वर्णन करते हैं। अ० मायोपहित ब्रह्म है मूल जिसकी १ क्योंकि मायोपहित से अन्य पदार्थ संसार में ऊर्ध्व ऊंचा बड़ा परे नहीं और शुद्ध ब्रह्म तो संसारसे पृथक् है सो मन वाणी का विषय नहीं ❀ हिरण्यगर्भादि शाखा हैं जिसकी २ क्योंकि हिरण्यगर्भादि मायो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पहित ब्रह्मसे नीचे पीछे हैं संसारको ❋ अश्वत्थ ३ अव्यय ४ कहते हैं ५ विना ज्ञान इसका नाश नहीं होता इस वास्ते तो इसको अव्यय कहते हैं. भगवत् की कृपासे जो ज्ञान हो जाता तो यह ऐसा भी नहीं कि कलतक ठहरा रहै. अश्वत्थ में अकार नकार की जगह है श्व इस शब्द का अर्थ कलका है जो कलतक न ठहरे उसको अश्वत्थ कहते हैं. अश्वत्थका अर्थ इस जगह पीपल नहीं समझना और यह भी नहीं समझना कि इस की जड़ ऊपर को है वृक्षवत् और शाखा नीचे हैं. ऐसे अर्थ समझना चाहिये कि जो ऊर्ध्व—अधःका अर्थ ऊपर लिखा है ❋ जिस के ६ वेद ७ पत्र ८ हैं. क्योंकि वृक्षकी शोभा पत्रोंसेही होती और पत्रों को ही देख वृक्ष में राग उत्पन्न होता है ऐसे वेदोक्त कर्मों के फल सुन सुन संसारमें राग बाढता चला जाता है. तात्पर्य वेदोंका समझमें नहीं आता; रोचक वाक्योंको सिद्धान्त समझ बैठते हैं ❋ जो ९ तिनको १० जानता है ११ सो १२ वेदोंको जाननेवाला है १३ अर्थात् जो वेदमार्ग को एक साधन समझता है और फल उसका परमानन्दस्वरूप आत्मा है सो वेदका अर्थ जानता है। द्वितीय अध्यायमें श्रीभगवान् कह चुके हैं कि वेद अज्ञानियों के वास्ते हैं कि सत्त्वादि गुणों में मोहको प्राप्त हो रहे हैं ॥ १ ॥

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः। अधश्च मूलान्यनुसंततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥ २ ॥

तस्य १ शाखाः २ अधः ३ च ४ ऊर्ध्वम् ५ प्रसृताः ६ गुणप्रवृद्धाः ७ विषयप्रवालाः ८ अधः ९ च १० मनुष्यलोके ११ कर्मानुबन्धीनि १२ मूलानि १३ अनुसन्ततानि १४ ॥ २ ॥ अ० तिस संसार वृक्षकी १ शाखा २ नीचे ३ और ऊपर ४ । ५ फैल रही हैं, सत्त्वादि गुणों करके बढती हुई हैं ७ विषय इस लोक परलोकके पत्ते हैं उस वृक्षके ८ नीचे ९। १०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी ❋ मनुष्यलोक में ११ कर्मोंके फल रागद्वेषादि १२ उसकी जड़ १३ फैल रही है १४ अर्थात् बहुत दृढ हो रही है. जैसे, रज्जुसे गठरी को पेंचपर पेंच देकर बांधते हैं चारों ओरसे तैसेही संसार की जड मनुष्यलोक में नीचे ऊपर अनुस्यूत ओतप्रोत हो रही है. तात्पर्य—कर्म करनेका अधिकार मनुष्यलोकमें ही है और कर्मोंका जो अनुबन्ध अर्थात् पश्चाद्भावि रागद्वेषादि कर्मोंका फल यह भी संसारकी जड है. वास्तव संसारकी जड मायोपहित ब्रह्म है, इस हेतुसे उसको ऊर्ध्वजड कहा, मनुष्यलोक में कर्म इसकी जड़ है मायोपहित ब्रह्मकी अपेक्षामें मर्त्यलोक नीचा है इस वास्ते इस जगह कहा कि इसके नीचे मध्यलोकमें भी कर्मकाण्ड जड़ है. ❋ ब्रह्मलोक—वैकुण्ठादि और मायोपहित ब्रह्म सूक्ष्म उपाधि करके उपहित—हिरण्यगर्भ स्थूल उपाधि करके उपहित विराट् और उसके अन्तर्गत ब्रह्मादि देवता यह तौ ऊपरको संसारकी शाखा फैल रही हैं और मर्त्यलोकमें पशु पक्षी मनुष्यादि यज्ञादि कर्म यह नीचे संसार की शाखा फैलरही हैं. जैसे जैसे सत्त्वादि गुणोंमें प्रीति करते हैं, तैसेही शाखा में से शाखा बढती चली जाती हैं. इसी हेतुसे न कुछ परलोक सावयव लोकोंका पता लगाता है कि चौदह लोक हैं या वैकुण्ठादि कितने लोक हैं और एक एक देवताकी उपासनामें अनेक अनेक भेद असंख्यात हैं और अबतक अनेक भेद शाखा निकलती हैं और नीचे मनुष्योंका जो व्यवहार है इसका कुछ प्रमाण नहीं. न जातिका प्रमाण, न कुलके व्यवहारोंका प्रमाण है. संसारवृक्ष में शब्दादि विषय कोमलसुन्दर पत्र लगरहे हैं. देवता, मनुष्य, पश्वादि सब प्राणियों ने विषयोंका आश्रय ले रक्खा है सोई साक्षात् भोगते हैं. कोई उनके लिये वेदोक्त कर्म कर रहे हैं. इस संसारकी व्यवस्था इस जगह बहुत संक्षेपकरके लिखी गई है. वैराग्यवान् पुरुषोंसे और योगवासिष्ठादि ग्रन्थोंसे इसकी व्यवस्था श्रवण करनी योग्य है कि यह कैसे अनर्थोंका मूल है ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा । अश्वत्थमेनं सुविरूढमूलमसंगशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥ ३ ॥

इह १ अस्य २ रूपम् ३ तथा ४ न ५ उपलभ्यते ६ न ७ अन्तम् ८ नच ९ आदिः १० च ११ न १२ संप्रतिष्ठा १३ सुविरूढमूलम् १४ एनम् १५ अश्वत्थम् १६ दृढेन १७ असंगशस्त्रेण १८ छित्त्वा १९ ॥ ३ ॥ अ० संसार में १ जैसा ❋ इस संसारका २ रूप ३ वर्णन करते हैं ❋ तैसा ४ बेसन्देह ❋ नहीं ५ प्रतीत होता है ६ इसका न ७ अन्त ८ और न आदि ९ । १० । ११ न १२ स्थिति १३ इस की प्रतीत होती है कि ' यह कैसे उत्पन्न हुआ ? कैसे लय होगा ? कैसे ठहर रहा है ?' क्षणभंगुरस्वप्न इन्द्रजालवत इसके पदार्थ प्रतीत होते हैं. अनर्थोंका मूल, दुःखोंका स्थान है. जो पदार्थ नरकका कारण उसके विना निर्वाह नहीं होता. जो उसको अशेष त्याग दिया जावे तौ, यह असम्भव है. इस प्रकार बँधी हुई है भलेप्रकार जड़ जिसकी १४ इस अश्वत्थको १५ । १६ दृढ असंग शस्त्रसे १७ । १८ छेदनकरके १९ परमपद परमानन्द स्वरूप आत्माको ढूंढना चाहिये. अगले मन्त्रके साथ इस मन्त्रका संबन्ध है. तात्पर्य—इस संसारकी व्यवस्था सब मतवाले जुदी जुदी कहते हैं. अपने मतको सब बड़ा कहते हैं; दूसरे को बुरा कहते हैं. कोई बेसन्देह समन्वय नहीं करता कि वास्तव संसार की यह व्यवस्था है और अमुक अमुक जो यह कहते हैं, उनका तात्पर्य यह है कि—मुमुक्षुको कैसे निश्चय हो कि अमुक मत सच्चा है ? जो निर्णय करो तौ एक घटका निर्णय नहीं हो सक्ता है. एक घटकी चर्चामें समस्त अवस्था समाप्त हो जावें, परन्तु घटका निर्णय न हो. न्यायशास्त्रवाले चर्चाके बलसे कुछका कुछ सिद्ध कर दें. विद्याकी तौ यह व्यवस्था है. एक मत नहीं कि जिसपर निश्चय बना रहै. तात्पर्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह है कि—सब प्रकार संसार दुःखरूप है, इसका भी निर्णय न करे. इसके दूर होनेका यत्न करै, कभी इसमें प्रीति न करे, सदा संसारसे ग्लानि बनी रहै, तब परमानन्दस्वरूप आत्माकी प्राप्ति होती है ॥ ३ ॥

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः । तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥ ४ ॥

ततः १ तत् २ पदम् ३ परिमार्गितव्यम् ४ यस्मिन् ५ गताः ६ भूयः ७ न ८ निवर्तन्ति ९ तम् १० एव ११ च १२ आद्यम् १३ पुरुषम् १४ प्रपद्ये १५ यतः १६ पुराणी १७ प्रवृत्तिः १८ प्रसृता १९ ॥ ४ ॥ उ० असंगशस्त्रसे संसारको छेदन करके। अ० पीछे १ सो २ पद ३ ढूंढना योग्य है ४ जिसमें ५ प्राप्त होकर ६ फिर ७ न ८ लौटना पड़े ९ उसके ढूंदने का भक्तिमार्ग कहते हैं❋तिसही १०। ११। १२ आदिपुरुष की १३। १४ मैं शरण हूं १५ कि❋जिस से १६ अनादि १७ प्रवृत्ति १८ फैली है १९। तात्पर्य, संसारके किसी पदार्थमें नीचे ऊपर प्रीति न करे. वैराग्य के पीछे वह पद ढूंढे कि—जहां जाकर फिर जन्म लेना न पड़े. यत्न उस पदकी प्राप्तिका यह है कि—तटस्थलक्षण जो परमात्माका है, उस लक्षण से उसको लक्ष्य करके उसकी भक्ति करनी चाहिये. स्वरूप भक्तिका यह है कि जिस परमात्मासे यह अनादि अनिर्वाच्य संसारवृक्ष नीचे ऊपर फैला है, सोई आदिपुरुष मेरा आश्रय है. उसकी मैं शरण हूं, वह मेरी रक्षा करनेवाला है, वह अन्तर्यामी सब के हृदय में विराजमान समर्थ है, इस संसारवनके पार मुझको वही लगावेगा, ऐसा चिन्तन सदा बना रहै. इसी को भक्ति कहते हैं ॥ ४ ॥

निर्मानमोहा जितसंगदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः । द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निर्मानमोहाः १ जितसंगदोषाः २ अध्यात्मनित्याः ३ विनिवृत्तकामाः ४ सुखदुःखसंज्ञैः ५ द्वन्द्वैः ६ विमुक्ताः ७ मूढाः ८ तत् ९ अव्ययम् १० पदम् ११ गच्छन्ति १२ ॥ ५ ॥ उ० औरभी आत्माकी प्राप्तिके साधन कहते हैं । अ० दूर हो गये हैं मान—मोह जिनके १ जीता है संग का दोष जिन्हों ने २ जो वेदान्तशास्त्र के श्रवण, मनन, विचार में नित्य लगे रहते हैं ३ समस्त कामना इस लोक परलोक की जाती रही हैं जिनकी ४ सुख--दुःख यह है नाम जिनका ५ इत्यादि ❋ द्वन्द्व करके ६ छूटे हुये ७ ज्ञानी आत्मतत्त्व के जाननेवाले ८ तिस ९ निर्विकार १० पदको ११ प्राप्त होते हैं १२ कि जिस पदके विशेषण अगले मन्त्रमें हैं. तात्पर्य, मुमुक्षु को चाहिये कि प्रवृति मार्गवालों का संग न करे और जिस ग्रन्थों में प्रवृत्तिमार्ग का विशेष निरूपण है उनका भी श्रवण न करे. जिस पदार्थ को जिह्वासे कहेगा, कानों से सुनेगा, अवश्य उसके गुण संस्कार अन्तःकरण में प्रवेश होंगे. प्रवृत्तिशास्त्रमें स्त्री-पुत्र, राजसंयोग--वियोगादि पदार्थों का वर्णन विशेष है. इस हेतु से मुमुक्षु को उसका कहना सुनना निषेध है. ब्रह्मविद्या में केवल वैराग्य, उपरति, शान्ति, शम—दमादि साधनोंका निरूपण है. स्त्रीआदि पदार्थोंका सम्बध ऐसा अनर्थ नहीं करता कि जैसा जो उनके गुण वर्णन करता है, उनका संग अनर्थ करता है ॥ ५ ॥

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः ।
यज्ज्ञात्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥ ६ ॥

तत् १ सूर्यः २ न ३ भासयते ४ न ५ शशाङ्कः ६ न ७ पावकः ८ यत् ९ गत्वा १० न ११ निवर्तन्ते १२ तत् १३ मम १४ परम् १५ धाम १६ ॥ ६ ॥ उ० पूर्वोक्त पद के विशेषण कहते हैं। अ० जिसको १ सूर्य २ नहीं ३ प्रकाश कर सक्ता है ४ न ५ चन्द्रमा ६ न ७ अग्नि ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और ❋ जिसको ९ प्राप्त होकर १० नहीं ११ लौटकर आते हैं १२ जन्म-मरण में ❋ सो १३ मेरा १४ परं १५ धाम १६ है। तात्पर्य—सूर्यादि जड़ पदार्थ अज्ञान का कार्य ज्ञानस्वरूप आत्माको कैसे प्रकाश करसक्ते हैं ? आत्माही को 'परंपद परंधाम' कहते हैं. तैजस सावयव मन्दिरों को (वैकुण्ठादि नाम हैं जिनके, उनको) धाम इस जगह नहीं समझना. क्योंकि, वहां सूर्यादि सब प्रकाश कर सक्ते हैं. जैसे, सूर्यादि तेजका कार्य है ऐसेही वे लोक हैं. प्रभुका धाम प्रभु से जुदा नहीं यह बात आठवें अध्यायमें स्पष्ट कर चुके हैं ॥ ६ ॥

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥ ७ ॥

जीवलोके १ सनातनः २ जीवभूतः ३ मम ४ एव ५ अंशः ६ प्रकृतिस्थानि ७ इन्द्रियाणि ८ कर्षति ९ मनःषष्ठानि १० ॥ ७ ॥ अ० संसार में १ अनादि २ जीव ३ मेरा ४ ही ५ अंशवत् ❋ अंश ६ है. जैसे महाकाशका अंश घटाकाश ❋ पर्वतवत् चिद्घनका अंश चित्कणजीवको समझना न चाहिये. क्योंकि परमात्मा निरवयव आकाशवत् है; सावयव पर्वतवत् नहीं. जैसे पर्वत का अंश पत्थरका टूक होता है ऐसा जीव अंश नहीं. आकाशका दृष्टान्त या बिम्ब—प्रतिबिम्बका दृष्टान्त समझना चाहिये सो जीव सुषुप्तिकाल और प्रलयकाल में ❋ प्रकृति में स्थित रहता है ७ जो इन्द्रिय तिन ❋ इन्द्रियों ८ को खैंचता है ९ कैसी हैं वे इन्द्रियाँ ❋ मन है छठां जिनमें १० अर्थात् पञ्चज्ञानेन्द्रिय पञ्चकर्मेन्द्रिय पञ्चप्राण अन्तःकरणचतुष्टय ये सब कारण अविद्या में सूक्ष्म अविद्यारूप हुये रहते हैं. सुषुप्तिप्रलयमेंसे इन सब को वही अविद्योपहित चिदाभास जीव स्थूल सूक्ष्म भोगोंके लिये अपने साथ ले लेता है ॥ ७ ॥

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥ ८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ईश्वरः १ यत् २ शरीरम् ३ अवाप्नोति ४ यत् ५ च ६ अपि ७ उत्क्रामति ८ एतानि ९ गृहीत्वा १० संयाति ११ वायुः १२ गन्धान् १३ आशयात् १४ इव १५ ॥ ८ ॥ अ० देहका स्वामी जीव १ जिसकाल में २ देहको ३ प्राप्त होता है ४ और जिस कालमें ५ । ६ । ७ एक-देहसे दूसरे देहमें जाता है ८ तिस कालमें ❋ इसको ९ ग्रहण करके १० प्राप्त होता है ११ दूसरे देहमें दृष्टान्त कहते हैं ❋ वायु १२ गन्धको १३ पुष्पादि से १४ जैसे १५ लै जाता है. तात्पर्य, इन्द्रियादि को साथ लेकर जाता है ॥ ८ ॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥ ९ ॥

श्रोत्रम् १ चक्षुः २ स्पर्शनम् ३ च ४ रसनम् ५ घ्राणम् ६ एव ७ च ८ मनः ९ च १० अयम् ११ अधिष्ठाय १२ विषयान् १३ उपसेवते १४ ॥ ९ ॥ अ० श्रोत्र १ चक्षुः २ त्वक् ३ और ४ रसना ५ और नासिका ६ । ७ । ८ और मन को ९ । १० । यह ११ जीव ❋ आश्रय करके १२ विषयों को १३ भोगता है १४ । तात्पर्य—बुद्धिमें प्रतिबिम्ब जो चैतन्यका सो भोक्ता जीव. मनमें प्रतिबिम्ब जो उसी चैतन्य का सो अन्तःकरण. इन्द्रियों में प्रतिबिम्ब जो चैतन्यका सो वह करण. शब्दादि विषयों में प्रतिबिम्ब चैतन्यका सो कर्म. कर्त्ता को प्रमाता चैतन्य कर्म को प्रमेय चैतन्य कहते हैं. प्रमाता, प्रमेय जब ये दोनों चैतन्य एक होते हैं, उसको प्रत्यक्ष भोग कहते हैं ॥ ९ ॥

उत्क्रामन्तं स्थितं वाऽपि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् ।
विमूढानानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥ १० ॥

विमूढाः १ उत्क्रामन्तम् २ स्थितम् ३ वा ४ अपि ५ भुञ्जानम् ६ वा ७ गुणान्वितम् ८ न ९ अनुपश्यन्ति १० ज्ञानचक्षुषः ११ पश्यन्ति १२ ॥ १० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ० यथार्थ जीवका स्वरूप ज्ञानीही जानते हैं; बहिर्मुख विषयी नहीं जानते हैं। अ० बहिर्मुख १ जीवको❀एक देहसे दूसरे देहमें जाते हुयेको २ और देहमें स्थित हुये को ३। ४ भी ५ और भोगतेहुये को ६ और इन्द्रियादिके साथ संयुक्त हुये को ७। ८ नहीं ९ देखते हैं १० ज्ञाननेत्रवाले ११ देखते हैं १२। तात्पर्य, अविवेकी यह भी नहीं जानते कि जीव किसप्रकार विषयों को भोगता है. अकेलाही भोगता है या इन्द्रियादि के सम्बन्ध से भोगता है और यह शरीरों में कैसे स्थित है. शरीरादि इसका आश्रय है या आत्मा देहादिका आश्रय है या कुछ अन्य प्रकार है? यह कैसे इस देहमें से छूट दूसरे देहमें जाता है? ॥ १० ॥

यजन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम्।
यतन्तोप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥ ११ ॥

यजन्तः १ योगिनः २ च ३ एनम् ४ आत्मनि ५ अवस्थितम् ६ पश्यन्ति ७ अचेतसः ८ अकृतात्मानः ९ यतन्तः १० अपि ११ एनम् १२ न १३ पश्यन्ति १४ ॥ ११ ॥ उ० यह नहीं समझना कि—आत्माको तो सबही जानते हैं. ऐसा कौन है कि जो आपको न जाने. अपना जानना यही ज्ञानकी अवधि है. सब प्राणी तो आत्माको क्या जानेंगे? बहुत विद्यावान् वेदोक्त अनुष्ठान करनेवाले भी नहीं जानते। अ० ज्ञानयोग में यत्न करनेवाले १ योगी २। ३ आत्मा को ४ देहमें ५ स्थित ६ और देहसे विलक्षण❀देखते हैं ७ मन्दमति ८ मलीन अन्तःकरणवाले ९ यत्न करतेहुये १० भी ११ आत्मा को १२ नहीं १३ देखते १४। तात्पर्य—वैदिक मार्गवाले भी कोई कोई जो आत्माको नहीं जानते, उसमें हेतु यह है कि वे वेदान्तमें श्रद्धा नहीं करते; जीवको परिच्छिन्न समझते हैं. और एक यह बड़ा आश्चर्य है कि वेदकी दृष्टि से अदृष्ट सूतकादि उनको लगजावें और आत्मा में यह निश्चय न हो कि "मैं ब्रह्म हूँ" ॥ ११ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥१२॥

आदित्यगतम् १ यत् २ तेजः ३ अखिलम् ४ जगत् ५ भासयते ६ यत् ७ चन्द्रमसि ८ यत् ९ च १० अग्नौ ११ तत् १२ तेजः १३ मामकम् १४ विद्धि १५ ॥ १२ ॥ अ० सूर्य में १ जो २ तेज ३ समस्त ४ जगत् को ५ प्रकाश करता ६ जो ७ चन्द्रमा में ८ और जो ९ । १० तेज ❋ अग्नि में ११ सो १२ तेज १३ मेराही १४ जान १५ ॥ १२ ॥

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः॥१३॥

गाम् १ आविश्य २ च ३ भूतानि ४ धारयामि ५ अहम् ६ ओजसा ७ रसात्मकः ८ च ९ सोमः १० भूत्वा ११ सर्वाः १२ औषधीः १३ पुष्णामि १४ ॥ १३ ॥ अ० पृथिवी में १ प्रवेश करके २ । ३ भूतोंको ४ धारण करता हूं ५ मैं ६ बलकरके ७ और रसवाला ८ । ९ चन्द्र १० होकर ११ सब ओषधियों को १२ । १३ पुष्ट करता हूं १४ ॥ १३ ॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥ १४ ॥

प्राणिनाम् १ देहम् २ आश्रितः ३ अहम् ४ वैश्वानरः ५ भूत्वा ६ प्राणापानसमायुक्तः ७ चतुर्विधम् ८ अन्नम् ९ पचामि १० ॥ १४ ॥ अ० जीवनके १ शरीरमें २ स्थित हुआ ३ मैं ४ जठराग्नि ५ होकर ६ प्राणापानादि के साथ मिलकर ७ चार प्रकारके ८ अन्नको ९ पचाता हूं १० । टी० पूरी आदिको भक्ष्य, खीर आदिको भोज्य, चटनी आदिको लेह्य, पौंडे आदिको चोष्य कहते हैं. तात्पर्य—सूर्य, चन्द्रमा, पृथिवी आदि पदार्थोंमें जो जो गुण हैं, यह सब चैतन्य देवकी सत्ता है. वे सब जड़ हैं. चैतन्य सबका प्रेरक है ॥ १४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञान-
मपोहनं च। वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदांतकृ-
द्वेदविदेव चाहम् ॥ १५ ॥

सर्वस्य १ हृदि २ अहम् ३ सन्निविष्टः ४ मत्तः ५ च ६ स्मृतिः ७ ज्ञानम् ८ अपोहनम् ९ च १० सर्वैः ११ वेदैः १२ च १३ अहम् १४ एव १५ वेद्यः १६ वेदान्तकृत् १७ च १८ विदवित् १९ एव २० अहम् २१ ॥ १५ ॥ अ० सबकी १ बुद्धिमें २ मैं ३ प्रवेश हूं ४ और मुझसे ५। ६ स्मृतिः ७ ज्ञान ८ और इन दोनोंका ❋ भूल जाना ९ भी १० मुझसे होता है ❋ और सब वेदोंकरके ११। १२। १३ मैं १४ ही १५ जानने के योग्य १६ हूं अर्थात् सब वेद मुझको ही प्रतिपादन करते हैं ❋ वेदान्त करनेवाला १७ और वेदों को जाननेवाला भी १८। १९। २० मैं २१ ही हूँ। तात्पर्य, जहां जहां प्रभु अपनी विभूति कहते हैं, उनका अभिप्राय जीव-ब्रह्मकी एकता पूर्णता में है. ज्ञानशक्तिक्रियाकरके उपहित जो चैतन्य, उससे ज्ञान स्मृति होती है. आचरणशक्ति प्रधान जो चैतन्य उससे मूल अज्ञान होता है ॥ १५ ॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते॥ १६॥

इमौ १ द्वौ २ पुरुषौ ३ लोके ४ क्षरः ५ च ६ अक्षरः ७ एव ८ च ९ सर्वाणि १० भूतानि ११ क्षरः १२ कूटस्थः १३ अक्षरः १४ उच्यते १५ ॥ १६ ॥ उ० कहे हुये पिछले अर्थको फिर संक्षेपकर कहते हैं कि जिससे जल्द समझ में आ जाय ❋ अ० ये १ दो २ पुरुष ३ लोक में ४ प्रसिद्ध हैं ❋ क्षर ५ और अक्षर ६। ७। ८। ९ सब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूतोंको १०। ११। क्षर १२ कूटस्थ को १३ अक्षर १४ कहते हैं १५। टी० लौकिक बोली में देहको भी पुरुष कहते हैं इस वास्ते दोनोंको पुरुष कहा देह इन्द्रियादि पदार्थोंको क्षर कहते हैं और इस जगह माया का नाम अक्षर है. कूट कपटमें जिसकी स्थिति है, सो माया. कूटस्थ का अर्थ इस जगह अक्षरार्थसे माया समझना. यावत् ब्रह्मज्ञान नहीं होता तावत् माया अक्षर स्पष्ट प्रतीत होती है इत्यभिप्रायः ॥ १६ ॥

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥ १७ ॥

उत्तमः १ पुरुषः २ तु ३ अन्यः ४ परमात्मा ५ उदाहृतः ६ इति ७ यः ८ अव्ययः ९ ईश्वरः १० लोकत्रयम् ११ आविश्य १२ बिभर्ति १३ ॥ १७ ॥ उ० शुद्ध, सच्चिदानन्द, परमात्मा, नित्यमुक्त, क्षर, अक्षर दोनोंसे विलक्षण है यह समझ इसको आत्मज्ञान कहते हैं। अ० उत्तम १ पुरुष २ तो ३ अन्य ४ ही है. घटपटवत् अन्य भेदवाला नहीं. बिम्ब-प्रतिबिम्बवत् अन्य है उसी को❋परमात्मा ५ कहा है ६ यह ७ समझ अर्थात् वह यही आत्मा है कि जिसको वेदों में ऋषीश्वर मुनीश्वरोंने परमात्मा कहा है❋जो ८ निर्विकार ९ ईश्वर १० त्रिलोक में ११ प्रवेश होकर १२ धारण करताहै १३ अर्थात् उसकी ऐसी अचिन्त्यशक्ति हैं कि वह वास्तव निर्विकार ईश्वर है; परन्तु त्रिलोकको धारण कर रहा है ॥ १७॥

यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोतमः ॥१८॥

यस्मात् १ क्षरम् २ च ३ अक्षरात् ४ अपि ५ अहम् ६ उत्तमः ७ अतीत. ८ अस्मि ९ अतः १० लोके ११ वेदे १२ च १३ पुरुषोत्तमः १४ प्रथितः १५ ॥ १८ ॥ अ० जिस हेतुसे १ क्षर अक्षर से २। ३। ४ भी ५ मैं ६ उत्तम मन वाणीका अविषय ७ और इन दोनों से❋अतीत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नित्यमुक्त ८ हूं ९ इसी हेतु से १० शास्त्रमें ११ और वेदोंमें १२ । १३ मुझको ❀पुरुषोत्तम १४ कहा है १५। तात्पर्य, नित्यमुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द परिपूर्ण आत्माको 'पुरुषोत्तम' कहते हैं. कभी किसी कालमें जहां बन्ध मोक्ष—सत्, असत् शब्दोंका कुछ प्रसंगभी नहीं ॥ १८ ॥

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ! ॥ १९ ॥

भारत १ यः २ असंमूढः ३ एवम् ४ माम् ५ पुरुषोत्तमम् ६ जानाति ७ सः ८ सर्ववित् ९ सर्वभावेन १० माम् ११ भजति १२ ॥ १९ ॥ उ० जो आत्मासे अभिन्न परमात्माकोही पुरुषोत्तम जानता है, उसका माहात्म्य कहते हैं। अ० हे अर्जुन ! १ जो २ मूलाज्ञानरहित विद्वान् ३ इस प्रकार ४ कि मैं क्षर अक्षर दोनों से अन्य नित्यमुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द हूं ❀मुझ ५ पुरुषोत्तमको ६ जानता है ७ सो ८ सर्वज्ञ विज्ञान ९ सर्वभाव करके १० मुझको ११ भजता है १२ । तात्पर्य, जिसको आत्मज्ञान हुआ वह सदा भजनही करता रहता है ॥ १९ ॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयाऽनघ ! ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान् स्यात् कृतकृत्यश्च भारत! ॥२०॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तमयोगो नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अनघ १ मया २ इदम् ३ गुह्यतमम् ४ शास्त्रम् ५ उक्तम् ६ इति ७ भारत ८ एतत् ९ बुद्ध्वा १० बुद्धिमान् ११ कृतकृत्यः १२ च १३ स्यात् १४ ॥ २० ॥ उ० इस अध्यायमें समस्त शास्त्र-वेदोंका सिद्धान्त श्रीनारायणने निरूपण कर दिया. जो इस अध्याय के अर्थको जान गया वह कृतकृत्य हुआ. उसको कुछ कर्तव्य नहीं रहा और जिसका मन, पाप पुण्य में खटकता है आत्माको 'असंग अकर्त्ता' नहीं समझा उसने इस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अध्याय के अर्थ को भी नहीं समझा. क्योंकि श्रीमहाराज स्पष्ट कहते हैं कि इस अध्यायके अर्थ को जानकर कृतकृत्य होजाता है । अ० हे अर्जुन ! १ मैंने २ यह ३ गुप्ततम ४ शास्त्र ५ कहा ६ इति इस शब्द का यह तात्पर्य्यार्थ है कि समस्त गीताशास्त्र गुप्ततम है और गीताहीको शास्त्र कहते हैं. परन्तु इस जगह शास्त्रशब्दका तात्पर्य इसी अध्यायमें है। ७ हे अर्जुन ! ८ इस को ९ अर्थात् इसी अध्याय के अर्थ को❀ जानकर १० ब्रह्मज्ञान ११ और कृतकृत्य १२ । १३ हो जाता है । १४❀फिर उसको कुछ कर्त्तव्य नहीं वह कर्म्म बन्धनसे मुक्त हुआ ॥२०॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां

पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

॥ अथ षोडशाध्यायः ॥

श्रीभगवानुवाच—

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ १ ॥

अभयम् १ सत्त्वसंशुद्धिः २ ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ३ दानम् ४ दमः ५ च ६ यज्ञः ७ च ८ स्वाध्यायः ९ तपः १० आर्जवम् ११ ॥ १ ॥ उ० दैवीसम्पत्के २६ लक्षण कहते हैं ढाई श्लोकों में । अ० भय न होना १ अन्तःकरण में राग द्वेषादिका न होना २ ज्ञानयोगमें स्थित रहना ३ दान करना सतोगुणी—कि जो सत्रहवें अध्याय में कहेंगे—४ और इन्द्रियों को दमन करना ५ । ६ और यज्ञ करना (सतोगुणी इसका लक्षणभी सत्रहवें अध्यायमें कहेंगे) ७ और ८ वेद—शास्त्रों का पढ़ना पाठ करना ९। तप दो प्रकारका है. एक सदा नित्यानित्य पदार्थों का विचार करना, दूसरा चान्द्रायणादि व्रत करना १० सीधापन ११ ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥ २॥

अहिंसा १ सत्यम् २ अक्रोधः ३ त्यागः ४ शान्तिः ५ अपैशुनम् ६ भूतेषु ७ दया ८ अलोलुप्त्वम् ९ मार्दवम् १० ह्रीः ११ अचापलम् १२ ॥ २ ॥ अ० मन-वाणी-शरीर करके किसी को दुःख नहीं देना १ सत्य बोलना २ क्रोध न करना ३ समस्त पदार्थोंका त्याग ४ अन्तःकरणका उपशम (निरोध) ५ पीछे किसी का अवगुण नहीं कहना ६ यथार्थ पापका कहनेवाला बराबर का पापी होता है और बढ़ाकर कहे तो दूना पापी होता है❋प्राणियों में ७ दया ८ नीचों के सामने दीनता न करनी ९ कोमलता १० खोटे कामों में लज्जा रनखी ११ चपल न होना १२ ॥२॥

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत!॥ ३॥

तेजः १ क्षमा २ धृतिः ३ शौचम् ४ अद्रोहः ५ अतिमानिता ६ न ७ भारत ८ दैवीम् ९ सम्पदम् १० अभिजातस्य ११ भवन्ति १२ ॥ ॥ ३ ॥ अ० प्रागल्भ्यता अर्थात् दृष्टिमात्र से दूसरा दब जाय बालक स्त्री मूर्खादि सहसा हँसी चोहल न कर बैठें. जैसे, राजा की दृष्टि रहती है ऐसेही पुरुषों को तेजस्वी कहते हैं १ सहना २ धैर्य ३ पवित्र रहना ४ वैर नहीं करना ५ अतिमानी ६ नहीं होना ७ हे अर्जुन! ८ दैवी ९ सम्पत् के १० जो सम्मुख❋जन्मा है ११ तिस में ये लक्षण❋होते हैं १२ कि जो पीछे ढाई श्लोकों में कहे. तात्पर्य-देवतोंका पद जिस को प्राप्त होता है, उसके ये लक्षण होते हैं. जिस में ये लक्षण स्वाभाविक न हों उसको उन विषे यत्न करना चाहिये ॥ ३ ॥

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च।
अज्ञानञ्चाभिजातस्य पार्थ! सम्पदमासुरीम्॥ ४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दम्भः १ दर्पः २ अभिमानः ३ च ४ क्रोधः ५ पारुष्यम् ६ एव ७ च ८ अज्ञानम् ९ च १० पार्थ ११ आसुरीम् १२ सम्पदम् १३ अभिजातस्य १४ ॥ ४ ॥ उ० इस मन्त्र में तो असुरों के लक्षण संक्षेप करके कहते हैं अभी. आगे फिर विस्तारसहित कहेंगे। अ० जो अपने में कोई तनकसा भी गुण हो तो उसको एक भाग का अनेक भाग बनाकर वारंवार लोगों के सामने अनेक युक्तियों के साथ प्रकट करना १ धन-विद्या—जाति—वर्णाश्रमादिका मनमें घमण्ड रहना २ और महात्मा साधु हरिभक्तों के सामने नम्र न होना ३। ४ द्वेष (वैर) करना ५ और कठोरता ६। ७। ८ अर्थात् आप तो छिप छिप मेवा मिश्री खावे; घर के लोगों को गुड भी नहीं! साधु हरिभक्तों को देखकर दुष्टों का हृदय भस्म हो जाय और वाणी से दुर्वाक्य कहने लगें ऐसा कठोर❀और मूलाज्ञान ९। १० हे अर्जुन! ११ आसुरी सम्पत् को १२। १३ जो प्राप्त होगा (आसुरपद के सामने मुख करके जो उत्पन्न हुआ है) १४ उस में ऐसे २ लक्षण होते हैं कि दम्भादि जो इस मन्त्र में कहे. ऐसे प्राणी पदको प्राप्त होंगे ॥ ४ ॥

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव!॥ ५ ॥

दैवीसम्पत् १ विमोक्षाय २ आसुरी ३ निबन्धाय ४ मता ५ पाण्डव ६ मा शुचः ७ दैवीम् ८ सम्पदम् ९ अभिजातः १० असि ११ ॥ ५ ॥ उ० दैवीसम्पत् आसुरीसम्पत का फल कहते हैं। अ० दैवीसम्पत् १ मोक्ष के लिये २ आसुरी ३ निबन्धनके लिये ४ मानी ५ हैं महात्मा महापुरुषों ने❀ हे अर्जुन! ६ तूं मत शोच कर ७ दैवीसम्पत के सन्मुख ८। ९ जन्मा १० है तू ११। दैवीसम्पत् के लक्षणों की ओर तेरी वृत्ति हैं. देवतों के पद को तू प्राप्त होगा. तात्पर्य, ज्ञानद्वारा मोक्ष होगा. दैवीसम्पत् के लक्षण जिनमें हैं उनकाही ज्ञान में अधिकार है; असुरों का नहीं ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥ ६ ॥

अस्मिन् १ लोके २ भूतसर्गौ ३ द्वौ ४ दैवः ५ आसुरः ६ एव ७ च ८ पार्थ ९ दैवः १० विस्तरशः ११ प्रोक्तः १२ आसुरम् १३ मे १४ शृणु १५ ॥ ६ ॥ अ० इस जगत् में १। २ भूतों की सृष्टि ३ दो प्रकार की ४ है ❋ एक ❋ दैव ५ (देवसम्बन्धिनी) ❋ दूसरी ❋ आसुर ६। ७। ८ (असुरसम्बन्धिनी) हे अर्जुन ! ९ दैव १० अर्थात् देवतोंका लक्षण तो ❋ विस्तारपूर्वक ११ मैंने ❋ कहा १२ असुरोंका लक्षण १३ मुझसे १४ विस्तारपूर्वक अब ❋ सुन १५। असुरस्वभाव को त्यागना चाहिये इत्यभिप्रायः ॥ ६ ॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः।
न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥ ७ ॥

प्रवृत्तिम् १ च २ निवृत्तिम् ३ च ४ आसुराः ५ जनाः ६ न ७ विदुः ८ तेषु ९ न १० शौचम् ११ न १२ अपि १३ च १४ आचारः १५ न १६ सत्यम् १७ विद्यते १८ ॥ ७ ॥ अ० प्रवृत्ति को १। २ और निवृत्ति को ३। ४ असुरजन ५। ६ नहीं ७ जानते हैं ८ तिनमें ९ न १० शौच ११ और न आचार १२। १३। १४। १५ न १६ सत्य १७ होता है १८। कोई प्रवृत्ति ऐसी होती है कि— उसका फल निवृत्ति है और कोई निवृत्ति ऐसी होती है कि उसका फल प्रवृत्ति है. यह समझ असुरोंको नहीं और वेदोक्त आचार तो पृथक् रहा. दुष्ट स्नान तक नहीं करते ! विना हाथ पैर धोये भोजन करने लगतेहैं. कोई कोई यह कहते हैं कि विना झूठ व्यवहार चलताही नहीं. जैसे, जूठन खाने में उनको ग्लानि नहीं ऐसे झूठ बोलना भी एक व्यवहार समझ रक्खा है! 'सत्यसम धर्म नहीं, असत्यसम अधर्म नहीं' इति सिद्धान्तः ॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ।
अपरस्परसंभूतं किमन्यत्कामहैतुकम् ? ॥ ८ ॥

ते १ जगत् २ अनीश्वरम् ३ आहुः ४ असत्यम् ५ अप्रतिष्ठम् ६ अपरस्परसंभूतम् ७ कामहैतुकम् ८ अन्यत् ९ किम् १० ॥ ८ ॥ अ० वे असुर १ जगत् को २ अनीश्वर ३ कहते हैं ४ अर्थात कर्मोंके फलका देनेवाला कोई भी नहीं, सब ❀ झूंठ ५ है. जैसे आप झूंठे हैं ऐसेही जगत् को झूंठा समझते हैं. कि जगत् की कुछ व्यवस्था नहीं ऐसेही गोल मोल चला आता है. वेदपुराणादि धर्मकी ❀ प्रतिष्ठा नहीं ६ समझते. वेदादि को बड़ा नहीं समझते. यह जानते हैं जैसे विद्या मनुषोंकी बनाई हुई है, वेद भी किसी मनुष्य के बनाये हुये हैं. धर्म के उपदेश को बहकाना समझते हैं. इस प्रकार जगत् को अप्रतिष्ठ अव्यवस्थित कहते हैं. 'असत्यं, अप्रतिष्ठं' ये दोनों जगत् के विशेषण हैं. जो कोई उन्हों से बूझे कि—'क्यों जी यह जगत् कैसे उत्पन्न हुआ है ? इसका क्या हेतु है ?' तो उत्तर यह देते हैं कि अजी ❀ परस्पर स्त्री—पुरुषों—के सम्बन्ध से हुआ है ७ कामदेव इसका हेतु है ८ अन्य ९ क्या १० हेतु होता ? ॥ ८ ॥

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ।
प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥ ९ ॥

नष्टात्मानः १ अल्पबुद्धयः २ उग्रकर्माणः ३ अहिताः ४ एताम् ५ दृष्टिम् ६ अवष्टभ्य ७ जगतः ८ क्षयाय ९ प्रभवन्ति १० ॥ ९ ॥ अ० मलिन चित्तवाले १ मन्दमति २ हिंसात्मक कर्मवाले ३ वैरी ४ धर्म के ❀ इस दृष्टि को ५ । ६ आश्रय करके ७ जगत् को ८ भ्रष्ट करने के लिये ९ हुये हैं १० । टी० 'जगतः अहिताः' अर्थात् 'जगत् के वैरी हैं' यह भी अर्थ हो सक्ता है. दुष्ट लोग साधु हरिभक्तों के वैरी होते हैं. साधु जगत्के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रक्षक हैं. जब कि उन से वैर किया तो सब जगत् से उनका वैर हुआ ❋ जो लौकिक व्यवहार है सोई सत्य है यह दृष्टि रखते हैं ॥ ९ ॥

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः ।
मोहाद्गृहीत्वाऽसद्ग्राहान् प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः॥१०॥

दम्भमानमदान्विताः १ दुष्पूरम् २ कामम् ३ आश्रित्य ४ अशुचिव्रताः ५ मोहात् ६ असद्ग्राहान् ७ गृहीत्वा ८ प्रवर्तन्ते ९ ॥ १० ॥ अ० दम्भ मान मद करके युक्त १ जिसका पूरण होना कठिन ऐसी २ कामना को ३ आश्रय करके ४ अपवित्र आचार है जिनका ५ बेहूदेपनसे ६ दुराग्रह को ७ अङ्गीकार करके ८ निन्दित मार्ग में ❋ वर्तते हैं ९ । तात्पर्य, 'यह मन्त्र जपकर अमुक भूत प्रेत को सिद्ध करेंगे, फिर उससे यह काम कर लेंगे' इसप्रकार बेहूदी बातें सुन सुन सीखसीख कि जिन बातोंमें सिवाय दुःखविक्षेपके कभी कुछ अन्य सुखादि फल नहीं, दम्भादिकरके अन्धे हो रहे हैं, किसी की सुनते भी नहीं, जो अङ्गीकार कर लिया उस में कितनी ही निन्दा क्षति हो त्यागना नहीं और यही आशा रखनी कि यह कर्तव्य हमारा हमको अवश्य सुख देगा ॥ १० ॥

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः ।
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥ ११ ॥

अपरिमेयाम् १ च २ प्रलयान्ताम् ३ चिन्ताम् ४ उपाश्रिताः ५ कामोपभोगपरमाः ६ एतावत् ७ इति ८ निश्चिताः ९ ॥ ११ ॥ अ० बेप्रमाण १ और २ मरण है अन्त जिसका ३ ऐसी ❋ चिन्ता का ४ आश्रय किये हुये ५ अर्थात् सदा ऐसी चिन्ता में लगेहुये कि जो मरने से तो समाप्ति हो, जीते जी सदा बनी रहे ❋ काम और भोगों से श्रेष्ठ कुछ अन्य नहीं ❋ यह ८ निश्चय है जिनका ९ ऐसे लोग अन्याय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके पदार्थों का संचय करते हैं. अगले मन्त्र के साथ इस मन्त्रका अन्वय है ॥ ११ ॥

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसंचयान् ॥ १२ ॥

आशापाशशतैः १ बद्धाः २ कामक्रोधपरायणाः ३ अन्यायेन ४ अर्थसंचयान् ५ कामभोगार्थम् ६ ईहंते ७ ॥ १२ ॥ अ० आशाकी सैकरों फांसीकरके १ बँधे हुये हैं २ अर्थात् असंख्यात आशामें फँसे हुये हैं छूट नहीं सक्ते❋काम क्रोध को ही परमस्थान बना रक्खा है अर्थात् सदा कामक्रोधपरायणा रहते हैं ३ अनीति करके ४ द्रव्य मकान गांव इकट्ठे करते हैं ५ भोगों के लिये ६ यही सदा❋चेष्टा करते रहते हैं ७ । तात्पर्य—पदार्थों के छीन लेने में तत्पर रहते हैं. जैसे, बने हत्यादि अनीति करके अपने भोग के अर्थ पराया माल छीन लेना और फिर भी असंख्यात आशा में फँसे रहना. सदा काम क्रोध बनेई रहने. ऐसे पुरुष नरक में पडेंगे. वहां इस श्लोक का अन्वय है ॥ १२ ॥

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥ १३ ॥

अद्य १ इदम् २ मया ३ लब्धम ४ इमम् ५ प्राप्स्ये ६ मनोरथम् ७ इदम् ८ मे ९ अस्ति १० इदम् ११ अपि १२ धनम् १३ पुनः १४ भविष्यति १५ ॥ १३ ॥ उ० दुष्ट जनोंका मनोराज्य चार मन्त्रोंमें कहते हैं । अ० अब १ यह २ तो❋मुझ को ३ प्राप्त है ४ और❋यह ५ प्राप्त करूंगा ६ यह मेरा❋मनोरथ ७ है❋यह ८ धनतो❋मेरा ९ है १० और❋यह ११ भी १२ धन १३ फिर १४ अवश्यही❋प्राप्त होगा १५ । ऐसे पुरुष अपवित्र नरकमें पड़ेंगे. सोलहवें मन्त्र में श्रीमहाराज यह कहेंगे ॥ १३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि।
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान् सुखी ॥१४॥

मया १ असौ २ शत्रुः ३ हतः ४ च ५ अपरान् ६ अपि ७ हनिष्ये ८ अहम् ९ ईश्वरः १० अहम् ११ भोगी १२ अहम् १३ सिद्धः १४ बलवान् १५ सुखी १६ ॥ १४ ॥ अ० मैंने १ वह २ शत्रु ३ तो❋ मारा ४। ५ और अमुक अमुक❋ औरों को ६ भी ७ मारूंगा ८ मैं ९ समर्थ १० मैं ११ भोगी १२ मैं १३ सिद्ध १४ बलवाला १५ सुखी १६ हूं❋ टी० ❋लोगों के मारने में समर्थ हूं १० अच्छा खाता पीता हूं १२ कृतकृत्य हूं. मैंने बड़े बड़े काम किये हैं. कि वे मेरे ही करने के योग्य थे अन्य से नहीं हो सक्ते ॥ १४ ॥

आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योस्ति सदृशो मया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः ॥१५॥

आढ्यः १ अभिजनवान् २ अस्मि ३ मया ४ सदृशः ५ कः ६ अन्यः ७ अस्ति ८ यक्ष्ये ९ दास्यामि १० मोदिष्ये ११ इति १२ अज्ञानविमोहिताः १३ ॥ १५ ॥ अ० धनवान् साहूकार १ कुलीन २ हूं मैं ३ मेरी ४ बराबर ५ कौन ६ अन्य दूसरा ७ है? ८ अब मैं एक❋ यज्ञ करूंगा ९ उसमें बहुत कुछ❋ दूंगा १० आनन्द को प्राप्त हूंगा ११ इस प्रकार १२ अज्ञान करके मोहित हुये १३ झूठे वृथा मनोराज्य करते हुये अवस्था व्यतीत करते हैं. धन जाति के अभिमान में जले ही जाते हैं. यज्ञकरने का जो मनोराज्य है, उसमें उनका यह तात्पर्य है कि—थोड़ा बहुत रजोगुणी तमोगुणी अन्न ऐसे वैसे ब्राह्मणों को जिमा कर औरोंकी बुराई किया करैंगे और दो चार पैसे देनेकोही बड़ा दान समझते हैं. जब कभी किसी फकीर को वा खुशामदी लोगों को या नट-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वेश्यादिकोंको अपनी बड़ाई के लिये कुछ देते हैं, तो अपनेको बड़ा दाता समझते हैं और नंतर बहुत प्रसन्न होते हैं ॥ १५ ॥

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः ।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥ १६ ॥

अनेकचित्तविभ्रान्ताः १ मोहजालसमावृताः २ कामभोगेषु ३ प्रसक्ताः ४ अशुचौ ५ नरके ६ पतन्ति ७ ॥ १६ ॥ उ० ऐसे लोगों की जो गति होती है उसको सुन । अ० अनेक मनोराज्य में चित्त विभ्रांत हो रहा है जिनका १ मोहके जाल में फँसे हुये २ कामभोगों में ३ आसक्त ४ हैं जो सो❋अपवित्र ५ नरकों में ६ पड़ेंगे ॥ १६ ॥

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः ।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥ १७ ॥

आत्मसंभाविताः १ स्तब्धाः २ धनमानमदान्विताः ३ ते ४ दम्भेन ५ अविधिपूर्वकम् ६ नामयज्ञैः ७ यजन्ते ८ ॥ १७ ॥ अ० अपने आपही आपको बड़ा समझकर अपनेको बड़ा प्रतिष्ठित जानते हैं १ अनम्र २ किसी महात्माके सामने नम्र नहीं होते❋धन करके जो उनका मान होता है, उस मान के मदमें भरे रहते हैं ३ अर्थात् धनकी चाह वाले मूर्ख, धनी लोगों का भी मान किया करते हैं❋जो ऐसे उन्मत्त हैं❋वे ४ दम्भ करके ५ शास्त्रविधिरहित ६ नाम यज्ञ करके ७ यजन करते हैं ८ अर्थात् वास्तव वह यज्ञ नहीं कि—जो वे करते हैं, उसका यज्ञ नाम बना रक्खा है. या नामके वास्ते यज्ञ करते हैं विधिरहित इत्यभिप्रायः ॥ १७ ॥

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः ।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥ १८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अहंकारम् १ बलम् २ दर्पम् ३ कामम् ४ क्रोधम् ५ च ६ संश्रिताः ७ आत्मपरदेहेषु ८ माम् ९ प्रद्विषन्तः १० अभ्यसूयकाः ११ ॥ १८ ॥ अ० अहङ्कार १ बल २ दर्प ३ काम ४ क्रोध को ५ । ६ आश्रय किये हुये ७ अपने देहके विषय और दूसरे देह के विषय ८ जो मैं सच्चिदानन्द विराजमान हूं ❀ मुझसे ९ द्वेष करते हैं १० मेरी ❀ निन्दा करते हैं ११ अपनी देह या पराई देहमें जो आत्माको पूर्ण ब्रह्म नहीं समझते वे भगवत्के निन्दक हैं और जो दूसरेसे द्वेष करते हैं वे भी प्रभुके द्वेषी हैं और जो मनुष्यदेह पाकर आत्मज्ञान के लिये यत्न नहीं करते, वे भी प्रभु के वैरी हैं इत्यभिप्रायः ॥ १८ ॥

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥ १९ ॥

संसारेषु १ नराधमान् २ द्विषतः ३ क्रूरान् ४ तान् ५ अहम् ६ अशुभान् ७ आसुरीषु ८ योनिषु ९ एव १० अजस्रम् ११ क्षिपामि १२ । ॥ १९ ॥ उ० ऐसे दुष्टों को जो मैं दण्ड देता हूं सो सुन दो मन्त्रों में। अ० संसार में १ आदमियों के विषय जो अधम नर २ साधु महापुरुषों-से वैर रखते हैं ३ निर्दयी दयारहित ४ तिनको ५ मैं ६ अशुभलोकों में ७ अर्थात् रौरवादि नरक में ❀ और ❀ आसुरी योनियों में ८ । ९ निश्चय १० सदाके लिये ११ फेकूंगा १२ अर्थात् पहिले तो बड़ेबड़े नरकों-में डालूंगा ऐसे दुष्टोंको कि जो मेरे भक्त साधुजनों को दुर्वाक्य बोलते हैं और जिनके लक्षण ऊपर कहे, उनको सदा इसी चक्रमें रक्खूंगा ॥ १९ ॥

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैव कौन्तेय! ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥२०॥

मूढाः १ आसुरीम् २ योनिम् ३ आपन्नाः ४ जन्मनि ५ जन्मनि ६ माम् ७ अप्राप्य ८ एव ९ कौन्तेय! १० ततः ११ अधमाम् १२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गतिम् १३ यान्ति १४ ॥ २० ॥ उ० ऐसे दुष्टों को मेरी प्राप्ति का मार्ग भी नहीं मिलेगा. क्योंकि मेरी प्राप्ति का मार्ग मेरे भक्त साधु जानते हैं. वे ऐसे दुष्टों को न दर्शन देते हैं, न संभाषण करते हैं, और जो लालच से ऐसे दुष्टों को उपदेश करते हैं, वे साधु भक्त नहीं. वर्णसंकर कमीने कोई नीच जाति हैं । अ० मूढ़ १ आसुरी २ योनियों को ३ प्राप्त हुये ४ जन्म जन्ममें ५ । ६ मुक्तिको ७ नहीं प्राप्त होकर ८ निश्चय ९ हे अर्जुन ! १० पीछे ११ अधम १२ गति को १३ प्राप्त होंगे १४ । तात्पर्य—हे अर्जुन ! किसी जन्म किसी युगमें भी मेरे भक्तों की कृपा विना मेरी प्राप्ति नहीं होती. जो मुझ को बुरा कहते हैं, वह तो मैं सह जाता हूं, परन्तु जो मेरे भक्त साधुका अपराध करे वह मुझसे नहीं सहा जाता. उसको मैं तुरन्त कठिन से कठिन तीव्र दण्ड देता हूं. हिरण्यकशिपु ने बहुत मुझसे द्वेष किया, परन्तु मुझको क्षोभ न हुआ. जिस काल में प्रह्लाद मेरे भक्त के साथ द्वेष किया, एक पल न सह सका. जो कुछ कि मैंने किया सो भारतादि में प्रसिद्ध है इत्यभिप्रायः ॥ २० ॥

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥ २१ ॥

कामः १ क्रोधः २ तथा ३ लोभः ४ इदम् ५ त्रिविधम् ६ नरकस्य ७ द्वारम् ८ आत्मनः ९ नाशनम् १० तस्मात् ११ एतत् १२ त्रयम् १३ त्यजेत् १४ । २१ । उ० जितने दोष आसुरीसम्पत्वाले पुरुषोंके कहे उनमें काम, क्रोध, लोभ ये तीन सबके कारण हैं. प्रथम उनको त्यागना अवश्य चाहिये । अ० काम १ क्रोध २ और ३ लोभ ४ यह ५ तीन प्रकार का ६ नरक का ७ द्वार ८ आत्मा को ९ नरक में और पशुआदि दुष्टयोनियों में प्राप्त करनेवाला १० है ❋ तिसकारण से ११ इन १२ तीन को १३ त्यागना १४ चाहिये ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तात्पर्य–कामादि तीनोंही नरक के द्वार हैं. इनमेंसे जो एक भी होगा, तो वह नरकको प्राप्त करैगा और जिसमें ये तीनों होंगे वह तो जीते जी नरकमें है! मरकर उसको नरक प्राप्त हो तो इसमें क्या कहना है? ॥ २१ ॥

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय! तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः।
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥२२॥

कौन्तेय! १ एतैः २ त्रिभिः ३ तमोद्वारैः ४ विमुक्तः ५ नरः ६ आत्मनः ७ श्रेयः ८ आचरति ९ ततः १० पराम् ११ गतिम् १२ याति १३ ॥ २२ ॥ उ० कामादि के त्यागका फल कहते हैं। अ० हे अर्जुन! १ इन तीन नरक के द्वारों से २। ३। ४ छूटा हुआ ५ जो ❀ पुरुष ६ आत्मा का ७ भला ८ करता है ९ अर्थात् कामादि को प्रथम त्याग कर पीछे आत्मा की प्राप्ति के लिये शुभाचरण करता है ❀ तब १० परमगतिको ११। १२ प्राप्त होता है १३। जैसे, औषध जब गुण करै है कि प्रथम खटाई–मिठाई आदि पदार्थों का त्याग कर दे, तैसे ही शुभ कर्म जप–पाठादि जब फल देंगे, प्रथम कामादिका त्याग करैगा. कामादि के त्यागने से अन्तर्मुख वृत्ति होती है. विना अन्तर्मुख वृत्ति हुये विचार नहीं हो सक्ता. विना विचार ज्ञान नहीं होता, विना ज्ञान मुक्ति नहीं. इस वास्ते कामादि का त्यागना अवश्य है ॥ २२ ॥

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥२३॥

यः १ शास्त्रविधिम् २ उत्सृज्य ३ कामकारतः ४ वर्तते ५ सः ६ न ७ सिद्धिम् ८ अवाप्नोति ९ न १० सुखम् ११ न १२ पराम् १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गतिम् १४ ॥ २३ ॥ उ० कामादि का त्याग जो लोगों से नहीं हो सक्ता, उसमें हेतु यह है कि—वे शास्त्रविधि को छोड़ इच्छापूर्वक वर्तते हैं । अ० जो १ शास्त्रविधि का २ उल्लंघन करके ३ इच्छापूर्वक ४ वर्तता है ५ सो ६ न ७ सिद्धिको ८ प्राप्त होता है ९ न १० सुखको ११ न १२ परमगतिको १३ । १४ प्राप्त होता है अर्थात् उसको न इस लोक में सुख होता है, न सद्गति, मुक्ति होती है और इसलोक में किसीप्रकार की उसको सिद्धि भी नहीं होती. इस जगह उन लोगों का प्रसंग है कि—जिनका शास्त्र में अधिकार है. जान बूझ शास्त्र की विधिका उल्लंघन करते हैं. ज्ञानी जन कृतकृत्य हैं. उनका यहां प्रसंग नहीं और अनजान लोग या अन्यद्वीपनिवासी या शास्त्र से अन्य मतवाले शास्त्रविधिका उल्लंघन करके अपने मत के अनुसार या स्वाभाविक इच्छापूर्वक वर्तते हैं, उनकाभी यहा प्रसंग नहीं. क्योंकि, उनके लिये अर्जुन सत्रहवें अध्याय में प्रश्न करैंगे और श्रीमहाराज स्पष्ट उत्तर देंगे ॥ २३ ॥

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥ २४ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे दैवासुरसंपत्तिवर्णनयोगो नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

तस्मात् १ कार्याकार्यव्यवस्थितौ २ ते ३ शास्त्रम् ४ प्रमाणम् ५ शास्त्रविधानोक्तम् ६ कर्म ७ ज्ञात्वा ८ इह ९ कर्तुम् १० अर्हसि ११ । ॥ २४ ॥ अ० तिस कारण से १ "यह करना चाहिये और यह न करना चाहिये" इस व्यवस्था में २ तुझको ३ शास्त्र ४ प्रमाण ५ है❋ शास्त्र में जो करना कहा है उस कर्म को ६ । ७ जान करके ८ इस कर्मकी अधिकारभूमि में ९ अर्थात् इस मनुष्य देह से मर्त्यलोक में❋

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर्म ❀ करनेको १० योग्य है तू ११। तात्पर्य—जो शास्त्र ने कहा सोई कर और जिस कर्मको बुरा कहा सो न कर. यहां शास्त्रही प्रमाण है, बुद्धि का काम नहीं इत्यभिप्रायः ॥ २४ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

॥ अथ सप्तदशोऽध्यायः ॥

उ० सोलहवें अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा—जो शास्त्रकी विधिको उल्लंघन करके वर्तते हैं अपनी इच्छापूर्वक, उनको न इसलोकमें सुख होता है, न उनकी सद्गति होती है. इसमें यह शंका प्रतीत होती है कमसमझोंको (कि जिनको श्रीमहाराज का तात्पर्य नहीं समझा उनको), वह शंका यह है कि—असंख्यात अन्यद्वीप के लोग और इसी द्वीप में भी वेदोक्त मत से अन्य मतवाले और ग्रामनिवासी बहुत अनजान लोग शास्त्रकी विधिको उल्लंघन करके वर्तते हैं. उनको इनमें तो जैसा सुख अपने कर्मों के अनुसार वेदोक्त कर्म करनेवालों को होता है वैसाही उनको अपने अपने कर्मों के अनुसार प्रत्यक्ष दीखता है और परलोक में सबकी दुर्गति हो यह बात अयुक्त है. क्योंकि, सब प्रजा एक ईश्वरकी है. वह ईश्वर ऐसा नहीं अन्यद्वीपनिवासियोंकी सबको दुर्गति करे. यह शंका एक नाममात्र संक्षेपकरके लिखी गई है. उत्तर भी इसका संक्षेप करके लिखा जाता है. प्रथम यह कि श्रीभगवान्ने चौदहवें अध्याय में स्पष्ट कहा है कि सतोगुणी ऊपरके लोकोंमें प्राप्त होते हैं, रजोगुणी मध्यमें स्थिर रहते हैं. तमोगुणी अधोगति को प्राप्त होते हैं. ये तीनों गुणा यत्न करनेसे भी वर्तते हैं और स्वाभाविक भी वर्तते हैं. सबलोग अपने गुणोंकी तारतम्यतासे सद्गति—दुर्गति को प्राप्त होंगे. वे किसी जाति वा किसी मतमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वा अनजान हों. शास्त्रोक्त जो कर्म करते हैं, जिनकी शास्त्रमें श्रद्धा है, जो वे यत्न करें तो रजोगुणी तमोगुणी अपने स्वभाव को पलट सक्ते हैं और जिनकी वेद-शास्त्रोंमें श्रद्धा नहीं वे नहीं पलट सक्ते. अपने स्वभाव के अनुसार रहेंगे. वैदिक अवैदिक मतमें इतना अन्तर है: दूसरे एक सूक्ष्म बात यह है कि—जो वेदोक्त कर्म धर्म ईश्वराराधनादि सब अध्यारोप हैं और जो शास्त्रकी विधिको उल्लंघन करके अपने मतके अनुसार कर्म करते हैं वे अध्यारोप हैं, विद्वानोंकी दृष्टिमें अध्यारोप कल्पित है. विनाज्ञान सब सम हैं. ज्ञानमें सतोगुणी का अधिकार है. सो सतोगुण स्वाभाविक हो वा प्रयत्नकरके किसीने सम्पादन किया हो, ज्ञानी सतोगुण को देखकर ज्ञानका उपदेश बे सन्देह करैंगे कि जिससे परमगति होती है. सोलहवें अध्याय में श्रीमहाराजने उन लोगों के वास्ते ऐसे कहा है उनको न इस लोकमें सुख होगा, न परलोक में. कि जिनका शास्त्रमें अधिकार है और वे शास्त्रार्थ को जान बूझ शास्त्रकी विधिका उल्लंघन करते हैं. क्योंकि उनको कुछभी आश्रय न रहा. ज्ञाननिष्ठों का यहां प्रसङ्ग नहीं. वे विधि-निषेधसे मुक्त हैं ॥

अर्जुनउवाच—

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण! सत्त्वमाहो रजस्तमः॥ १॥

कृष्ण! १ ये २ श्रद्धया ३ अन्विताः ४ शास्त्रविधिम् ५ उत्सृज्य ६ यजन्ते ७ तेषाम् ८ निष्ठा ९ तु १० का ११ सत्वम् १२ रजः १३ आहो १४ तमः १५ ॥ १ ॥ उ० यह पूर्वोक्त शंका करके अर्जुन प्रश्न करता है। अ० हे भगवन्! १ बहुत लोग ❀ २ श्रद्धा करके ३ युक्त ४ शास्त्रकी विधिको ५ उल्लंघनकर ६ अपनी बुद्धिके अनुसार व वेद-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शास्त्ररहित अपने गुरुमतके अनुसार ईश्वराराधनादि कर्म❋करते हैं ७ तिन की ८ निष्ठा ९। १० क्या है ११ अर्थात् उनका तात्पर्य सिद्धान्त क्या है? उनकी निष्ठा❋सतोगुणी १२ व❋रजोगुणी १३ व १४ तमोगुणी १५। तात्पर्य—जो लोग शास्त्रके अर्थको जानकर शास्त्रोक्त अनुष्ठान नहीं करते—प्रत्युत अनादर करते हैं—उनका और ज्ञानियोंका तो यहां प्रसंग नहीं. अनजान पुरुष जो देखा देखी वा नास्तिकादि जो शास्त्रकी विधिको उल्लंघनकर वर्तते हैं, उनकी क्या निष्ठा समझनी चाहिये? 'उनकी क्या गति होती है?' यह अर्जुन के प्रश्नका तात्पर्य है॥ १॥

श्रीभगवानुवाच—

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु॥ २॥

देहिनाम् १ स्वभावजा २ त्रिविधा ३ श्रद्धा ४ भवति ५ सा ६ सात्विकी ७ राजसी ८ च ९ एव १० तामसी ११ च १२ इति १३ ताम् १४ शृणु १५॥ २॥ अ० जीवनके १ स्वाभाविक २ अर्थात् अपने आप पूर्व संस्कारसे ही❋तीन प्रकार की ३ श्रद्धा ४ है ५ सो ६ श्रद्धा❋सतोगुणी ७ और रजोगुणी ८। ९। १० और तमोगुणी ११। १२। १३ तिनको १४ सुन १५ कहते हैं. अगले श्लोकमें और कार्य भेद से और भी आगे बहुत श्लोकों में कहेंगे. तात्पर्य—शास्त्र में जिनकी श्रद्धा है, यथाशक्ति शास्त्रोक्त जो अनुष्ठान करते हैं, उनकी श्रद्धा निष्ठा केवल सतोगुणी समझनी. क्योंकि, शास्त्र में यह सामर्थ्य है कि स्वभाव को पलट सक्ता है. जिनकी शास्त्रमें श्रद्धा नहीं उनकी श्रद्धा तीन प्रकारकी समझनी. पूर्व संस्कारसे वे रजोगुणी तमोगुणी हैं तो, विना वेदोक्त कर्म किये उनका स्वभाव नहीं पलटेगा॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत !।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥ ३ ॥

भारत ! १ सर्वस्य २ सत्त्वानुरूपा ३ श्रद्धा ४ भवति ५ अयम् ६ पुरुषः ७ श्रद्धामयः ८ यः ९ यच्छ्रद्धः १० सः ११ एव १२ सः १३ । ॥३॥ उ० तीन प्रकारकी श्रद्धा ऐसे जानो जैसे अब कहते हैं अ०। हे अर्जुन !१ सबके २ अन्तःकरणके अनुसार ३ श्रद्धा ४ है ५ यह ६ जीव ७ श्रद्धावान् है ८ जो ९ जिसकी जैसी श्रद्धा है अर्थात् जो जिस श्रद्धा करके युक्त है १० सो ११ निश्चय १२ सोई १३ है। तात्पर्य–जिसकी श्रद्धा जैसे सतोगुणी आदि कर्मों में है उस को वैसाही समझना चाहिये. आगे आहारादिका भेद सत्त्वादि कहेंगे. उस निष्ठा और अनुमानसे जान लेना कि यह पुरुष ऐसा है और इसकी यह निष्ठा है. यह इसकी गति होगी. ऐसा कोई पुरुष नहीं कि–जिसकी किसी जगह श्रद्धा न हो. इसवास्ते सब को श्रीभगवान् ने श्रद्धावान् कहा. जिनके अन्तःकरण शुद्ध हैं, उनकी सतोगुणी श्रद्धा है. जिनके अन्तःकरण मलिन हैं उनकी तमोगुणी रजोगुणी श्रद्धा है. पुरुष के सम्बन्ध से श्रद्धाको भी तीन प्रकारका कहा. मोक्ष में जो हेतु है और साधनचतुष्टयमें जिसकी संख्या है, वह केवल सतोगुणी वृत्ति श्रद्धा है. परमार्थमें उसीको श्रद्धा कहते हैं. यह व्यवहार में तीन प्रकारकी श्रद्धा है कि जो कही. ज्ञान में अधिकार सतोगुणी श्रद्धावान् का है ॥ ३ ॥

यजन्ते सात्विका देवान् यक्षरक्षांसि राजसाः।
प्रेतान् भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ॥ ४ ॥

सात्त्विकाः १ देवान् २ यजन्ते ३ राजसाः ४ यक्षरक्षांसि ५ तामसाः ६ जनाः ७ प्रेतान् ८ भूतगणान् ९ च १० एव ११ यजन्ते १२ ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उ० सत्त्वादिगुणोंको कार्यभेद करके दिखाते हैं। अ० सतोगुणी १ देवतोंका २ यजन करते हैं, ३ रजोगुणी ४ यक्षराक्षसों को ५ पूजते हैं ❋ तमोगुणी ६ जन ७ प्रेत ८ और भूतगणों को ९। १०। ११ पूजते हैं १२ ॥ ४ ॥

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः।
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः ॥५॥

ये १ जनाः २ अशास्त्रविहितम् ३ घोरम् ४ तपः ५ तप्यन्ते ६ दंभाहंकारसंयुक्ताः ७ कामरागबलान्विताः ८ ॥ ५ ॥ अ० जो १ जन २ शास्त्रविधिरहित ३ मैला ४ तप ५ करते हैं ६ उसमें कारण यह है कि ❋ वे दम्भ–अहंकार करके युक्त हैं ७ कैसे हैं कि ❋ कामरागबल करके युक्त हैं ८। तात्पर्य–कोई कोई ऐसे तप करते हैं कि वह कर्म स्वरूपसेही मैला है अर्थात उस कर्मके करनेमें ग्लानि आती है और उसके करने में शास्त्रकी विधि भी कोई नहीं. उस कर्मका नाम 'तप' रखकर वृथा तपते हैं. हेतु इसमें ये हैं–प्रथम यह कि, लोगों को दिखानेके लिये. दूसरे यह कि–जैसा हम कर्म करते हैं, किसी से कब हो सक्ता है ? तीसरे–किसी कामना के लिये. चौथे–रजोगुण के वशसे उस कर्म में प्रीति हो गई है त्याग नहीं सक्ता. वा पुत्र–मित्रादिकी प्रीति से; मित्रादि के रिझाने के लिये करता है. पांचवें–बलवाला है, जो चाहता है सो करता है ॥ ५ ॥

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् ॥६॥

अचेतसः १ शरीरस्थम् २ भूतग्रामम् ३ कर्षयन्तः ४ च ५ अन्तः ६ शरीरस्थम् ७ माम् ८ एव ९ तान् १० आसुरनिश्चयान् ११ विद्धि १२ ॥ ६ ॥ अ० अज्ञानी १ शरीर में जो स्थित २ इन्द्रियादि ३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तिनको❋ पीड़ा देते हैं ४ और ५ भीतर ६ शरीरके स्थित ७ जो मैं हूं❋मुझको ८ भी ९ दुःख देते हैं❋तिनको १० असुरवत् ११ जान १२। तात्पर्य—जो विना विचार इन्द्रियादिको दुःख देते हैं और पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द आत्माको दास और अस्थि चर्मादि का पुतला समझते हैं, वे लोग असुरवत् हैं. जो असुरोंका निश्चय है सो उनके प्रसिद्ध है. तपका फल शान्ति है. शान्ति के लिये उपवासादि तप करते हैं. जिस कर्म करने से उलटा तमोगुण रजोगुण बढ़े और उस कर्म का नाम तप कहा जावे यह कभी कपटी पुरुषों का काम है ॥ ६ ॥

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः।
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु ॥ ७ ॥

आहारः १ तु २ अपि ३ सर्वस्य ४ त्रिविधः ६ प्रियः ६ भवति ७ तथा ८ यज्ञः ९ तपः १० दानम् ११ तेषाम् १२ भेदम् १३ इमम् १४ शृणु १५ ॥ ७ ॥ उ० सतोगुण बढ़ाने के लिये और रजोगुण—तमोगुण कर्म करने के लिये आहार, तप, यज्ञ, दान ईनको सत्त्वादि तीन तीन भेद करके कहते हैं और इस भेद से सतोगुणी आदिपुरुषोंकी परीक्षाभी हो सक्ती है अर्थात् जो सतोगुणी आहार, यज्ञ, तप, दान करता है उसको सतोगुणी जानना चाहिये. इसीप्रकार तमोगुण रजोगुण में कल्पना करनी। अ० आहार १ भी २। ३ सबको ४ तीन प्रकारका ५ प्रिय ६ है ७ और ८ यज्ञ ९ तप १० दान ११ भी सब को तीन प्रकार का प्रिय है. हे अर्जुन!❋तिनका १२ भेद १३ यह १४ है कि जो अगले श्लोकोंमें कहूंगा❋सुन १५ जो तुझमें रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति हों, उनको त्याग. सतोगुणी वृत्ति बढाव, कि जिससे तेरी ज्ञाननिष्ठा दृढ़ हो ॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः ॥८॥

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः १ रस्याः २ स्निग्धाः ३ स्थिराः ४ हृद्याः ५ आहाराः ६ सात्त्विकप्रियाः ७ ॥ ८ ॥ उ० सतोगुणी आहार का लक्षण और फल भी एक ही श्लोक में कहते हैं। अ० अवस्था चित्तकी स्थिरता व वीर्य व उत्साह बल आरोग्यता उपशमात्मक सुख प्रभु में प्रीति इन छः पदार्थोंका बढ़ानेवाला १ रसवाला २ कोमलतर ३ खाने के पीछे शरीरमें उसका रस चिरकाल ठहरे ४ जिसके देखनेसेही मन प्रसन्न हो जाय ५ यह चार प्रकार का❀ आहार ६ सतोगुणी को प्रिय लगता है ७। जैसे, मोहनभोग तस्मै इत्यादि ॥ ८ ॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥ ९ ॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः १ आहाराः २ राजसस्य ३ इष्टाः ४ दुःखशोकामयप्रदाः ५ ॥ ९ ॥ उ० रजोगुणी आहारको कहते हैं। अ० अतिचर्फरा, खट्टा, नमकीन, गरम, तीक्ष्ण, रूखा, दाह करनेवाला १ आहार २ रजोगुणी को ३ प्रिय है ४ दुःख शोक रोग देनेवाला है. अति शब्द सबके साथ लगाना. अति खट्टा, अति नमकीन, अति गरम, अति तीक्ष्ण, अति रूखा, अति दाह करनेवाला भोजन रजोगुणी को प्रिय है ५ ॥ ९ ॥

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥१०॥

यातयामम् १ गतरसम् २ पूति ३ पर्युषितम् ४ च ५ यत् ६ उच्छिष्टम् ७ च ८ अमेध्यम् ९ अपि १० भोजनम् ११ तामसप्रियम् १२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ १० ॥ उ० तमोगुणी आहारका लक्षण कहते हैं । अ० जिसको बने हुये एक प्रहर बीत जावे १ ठण्ढा हो जावे सूख जावे २ दुर्गंध जिसमें आवे ३ बासी ४ और ५ जो ६ जूठा ७ और ८ अभक्ष्य ९ भी १० भोजन ११ तमोगुणी को प्रिय है १२ ॥ १० ॥

अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः ॥ ११ ॥

अफलाकांक्षिभिः १ यः २ यज्ञः ३ विधिदृष्टः ४ इज्यते ५ यष्टव्यम् ६ एव ७ इति ८ मनः ९ समाधाय १० सः ११ सात्त्विकः १२ ॥ ११ ॥ उ० सतोगुणी यज्ञ कहते हैं । अ० फलकी इच्छारहित पुरुष १ जो २ यज्ञ ३ विधि देखकर ४ करते हैं ५ यज्ञका करना अवश्य है ६ निश्चय ७ इसप्रकार ८ मनको ९ समाधान करके १० करते हैं ❋ सो ११ यज्ञ ❋ सतोगुणी १२ ॥ ११ ॥

अभिसंधाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।
इज्यते भरतश्रेष्ठ ! तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥ १२ ॥

भरतश्रेष्ठ ! १ फलम् २ अभिसंधाय ३ तु ४ दम्भार्थम् ५ अपि ६ च ७ एव ८ यत् ९ इज्यते १० तम् ११ यज्ञम् १२ राजसम् १३ विद्धि १४ ॥ १२ ॥ उ० रजोगुणी यज्ञ कहते हैं । अ० हे अर्जुन ! १ फलको २ अन्तःकरण में धारण करके ३ व ४ लोगोंके दिखाने के लिये ५ भी ६ । ७ । ८ जो ९ यज्ञ ❋ किया जाता है १० तिस ११ यज्ञको १२ रजोगुणी १३ जान १४ तू ॥ १२ ॥

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥ १३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विधिहीनम् १ असृष्टान्नम् २ मन्त्रहीनम् ३ अदक्षिणम् ४ श्रद्धाविरहितम् ५ यज्ञम् ६ तामसम् ७ परिचक्षते ८ ॥ १३ ॥ उ० तमोगुणी यज्ञ कहते हैं। अ० वेदविधिरहित १ सुन्दर अन्न नहीं है जिसमें २ मन्त्ररहित ३ दक्षिणारहित ४ श्रद्धारहित ५ यज्ञ ६ तमोगुणी ७ कहा है ८। तात्पर्य, देखादेखी लोकोंकी लौकिक एक रीति समझकर प्रसिद्धिके लिये कुपात्रोंको न्योतकर ठण्ढा बासी अन्न कच्चा पक्का जिमा देना, न उनके सामने खड़ा होना, न उनके चरणों को स्पर्श करना, न सुन्दर प्रकार बोलना, न पीछे दक्षिणा देनी, ऐसा यज्ञ तमोगुणी कहलाता है. ऐसे निर्भाग्यों के घर जो साधु ब्राह्मण भोजन करने जाते हैं, वे इससे भी निर्भाग्य हैं. क्योंकि—सेरभर आटेके लिये मूर्खोंको दाता लालाजी कहना पड़ता है ! ॥ १३ ॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥ १४॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनम् १ शौचम् २ आर्जवम् ३ ब्रह्मचर्यम् ४ अहिंसा ५ च ६ शारीरम् ७ तपः ८ उच्यते ९ ॥ १४ ॥ उ० शरीर का तप कहते हैं। अ० देवता, ब्राह्मण, गुरु, प्राज्ञ कोई जाति विद्वान् भक्त ज्ञानीका पूजन करना १ पावन रहना २ नम्र रहना ३ ब्रह्मचर्य रहना ४। ब्रह्मचर्य का लक्षण आनन्दामृतवर्षिणी के पांचवें अध्याय में लिखा है—आठ प्रकार का मैथुन है, उस से वर्जित रहना ५ हिंसा न करना ६ इस को ❋ शरीरका ७ तप ८ कहते हैं ९। तात्पर्य—देश, मकान, वस्त्र पात्र सब पवित्र हों जब शरीर की पवित्रता है और अन्न, जल, वीर्य, कुलादि भी पवित्र हों ॥ १४ ॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते॥ १५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत् १ वाक्यम् २ अनुद्वेगकरम् ३ सत्यम् ४ प्रियम् ५ च ६ हितम् ७ च ८ स्वाध्यायाभ्यसनम् ९ एवम् १० वाङ्मयम् ११ तपः १२ उच्यते १३ ॥ १५ ॥ उ० वाणी का तप यह है । अ० जो १ वाक्य २ अन्य को ❋ उद्वेग न करे ३ सत्य ४ प्रिय ५ और ६ हित करनेवाला ७ और ८ वेद शास्त्र पढ़नेका अभ्यास ९ भी १० वाणी का ११ तप १२ कहा है १३ । तात्पर्य—जो बात सच्ची शास्त्रविहित और हित करनेवाली है, परन्तु जो कहते समय किसी को प्रिय न लगे ऐसी बातके कहनें में भी दोष है और ऐसी बात के सुननेमें भी दोष है कि श्रवण समय तो प्रिय प्रतीत हो, परन्तु वेदविरुद्ध हो. अनुद्वेगकरम् सत्यम्, प्रियम्, हितम् और चकार से मितम् अर्थात् बहुत अर्थ को संक्षेप करके थोडे अक्षरों में कहना. यह पांचवां विशेषण वाक्य का चकार से जानना चाहिये ॥ १५ ॥

मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः ।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥ १६ ॥

मनःप्रसादः १ सौम्यत्वम् २ मौनम् ३ आत्मविनिग्रहः ४ भावसंशुद्धिः ५ इति ६ एतत् ७ तपः ८ मानसम् ९ उच्यते १० ॥ १६ ॥ उ० मनका तप कहते हैं । अ० मन प्रसन्न रहना १ सतोगुणी वृत्ति में मन प्रसन्न रहता है, तमोगुणी रजोगुणी वृत्तिमें विक्षेप और मोह को प्राप्त होता है ❋ सरलता (सीधापन) २ मनन करना ३ विषयों से मनको रोकना ४ व्यवहार में छल नहीं करना बाहर भीतर समवृत्ति रखनी ५ यह ६ । ७ तप ८ तमका ९ कहा है १० ॥ १६ ॥

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत् त्रिविधं नरैः ।
अफलाकांक्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते ॥ १७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अफलाकांक्षिभिः १ युक्तैः २ नरैः ३ परया ४ श्रद्धया ५ तत् ६ त्रिविधम् ७ तपः ८ तप्तम् ९ सात्विकम् १० परिचक्षते ११ ॥ १७ ॥ उ० शरीर मन वाणी करके तीन प्रकार का तप है. यह भेद तो पीछे कहा. अब तप को सात्विकादि भेद करके तीन प्रकार का कहते हैं. इस मन्त्र में सतोगुणी तप का लक्षण है। अ० फलकी इच्छारहित १ एकाग्रचित्तवाले २ पुरुषोंने ३ परम ४ श्रद्धा करके ५ सो ६ तीन प्रकार का ७ तप ८ अर्थात् मन वाणी शरीर करके जो तप❋ किया है ९ सो तप❋ सतोगुणी १० कहा है ११। तात्पर्य—परमश्रद्धा के साथ चित्तके भलेप्रकार एकाग्र करके फलकी इच्छारहित पुरुषोंने शरीर, मन, वाणी करके जो तप किया है सो सतोगुणी है॥ १७ ॥

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत्।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम्॥ १८ ॥

यत् १ दम्भेन २ सत्कारमानपूजार्थम् ३ च ४ एव ५ तपः ६ क्रियते ७ तत् ८ इह ९ राजसम् १० प्रोक्तम् ११ चलम् १२ अध्रुवम् १३ ॥ १८॥ अ० जो १ दम्भ करके २ अथवा ३। ४ सत्कार मान पूजाके लिये ५ तप ६ किया है ७ सो ८ शास्त्रमें ९ रजोगुणी १० कहा है ११ क्योंकि ❋अचल नहीं १२ अनित्य है १३। तात्पर्य—अच्छे कर्म अपनी स्तुति कराने के वास्ते, लोगों के दिखाने के वास्ते, अपने सन्मान पूजाके लिये, धनादि की प्राप्ति के लिये, स्वर्गादि पुत्र मित्रादि की प्राप्ति के लिये, जो करते हैं वे पुरुष भी रजोगुणी हैं. ऐसे कर्मोंका फल तुच्छ अनित्य होगा ॥ १८ ॥

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम्॥ १९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत १ तपः २ मूढग्राहेण ३ आत्मनः ४ पीडया ५ क्रियते ६ परस्य ७ उत्सादनार्थम् ८ वा ९ तत् १० तामसम् ११ उदाहृतम् १२ ॥ १९ ॥ अ० जो १ तप २ दुराग्रह करके ३ अविवेकपूर्वक ❀ इन्द्रियों को ४ दुःख देकर ५ किया है ६ दूसरेके ७ नाशार्थ ८ वा ९ सो १० तमोगुणी ११ कहा है १२ ॥ १९ ॥

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥२०॥

दातव्यम् १ इति २ यत् ३ दानम् ४ दीयते ५ देशे ६ काले ७ च ८ पात्रे ९ च १० अनुपकारिणे ११ तत् १२ दानम् १३ सात्त्विकम् १४ स्मृतम् १५ ॥ २० ॥ उ० दान तीन प्रकार का है, प्रथम सतोगुणी दान कहते हैं । अ० देना चाहिये १ अवश्य हमको दान ❀ इस प्रकार २ मन में विचार कर ❀ जो ३ दान ४ दिया है ५ सुन्दर ❀ देशमें ६ और उत्तम कालमें ७ । ८ सुपात्र अनुपकारी को ९ । १० । ११ सो १२ दान १३ सात्त्विक १४ कहा है १५ । टी० गङ्गादि तीर्थों में सुन्दर जगह लिपी पुती हुईमें जिस जगह बैठे हुये बुरी वस्तु न दीखे, दुर्गन्ध न आवे ६ पूर्णमासी—व्यतीपातादि में भूंख के समय वा किसी सज्जनका काम अटक रहा है उस समय, भोजन कराना मध्याह्न से पहिले ७ जिसको देना, उससे उपकार किसी प्रकारका न चाहना. जहांतक बन सके अनजान पुरुषको छिपाकर देना ११ विद्वान् साधु ब्राह्मण दानपात्र हैं वा भूंखा कोई जाति हो ९ इस दान की व्यवस्थामें एक पोथी—जिसका नाम 'राजदूतोंकी कथा' है—नागरी अक्षरों में मुंशी शिवनारायण कायस्थ माथूर कि जो आगरे में श्रीमान् ऐश्वर्यवान सद्गुणों की खानि ब्रह्मविद्या और अंगरेजी फ़ारसी छापाकी तसबीर अद्भुत बनानी इत्यादि लौकिक विद्या में नागर प्रभुता पाकर अमानी दयावान् परोप-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारी प्रसिद्ध हैं, उनकी बनाई हुई है और प्राकृत उर्दू विद्यामें भी उन्होंनेही बनाई है जिसका 'नाम कासदान शाही' है. उस पोथीके पढ़ने सुनने विचारने से दानकी व्यवस्था भलेप्रकार प्रतीत होती है. तात्पर्य—जो नौकरी, खेती बनज करते हैं वा जिनके पास किसी प्रकार द्रव्य है, उनको अवश्य दान करना चाहिये. क्योंकि—पन्द्रह अनर्थ द्रव्य में रहते हैं! जो वह वेदोक्त दान न किया गया तो पन्द्राह अनर्थों में जो पाप होता है, सो द्रव्यग्राही को लगेगा. दान करने से उस पाप की निवृत्ति होती है और दान करने के लिये द्रव्य संचय करना यह शास्त्रकी आज्ञा नहीं. उसका यह फल है कि—जैसे कीचमें हाथ साना फिर धोया इस समयमें दान देना तो पृथक् रहा. जो किसी को देता देखते सुनते हैं तो जहांतक उनसे यत्न हो सक्ता है हँसी तर्क करके उसको भी वर्जित करते हैं. मुमुक्षुको चाहिये कि—ऐसे दुष्टोंका मुख भी न देखे. यह विचार कर ले कि—दिन महीने वर्ष की कमाई में से इतना भाग पुण्य करूंगा उस द्रव्य को वा अन्नवस्त्रादि मोल लेकर दिन दिन प्रति वा वर्ष महीने में जहांतक हो सके गुप्त सुपात्र को दे दिया करे. जो प्रवृत्ति में रहकर दान नहीं करते, केवल माला तिलक घण्टा घड़ियाल से मुक्ति चाहते हैं, परमेश्वर उन पर कभी प्रसन्न न होंगे ॥ २० ॥

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः।
दीयते च परिक्लिष्टं तद्राजसमुदाहृतम् ॥ २१ ॥

यत् १ तु २ प्रत्युपकारार्थम् ३ पुनः ४ वा ५ फलम् ६ उद्दिश्य ७ परिक्लिष्टम् ८ च ९ दीयते १० तत् ११ राजसम् १२ उदाहृतम् १३ । ॥ २१ ॥ उ० रजोगुणी दान कहते हैं। अ० जो १ प्रत्युपकारके लिये २ । ३ वा ४ । ५ फलका ६ उद्देश करके ७ वा ❋ क्लेश कलह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सहित ८ । ९ दिया है १० सो ११ रजोगुणी १२ कहा है १३ । टी० दानपात्रसे यह इच्छा रखनी कि किसी समय किसी प्रकार यह हमारी सहाय करेगा ३ यह चिन्तन करके कि सन्त महन्तोंकी टहल करनेसे धन पुत्रादि मिलते हैं ६ । ७ क्या करें जी ! हमारे आज पिताका श्राद्ध है. एक ब्राह्मण तो अवश्य ही न्यौतना चाहिये. इस प्रकार लोकिक लज्जासे दान करके मनमें दुःख मानना. तात्पर्य, महात्मा जो यह कहते हैं कि दाता कलियुगमें नहीं हैं. यदि हैं भी तो सेवा कराकर देते हैं. तदुक्तम् "दातारोऽपि न सन्ति सन्ति यदि चेत्सेवानुकूलाः कलौ ।" तात्पर्य उसका यह है कि—कलियुगमें सतोगुणी दाता कम हैं; विशेष रजोगुणी हैं. बहुत लोग दाता प्रसिद्ध हैं उनके दान कि यह व्यवस्था है की—एक पुरुष राजा का नौकर है; विशेष प्रजा पर उसका हुक्म है. किसी की कथा कहला देनी वा शुभ कामके नामसे चन्दा करके कुछ उसको दे देना कुछ आप रख लेना. कोई कोई सुपात्रों को भी देते हैं. अपने सुयश के लिये कोई साधु को अपने मकान पर ठहराय रखते हैं. मकान की रक्षाके लिये कोई साधु ब्राह्मण की टहल करते हैं. दूसरे साधु ब्राह्मण को दुःख देनेके लिये कोई लौकिक लज्जासे देखा देखी करते हैं. कोई इसप्रकार दान करते हैं कि—ब्राम्हण को नौकर रख लेते हैं वह उसके ब्राह्मण को जिमा देता है और उसके ब्राह्मणा को वह जिमा देता है और खिचरी वस्त्रादि भी इसीप्रकार वांटते हैं. कोई ऐसे दानी प्रसिद्ध हैं कि छल दम्भ पाखण्ड करके किसीका द्रव्य दबा लिया. उस दोष के दबने के लिये दान करतें हैं उनकी वह व्यवस्था है " अहरन की चोरी करैं, करैं सुई का दान । ऊंचे चढि देखन लगे, कितनी दूर विमान ।" ऐसे दाता सद्गति की कदाचित् आशा न रक्खे ॥ २१ ॥

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।
असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ २२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत् १ दानम् २ अपात्रेभ्यः ३ अदेशकाले ४ च ५ दीयते ६ असत्कृतम् ७ अवज्ञातम् ८ तत् ९ तामसम् १० उदाहृतम् ११ ॥ २२ ॥ अ० जौ १ दान २ कुपात्रों को ३ और निषिद्ध देशकाल में ४ । ५ दिया है ६ अथवा सुपात्रों को भी जो ❋ असत्कारपूर्वक ७ अवज्ञा-पूर्वक ८ दिया है ❋ सो ९ तमोगुणी १० कहा है ११ । टी० जिससमय महात्मा दैवयोगसे अपने घर आवे हाथ जोडकर अभ्युत्थान न करे और ऐसा न बोले कि आपने बडी कृपा करी ७ किसी आदमी से कह देना कि फकीर आया है, रोटी आटा देकर टालो ८ चौके से बाहर बैठा कर अपवित्र जगह में न्योतकर मध्याह्नसे पीछे जिमाना ४ नट, बाजीगर, वेश्यादि को देना इत्यादि तमोगुणी दान हैं ३ । तात्पर्य—द्रव्य, बड़े बड़े दुःख पापों से प्राप्त होता है. बन्धकाभी यही साधन है. मोक्षकाभी यही साधन है. इसको पाकर मोक्ष सम्पादन करे. एक दिन इससे अवश्य वियोग होगा. या तो द्रव्य पहिले छोड़ देगा या द्रव्य रक्खाही रहेगा. आप चले जावेंगे. श्रीभगवान् ने यह तीन प्रकार का भेद इसीवास्ते कहा है कि—दान सतोगुणी करना चाहिये. क्योंकि, उससे परम्पराकरके मोक्ष-कि प्राप्ति होती है. जो यह कहते हैं कि—अजी वेदोक्त साधु ब्राम्हण कहां हैं ? यह उनकी समझ और श्रद्धा पुरुषार्थ यत्न और मान बड़ाईमें दोष है कि जो उसे सुपात्र नहीं मिलते. महात्मा जो यह कहते हैं कि पृथ्वीपर असंख्यात अमोल रत्न प्रसिद्ध हैं. जिनमें किसी की ममता नहीं, निर्भाग्यों को नहीं दीखते. उनका तात्पर्य-सुपुत्रों सेही है घर से बाहर पैर नहीं रखते. कौवेकीसी दृष्टि है ! महात्माके भजन, पाठ, पूजा, विवेक, विद्यादि सहस्रों उनमें जो गुण हैं उनको तो देखते नहीं. कहते हैं कि—अजी महात्मा किसी के घर क्यों जाते हैं ? उस निर्भाग्य से बूझना चाहिये कि—जो घर आवें वे तो असाधु हैं और तू

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मलमूत्र के पात्र स्त्री पुत्रादि को छोड़कर बाहर पैर न रक्खे तो फिर सुपात्र कैसे मिलें ? निर्भाग्यों के घर महात्मा नहीं जाते यह बात सत्य है ॥ २२ ॥

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥ २३ ॥

ॐम् १ तत् २ सत् ३ इति ४ ब्रह्मणः ५ निर्देशः ६ त्रिविधः ७ स्मृतः ८ तेन ९ ब्राह्मणाः १० वेदाः ११ च १२ यज्ञाः १३ च १४ पुरा १५ विहिताः १६ ॥ २३ ॥ उ० जो मुमुक्षु यह चाहते हैं कि—प्रभु की आज्ञा से यज्ञ दानादि कर्म वेदोक्त सतोगुणी करे, परन्तु देशकाल वस्तुके सम्बंध से वा किसी अन्य प्रतिबन्ध से सतोगुणी वेदोक्त अनुष्ठान नहीं हो सक्ता, इस हेतु से दुःख पाते हैं. उनके लिये परम करुणाकर व्रजचन्द्र उत्तम उपाय परम पवित्र गुप्त बतलाते हैं इस मन्त्र में। अ० ॐम् १ तत् २ सत् ३ यह ४ ब्रह्मका ५ उच्चारण ६ तीन बेर ७ कहा है ८ ब्रह्मविदों ने❀तिसने ९ अर्थात् 'ॐ तत सत' इस मन्त्र मेंही❀ब्राह्मण १० और वेद ११। १२ और यज्ञ १३। १४ पहले १५ उत्तम पवित्र किये हैं १६। तात्पर्य, स्नान, दान, भोजन, पाठादि करने से पहले और पीछे यह मन्त्र ॐ तत, सत तीन बार कहे अंगहीन क्रिया भी सतोगुणी होके वेदोक्त फल देगी. यह विधि अनादि है. महात्मा जानते हैं. इसके प्रताप से सदा निर्दोष रहते हैं. श्रीभगवान् अगले मन्त्रोंमें ॐ तत सत इन तीनों का माहात्म्य पृथक् पृथक् कहेंगे. यह एक एक नाम परमात्मा का पवित्र करके ब्रह्मको प्राप्त करता है.जो तीनों नाम उच्चारण करेगा उसके पवित्र होनेमें क्यों सन्देह है ? इससे यही कैमुतिकन्याय है. वेदोंमें यह मंत्र आदिसार है. जिस मन्त्र में इन तीनों नामों में से एक भी नाम होगा उस मन्त्रका फल शीघ्र अवश्य होगा. मन्त्रों में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इन्ही नामों की शक्ति है. पोथियों के और मन्त्रोंके आदि में इन तीनों नामोंमें से एक दो नाम अवश्य होते हैं. जब कि वेद ब्राह्मणादि की बड़ाई इस मन्त्र के प्रताप से है फिर विना इस मन्त्रके जपे कोई क्रिया कब श्रेष्ठ हो सक्ती है ? इस हेतु से क्रिया के आदि अन्त में इस मन्त्रको तीन बेर अवश्य उच्चारण करना योग्य हैं ॥ २३ ॥

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः ।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥२४॥

तस्मात् १ ॐम् २ इति ३ उदाहृत्य ४ यज्ञदानतपःक्रियाः ५ विधानोक्ताः ६ सततम् ७ ब्रह्मवादिनाम् ८ प्रवर्तंते ९ ॥ २४ ॥ उ० अब पृथक् पृथक् नामका माहात्म्य कहते हैं इस मन्त्रमें. ॐम् इस मन्त्रका माहात्म्य है जब कि वेदादि इन नामों से ही श्रेष्ठ पवित्र किये गये हैं । अ० तिस हेतु से १ ॐम् २ यह नाम ३ उच्चारण करके ४ यज्ञ दान तप रूप क्रिया ५ वेदोक्त ६ । ७ ब्रह्मनिष्ठों के ८ होती हैं ९ ॥२४॥

तदित्यनभिसंधाय फलं यज्ञतपःक्रियाः ।
दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकांक्षिभिः ॥२५॥

मोक्षकांक्षिभिः १ तत् २ इति ३ फलम् ४ अनभिसंधाय ५ यज्ञतपःक्रियाः ६ दानक्रियाः ७ च ८ विविधाः ९ क्रियन्ते १० ॥ २५ ॥ अ० मोक्ष की इच्छावाले १ तत २ यह ३ नाम उच्चारण करके और ❀फल का ४ नहीं चिन्तन करके ५ यज्ञ—तप—रूप क्रिया ६ और दानक्रिया ७ । ८ नानाप्रकारकी ९ कहते हैं १० महावाक्य में यही नाम है ॥ २५ ॥

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते ।
प्रशस्ते कर्मणि तदा सच्छब्दः पार्थ ! युज्यते॥२६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पार्थ १ सद्भावे २ साधुभावे ३ च ४ सत् ५ इति ६ एतत् ७ प्रयुज्यते ८ तथा ९ प्रशस्ते १० कर्मणि ११ सत् १२ शब्दः १३ युज्यते १४ ॥ २६ ॥ अ० हे अर्जुन ! १ सद्भावमें २ और साधुभावमें ३ । ४ सत् ५ यह ६ । ७ नाम❋कहा जाता है ८ और ९ विवाहादि❋मंगलकर्म में १० । ११ । सत् १२ शब्द १३ कहा-जाता है १४ ॥ २६ ॥

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते ।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते ॥ २७ ॥

यज्ञे १ तपसि २ दाने ३ च ४ स्थितिः ५ सत् ६ इति ७ च ८ उच्यते ९ तदर्थीयम् १० कर्म ११ च १२ एव १३ सत् १४ इति १५ एव १६ अभिधीयते १७ ॥ २७ ॥ उ० इस मन्त्र में भी सत् नामका माहात्म्य है । अ० यज्ञ में १ तप में २ और दान में ३ । ४ जो❋स्थिति ५ उसको❋सत् ६ ऐसे ७ । ८ कहते हैं ९ ईश्वरार्थ १० कर्म को ११ भी १२ । १३ सत्ही १४ । १५ । १६ कहते हैं १७ । तात्पर्य—जो पुरुष यज्ञादि परमेश्वरार्थ सदा करते रहते हैं उनको सत्फल प्राप्त होगा जो कभी नाश न हो ॥ २७ ॥

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।
असदित्युच्यते पार्थ ! न च तत्प्रेत्य नो इह ॥ २८ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अश्रद्धया १ हुतम् २ दत्तम् ३ तपः ४ तप्तम् ५ च ६ यत् ७ कृतम् ८ इति ९ असत् १० उच्यते ११ पार्थ १२ तत् १३ प्रेत्य १४ न च १५ नो १६ इह १७ ॥ २८ ॥ उ० श्रद्धापूर्वक जो दानादि नहीं करते,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

केवल लौकिक लज्जा से करते हैं; उनको फल न यहां होता है, न मरकर परलोक में. यह अर्थ इस मन्त्र में प्रकट करते हुये अश्रद्धावान् की निन्दा करते हैं। अ० अश्रद्धा से १ हवन किया २ दिया ३ तप ४ किया ५ और जो किया ६। ७। ८ यह ९ सब ❀ असत् १० कहा है ११ अर्थात् निष्फल निन्दित झूठा वृथा है ❀ हे अर्जुन! १२ सो १३ न मर करके १४। १५ न १६ इस लोक में १७। मोक्षमार्ग में सब कर्मों से प्रथम श्रद्धा है. जिसकी वेद ब्राह्मणादि में श्रद्धा है सो मोक्ष होगा इत्यभिप्रायः ॥ २८ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

॥ अथ अष्टादशोऽध्यायः ॥

अर्जुनउवाच—

संन्यासस्य महाबाहो ! तत्त्वमिच्छामि वेदितुम्।
त्यागस्य च हृषीकेश ! पृथक्केशिनिषूदन !॥ १ ॥

महाबाहो १ हृषीकेश २ केशिनिषूदन ३ संन्यासस्य ४ च ५ त्यागस्य ६ तत्त्वम् ७ पृथक् ८ वेदितुम् ९ इच्छामि १० ॥ १ ॥ उ० इस अध्याय में समस्त गीताका सार संक्षेप है। अ० हे महाबाहो! १ हे हृषीकेश! २ हे केशिनिषूदन! ३ संन्यास ४ और ५ त्याग के ६ तत्त्वको ७ पृथक् ८ जाननेकी ९ मैं इछा करता हूं १०। टी० १। २। ३ ये तीनों नाम श्रीकृष्णचन्द्र के हैं। तात्पर्य, हे भगवन्! त्याग शब्दका और संन्यास शब्दका अर्थ मुझसे कहो. दोनों पदोंका अर्थ पृथक् पृथक्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं जाना चाहता हूं. त्याग और संन्यास इन दोनों पदोंका अर्थ श्रीभगवान् भलेप्रकार अगले मन्त्र में कहैंगे. प्रसंग से चतुर्थाश्रम संन्यासका अर्थ संक्षेप करके यहां लिखे देते हैं. त्याग और संन्यास का अर्थ वास्तव एकही है. संन्यास दो प्रकार का है. अन्तरङ्ग १ बहिरङ्ग २ और संन्यास ज्ञाननिष्ठाका अङ्ग है. अन्तरङ्ग संन्यास का अर्थ तो श्रीभगवान् भले प्रकार इस अध्याय में कहैंगे. बहिरङ्ग संन्यासका अर्थ यहां लिखा जाता है सो बहुत प्रकारका है । कुटीचर १ क्षेत्र २ बह्वदक ३ विविदिषा ४ विद्वत् ५ हंस ६ परमहंस ७ और भी बहुत भेद हैं । इनका अर्थ अङ्क के क्रम से लिखते हैं । वाणिज्यादि व्यवहार छोड़, ग्राम से बाहर शरीरयात्रामात्र कुटी में बैठ भगवत् भजन ब्रह्मविचार करना, अपने सम्बन्धी और औरोंको सम समझना कोई घरका और बाहरका भोजन दे जावे उसीसे देहनिर्वाह कर लेना, यह कुटीचरसंन्यासीका लक्षण है और कनिष्ठ अंग उसका यह भी है कि—देहयात्रामात्र कुछ आजीविकाका यत्न करके एकान्त में निवास करना १ जैसे कुटीचरका लक्षण कहा वैसेही कुटी शब्द की जहग क्षेत्र समझ लेना चाहिये. क्षेत्रमें देहयात्रा के लिये मधुकरी मांग खाने में दोष नहीं २, घरको त्यागकर विचरता रहै, एक जहग न रहै ३, वेदान्तशास्त्र श्रवण करनेके लिये गृहस्थाश्रमको त्यागना और त्याग के पीछे दिन रात्रि सदा श्रवण, मनन, निदिध्यासन, करते रहना ४, जीवन्मुक्तिका जो आनन्द उसके लिये गृहस्थाश्रम का त्याग करना इसी संन्यास को वे धारण करते हैं. जिनको गृहस्थाश्रम में संशयविपर्यय—रहित साक्षात्कार ब्रह्मज्ञान हो जाता है ५, जिस प्रकार हंस, दूध और पानी को जुदा करके दूधही पान करता है, इसीप्रकार परमहंस महात्मा देहादि पदार्थों से अपने स्वरूपको पृथक् विलक्षण समझकर सदा स्वरूप ही में निष्ठ रहना इसीको हंस संन्यास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहते हैं ६ वस्त्रादिको भी त्याग करके मौन रहना इसको परमहंस संन्यास कहते हैं ७. यह अर्थ भी संन्यास का एक नाममात्र लिख दिया है. जो किसीको कुटीचरादि संन्यास लेना हो तो वह उसी की विधि मन्वादि धर्मशास्त्र और उपनिषदोंमेंसे श्रवण करके संन्यास लेवे. दंडधारण-पूर्वक संन्यास में तो कर्मकाण्ड की विधि से ब्राह्मण शरीर को ही अधिकार है. क्योंकि, कर्मकाण्ड में तो वेदोक्त कर्म करनेवाले ब्राह्मण जाति-को ही बड़ा कहते हैं और उपासक भगवद्भक्तकोही बड़ा कहते हैं. भगवद्भक्त—व्यवहारमें कोई जाति हो सब से—बड़ा है और जो व्यवहार में भी ब्राह्मणजाति हो तो क्या ही कहना है ? विदुरजी, सूतजी, गुह, निषाद, शबरी आदि लेकर सहस्रशः हजारों कथा साक्षी हैं और ज्ञानी ब्रह्मवित् को बड़ा कहते हैं. ब्राह्मण शब्दका अर्थ यही है "ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः।" जो व्यवहारमें ब्राह्मणजाति कहे जाते हैं, उनको वैराग्य न भी हो तो भी अवस्था के चतुर्थभाग में उनको गृहस्थाश्रम छोड़ना चाहिये. नहीं तो भी पाप प्रायश्चित्तका भागी होना पड़ेगा और जो वैराग्य हो तो वह कोई जाति हो व्यवहारमें सब अवस्थामें उसको संन्यास का अधिकार है "यदहरेव विरज्येत तदहरेव प्रव्रजेत।" अर्थ इस श्रुतिका यह है कि जिस दिन वैराग्य हो, उसी दिन संन्यासकरे. त्याग संन्यासमें सब को अधिकार है. हजारों विरक्त महात्मा—कि जो व्यवहार में ब्राह्मणजाति नहीं—ब्रह्मवित् ज्ञानी दर्शनीय हैं और हजारों हो गये विना संन्यास और विरक्त के मुक्ति न होगी. परमेश्वर का अनुग्रह और पूर्व संस्कार दूसरी बात है. गृहस्थाश्रम में जिसको ज्ञान हुआ यह पूर्व संस्कार और परमेश्वर की कृपा समझनी चाहिये. नहीं तो निवृतिमार्ग की बड़ाई क्या हुई ? प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग दोनों बराबर होगये. साधु महात्मा विरक्तों का माहात्म्य वेदशास्त्र और अवतारों ने क्या वृथाही कहा है ? तात्पर्य—विरक्त अवश्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होना चाहिये. विरक्त और निवृत्त में सबको अधिकर है. देश, काल, वस्तु का नियम प्रवृत्तिमार्ग में है; निवृत्तिमार्ग में नहीं ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच—

काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥ २ ॥

कवयः १ काम्यानाम् २ कर्मणाम् ३ न्यासम् ४ संन्यासम् ५ विदुः ६ विचक्षणाः ७ सर्वकर्मफलत्यागम् ८ त्यागम् ९ प्राहुः १० ॥ २ ॥ अ० कोई कोई ❋पण्डित १ काम्य २ कर्मोंके ३ न्यासको ४ संन्यास ५ जानते हैं ६ और कोई कोई ❋पण्डित ७ सब कर्मोंके फलत्यागको ८ त्याग ९ कहते हैं १० । टी० काम्य शब्दका अर्थ कोई तो ऐसा करते हैं कि—स्त्री धनादिके निमित्त जो कर्म वह त्यागना योग्य है, नित्य प्रायश्चित कर्म करना चाहिये इसीका नाम संन्यास है. और कोई महात्मा काम्य शब्दका अर्थ यह करते हैं कि—समस्त कर्मोंका त्यागना योग्य है इसका नाम संन्यास है. सकाम कर्मोंके त्यागमें दोनों सम्मत हैं और कुछ न करने से सकाम कर्म भी अच्छा है. 'पुत्र—स्वर्गादिकी इच्छा-वाला यज्ञ करे.' ऐसा वेदमें सुना जाता है. परन्तु इस जगह काम्य शब्दका अर्थ यही है कि—सब कर्मोंके त्यागका नाम संन्यास है. नहीं तो दोनों जगह कर्मकी विधि रहती है. जब कि एक कर्मकी विधि है और वह किसी हेतुसे न बना तो कर्त्ताको प्रायश्चित्त भी अवश्यक है और जब कि उसको पाप लगा ओर प्रायश्चित्त करना पड़ा फिर मुक्त कैसे होगा ? सदा बन्धन में रहा. इस हेतु से अधिकार-भेदकरके उस श्लोकका तात्पर्य यह समझना चा-हिये कि—शुद्धान्तःकरणवाले निष्काम पुरुष सब कर्मोंके त्यागको संन्यास जानते हैं और इस भूमिकाकी इच्छावाले सब कर्मों के केवल फलत्यागको सन्यास जानते हैं. सब कर्मोंके फलका त्याग इसीका नाम जो संन्यास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहते हैं तो चतुर्थाश्रम जो संन्यास है उसकी विधि क्या वृथाही रही? तात्पर्य, सब कर्मोंके फलका त्याग करना और कर्म करना इसको कोई कोई पण्डित त्याग कहते हैं और सब कर्मों को स्वरूपसे त्याग देना इसको पण्डित संन्यास कहते हैं. जबतक अन्तःकरण शुद्ध न हो, तबतक कर्म करना, उसका फल त्याग देना और जब अन्तःकरण शुद्ध हो जाय तब सब कर्मोंको त्याग देना इत्यभिप्रायः ॥ २ ॥

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः।
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥ ३ ॥

एके १ मनीषिणः २ इति ३ प्राहुः ४ दोषवत् ५ कर्म ६ त्याज्यम् ७ च ८ अपरे ९ इति १० यज्ञदानतपःकर्म ११ न १२ त्याज्यम् १३ ॥ ३ अ० एक १ पण्डित २ यह ३ कहते हैं ४ कि❋दोषवाला ५ कर्म ६ त्यागना योग्य है ७ और ८ अपर अर्थात् कोई एक पण्डित ९ यह १० कहते हैं❋कि❋यज्ञ दान तपकर्म ११ नहीं १२ त्यागना चाहिये १३। तात्पर्य,सब कर्मों के त्याग में अन्य मतवालोंका भी सम्मत है इसी बातके दृढ़ करने के लिये सांख्यशास्त्रवालोंका मत दिखाया. सांख्यशास्त्रवाले कहते हैं कि—यज्ञादिकर्मोंमें हिंसा असमतादि दोष हैं, इस वास्ते उनको त्यागना योग्य है और पूर्वमीमांसावाले यह कहते हैं कि—वेदकी आज्ञा में शङ्का करनी न चाहिये. यज्ञादि कर्म करना योग्य है. जो वेदोंने कहा यदि उसमें हिंसा भी प्रतीत होती तो भी वह कर्म श्रेष्ठ है. अधिकार प्रति दोनोंका कहना सत्य है. प्रवृत्तिमार्गवाला अवश्य यज्ञादि कर्म करे और निवृत्तिमार्गवाला कर्मों में विक्षेप समझ कर त्याग दे। शम दमादि का अनुष्ठान करे ॥ ३ ॥

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम!।
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र! त्रिविधः संप्रकीर्तितः ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भरतसत्तम ! १ तत्र २ त्यागे ३ निश्चयम् ४ मे ५ शृणु ६ पुरुषव्याघ्र ! ७ हि ८ त्यागः ९ त्रिविधः १० संप्रकीर्तितः ११ ॥ ४ ॥ उ० आस्तिक मार्गवालों में भी जो भेद प्रतीत होता है—कि जो पिछले श्लोक में कहा—इसकी निवृत्ति के लिये दोनोंका सिद्धान्त तात्पर्यार्थ कहते हैं । अ० हे अर्जुन ! १ तिस २ त्यागके विषय ३ निश्चय ४ मेरे ५ वचनसे❀ सुन ६ हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ अर्जुन ! ७ त्यागका अर्थ जानना कठिन है❀ क्योंकि ८ त्याग ९ तीन प्रकारका १० कहा है ११ । तात्पर्य, हे अर्जुन ! त्याग तीन प्रकारका है, इस हेतुसे त्यागका अर्थ कठिन है. त्याग और संन्यास इन दोनों शब्दोंका एकही अर्थ है. मुझसे सुन. प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्तिमार्ग ये दोनों अनादि हैं. वेदों में जहां कर्म का त्याग कहा है वह निवृत्ति विरक्त महापुरुषोंके लिये कहा है और जहां कर्म का अनुष्ठान है, वह प्रवृत्ति रागीजनों के लिये कही है. ऐसा तात्पर्य वेदोंका सत्पुरुषों की कृपासे जाना जाता है, शास्त्रोंमें किंचिन्मात्र भेद नहीं. अपनी समझका भेद है ॥ ४ ॥

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥ ५ ॥

यज्ञः १ च २ दानम् ३ तपः ४ एव ५ मनीषिणाम् ६ पावनानि ७ एव ८ तत् ९ यज्ञदानतपःकर्म १० न ११ त्याज्यम् १२ कार्यम् १३ ॥ ५ ॥ उ० तीन प्रकार का त्याग श्रीभगवान् अभी आगे कहेंगे. प्रथम् दो श्लोकों में अपना सिद्धान्त कहते हैं । अ० यज्ञ १ और २ दान ३ तप ४ निश्चय ५ पण्डितों को ६ पवित्र करनेवाले हैं ७ इस वास्ते ८ सोई ९ यज्ञ दान तपकर्म १० नहीं ११ त्यागना योग्य है १२ करने योग्य हैं. तात्पर्य, यज्ञदानादि कर्म अन्तःकरण को शुद्ध करते हैं, इस वास्ते ज्ञानकी प्रथम भूमिकावालों को कर्म त्यागना न चाहिये. स्पष्टार्थ है कि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पवित्र की विधि अपवित्र वस्तु में होती है; पवित्र वस्तु में पवित्र विधि नहीं होती. जिनको संसार में वैराग्य नहीं और भगवद्भक्त जिनको प्राणों की बराबर प्यारे नहीं वे निश्चय करें कि हमारा अन्तःकरण शुद्ध नहीं. विरक्तों की सेवा पूजा से हमारा अन्तःकरण शुद्ध होगा ॥ ५ ॥

एतान्यपि तु कर्माणि संगं त्यक्त्वा फलानि च।
कर्त्तव्यानीति मे पार्थ! निश्चितं मतमुत्तमम् ॥ ६ ॥

पार्थ १ एतानि २ कर्माणि ३ सङ्गम् ४ च ५ फलानि ६ त्यक्त्वा ७ अपि ८ तु ९ कर्त्तव्यानि १० इति ११ मे १२ निश्चितम् १३ उत्तमम् १४ मतम् १५ ॥ १६ ॥ अ० हे अर्जुन! १ ये २ तप दानादि ❀कर्म ३ आसक्ति ४ और ५ फलको ६ त्याग करके निश्चय ८ ।९ करने योग्य हैं १० यह ११ मेरा १२ निश्चय १३ उत्तम १४ मत १५ है। तात्पर्य, हे अर्जुन ! तपदानादि अन्तःकरण को शुद्ध करते हैं, इस वास्ते मुमुक्षु को अवश्य करने चाहिये. मेरा भी यही उत्तम मत है और औरों का भी कर्म की विधि में यही तात्पर्य है. विना अन्तःकरण शुद्ध हुये जो वेदोक्त बहिरंग कर्मों का त्याग कर देते हैं, अवैदिक मार्गवालों की बात सुनकर या निवृत्ति मार्गवालों को श्रुति–स्मृति–प्रमाण देकर वे पापके भागी होते हैं. क्योंकि, शास्त्रार्थ उन्हों ने उलटा समझा ॥ ६ ॥

नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते।
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥ ७ ॥

नियतस्य १ कर्मणः २ सन्यासः ३ न ४ उपपद्यते ५ तु ६ मोहात् ७ तस्य ८ परित्यागः ९ तामसः १० परिकीर्तितः ११ ॥ ७ ॥ उ० पीछे भगवान् ने कहा था कि त्याग तीन प्रकार का है, उसको कहते हैं। अ० नित्य संध्यादि १ कर्म का २ त्याग ३ नहीं ४ करना चाहिये ५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और ६ मोहसे ७ तिसका ८ त्याग ९ करदेना ❋ तमोगुणी त्याग १० कहा है ११ । तात्पर्य—जिज्ञासु मुक्ति की इच्छा वाला नित्य कर्मोंका त्याग न करे और जो भूल या मूर्खता से त्याग करेगा तो वह त्याग तमोगुणी कहा जायगा. ऐसे त्यागका फल मोक्ष नहीं. पीछे ऐसा त्याग महाक्लेश देता है ॥ ७ ॥

दुःखमित्येव यत् कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ।
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् ॥ ८ ॥

यत १ कर्म २ कायक्लेशभयात् ३ त्यजेत् ४ दुःखम् ५ इति ६ एव ७ सः ८ राजसम् ९ त्यागम् १० कृत्वा ११ त्यागफलम् १२ न १३ लभेत् १४ एव १५ ॥ ८ ॥ अ० जो कर्म २ कायाक्लेशके भयसे ३ त्यागता है ४ उसमें ❋ दुःख ५ । ६ । ७ समझ कर ❋ सो ८ रजोगुणी ९ त्याग को १० करके ११ त्यागके फलको १२ नहीं १३ प्राप्त होता है १४ निश्चय १५। तात्पर्य, रजोगुणी पुरुष मैले अन्तःकरणका होनेसे स्नान दानादि कार्मोंको दुःखरूप जानता है. यह नहीं समझता कि—इन कर्मों से मेरा अन्तःकरण शुद्ध होकर मुझको ज्ञान प्राप्त होगा, कि जिससे सब दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति होती है. इस वास्ते विना आत्म बोध हुये ही या कायाक्लेश के भयसे कर्मों को त्याग देता है विना अन्तःकरण शुद्धहुये त्यागका फल ज्ञाननिष्ठा उसको प्राप्त नहीं होती ॥ ८ ॥

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन ! ।
संगं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः ॥ ९ ॥

अर्जुन ! १ यत २ नियतम ३ कर्म ४ कार्यम् ५ इति ६ एव ७ संगम् ८ च ९ फलम् १० त्यक्त्वा ११ क्रियते १२ सः १३ त्यागः १४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एव १५ सात्त्विकः १६ मतः १७ ॥ ९ ॥ उ० सतोगुणी त्याग यह है—अ० हे अर्जुन ! १ जो २ नित्य ३ कर्म ४ है सो ❀ करना चाहिये ५ यह निश्चय है ६ । ७ सङ्ग ८ और ९ फल को १० त्याग करके ११ जो कर्म ❀ किया जाता है १२ सो १३ त्याग १४ निश्चय १५ सतोगुणी १६ माना है १७ । तात्पर्य, हे अर्जुन ! जो नित्यकर्म है उस को ब्रह्मजिज्ञासु अवश्य करे; परन्तु उसमें सङ्ग न करे. और उसके फलका त्याग करे सो त्याग सतोगुणी है. इस प्रकार जो कर्म करते हैं, उनका अन्तकरण शुद्ध होता है. फिर साधनचतुष्टयसंपन्न होकर ब्रह्मविद्या का श्रवण करके अपने स्वरूप को जानकर कृतकृत्य हो जाते हैं. उनको फिर कुछ कर्तव्य नहीं रहता ॥ ९ ॥

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते ।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः ॥१०॥

अकुशलम् १ कर्म २ न ३ द्वेष्टि ४ कुशले ५ न ६ अनुषज्जते ७ त्यागी ८ सत्त्वसमाविष्टः ९ मेधावी १० छिन्नसंशयः ११ ॥ १० ॥ उ० जिसका शुद्ध अन्तःकरण हो जाता है उसका लक्षण यह है—अ० बुरा १ जो ❀ कर्म २ उसके साथ ❀ नहीं ३ वैर करता है ४ अच्छे कर्ममें ५ नहीं ६ प्रीति करता है ७ बुरे भले दोनों कर्मोंका फल त्याग देता है ८ आत्मा और अनात्माका जो विवेक उस करके युक्त अर्थात् विचारवान् ९ आत्मनिष्ठ १० संदेहरहित ११ । तात्पर्य, जबतक प्राणी को इच्छा रहती है, तबतक अच्छे कर्मोंमें प्रीति रखता है और उसके वास्ते नाना प्रकारके यत्न करता है. अच्छे कर्म्म और बुरे कर्मों का साथ है. बुरे कर्म परवश हो जाते हैं. इच्छा पुरुष को बुरा भला कर्म नहीं लगता. जो भले कर्मोंका फल चाहैगा, उसको बुरे कर्मों का फल परवश होगा. विवेकी (विचारवान्) शुद्धान्तःकरणवाला, सन्देहरहित सदा आत्मनिष्ठ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहता है. परमानन्द स्वरूप आत्माके सामने सब कर्मों के फल तुच्छ प्रतीत होते हैं ज्ञानी को ॥ १० ॥

नहि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते ॥११॥

देहभृता १ अशेषतः २ कर्माणि ३ त्यक्तुम् ४ नहि ५ शक्यम् ६ यः ७ तु ८ कर्मफलत्यागी ९ सः १० त्यागी ११ इति १२ अभिधीयते १३ ॥ ११ ॥ उ० जो कोई यह समझे कि—कर्मोंका फल त्यागनेसे कर्मोंकोही त्याग देना अच्छा है. इस वास्ते श्रीभगवान् कहते हैं कि अज्ञानी जीव समस्त कर्म्मों को नहीं त्याग सक्ता, फलही का त्याग कर सक्ता है. कर्मोंका फल त्यागने से अन्तःकरण शुद्ध होता है यह परमफल है और इसीसे ज्ञान होता है. ज्ञानी समस्तकर्म त्याग सक्ता है. क्योंकि—कर्म्मोंका फल जो अज्ञान की निवृत्ति थी सो दूर हुई. जब तक अज्ञान दूर न हो, तबतक कर्म्मोंका त्याग न करना चाहिये । अ० वर्णाश्रमाभिमानी अज्ञानी जीव १ समस्त २ कर्म ३ त्यागने को ४ नहीं ५ समर्थ है ६ जो ७ । ८ कर्म के फ़ल का त्यागी ९ है❋सो १० त्यागी ११ । १२ कहा है १३ । तात्पर्य—अज्ञानी जीव कर्म्मोंके त्यागनेसे बन्धनको प्राप्त होता है. क्योंकि, अन्तःकरण की शुद्धिका उपाय उसने छोड़ दिया और ज्ञानी कर्मकर्ता हुआभी अकर्ताही है! क्योंकि, आत्मा सदा असङ्ग, अक्रिय है. इस ज्ञानके प्रतापसे मुक्त होता है ॥ ११ ॥

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ।
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु संन्यासिनां क्वचित् ।१२।

अनिष्टम् १ च २ इष्टम् ३ मिश्रम् ४ त्रिविधम् ५ कर्मणः ६ फलम् ७ प्रेत्य ८ अत्यागिनाम् ९ भवति १० तु ११ संन्यासिनाम् १२ क्वचित् १३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न १४ ॥ १२ ॥ उ० जो कर्मोंका फलत्याग करते हैं, उनका अन्तःकरण शुद्ध होकर उनको परमानन्द परमफलकी प्राप्ति होती है और जो सकाम कर्म करते हैं, उनको इष्ट और अनिष्ट और इष्टानिष्ट अर्थात् मिलाहुआ यह तीन प्रकारका फल होता है और जो विना अन्तःकरण शुद्ध हुये कर्म छोड़ देते हैं, वे सदा नरक और पशु-पक्षियोंकी योनियोंमें जन्म ले लेकर वारंवार मरते हैं, इसवास्ते श्रीभगवान् वारंवार जिज्ञासुको निष्काम कर्मका उपदेश फलके सहित करते हैं। अ० नरकादि १ और २ स्वर्गादि ३ और ❋ मर्त्यलोक में मनुष्यादि देहों की प्राप्ति ४ यह ❋ तीन प्रकार ५ कर्म का ६ फल ७ मर करके ८ सकामों को ९ होता है १० और ११ संन्यासियोंको १२ कभी १३ नहीं १४ होता है। तात्पर्य—स्वर्गादि पदार्थ अनित्य और दुःखदायी हैं. भगवद्भजन करके जो अनित्य फलकी प्राप्ति हुई तो क्या हुआ ? नित्य एकरस परमानन्दकी प्राप्ति होनी चाहिये. सो संन्यासियोंकोही होती है. स्पष्ट प्रकट श्रीभगवान् बेसन्देह कहते हैं ॥ १२ ॥

पञ्चैतानि महाबाहो ! कारणानि निबोध मे।
सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् १३॥

महाबाहो १ सर्वकर्मणाम् २ सिद्धये ३ एतानि ४ पञ्च ५ कारणानि ६ सांख्ये ७ कृतान्ते ८ प्रोक्तानि ९ मे १० निबोध ११ ॥ १३ ॥ उ० कर्म और कर्मोंके फलका तब त्याग हो सक्ता है कि—जब कर्मों की जड़का ज्ञान हो. इस वास्ते कर्मों के जो कारण हैं, तिनको बताते हैं—अ० हे अर्जुन ! १ सब कर्मों की २ सिद्धि के वास्ते ३ ये ४ पञ्च ५ कारण ६ सांख्य ७ कृतान्त में ८ कहे हैं ९ मुझसे १० सुन ११ तिनको। टी० भले प्रकार परमात्मा का स्वरूप जाना जावे जिस शास्त्रमें उसको सांख्य कहते हैं, ब्रह्मविद्या (वेदान्त—शास्त्र) का नाम सांख्य है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और कर्मों का अन्त है जिसमें उसको कृतान्त कहते हैं. यह उसी सांख्यका विशेषण है ॥ १३ ॥

अधिष्ठानं तथा कर्त्ता करणं च पृथग्विधम् ।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम् ॥ १४ ॥

अधिष्ठानम् १ तथा २ कर्त्ता ३ करणम् ४ च ५ पृथग्विधम् ६ विविधाः ७ च ८ पृथक्चेष्टाः ९ दैवम् १० च ११ एव १२ अत्र १३ पञ्चमम् १४ ॥ १४ ॥ उ० कर्म करनेमें ये पांच हेतु हैं—अ० स्थूल शरीर भौतिक इन्द्रियादि का आश्रय १ चैतन्य और जड़ की ग्रन्थि अहङ्कार अर्थात् सोपाधिक चैतन्य २ । ३ और इन्द्रिय ४ । ५ पृथक् स्वरूपवाली ६ और कैप्रकार की ७ । ८ ये दोनों चौथे पद करण (इन्द्रियों) के विशेषण हैं. मूलमें 'करणम्' यह पद चौथा है❋और प्राणापानादि ९ और दैव १० । ११ । १२ इन में १३ पांचवां १४ अर्थात् इन्द्रियों के देवता❋तात्पर्य—शरीर, इन्द्रिय, प्राण, अन्तःकरण, अज्ञान इन के साथ मिलाहुआ चैतन्य कर्त्ता है पृथक् अकर्त्ता है ॥ १४ ॥

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः ।
न्याय्यं वा विपरीतं वा पञ्चैते तस्य हेतवः ॥१५॥

नरः १ शरीरवाङ्मनोभिः २ यत् ३ कर्म ४ प्रारभते ५ वा ६ न्याय्यम् ७ वा ८ विपरीतम् ९ तस्य १० एते ११ पञ्च १२ हेतवः १३॥ १५ ॥ अ० प्राणी १ शरीर—मन—वाणीकरके २ जो ३ कर्म ४ प्रारम्भ करता है ५ या ६ अच्छा ७ या ८ बुरा ९ तिसके १० ये ११ पांच १२ हेतु १३ हैं जो पिछले श्लोक में शरीरादिक कहे हैं❋शरीर १ सोपाधिचैतन्य २ इन्द्रिय ३ प्राण ४ दैव ५ अर्थात् आदित्यादि देवता येही पञ्च कारण हैं. केवल आत्मा, कारण—कर्त्ता नहीं, अगले मन्त्र में भगवान् स्पष्ट कहैंगे ॥ १५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तत्रैवं सति कर्त्तारमात्मानं केवलं तु यः।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः॥ १६॥

तत्र १ एवम् २ सति ३ तु ४ यः ५ आत्मानम् ६ केवलम् ७ कर्त्तारम् ८ पश्यति ९ अकृतबुद्धित्वात् १० सः ११ दुर्मतिः १२ न १३ पश्यति १४॥ १६॥ उ० जब कि सब कर्मोंमें ये पञ्च हेतु हैं फिर केवल आत्माको कर्त्ता समझना मूर्खता है। अ० तहां अर्थात् सब कर्मों में १ इसप्राकार २ हुये सन्ते ३ फिर ४ जो ५ आत्माको ६ केवल ७ कर्त्ता ८ देखता है ९ इसमें हेतु यह है कि ❀सत् शास्त्र सद्गुरु उपदेशरहित होनेसे अर्थात् गुरु ने उसको ब्रह्मज्ञान का उपदेश नहीं किया, इस वास्ते अकृतबुद्धि होनेसे अर्थात् ब्रह्मज्ञान न होनेसे १० सो ११ मन्दमति १२ आत्माको यथार्थ ❀नहीं १३ देखता है १४। टी० जैसे, पिछले मन्त्र में कहा, इसप्रकार तात्पर्य वास्तव आत्मा शुद्ध, सच्चिदानन्द, निर्विकार, अक्रिय है. शरीरेन्द्रियादि भ्रान्तिके सम्बन्धसे जलचन्द्रवत् आत्मा 'कर्त्ता' प्रतीत होता है. अज्ञानियोंको—जिन्हों ने वेदान्तशास्त्र श्रद्धापूर्व्वक नहीं श्रवण किया॥ १६॥

यस्य नाहङ्कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वाऽपि स इमान्लोकान्न हन्ति न निबध्यते॥१७॥

यस्य १ अहङ्कृतः २ भावः ३ न ४ यस्य ५ बुद्धिः ६ न ७ लिप्यते ८ सः ९ इमान् १० लोकान् ११ अपि १२ हत्वा १३ न १४ हन्ति १५ न १६ निबध्यते १७॥ १७॥ उ० सुमति शुद्धान्तःकरणवाले जो आत्मा को अक्रिय जानते हैं, वे कर्म करते हुये भी अकर्त्ताही हैं, इस बातको कैमुतिकन्यायसे श्रीभगवान् दृढ़ करते हैं अर्थात् जब बुरे कर्म हिंसादि उसको बन्धन नहीं करते तो भले कर्म यज्ञादि उसको कैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बन्धन करैंगे ?। अ० जिसके १ अहङ्कृत २ भाव ३ नहीं ४ अर्थात् "यह कर्म मैंने नहीं किया. इस कर्म करने में शरीरादि पञ्च हेतु हैं. मैं शुद्ध, असङ्ग, अविद्यारहित हूं" ऐसे जो समझता है और ❋ जिस की ५ बुद्धि ६ नहीं ७ लिपायमान होती है ८ अर्थात् किसी प्रकार का कर्म शुभाशुभ प्रारब्धवशात् हो जावे किंचिन्मात्र हर्ष शोक न होवे जिसको ❋ सो ९ इन १० लोकों को ११ भी ११ मार करके १३ नहीं १४ मारता है १५ न १६ बन्धन को प्राप्त होता है १७। तात्पर्य–जो मुमुक्षु दिन रात मुक्तिके लिये यथाशक्ति यत्न करते हैं, जहांतक हो सके देशकालवस्तु-के अनुसार भगवद्भजन, पूजा, पाठ, जप, तीर्थ, स्नानादि कर्म करते रहते हैं, परलोक में आस्तिक्यबुद्धि है और शुभ कर्मों के प्रताप से शुद्धा-न्तःकरण होकर आत्मज्ञान प्राप्त हुआ है. जो कदाचित् किसी पिछले पापके उदय होनेसे प्रारब्धवशात् कोई कर्म जाने वा विना जाने बूरा बन जावे ऐसे मुमुक्षु से (जिसका लक्षण ऊपर कहा) तो उस कर्म का दोष कभी नहीं लगेगा जो उसको दोष समझेंगे, वह फल उनको होगा. वेद-शास्त्र-ईश्वरकी इस बात में सम्मति है ॥ १७ ॥

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना ।
करणं कर्म कर्त्तेति त्रिविधः कर्मसंग्रहः ॥ १८ ॥

परिज्ञाता १ ज्ञानम् २ ज्ञेयम् ३ त्रिविधा ४ कर्मचोदना ५ कर्त्ता ६ कर्म ७ करणम् ८ इति ९ त्रिविधः १० कर्मसंग्रहः ११ ॥ १८ ॥ उ० अब अन्य प्रकार से आत्माको अकर्त्ता सिद्ध करते हैं । अ० ज्ञाता १ ज्ञान २ ज्ञेय ३ तीन प्रकार ४ कर्म की प्रेरणा है ५ और ❋ कर्त्ता ६ कर्म ७ करण ८ यह ९ तीन प्रकार १० कर्मसंग्रह ११ है। जाननेवाला १ जिस करके जाना जावे २ जाननेके योग्य ३ कर्मकी प्रवृत्तिमें हेतु ४ क्रियाका आश्रय ११ । तात्पर्य, चिदाभास और अन्तःकरणकी वृत्ती और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रोत्रादि इन्द्रिय यही कर्म की प्रवृत्ति में हेतु हैं. आत्मा कूटस्थ निर्विकार है. बन्ध मोक्ष चिदाभास वही है. आत्मा बन्धमोक्षशब्दोंका विषय भी नहीं ॥ १८ ॥

ज्ञानं कर्म च कर्त्ता च त्रिधैव गुणभेदतः ।
प्रोच्यते गुणसंख्याने यथावच्छृणुतान्यपि ॥ १९ ॥

कर्ता १ च २ कर्म ३ च ४ ज्ञानम् ५ गुणभेदतः ६ गुणसंख्याने ७ त्रिधा ८ एव ९ प्रोच्यते १० तानि ११ अपि १२ यथावत् १३ शृणु १४ ॥ १९ ॥ उ० कर्ता कर्मादि सब त्रिगुणात्मक हैं. आत्मा त्रिगुणरहित है । अ० कर्ता १ और २ कर्म ३ और ४ कर्म ज्ञान ५ गुणों के भेदसे ६ सांख्यशास्त्र में ७ तीन प्रकार के ८ । ९ कहे हैं १० तिनको ११ । १२ यथार्थ १३ सुन १४ । तात्पर्य, कर्तादिमें तीन तीन भेद हैं. यह सत्त्व, रज और तम ये तीनों गुण अज्ञान करके कल्पित हैं. अज्ञान के दूर होनेसे परमानन्दस्वरूप नित्यप्राप्त आत्माकी प्राप्ति होती है. तमोगुणको रजोगुण दूर करे. रजोगुणको सत्त्वगुणसे. सत्त्वगुणको ब्रह्मविद्यासे दूर करे. इसीसे वास्ते यह तीन प्रकार का भेद दिखाकर आत्मा को इन तीनों गुणों से पृथक् दिखलाया है ॥ १९ ॥

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् २० ॥

विभक्तेषु १ सर्वभूतेषु २ येन ३ अविभक्तम् ४ एकम् ५ भावम् ६ अव्ययम् ७ ईक्षते ८ तत् ९ ज्ञानम् १० सात्त्विकम् ११ विद्धि १२ । ॥ २० ॥ उ० सात्त्विकी ज्ञान यह है । अ० पृथक् पृथक् सब भूतों १ । २ जिस ज्ञान करके ३ अनस्यूत ४ एक ५ भाव ६ निर्विकार ७ परमात्मा को ❀ देखता है ८ सो ९ ज्ञान १० सतोगुणी ११

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जान तू १२ । तात्पर्य, जैसे वस्त्र में सूत अनस्यूत हैं, इसी प्रकार ब्रह्माजीसे ले चींटीतक सब भूतों में सच्चिदानन्दस्वरूप, शुद्ध, निर्विकार, परमात्मा एकही है. देहोंकी उपाधिसे पृथक् पृथक् देवता, मनुष्य, पश्वादि कहा जाता है. इसी प्रकार जो आत्माको जानते हैं जिस ज्ञान करके सो ज्ञान सतोगुणी है. अद्वैतवादियोंका यही ज्ञान है ॥ २० ॥

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान् पृथग्विधान् ।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥ २१ ॥

पृथक्त्वे १ तु २ यत् ३ ज्ञानम् ४ तत् ५ ज्ञानम् ६ राजसम् ७ विद्धि ८ सर्वेषु ९ भूतेषु १० नाना ११ भावान् १२ पृथक् १३ विधान् १४ वेत्ति १५ ॥ २१ ॥ उ० भेदवादियों के रजोगुणी ज्ञान को कहते हैं। अ० पृथग्भाव करके १ । २ जो ३ ज्ञान ४ तिस ज्ञान को ५ । ६ रजोगुणी ७ तू जान ८ इसी बातको फिर स्पष्ट करके कहते हैं ❋ सब भूतों में ९ । १० नाना प्रकार के ११ पदार्थों को १२ पृथक् १३ प्रकार १४ जो जानना है १५ जिस ज्ञान करके तिस ज्ञानको रजोगुणी जान तू. तात्पर्य, निरवयव पदार्थ सच्चिदानन्दस्वरूप परमात्मासे आत्माको पृथग्भावकरके जानना अर्थात् परमात्मा चिद्घन है और आत्मा चित्कण है. इस प्रकार भेदवादी आत्मदृष्टि करके भी अर्थात् निरवयव आत्मामें भी भेदको सिद्धान्त जानते हैं. अविद्या की उपाधि से देहदृष्टि करके भ्रान्तिजन्य भेद व्यवहार में प्रतीत होता है कि जिसको रजोगुणी भेदवादी सिद्धान्त समझते हैं. इसी हेतुसे यह ज्ञान रजोगुणी भेदवादियोंका है ॥ २१ ॥

यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन् कार्ये सक्तमहैतुकम् ।
अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम् ॥ २२ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत् १ तु २ एकस्मिन् ३ कार्ये ४ कृत्स्नवत ५ सक्तम् ६ अहैतुकम् ७ च ८ अतत्वार्थवत् ९ अल्पम् १० तत् ११ तामसम् १२ उदाहृतम् १३ ॥ २२ ॥ उ० तमोगुणी ज्ञान को कहते हैं। अ० जो १। २ ज्ञान एक ३ कार्य में ४ सम्पूर्णवत् ५ सक्त ६ है अर्थात् एक कार्य में सम्पूर्णवत् जो ज्ञान है. जैसे आपको ब्राह्मण संन्यासी देहदृष्टि से इतनेही स्थूल शरीर को जानना और पाषाण की मूर्तिही को और श्रीरामचन्द्रादि सावयय मूर्तिकोही परमार्थमें परमात्मा जानना अर्थात् इनसे परे कुछ अन्य निरवयव सच्चिदानन्द शुद्ध तत्व नहीं है. मूर्तिमान्ही परमात्मा है. यह शरीरही ब्राह्मण संन्यासी है. यह मूर्ति पाषाण की परमेश्वर है. यह ज्ञान❀हेतुरहित ७ अर्थात् ऐसे ज्ञानमें कोई युक्ति नहीं❀और ८ परमार्थ सिद्धान्त नहीं है ९ परमतत्व सिद्धान्तकी प्राप्तिका एक साधन है. फिर कैसा है? ❀तुच्छ है १० क्योंकि इसका फल अल्प है! वैराग्यादि साधनोंकी अपेक्षा करके सस ज्ञानसे चिरकालमें अन्तःकरण शुद्ध होता है. इस प्रकार का जो ज्ञान❀सो ११ तमोगुणी १२ कहा है १३। तात्पर्य, यह है कि ज्ञानी भी तीन प्रकारके हैं. विना सात्विकी ब्रह्मज्ञान हुये रजोगुणी तमोगुणी ज्ञानमें अटक जाना इसी ज्ञान से मोक्ष समझ लेनी, मूर्खता है. जो साधनको सिद्धान्त समझते हैं, जिस समझसे वह तमोगुणी ज्ञान है ॥ २२ ॥

नियतं संगरहितमरागद्वेषतः कृतम्।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥ २३ ॥

अफलप्रेप्सुना १ यत् २ नियतम् ३ कर्म ४ संगरहितम् ५ अरागद्वेषतः ६ कृतम् ७ तत् ८ सात्त्विकम् ९ उच्यते १० ॥ २३ ॥ उ० ❀कर्म तीनप्रकार का है. प्रथम सतोगुणी कहते हैं। नहीं फलकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाह है जिसको तिसने १ जो २ नित्य ३ कर्म ४ संगरहित ५ विना रागद्वेषके ६ किया ७ सो ८ सतोगुणी ९ कहा है १०। तात्पर्य, स्नान, ध्यान, पाठ, पूजा, तीर्थ साधुसेवादि कर्म करना शास्त्र की आज्ञा है, कर्म में आसक्ति (प्रीति) करनेसे, फलकी चाह करनेसे बन्धन होता है, इस वास्ते कर्म में प्रीति, द्वेष, आसक्ति, इनका त्याग करना. कि जो वह कर्म अन्तःकरण को शुद्ध करके परमानन्दस्वरूप आत्माको प्राप्त करे. आसक्ति (प्रीति) उस पदार्थ में चाहिये कि जो नित्य एकरस हो और ऐसेही फल चाहना करनी फल प्राप्त होने के पीछे भी साधनों से राग द्वेष न चाहिये ॥ २३ ॥

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः ॥
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥ २४ ॥

कामेप्सुना १ यत् २ कर्म ३ साहङ्कारेण ४ क्रियते ५ वा ६ तु ७ पुनः ८ बहुलायासम् ९ तत् १० राजसम् ११ उदाहृतम् १२ ॥ २४ ॥ उ० रजोगुणी कर्म कहते हैं। अ० फलकी कामना वालेने १ जो २ कर्म ३ अहङ्कारके सहित ४ किया है ५ और ६। ७। ८ बहुत श्रम हो जिसमें ९ सो १० कर्म ❀ रजोगुणी ११ कहा है १२। तात्पर्य–पुत्र, स्त्री, धन, स्वर्गादि भोगोंके निमित्त वा यह अहङ्कारकरके कि—हमारी बराबर अग्निहोत्री कौन है ? जितने हमने तीर्थ किये किसी से हो सक्के हैं ? ब्रह्मज्ञान से क्या होता है? जो है सो कर्म ही है. अब हम चारों धाम कर चुके. कृतकृत्य हैं और कर्म करनेमें इतना श्रम करना कि विचार किञ्चित न हो सके. जैसे कि तीर्थयात्रा में चार सौ कोस चलना चाहिये. प्रातः—काल से सायंकाल तक ब्राह्मी मुहूर्त्त और प्रदोषकाल में भी रास्ता मापना इस प्रकारके कर्म सब रजोगुणी हैं ॥ २४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुबन्धक्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम्।
मोहादारभ्यते कर्म तत्तामसमुदाहृतम् ॥ २५ ॥

अनुबन्धम् १ क्षयम् २ हिंसाम् ३ च ४ पौरुषम् ५ अनवेक्ष्य ६ मोहात् ७ कर्म ८ आरभ्यते ९ तत् १० तामसम् ११ उदाहृतम् १२॥२५॥ उ० तमोगुणी कर्म कहते हैं। अ० पश्चात्भावि १ द्रव्यादि का खर्च २ हिंसा ३ और ४ पुरुषार्थ ५ इन चारोंको❀नहीं विचारकर ६ मोहसे ७ जो❀कर्म ८ आरम्भ किया ९ सो १० तमोगुणी ११ कहा है १२। तात्पर्य, औरोंकी देखा देखी या सुनकर विना विचारके अर्थात् जो मैं यह कर्म करूंगा तो मुझको पीछे इसका फल क्या होगा? कितना इस कर्ममें द्रव्यव्यय होगा? मुझको या औरोंको कितना दुःख होगा? यह काम मुझसे हो सकेगा वा नहीं? यह न विचार कर, मूर्खतासे कर्मका प्रारम्भ कर देना तमोगुणी कहा है. क्योंकि, विना विचारके शब्द बोलने में भी किसी जगह न्योता वैर हो जाता है. इसी प्रकार विना विचार तीर्थ व्रत मन्दिरादि के आरम्भ कर देने में सिवाय दुःख और पापके कुछ नहीं मिलता; खोटेकर्मों का तो कुछ प्रसंग नहीं. वे तो विचारपूर्वक और विना विचार किये हुये अनर्थ के मूल हैं ॥२५॥

मुक्तसंगोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्त्ता सात्त्विक उच्यते २६॥

मुक्तसंगः १ अनहंवादी २ धृत्युत्साहसमन्वितः ३ सिद्ध्यसिद्ध्योः ४ निर्विकारः ५ कर्ता ६ सात्विकः ७ उच्यते ८॥ २६ ॥ उ० कर्ता तीन प्रकार का है. प्रथम सतोगुणी कर्ता कहते हैं। अ० संगरहित १ अहंकाररहित २ धैर्य उत्साह करके युक्त ३ सिद्धि में ४ निर्विकार ५ ऐसा❀कर्ता ६ सतोगुणी ७ कहा है ८। तात्पर्य, कर्मों में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आसक्त न होना चाहिये. क्योंकि, अन्तःकरणशुद्धिके पीछे कर्मों का त्यागना होगा. जिस पदार्थसे एक दिन जुदा होना है, उसमें प्राप्तिसमय भी प्रीति न रखनी. अवथा संगरहित का अर्थ यह समझना चाहिये कि 'मैं असंग हूं. अहंकार न करना कि मैं ऐसा वेदोक्त कर्म करता हूं.' कर्म करनेमें धैर्य—उत्साह रखना. जो धैर्य—उत्साह न होगा तो कभी कर्म में प्रवृत्ति स्थिति न होगी. उत्साह से कर्म में प्रवृति होती है. धैर्य से कर्म में स्थिति रहती है और कर्म की सिद्धि असिद्धि में निर्विकार रहना. दैवयोगसे जो कर्म प्रत्यक्ष फल देवे कि जैसा फल शास्त्र में लिखा है, या वैसा फल न हो तो दोनों में निर्विकार रहना. जो पदार्थ नाशवान् है वह हुआ न हुआ सम है. प्रत्युत होकर नाश होनेसे न होना श्रेष्ठ है. परमफल अन्तःकरणशुद्धिद्वारा परमानन्दस्वरूप आत्मापर दृष्टि चाहिये. सतोगुणी कर्म जो सतोगुणीकर्त्ता पुरुष करेगा, तो बेसन्देह उसका अन्तःकरण शुद्ध होगा ॥ २६ ॥

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः।
हर्षशोकान्वितः कर्त्ता राजसः परिकीर्तितः ॥ २७॥

रागी १ कर्मफलप्रेप्सुः २ लुब्धः ३ हिंसात्मकः ४ अशुचिः ५ हर्षशोकान्वितः ६ कर्त्ता ७ राजसः ८ परिकीर्त्तितः ९॥ २७ ॥ उ० रजोगुणी कर्ता को कहते हैं। अ० प्रीतिवाला १ अर्थात् पुत्रादि की प्रीत्यर्थ कर्म करना ❋ कर्मों के फल के चाहवाला २ लोभी पराये धनकी इच्छा वाला ३ दूसरे को दुःख देनेवाला ४ अपवित्र ५ हर्ष शोक करके युक्त ६ ऐसा ❋ कर्त्ता ७ रजोगुणी ८ कहा है ९। तात्पर्य, जो पुरुष पुत्र-मित्रादिकोंके प्रसन्नार्थ अर्थात् 'यह जो मैं कर्म करना हूं इस कर्मके देखने सुननेसे मेरे मित्रादि आनन्दि होंगे' इस दृष्टिसे कर्म करना. कर्मों में राग रखना, फलको चाहना, पराई स्त्री धनादिकी इच्छा रखनी अर्थात् हमको अच्छा कर्म करताहुआ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देख सुनकर राजा प्रजा दान देंगे, कर्म करनेके समय दूसरेके दुखपर दृष्टि न देनी, भीतर बाहर से अपवित्र रहना, कर्मकी सिद्धि में हर्ष करना, असिद्धि में शोक करना, इस प्रकार का कर्त्ता रजोगुणी है. जो इस प्रकार वेदोक्त कर्म भी करता है वह कर्म मोक्ष का हेतु न होगा ॥ २७ ॥

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्त्ता तामस उच्यते ॥२८॥

अयुक्तः १ प्राकृतः २ स्तब्धः ३ शठः ४ नैष्कृतिकः ५ अलसः ६ विषादी ७ दीर्घसूत्री ८ च ९ कर्ता १० तामसः ११ उच्यते १२। ॥ २८ ॥ उ० तमोगुणी कर्ता को कहते हैं। अ० कर्म करने के समय कर्म में चित्त न रखना १ विवेकरहित २ अर्थात् यह न समझना कि—कर्म करनेका यथार्थ फल क्या है ? ❋ अनघ ३ मायावी ४ अर्थात् कर्म तो वेदोक्त करना और मनमें यह रखना कि दूसरेको धोखा देकर उसका धन छीनलेना चाहिये, इस बातका छिपानेवाला ❋ दूसरे की आजीविकाका नाश करनेवाला, अपमान करनेवाला ५ आलसी ६ सदा रोती सूरत (अप्रसन्न रहना) ७ जो काम घडीके करनेका है दो चार पहर लागा दे. तात्पर्य, तनक से काम का बहुत विस्तार करदे ८। ९ ऐसा ❋ कर्ता १० तमोगुणी ११ कहा है १२। टी० अपनेको कर्मनिष्ठ समझकर ज्ञाननिष्ठ भगवद्भक्तोंको शूद्रादि समझ कर उनको नमस्कार न करना ॥ २८ ॥

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु।
प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनञ्जय! ॥ २९ ॥

धनञ्जय ! १ बुद्धेः २ धृतेः ३ च ४ भेदम् ५ गुणतः ६ त्रिविधं ७ पृथक्त्वेन ८ प्रोच्यमानम् ९ अशेषेण १० शृणु ११ एव १२ ॥ २९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अ० हे अर्जुन ! १ बुद्धि का २ और धीरज का ३ । ४ भेद ५ गुणों से ६ तीन प्रकार का ७ जुदा जुदा ८ कहना है ९ जो अगले छः श्लोकोंमें उसको ❀ समस्त १० सुन ११ निश्चय १२ । तात्पर्य, संसार में रजोगुणी तमोगुणी बुद्धिवाले भी बुद्धिमान् कहे जाते हैं सो वह समझ उनकी मोक्ष के लिये नहीं. परमार्थकी बात तमोगुणी रजोगुणी बुद्धिवाले नहीं जानते. उनको बुद्धिमान् समझकर परमार्थ में उनकी समझके ऊपर अनुष्ठान करना न चाहिये, इसीवास्ते बुद्धि का भेद श्रीभगवान् दिखाते हैं॥२९॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ।
बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ ! सात्त्विकी ३०॥

पार्थ ! १ या २ बुद्धिः ३ प्रवृत्तिम् ४ च ५ निवृत्तिम् ६ च ७ कार्याकार्ये ८ भयाभये ९ बन्धम् १० च ११ मोक्षम् १२ वेत्ति १३ सा १४ सात्त्विकी १५॥ ३०॥ उ० बुद्धि तीन प्रकार की है. तहां प्रथम सतोगुणी बुद्धि को कहते हैं । अ० हे अर्जुन ! १ जो २ बुद्धि ३ प्रवृत्ति ४ और ५ निवृत्तिको ६ और ७ कार्य—अकार्य ८ भय—अभय ९ बन्ध १० और ११ मोक्ष को १२ जानती है १३ सो १४ बुद्धि ❀ सतोगुणी १५ । तात्पर्य—प्रवृत्ति बन्धका हेतु है. निवृत्ति मोक्षमें हेतु है. इस देशकालमें ऐसे पुरुषको 'यही करना योग्य है, यह अयोग्य है, खोटे काम करनेमें भय होगा, भगवद्भजन विवेक वैराग्यादि शुभ कर्मोंमें भय नहीं, इस प्रकार कर्म करनेमें बन्ध होता है, इस प्रकार कर्मोंके करनेसे मोक्ष होता है.' ऐसी जिसकी बुद्धि है वह सतोगुणी है. बहुत कर्म ऐसे हैं वे किसीके लिये अच्छे हैं. किसीके लिये बुरे हैं. एक काम किसी देशकालमें कोई कर सक्ता है; किसी देशकालमें वह काम नहीं हो सक्ता. किसीको एक कर्म करनेका अधिकार है; किसीको उसीके त्यागनेका अधिकार है. ऐसीं बहुत बातें हैं. निवृत्ति, सतोगुणी महा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुरुष जानते हैं. केवल वेद–शास्त्रके पढ़ने–सुननेसे तात्पर्यार्थ नहीं जाना जाता है. एक बात समझानेकी नाना प्रक्रिया रीति हैं. महात्मा अनेक दृष्टान्त–युक्तियोंसे समझा सक्ते हैं, यदि वे प्रसन्न हो जावें ॥ ३० ॥

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ! राजसी ॥ ३१ ॥

पार्थ १ यया २ धर्मम् ३ अधर्मम् ४ च ५ कार्यम् ६ च ७ अकार्यम् ८ एव ९ च १० अयथावत् ११ प्रजानाति १२ सा १३ बुद्धिः १४ राजसी १५ ॥ ३१ ॥ उ० रजोगुणी बुद्धिको कहते हैं। अ० हे अर्जुन! १ जिस बुद्धि करके २ धर्म ३ अधर्मको ४। ५ कार्य और अकार्यको ६। ७। ८। ९। १० संदेह सहित ११ जानता है १२ अर्थात् यथावत जैसेका तैसा नहीं जानता है ❋ सो १३ बुद्धि १४ रजोगुणी १५। तात्पर्य–धर्माधर्म कार्याकार्यमें जिसको संदेह बनाही रहता है, उसकी बुद्धि रजोगुणी है. "यह जीव सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म है वा नहीं? वेदशास्त्रमें अद्वैत सिद्धान्त सत्य है वा नहीं? कर्मोंके संन्याससे मोक्ष होता है वा नहीं? निष्काम कर्म करनेसे अन्तःकरण शुद्ध होता है वा नहीं? वेद शास्त्र–प्रमाण हैं वा नहीं?" इस प्रकार सन्देह रहना, रजोगुणी बुद्धिका दोष है ॥ ३१ ॥

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता।
सर्वार्थान् विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ! तामसी॥ ३२॥

सर्वार्थान् १ या २ बुद्धिः ३ तमसावृता ४ अधर्मम् ५ धर्मम् ६ इति ७ मन्यते ८ च ९ सर्वार्थान् १० विपरीतान् ११ सा १२ तामसी १३ ॥ ३२ ॥ उ० तमोगुणी बुद्धि कहते हैं। अ० हे अर्जुन! १ जो २ बुद्धि ३ तमोगुण करके कढ़ीहुई ४ ऐसी बुद्धि करके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधर्मकोही धर्म ५ । ६ । ७ मानता है ८ और ९ सब अर्थोंको १० विपरीत ११ जिस बुद्धि करके समझता है ❀ सो १२ तमोगुणी १३ बुद्धि है. तात्पर्य—जो पुरुष सनातन मार्ग और स्मार्त्तको छोड़ इस कलियुगमें जीवनने जो सम्प्रदाय और पन्थ अपने नामसे चलाये हैं, उनको धर्म समझकर उस रस्तेपर चलते हैं. विचार करना चाहिये कि—श्रौत-स्मार्त्त—मार्गमें क्या दोष था ? जो उसको त्यागकर कल्पित मार्गको धर्म समझा, यही तमोगुणी बुद्धिका दोष है और श्रुति—स्मृतियोंका अर्थ अपने मतके अनुसार करना यही विपरीत अर्थ है. तात्पर्य, यह है कि श्रुति-स्मृतिप्रतिपाद्य मार्ग सनातन धर्म है और कलियुगमें जो मत चले हैं, वे श्रुति—स्मृतिसे विरुद्ध हैं. क्योंकि, जो वे श्रुति—स्मृतिके अनुसार होते, तो उस सम्प्रदाय और पन्थका जुदा एक नाम क्यों बनाया ? स्पष्ट प्रतीत होता है कि, कुछ श्रुतिस्मृतियोंका आशय लिया, कुछ श्रुतिस्मृतियोंका अर्थ उलटा किया, कुछ अपनी बुद्धिसे लिख दिया और कह दिया कि यह ग्रन्थ श्रुतिस्मृतियोंके अनुसार है. यही दोष तमोगुणी बुद्धिका है॥३२॥

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ।
योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ ! सात्त्विकी ३३॥

पार्थ १ यया २ धृत्या ३ मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ४ धारयते ५ सा ६ धृतिः ७ सात्त्विकी ८ योगेन ९ अव्यभिचारिण्या १० ॥ ३३ ॥ उ० अन्तःकरणकी वृत्ति सत्वादि भेदसे तीन तीन प्रकारकी हैं. उन सब वृत्तियोंमेंसे एक वृत्ति धृतिको सत्वादि भेदसे तीन प्रकारकी दिखाते हैं. प्रथम सत्वगुणी धीरजको कहते हैं । अ० हे अर्जुन ! १ जिस धृति-करके २ । ३ मन, प्राण—इन्द्रियोंकी क्रियाको ४ धारण करता है ५ सो ७ सतोगुणी ८ कैसी वह धृति ❀ कर्मयोग करके ९ अव्यभिचारिणी १० । तात्पर्य, स्वभावके वशसे अन्तःकरणादि अपने धर्ममें प्रवृत्त होते हैं.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धीरजसे सबको वश करना चाहिये. क्षुत्पिपासादि समय व्याकुल न हो सके न कि कर्मयोगमें अभी कचाई है. अभी अन्तःकरणकी वृत्ति सतोगुणी नहीं हुई. सतोगुणप्रधान वृत्तिकी परीक्षाके लिये यह धृतिभेद श्रीभगवान्ने दिखाया है. जबतक इन्द्रिय—प्राण—अन्तःकरणका निरोध न हो सके, तबतक रजतमप्रधानवृत्तिको जानना और उसकी निवृत्तिके लिये कर्मयोगका अनुष्ठान करना चाहिये. केवल, धृति तीन प्रकारकी है यह जान लेनेसे मुक्ति न होगी ॥ ३३ ॥

यया तु धर्मकामार्थान् धृत्या धारयतेऽर्जुन ! ।
प्रसंगेन फलाकांक्षी धृतिः सा पार्थ ! राजसी ॥ ३४॥

अर्जुन १ यया २ धृत्या ३ धर्मकामार्थान् ४ धारयते ५ तु ६ पार्थ ७ प्रसंगेन ८ फलाकाङ्क्षी ९ सा १० धृतिः ११ राजसी १२ ॥ ३४ ॥ उ० रजोगुणी धृतिको कहते हैं। अ० हे अर्जुन ! १ जिस धृति करके २ । ३ धर्म—काम—अर्थ को ४ धारण करता है ५ अर्थात् धर्म—अर्थ—कामहीमें तत्पर रहता है, मोक्षमें वृत्ति नहीं करता ❀ और ६ हे अर्जुन ! ७ धर्मादिके प्रसंगकरके ८ धृति ❀ चाहवाली है ९ सो १० धृति ११ रजोगुणी १२ । तात्पर्य, शास्त्रश्रवणसे तो यह निश्चय किया कि—निष्काम कर्म करना चाहिये. फिर उस कर्मके प्रसंगसे पुत्र, धन, स्वर्ग, वैकुण्ठादिकी इच्छा करने लगे तो जानना चाहिये कि अन्तःकरककी वृत्ति रजप्रधान है. जबतक कर्मयोगका फल स्वर्गादि समझता रहेगा परम्पराकरके आत्माको फल न समझेगा, तबतक वृत्तिको रजप्रधान जानना चाहिये ॥ ३४ ॥

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ।
न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिस्सा पार्थ ! तामसी ॥३५॥

पार्थ १ दुर्मेधा २ यया ३ स्वप्नम् ४ च ५ भयम् ६ शोकम् ७ विषादम् ८ मदम् ९ एव १० न ११ विमुञ्चति १२ सा १३ धृतिः १४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तामसी १५ ॥ ३५ ॥ उ० तमोगुणी धृतिको कहते हैं। अ० हे अर्जुन! १ तमोगुणी बुद्धिवाला २ जिस धृतिकरके ३ स्वप्न ४ और ५ भय ६ शोक ७ विषाद ८ मदको ९। १०। न ११ त्याग सक्ता है १२ सो १३ धृति १४ तमोगुणी १५। तात्पर्य, जागनेके समय ब्राह्म मुहूर्त्तादिमें भी न जागे, सोताही रहे और कर्म करनेके समयभी भय, शोक, विषाद मद बनाही रहे तो जानना चाहिये कि अन्तःकरणकी वृत्ति तमप्रधान है. यावत् वृत्ति तमोगुणी रहै तावत् स्नान, ध्यान साधुसेवादि कर्मोंको अवश्य करै ॥ ३५ ॥

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभः!।
अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति॥३६॥

भरतर्षभ १ इदानीम् २ तु ३ सुखम् ४ त्रिविधम् ५ मे ६ शृणु ७ यत्र ८ अभ्यासात् ९ रमते १० दुःखान्तम् ११ च १२ निगच्छति १३ ॥ ३६ ॥ उ० कर्त्ता—कर्म—करणादिका भेद सत्वादि भेदसे तीन प्रकारका कहा. अब उन सबका फल तीनप्रकार कहते हैं। चतुर्दश अध्यायमें जो सत्व—रज—तमका भेद कहा तो वहां यह दिखाया कि ये तीनों गुण आत्माको बन्धन करते हैं और सत्रहवें अध्यायमें जो भेद कहा तो वहां वह दिखाया कि तप, यज्ञादि, रजोगुणी तामसी न करने, सात्विक करने. क्योंकि—सतोगुणी पुरुषका ज्ञानमें अधिकार है और इस जगह अठारहवें अध्यायमें जो जो यह भेद कार्यकारणका सत्वादि भेद करके कहा और सबका फल सुख तीनप्रकारका कहते हैं. यहां यह दिखाते हैं कि कर्त्ता, कर्म, करणादि फलसहित सब त्रिगुणात्मक हैं, आत्माका किसी से कुछ किसी प्रकार का वास्तव सम्बन्ध नहीं. अविद्याका संबंध है. इस श्लोकके आधे मन्त्रमें प्रतिज्ञा है और आधेमें सतोगुणी सुख का लक्षण है। अ० हे अर्जुन! १ अब २ तो ३ सुखको ४ तीन प्रकारका ५ मुझसे ६ सुन ७ प्रथम सतोगुणी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुखको डेढ श्लोक में कहता हूं❀जिस सात्विकी सुख में ८ वृत्तिको❀ अभ्यास से ९ अर्थात् शनैःशनैः नित्य प्रतिदिन बढाता हुआ❀रमता है १० जो सो❀दुःखोंके अन्तको ११। १२ प्राप्त होता है १३ अर्थात् उसको फिर दुःख नहीं होता; दुःखके पार हो जाता है. सब शास्त्रोंके पढने सुननेका और कर्मोंके अनुष्टान करनेका यही फल है कि सतोगुणीवृत्ति प्रधान होकर सदा सतोगुणी सुख बनारहे, इसी सुखमें रमनेसे जल्दी अनिवार्च्य, अप्रमेय, परात्पर, परमानन्द-स्वरूप, आत्माकी प्राप्ति होती है ॥ ३६ ॥

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥३७॥

यत् १ अग्रे २ विषम् ३ इव ४ तत् ५ परिणामे ६ आत्मबुद्धिप्रसादजम् ७ अमृतोपमम् ८ तत् ९ सुखम् १० सात्विकम् ११ प्रोक्तम् १२ ॥ ३७ ॥ अ० जो १ सुख❀प्रथम प्रारम्भ समय २ विषवत् ३। ४ प्रतीत होता है❀सो ५ पीछे ६ अपने अन्तःकरण के प्रसाद से ७ अमृतकी सदृश ८ है❀सोई ९ सुख १० सतोगुणी ११ कहा है १२। तात्पर्य—वैराग्य, आत्मध्यान, ज्ञान, समाधि, समय और शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण प्राण के निरोधमें प्रथम दुःख प्रतीत होता है. जब अन्तःकरणकी वृत्ति रज तम कम हो जाती है अर्थात् दया, क्षमा, कोमलता, सत्य, संतोष, धीरज, शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, सावधानता, मुक्तिकी इच्छा, विवेक, वैराग्यादि ये वृत्ति जब प्रधान होती हैं, उससमयका सुख आमृतके सदृश. इस वास्ते कहा कि-वह सुख वास्तव सच्चिदानन्दको दिखा देता है. बुद्धिकी प्रसन्नता इसी-को कहते हैं कि—अन्तःकरणका रज तम दूर होकर यह सुख प्रकट होता है. इस सुखकी अवधिके सामने रजोगुणी तमोगुणी सुख—जो आगे कहेंगे वह—तुच्छ है और इस सुखकी बड़ाईमें शास्त्र और अनुभव दोनों प्रमाण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं. जीतेजी इस सुखकी अवधिका अनुभव कर सक्ता है. आत्मनिष्ठ और योगी इस सुखकी अवधिको अनुभव कर सक्ते हैं. जीतेजी और रजोगुणी सुखकी अवधिमें शास्त्रपुराणादि प्रमाण हैं. जीतेजी उस सुखकी अवधिका अनुभव प्रत्यक्ष नहीं हो सक्ता ॥ ३७ ॥

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।
परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥ ३८॥

यत् १ विषयेन्द्रियसंयोगात् २ तत् ३ अग्रे ४ अमृतोपमम् ५ परिणामे ६ विषम् ७ इव ८ तत् ९ सुखम् १० राजसम् ११ स्मृतम् १२ ॥ ३८ ॥ उ० रजोगुणी सुखको कहते हैं । अ० जो १ सुख शब्दादि विषय और श्रोत्रादि इन्द्रियोंके संबन्धसे २ अर्थात् सुनना, देखना, बोलना, स्त्रीसंग इत्यादि में जो सुख होता है ❀ सो ३ प्रथम क्षण भोगसमय ४ अमृतकी बराबर है ५ और ❀ भोगके पश्चात् ६ विषकी बराबर ७ । ८ है जो सुख ❀ सो ९ सुख १० रजोगुणी ११ कहा है १२ । तात्पर्य, विषके खानेसे तो प्राणी एक बेरही मरता है और शब्दादि विषयोंके भोगनेसे वारंवार मरता है. अष्टवक्रजी महात्माने कहा है कि—हे प्यारे ! जो मुक्त होना चाहता है तो विषयोंको विषवत् त्याग ❀ सावयव भगवत् मूर्ति और सावयव वैकुण्ठलोकादिकी जो इच्छा राखते हैं, वे इसी रजोगुणी सुखकी अवधिको चाहते हैं. उनको सतोगुणीका दिव्य सुख समझना चाहिये. क्योंकि, वह सुख श्रवण दर्शनादिसे होता है. तमोगुणी सुख और मलिन रजोगुणी सुख कि जो इस लोकमें स्त्रीआदिके संबन्धसे होता है. इससे सावयव लोकजन्य सुख श्रेष्ठ है. पुराणादिमें इस हेतुसे माहात्म्य लिखा है. जो कोई शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार ब्रह्मकी उपासना करनेको समर्थ नहीं हैं, उनको चाहिये कि मूर्तिमान् रामकृष्णादिकी उपासना किया करैं. जो निष्काम करेंगे तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तःकरणशुद्धिद्वारा मोक्ष होगा और जो मन्द, सुगन्ध, शीतलपवन खानेकी इच्छासे वा मणिमाणिक्यादि सौंदर्यता देखनेकी इच्छासे सावयव भगवत् मूर्त्तिका ध्यान करते हैं तो जैसे इस लोकके भोगी वैसेही वे रहे ॥ ३८ ॥

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः।
निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ ३९ ॥

यत् १ सुखम् २ निद्रालस्यप्रमादोत्थम् ३ च ४ अग्रे ५ च ६ अनुबन्धे ७ आत्मनः ८ मोहनम् ९ तत् १० तामसम् ११ उदाहृतम् १२ ॥ ॥ ३९ ॥ उ० तमोगुणी सुखको कहते हैं । अ० जो १ सुख २ निद्रा, आलस्य, प्रमादसे उत्पन्न होता है ३ अर्थात खेल, मनोराज्य, हिंसा, लड़ाई, विषाद, क्रोधादि जान लेना ❀ और ४ पहले ५ और ६ पीछे ७ आत्माको ८ मोह करनेवाला ९ सो १० तमोगुणी ११ कहा है १२ । तात्पर्य निद्रा, आलस्य, मनोराज्य, क्रोधादि समय न प्रथम सुख होता है न पीछे जीवको सुखकी भ्रान्ति रहती है: असंख्यात पशु—जो आदमीकी सूरतमें हैं, वे—इसी तमोगुणी भ्रान्तिमें मर जाते हैं. कभी किसी कालमें रजोगुणी सुखका अनुभव किया होगा और सतोगुणी सुखकी तो गन्धभी ऐसे पुरुषोंके पास नहीं आती. जैसे, रजोगुणी इस सुखको तुच्छ समझते हैं, ऐसेही सतोगुणी पुरुष, तमोगुणी रजोगुणी दोनों सुखोंको तुच्छ समझता है और ब्रह्मज्ञानी शुद्धानन्दका जाननेवाला तीनों सुखोंको तुच्छ जानता है. तीनों गुण सबमें रहते हैं. जिसके तमोगुण प्रधान, रज—सतोगुण कम, उसको तमोगुणी कहते हैं. रजोगुणीमें दो भेद हैं. जो इसी लोकके शब्दादि विषयोंमें तत्पर रहते हैं, वे बुरे कहे जाते हैं और जो परलोकमें रूपरसादि विषयोंको भोगते हैं, वा इस लोकसे वेदोक्त भोग भोगते हैं, वे अच्छे कहे जाते हैं. सतोगुणीभी दो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकारके हैं. एक ब्रह्मज्ञानरहित योगी और एक ज्ञानसहित योगी. ये दोनों रजोगुणी श्रेष्ठ हैं. ब्रह्मज्ञानरहित योगीसे ब्रह्मवित् श्रेष्ठ है. तमोगुणी सबसे निकृष्ट है ॥ ३९ ॥

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ।
सत्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात् त्रिभिर्गुणैः ॥ ४० ॥

पृथिव्याम् १ वा २ दिवि ३ वा ४ देवेषु ५ पुनः ६ यत् ७ सत्त्वम् ८ एभिः ९ त्रिभिः १० गुणैः ११ प्रकृतिजैः १२ मुक्तम् १३ स्यात् १४ तत् १५ न १६ अस्ति १७ ॥४०॥ उ० जो जो क्रियाकारक फल देखने-सुननेमें आता है, सबको त्रिगुणात्मक जानना योग्य है । अ० पृथिवीमें १ वा २ स्वर्गमें ३ वा ४ देवतोंमें ५ । ६ जो ७ पदार्थ ८ इन तीन गुणों-करके ९ । १० । ११ कि जो ❀ मायासे उत्पन्न हुये हैं १२ रहित १३ हो १४ सो १५ नहीं १६ है १७ । तात्पर्य, एक शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप नित्यमुक्त आत्मा, स्थूल-सूक्ष्म कारण शरीरोंसे पृथक् तीनों अवस्थाका साक्षी त्रिगुणरहित है. उसमें पृथक् सब पदार्थ इस लोक परलोकके जो जो देखने सुननेमें आते हैं, मायामात्र हैं. इस मायाने सबको भ्रान्त कर रक्खा है. देवता सतोगुणमें भ्रान्त, मनुष्य रजोगुणमें, पशु तमोगु-णमें भ्रान्त हैं. जो मनुष्य तमोगुणमें भ्रान्त है, वह पशुकी बराबर है ॥ ४० ॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप ! ।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥ ४१ ॥

परन्तप ! १ ब्राह्मणक्षत्रियविशाम् २ च ३ शूद्राणाम् ४ कर्माणि ५ गुणैः ६ स्वभावप्रभवैः ७ प्रविभक्तानि ८ ॥ ४१ ॥ उ० यह गुणोंकी भ्रान्ति कि जो पीछे कहे विना ब्रह्मविद्या के नहीं दूर होती और विना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अज्ञान दूरहुये परमानन्दस्वरूप आत्माका साक्षात्कार नहीं होता. इसवास्ते अज्ञानकी निवृत्तिके लिये ब्राह्मणादि अपने अपने धर्म का अनुष्ठान करें कि जो धर्म ब्राह्मणादिका आगे कहना है। अ० हे अर्जुन! १ ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्योंके २ और ३ शूद्रोंके ४ कर्म ५ प्रकृति से उत्पत्ति है जिनकी ६ गुणोंकरके ७ पृथक् पृथक् ८ हैं अज्ञानकी निवृत्तिके लिये उनका अनुष्ठान करना चाहिये इस वास्ते मैं कहता हूं. तात्पर्य ब्राह्मणादि के कर्म गुणों के अनुसार पृथक् पृथक् हैं सोई दिखाते हैं. सत्वगुण जिसमें प्रधान सो ब्राह्मण. रजोगुण जिसमें प्रधान और सत्वगुण उसमें कम हो तम सत्त्वसे भी कमहो सो क्षत्रिय. रजोगुण प्रधान हो जिसमें तमोगुण कम हो सत्त्व उसमें भी कम हो सो वैश्य. तमोगुण प्रधान है जिसमें सो शूद्र. स्पष्टार्थ होनेके लिये एक यन्त्र लिखे देते हैं जिस गुण के नीचे तीनका अङ्क उसको प्रधान जानना. जिसके नीचे दोका अङ्क उसको उस से कम जानना. जिसके नीचे एक का अङ्क उसको उससे भी कम जानना. जैसे, क्षत्रिय वैश्य ये दोनों रजप्रधान हैं. भेद इन दोनोंमें यह है कि क्षत्रिय में सत्त्व शिवाय तम कम है. वैश्य में तम सिवाय सत्व कम है. परमार्थ में तो यही चार विभाग हैं और लौकिक व्यवहार में अनेक जाति हैं. उसमेंही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यभी हैं. इस द्वीपमें हिंदु लोगोंकी यह रीति है कि ब्राह्मण को जातिकी अपेक्षा में बड़ा समझते हैं. क्षत्रियको उससे कम वैश्यको उससे कम और फिर अनेक जाति हैं. शूद्र व्यवहार में किसीका नाम नहीं. कोई कोई कायस्थों को शूद्र कहते हैं परंतु समस्त ब्राह्मणादि आचार्य लोगोंका इसमें सम्मत नहीं. सिवाय इसके व्यवहारमें सब लोग उनको कायस्थही कहते हैं और उनका व्यवहार चालचलन क्रिया धर्म ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों से कम नहीं. मद्य मांस खाने पीने से यह शंका

	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
सत्त्व	×	×	×	×
रज	३	३	२	२
तम	१	१	१	३
रज	×	×	×	×
सत्त्व	३	२	२	१
तम	१	१	१	३
तम	×	×	×	×
सत्त्व	३	२	२	१
रज	२	३	३	२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं आ सकती है कि कायस्थ शूद्र हैं. क्योंकि—ब्राह्मण, क्षत्रिय बहुत खाते हैं और बहुत कायस्थ मद्य मांसको छूतेभी नहीं. जैसे क्षत्रिय ब्राह्मण वैश्य श्रौत स्मार्त काम करते हैं तैसेही वे करते हैं और जो नहीं करते तो सब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य भी नहीं करते. यह कायस्थ शब्द संस्कृत है और जो इनकी जाति के भेद भटनागर माथुरादि हैं वेभी सब संस्कृत पद हैं. इस हेतुसे अंत्यजभी नहीं हो सक्ते. लौकिक में बढ़ाई द्रव्य ऐश्वर्य हुक्म सौन्दर्यता लौकिक विद्यादिकरके होती है और परमार्थमें भगवद्भजनादि शुभकर्म करनेसे और ज्ञाननिष्ठा होने से बड़ाई है. यह कोई नहीं कह सक्ता कि—'कायस्थ भगवद्भजन करनेसे मुक्त न हों' तात्पर्य, यह कि कायस्थ एक जाति है. जैसे ब्राह्मण, खत्री, बनियें, राजपूत ये जाति हैं. व्यवहार में बहुत जाति हैं. परमार्थ में चार ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र. व्यवहार में रजपूत तगादिको भी चारवर्ण में समझते हैं. जाट गूजरादिको कोई 'क्षत्रिय' कोई 'शूद्र' कोई 'अंत्यज' कहते हैं. यवनादि को 'म्लेच्छ' कहते हैं. यह सब व्यवहारकी बोलचाल है. जैसे मुसल्मान वर्णाश्रमीको काफर कहते हैं ऐसेही हिन्दू मुसल्मानों को म्लेच्छ कहते हैं. परमार्थ दृष्टि में सब द्वीपोंके निवासी गुणोंकी तारतम्यतासे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र हैं. क्योंकि—सब त्रिगुणात्मक है और सब प्रजाका स्वामी एकही है. वह सम है. यह बात कैसे समझ में आवे कि ऐसे स्वामी ने अन्यद्वीपनिवासियों के वास्ते परलोक का साधन न कहा हो. आगे श्रीभगवान् जो ब्राह्मणादिका धर्म कहेंगे वह ऐसा साधारण है कि अबतक उस धर्मका किसी एकही जाति में प्रचार नहीं. शमदमादि मुसल्मान अँगरेजोंमें विशेष देखने में आते हैं. शमदमादि धारण करनेसे यह लोग पापके भागी न होंगे. इसी प्रकार खेती बनज शूरतादिका यह नियम नहीं कि शूरतादि धर्म क्षत्रियहीमें हों, अन्य में न हों. प्रत्युत जो व्यवहारमें क्षत्रिय कहे जाते हैं, उनमें शूरतादि नहीं. क्योंकि—उनका राज्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहुत दिनों से जाता रहा. ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र परमार्थदृष्टि में परलोक-का साधन करनेके लिये वे हैं कि जो पीछे यन्त्र में लिखे हैं. व्यवहारमें वे कोई जाति हों व्यवहार में जो ब्राह्मणादि कहलाते हैं इनकी व्यवस्था यह है कि जिस काल में समस्त मनुष्यों के चार विभाग किये गये थे तो वह विभाग कोई दिन ऐसा चला कि ब्राह्मण का पुत्र सत्वप्रधान; शूद्रका पुत्र तमप्रधान होता रहा. वीर्यक्रियामें बिगाड़ न हुआ. अब इस समय में न वीर्यका ठिकाना है, न क्रियाका और न यह नियम रहा कि ब्राह्मण जाति में सत्वप्रधान ही उत्पन्न हो. ब्राह्मण तमप्रधान देखनेमें आते हैं. म्लेच्छ, शूद्र, सत्त्वप्रधान देखनेमें आते हैं. जो तमप्रधानको वेद पढाया जावे तो वह कब पढ़ सक्ता है और सत्त्वप्रधानसे टहल कराई जावे तो, वह कब कर सक्ता है ? तात्पर्य, व्यवहारमें तो यही समझना कि जैसा प्रचार है. अर्थात् ब्राह्मण कैसाही कुपात्र हो, उसीके जिमानेमें लौकिक दृष्टिमें सूतक-पाप दूर होता है. परमार्थमें यह समझना कि जिसमें शमदमादि होंगे मुक्तिका भागी वह होगा. मुमुक्षुका कल्याणभी उसीसे होगा. तदुक्तं महाभारते-अर्थात् सोई महाभारतमें कहा है. वाक्यवादकी कुछ अपेक्षा नहीं. श्लोक-" न जातिः कारणं तात ! गुणाः कल्याणकारणम् । वृत्तिस्थमपि चाण्डालं तं देवा ब्राह्मणं विदुः ॥" इस श्लोकका यह है-भीष्मजी राजा युधिष्ठिरसे कहते हैं-" हे तात ! मुक्तिमें जाति कारण नहीं. शमदमादि गुण कारण हैं. जो शमादि गुण चाण्डालमेंभी बर्तेंगे तो देवता उस चाण्डालको ब्राह्मण कहेंगे. जो व्यवहारिक ब्राह्मण शमदमादि साधनों-करके युक्त हो तो, वह सबसे श्रेष्ठ है. उसमें कोई शङ्का नहीं कर सक्ता." " अविद्वो वा सविद्वो वा ब्राह्मणो मामकी तनुः । अद्यापि श्रूयते घोषाद्द्वारावत्यामहर्निशम् ॥ " इस श्लोकका स्पष्ट अर्थ है कि-ब्रह्मका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाननेवाला विद्यावान् पढा हुआ हो वा न पढ़ा हो, ब्रह्मवित् ब्रह्मही है. "ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति" यह श्रुति है. ब्राह्मण भगवत्स्वरूप होना तो बहुत कठिन है. दश रुपये महीनेकी नौकरीभी उसको मिलनी कठिन है! सिवाय इसके ऐसेही वाक्योंमें हठ करनेसे शास्त्रसे बड़ा विरोध आता है. मूर्खोंको मूर्खही पसन्द करता है. इस देशमें जो अन्यद्वीपनिवासियोंका राज्य हुआ, ब्राह्मणादि वर्ण उनके दास गुलाम बने, उसमें कारण ऐसेही ऐसे मूर्ख हुये. शास्त्रका पढ़ना सुनना छोड़ दिया. मूर्खोंके कहनेपर चलने लगे. जो पुरुष काम, क्रोध, लोभादिमें फँसा हुआ है, उसके कहनेको सच्चा समझना कितनी बड़ी मूर्खता है? यह कब समझ आवे है कि ऐसे आदमी धोखा न दे और जो पोथी बहुत दिनोंसे उनकेही पास रही है क्या आश्चर्य है कि उन पोथियोंमें कुछका कुछ न बना दिया हो. विशेष क्या लिखें? इसीको बिचारना चाहिये वारंवार॥४१॥

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥४२॥

शमः १ दमः २ तपः ३ शौचम् ४ क्षान्तिः ५ आर्जवम् ६ एव ७ च ८ ज्ञानम् ९ विज्ञानम् १० आस्तिक्यम् ११ ब्रह्मकर्म १२ स्वभावजम् १३ ॥ ४२ ॥ उ० ब्राह्मणोंका कर्म कहते हैं. जिसमें शमादि गुण होंगे सोई ब्राह्मण है. दुनियाके व्यवहारमें वह कोई जाति हो जो ब्राह्मण बना चाहे वह शमादि कर्मोंका अनुष्ठान करे। अ० अन्तःकरणका निरोध १ इन्द्रियोंका निरोध २ विचार करना वा व्रतादि करके शरीरका निरोध करना ३ बाहर भीतर पवित्र ४ क्षमा ५ कोमलता ६ और ७। ८ शास्त्राचार्यद्वारा ज्ञान ९ अनुभव १० विश्वास ११ वेदशास्त्राचार्यादि वाक्यमें. यह ❋ ब्राह्मणका कर्म १२ स्वाभाविक है १३ अर्थात् पूर्वसंस्कारसे यह लक्षण ब्राह्मणमें अपने आप बेयन्त्र होते हैं. ब्राह्मणकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निष्ठा सदा इन्हीं कर्मोंमें रहती है. इस समयमें वीर्य और क्रियाका तो ठिकाना नहीं और जो यह लक्षणभी न दीखेंगे तो कहो कैसे उसको ब्राह्मण जानकर उसके वाक्यपर निश्चय किया जावे? शमादि कर्म ब्राह्मणोंके साधारण हैं और प्रतिग्रह लेना, सूतक–पातकमें जीमना, रसोई करना, विवाहादिमें समाधीके घर आना–जाना, इस प्रकारके कर्म असाधारण हैं. इन कर्मोंमें अधिकार उन्हीं ब्राह्मणोंका है कि जो लौकिक व्यवहारमें ब्राह्मण कहे जाते हैं. सिवाय उनके अन्य जातिको शोभा नहीं देते ॥ ४२ ॥

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ॥ ४३ ॥

शौर्यम् १ तेजः २ धृतिः ३ दाक्ष्यम् ४ युद्धे ५ च ६ अपि ७ अपलायनम् ८ दानम् ९ ईश्वरभावः १० च ११ क्षात्रम् १२ कर्म १३ स्वभावजम् १४ ॥ ४३ ॥ उ० क्षत्रियोंका स्वाभाविक कर्म कहते हैं। अ० शूरता १ प्रागल्भ्यता २ धैर्य ३ चतुरता ४ युद्धमें ५। ६। ७ पीछेको भागना नहीं ८ देना सुपात्रोंको ९ नियामकशक्ति १०। ११ क्षत्रियोंका कर्म १२। १३ यह ❋ स्वाभाविक है १४। विचार करो ये सब लक्षण आज कल अंगरेजोंमें वर्तमान हैं. जैसे इन कर्मोंमें अधिकार उनको था कि जो व्यवहारमें क्षत्रिय जाति हैं उन्होंसे यह कर्म न हो सके. जिन्होंने कर्म किये प्रत्यक्ष देख लो राज्यका भोग करते हैं. इसी प्रकार शमदमादिसा नसंपन्न होगा सो बेसन्देह परमानन्द ब्रह्मसुखको भोगेगा. जो कोई यह शंका करे कि–'ये म्लेच्छ हैं. उनको राज्यका अधिकार नहीं. मरकर सब नरकगामी होंगे.' आसकाम विद्वान् इस बातको कभी नहीं पसन्द करेंगे. सत्वादिगुणोंकी तारतम्यतासे सद्गति दुर्गति सब जीवनको होती है और इस लोकमें सदा न पुण्यात्मा रहते हैं, न पापात्मा, अधिकारकी व्यवस्थामें यह भी सुना जाता है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि चिकित्सावैद्यक विद्याके पढ़ने करनेका अधिकार ब्राह्मणकोही है. अब विचारो कि व्यवहारमें हिकमत वैद्यक किनकी अच्छी है और ब्राह्मण जातिसे अन्य जो वैद्यक करते हैं, उससे रोगकी निवृत्ति होती है वा नहीं. इसी प्रकार सब कर्मोंकी व्यवस्था है ॥ ४३ ॥

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥४४॥

कृषि—गोरक्ष्य—वाणिज्यम् १ वैश्यकर्म २ स्वभावजम् ३ परिचर्यात्मकम् ४ कर्म ५ शूद्रस्य ६ अपि ७ स्वभावजम् ८ ॥ ४४ ॥ उ० आधे श्लोकमें वैश्यका कर्म, अर्द्ध मन्त्रमें शूद्रका कर्म कहते हैं। अ० खेती, गौकी रक्षा, बनज करना १ वैश्यका कर्म २ स्वाभाविक ३ हैं और ❀ टहल करनी ४ यह ❀ कर्म शूद्रका ६। ७ स्वाभाविक ८ है. तात्पर्य—शूद्र, वैश्य और क्षात्रिय इनको चाहिये कि शमदमादिसंपन्न ब्राह्मणकी यथाधिकार यथाशक्ति सेवा करै, तब सबके धर्म बने रहेंगे ॥ ४४ ॥

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः ।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दन्ति तच्छृणु ॥४५॥

स्वे १ स्वे २ कर्मणि ३ अभिरतः ४ नरः ५ संसिद्धिम् ६ लभते ७ स्वकर्मनिरतः ८ सिद्धिम् ९ यथा १० विन्दति ११ तत् १२ शृणु १३ ॥ ४५ ॥ उ० अपने अपने कर्मोंका अनुष्ठान करते हैं उसका फल कहते हैं। अ० अपने १ अपने २ कर्ममें ३ प्रीति करनेवाला ४ नर ५ अन्तःकरणशुद्धिद्वारा भगवत्प्रसादसे ❀ मोक्षको ६ प्राप्त होता है ७ अपने कर्ममें निरन्तर प्रीति करनेवाला ८ मोक्षको ९ जैसे १० प्राप्त होता है ११ सो १२ सुन १३ ॥ ४५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥४६॥

यतः १ भूतानाम् २ प्रवृत्तिः ३ येन ४ इदम् ५ सर्वम् ६ ततम् ७ तम् ८ स्वकर्मणा ९ अभ्यर्च्य १० मानवः ११ सिद्धिम् १२ विन्दति १३ ॥ ४६ ॥ उ० आधे मन्त्रमें तटस्थलक्षण ईश्वरका कह फिर आधे श्लोकमें उसी की भक्ति करनेका फल कहते हैं । अ० जिससे १ भूतोंकी २ प्रवृत्ति ३ अर्थात् जिसकी सत्तासे सब जगत् चेष्टा करता है और ❋ जिस करके ४ यह ५ सर्व ६ जगत् ❋ व्याप्त ६ हो रहा है ❋ तिस अन्तर्यामी ईश्वरको ८ अपने कर्म करके ९ अर्थात् अपने कर्मसे आराधन करके १० प्राणी ११ अन्तःकरणशुद्धिद्वारा उसी अन्तर्य्यामी की कृपासे ज्ञाननिष्ठ होकर ❋ परमानन्दस्वरूप आत्माको १२ प्राप्त होता है १३ । तात्पर्य—समस्त जगत्में आनन्द पूर्ण हो रहा है. कोई पदार्थ ऐसा नहीं कि जिसमें आनन्द न हो और वह आनन्दही साक्षात् भगवान्का स्वरूप है. जिसकी तनकसी छायामें त्रिलोकी आनन्द है ॥ ४६ ॥

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् ।
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्॥४७॥

स्वनुष्ठितात् १ परधर्मात् २ स्वधर्मः ३ विगुणः ४ श्रेयान् ५ स्वभावनियतम् ६ कर्म ७ कुर्वन् ८ किल्बिषम् ९ न १० आप्नोति ११ ॥ ४७ ॥ उ० अपने धर्ममें अवगुण समझकर पराये धर्मका जो अनुष्ठान करते हैं उनको पाप होता है. अर्थात् जो प्रवृत्तिधर्मके योग्य हैं, वे निवृत्तिधर्मको श्रेष्ठ समझकर जो निवृत्तिधर्म अनुष्ठान किया चाहें तो अन्तःकरणमें रजोगुणतमोगुण भरे रहनेसे निवृत्तिधर्मका अनुष्ठान कब हो सक्ता है ? प्रवृत्तिधर्मको भी छोड़कर दोनों ओरसे भ्रष्ट हो जाते हैं और जो निवृत्ति-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धर्मके योग्य हैं वे, कुसंगके वशसे वा और किसी संस्कारसे अपने धर्मको छोड़ प्रवृत्तिधर्मका अनुष्ठान करेंगे तो फिर गईहुई रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति उसके अन्तःकरणमें प्रविष्ट हो जावेगी. इसीको पाप कहते हैं. इस वास्ते अपनेही धर्मका अनुष्ठान करना चाहिये । अ० सुन्दर १ पराये धर्मसे २ अपना धर्म ३ गुणरहित ४ भी ❀ श्रेष्ठ ५ अपने गुणके अनुसार जिसका नियम किया गया है उस कर्मको ६ । ७ करता हुआ ८ पापको ९ नहीं १० प्राप्त होता ११ । तात्पर्य—जैसे विषमें रहनेवाला जीव विष खाकर नहीं मरता, इसी प्रकार अपने गुणके अनुसार कर्म करता हुआ बन्धको नहीं प्राप्त होता. मेवा तस्मैका भोजन बहुत सुन्दर है परन्तु ज्वरवालेके कामका नहीं ॥ ४७ ॥

सहजं कर्म कौन्तेय ! सदोषमपि न त्यजेत् ।
सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः ॥ ४८ ॥

कौन्तेय ! १ सहजम् २ कर्म ३ सदोषम् ४ अपि ५ न ६ त्यजेत् ७ सर्वारम्भाः ८ हि ९ दोषेण १० आवृताः ११ धूमेन १२ अग्निः १३ इव १४ ॥ ४८ ॥ उ० कोई कर्म शुभ अशुभ ऐसा नहीं कि जिसमें कुछ दोष न हो. इसवास्ते । अ० हे अर्जुन ! १ स्वभावके अनुसार जो गुण अपनेमें प्रधान हो सत्व वा रज वा तम वैसेही कर्म्म शमादि वा पारिचर्या युद्ध कृषि आदि कर्म २ । ३ दोषसहित ४ भी ५ है परन्तु यावत् अन्तःकरण शुद्ध न हो तावत् उनको ❀ नहीं ६ त्यागना ७ समस्त कर्म्म ८ । ९ किसी न किसी ❀ दोष करके १० मिले हुये हैं ११ धूम करके १२ अग्निन १३ जैसे ४ गुण दोषका फुल कांटे की तरह संग है. बुद्धिमान् को चाहिये कि—धर्ममें कांटेवत् दोषपर दृष्टि न दे, गुणग्राही रहे ॥ ४८ ॥

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः ।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति ॥ ४९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वत्र १ असक्तबुद्धिः २ जितात्मा ३ विगतस्पृहः ४ परमाम् ५ नैष्कर्म्यसिद्धिम् ६ संन्यासेन ७ अधिगच्छति ८ ॥ ४९ ॥ उ० इसप्रकार कर्म करे। अ० सर्वत्र शुभ अशुभ पापपुण्यजनक किसी कर्म्म में १ जिसकी बुद्धि नहीं २ जीता हुआ है कार्य्यकारणसङ्घात जिसका ३ ३ दूर हो गई है इसलोक—परलोकके पदार्थोंकी इच्छा जिसकी ४ सो ❀ परम ५ निष्कामताके अवधिको ६ सब त्याग करके ७ प्राप्त होता है ८। तात्पर्य—आनन्दस्वरूप आत्मा निष्क्रियकी प्राप्ति सब पदार्थों-का त्याग करनेसे होती है. सिवाय आनन्दस्वरूप आत्माके किसीके पन्थ—मत—सम्प्रदायोंमें आसक्त नहीं होना, यही परमसिद्धि है ॥ ४९ ॥

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे।
समासेनैव कौन्तेय! निष्ठा ज्ञानस्य या परा ॥५०॥

यथा १ सिद्धिम् २ प्राप्तः ३ ब्रह्म ४ आप्नोति ५ तथा ६ कौन्तेय ७ या ८ ज्ञानस्य ९ परा १० निष्ठा ११ समासेन १२ एव १३ मे १४ निबोध १५ ॥ ५० ॥ उ० परा निष्ठा ज्ञानकी श्रीभगवान् अब आगे पांच श्लोकोंमें कहेंगे, इस वास्ते अर्जुन को सम्बोधन करके कहते हैं कि हे कौन्तेय! चैतन्य हो चित्तको एकाग्रकर परम सिद्धान्त को सुन। अ० जैसे १ सब कर्म्मों का यथा अधिकार अनुष्ठान करके और उनके फलका त्याग करके नैष्कर्म्यकी ❀ सिद्धिको २ प्राप्त हुआ ३ ब्रह्मको ४ प्राप्त होता है ५ तैसे ६ हे अर्जुन! ७ जो ८ ज्ञानकी ९ परा १० निष्ठा ११ है सो ❀ संक्षेपसे १२ ही १३ मुझसे सुन १४ ॥ ५० ॥

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च।
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च॥५१

CC-0..Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विशुद्धया १ बुद्ध्या २ युक्तः ३ च ४ धृत्या ५ आत्मानम् ६ नियम्य ७ शब्दादीन् ८ विषयान् ९ त्यक्त्वा १० च ११ रागद्वेषौ १२ व्युदस्य १३ ॥ ५१ ॥ उ० सोई ज्ञानकी परा निष्ठा श्रीभगवान् कहते हैं। अ० सतोगुणी बुद्धि करके युक्त १। २। ३ और ४ सतोगुणी ❋धृति करके ५ कार्यकारणसंघातका ६ निरोध कर ७ शब्दादि विषयों को ८। ९ त्याग करके १० और ११ रागद्वेषोंको १२ दूर करके १३ ब्रह्मको प्राप्त होता है। तीसरे श्लोकके साथ इसका सम्बन्ध है। तात्पर्य—शब्दादिके त्यागमें देहयात्रामात्र क्रियाका निषेध नहीं. शरीरका निरोध यह है कि शौचस्नानादि समय तो अवश्य उठना, रात्रि के बीचमें डेढ़प्रहर सोना. सिवाय इसके एकजगह एकान्त आसनपर विना आश्रय सीधा बैठकर आत्माका ध्यान करना चाहिये. संन्यासी एक जगह जो न रहें तो चार गौकोससे सिवाय न चलैं ॥ ५१ ॥

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः ।
ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ॥ ५२ ॥

विविक्तसेवी १ लघ्वाशी २ यतवाक्कायमानसः ३ नित्यम् ४ ध्यानयोगपरः ५ वैराग्यम् ६ समुपाश्रितः ७ ॥ ५२ ॥ अ० वन, जङ्गल, पहाड़, नदीके किनारे इत्यादि देशका—कि जिसमें स्त्री, चोर, बालक, मूर्ख, सिंह सर्पादिका भयसंबन्ध न हो—सेवन करनेका स्वभाव है जिसका १ ऐसा हो ❋ दोभाग अन्नकरके और एक भाग जलकरके पूर्ण करे और एक भाग श्वासके आने—जानेके लिये अवशेष खाली रक्खे. तात्पर्य, थोडीसी क्षुधा बनी रहे अर्थात् कम भोजन करनेका स्वभाव है जिसका उसको लघ्वाशी कहते हैं २ जीते हुये हैं वाक्, शरीर, मन जिसके अर्थात् जो लक्षण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सत्रहवें अध्याय में सतोगुणी तपका लिखा है उसी प्रकार बर्तते हैं ३ आत्मध्यानयोगको अर्थात् निदिध्यासन को परात्पर जानकर ❀ नित्य ४ ध्यानयोगपरायण रहते हैं ५ नित्यशब्द कहनेका यह तात्पर्य है कि पढ़ना—पढ़ाना, जप—पाठादि—कर्मोंका त्याग चाहिये. ज्ञान-निष्ठको ❀ वैराग्यका ६ बहुत अच्छीतरह आश्रय कर रक्खा है ७ सिवाय परमानन्द स्वरूप आत्मा के यावत् पदार्थ इस लोक परलोकके देखे सुने हैं सबको अनित्य दुःखदायी अनात्म धर्मवाला जानकर किसीमें न कुछ प्रीति करता है, न द्वेष करता है. परम ज्ञाननिष्ठका यह लक्षण है ॥ ५२ ॥

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् ।
विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥५३॥

अहङ्कारम् १ बलम् २ दर्पम् ३ कामम् ४ क्रोधम् ५ परिग्रहम् ६ विमुच्य ७ निर्ममः ८ शान्तः ९ ब्रह्मभूयाय १० कल्पते ११ ॥ ५३ ॥ अ० देहादिमें अहंबुद्धि अर्थात् "हम विरक्त संन्यासी ब्राह्मण जगत्के गुरु श्रीमान् विद्यावाले हैं" ऐसा अहङ्कार १ योगके बलसे किसीका बुरा भला करना विद्याके बलसे दूसरेका मत खण्डन करना २ विद्या—विरक्ति—धन—ऐश्वर्यादिका मनमें गर्व रखना ३ इस लोक परलोकके पदार्थोंकी इच्छा ४ नास्तिकादिके साथ द्वेष ५ देहयात्रासे सिवाय संचय करना ६ जो ऊपर कहे इन सब अहंकारादिको मनसे त्याग कर ७ संन्यासादि धर्म और अद्वैतवादमतादिमें ❀ ममतारहित ८ भूतादि कालकी चिन्तारहित ९ पुरुष ❀ ब्रह्मको १० प्राप्तवत् मानकर यह कहा जाता है कि ब्रह्मको प्राप्त होता है. वास्तव ब्रह्म सदा एकरस है ॥ ५३ ॥

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥ ५४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मभूतः १ प्रसन्नात्मा २ न ३ शोचति ४ न ५ कांक्षति ६ सर्वेषु ७ भूतेषु ८ समः ९ पराम् १० मद्भक्तिम् ११ लभते १२ ॥ ५४ ॥ उ० ब्रह्मको जो प्राप्त होता है उसका फल निरूपण करते हैं दो श्लोकोंमें । अ० ब्रह्मस्वरूप हुआ १ प्रसन्न चित्त है जिसका २ सो बीती हुई बातोंका ❀ नहीं ३ शोच करता है ४ आगेको कुछ नहीं ५ चाहता है ६ सब भूतोंमें ७ । ८ सम ९ है जो श्रीभगवान् कहते हैं कि वह मेरी पराभक्तिको १० । ११ प्राप्त होता है १२ । सातवें अध्यायमें चार प्रकारकी भक्ति कही है. चारोंमें जो पीछे परे कही उसको पराभक्ति कहते हैं. ज्ञानकी परानिष्ठा कही, वा पराभक्ति कही बात एकही है. इस जगह पाषाणादि मूर्तियोंका पूजनादि और रामकृष्णादि सावयव मूर्तिमान् भगवान्की भक्ति इस जगह भक्ति नहीं. ज्ञाननिष्ठाका नाम यहां भक्ति है. यह पराभक्ति फल है और सेवा पूजादि साधन हैं. प्रकरण देखकर अर्थ समझना चाहिये. इस अध्यायमें पचासके श्लोकमें श्रीभगवान्ने स्पष्ट कहा है कि—हे अर्जुन ! ज्ञानकी परानिष्ठा मुझसे सुन और वह प्रकरण अबतक समाप्त नहीं हुआ; पपनके श्लोकमें समाप्त होगा. वहांतक ज्ञाननिष्ठाका वर्णन है ॥ ५४ ॥

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः ।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥५५॥

तत्त्वतः १ यावान् २ च ३ यः ४ अस्मि ५ माम् ६ भक्त्या ७ अभिजानाति ८ ततः ९ तत्त्वतः १० माम् ११ ज्ञात्वा १२ तदनन्तरम् १३ विशते १४ ॥ ५५ ॥ उ० श्रीभगवान् कहते हैं कि, जो मेरा यथार्थ स्वरूप है वह इसी ज्ञाननिष्ठासे—कि जो पीछे चार श्लोकोंमें कही—जाना जाता है और सब वेद विधि इसका साधन है । अ० वास्तव १ जैसा २ और ३ जो ४ हूं मैं ५ वैसा ❀ मुझको ६ ज्ञानलक्षण ❀ भक्ति करके ७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भले प्रकार जानता है ८ पीछे उसके ९ अर्थात् ❀ यथार्थ १० मुझको ११ जानकर १२ फिर १३ मुझमेंही ❀ मिल जाता है १४। तात्पर्य— जैसे परमानन्दस्वरूप आत्मा उपाधिरहित है सो ज्ञाननिष्ठासेही जाना जाता है. जो आत्माका जानना वही उसमें मिलना है. पहिले जानन और पीछे उसमें मिलना यह एक बोलीकी रीति है. ब्रह्मका जानने वाला ब्रह्म स्वरूपही है, यह वेदार्थ है ॥ ५५ ॥

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् ॥ ५६ ॥

सदा १ सर्वकर्माणि २ मद्व्यपाश्रयः ३ कुर्वाणः ४ अपि ५ मत्प्रसादात् ६ अव्ययम् ७ शाश्वतम् ८ पदम् ९ अवाप्नोति १० ॥ ५६ ॥ उ० ज्ञाननिष्ठा भगवान्की कृपासे प्राप्त होती है. जब प्रथम वेदोक्त निष्काम कर्म करे वह परमपदका मार्ग श्रीभगवान् दिखाते हैं। अ० सदा १ सब कर्मोंको २ मुझ भगवन्का आश्रय लेकर ३ करता हुआ ४ निश्चय ५ भगवत्प्रसादसे ६ निर्विकार नित्य पदको ७। ८। ९ प्राप्त होता है १०। तात्पर्य—प्रभुका आश्रय लेकर यथाशक्ति देशकाल वस्तुके अनुसार निष्काम कर्म करना चाहिये; विना आश्रय कर्मोंका निर्वाह कठिन है. इस समयमें तो सिवाय परमेश्वरके और किसी कर्म—धर्मका भरोसा नहीं. केवल उसी करुणाकरकी कृपासे सब अनर्थ दूर हो सक्ते हैं और परम-पद परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्ति होनी उसीकी कृपाका फल समझना चाहिये. अकृत उपासकको ज्ञाननिष्ठाका कभी परिपाक नहीं होता ॥ ५६ ॥

चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः।
बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव ॥ ५७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मत्परः १ चेतसा २ सर्वकर्माणि ३ अपि ४ संन्यस्य ५ बुद्धियोगम् ६ उपाश्रित्य ७ सततम् ८ मच्चित्तः ९ भव १० ॥ ५७ ॥ अ०मुझमें परायण होकर १ चित्त २ सब कर्मोंको ३ मेरे विषय ४ त्याग करके ५ और ज्ञानयोग को ६ आश्रय करके ७ सदा ८ मुझमें चित्तवाला ९ हो १० अर्थात् तेरा चित्त सदा मुझमेंही लगा रहै ऐसाही । तात्पर्य—यह कि सब धर्म कर्म वास्तव अन्तःकरण की शुद्धिके हैं. जिसका अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है उसपर परमेश्वर प्रसन्न होते हैं और तब ज्ञानमें निष्ठा होती है. फिर उस ज्ञाननिष्ठाके परिपाकार्थ कर्मोंका त्याग अवश्य है, यह प्रभुकी आज्ञा है. प्रभुकी आज्ञा से कर्मों का त्याग करना यही प्रभुमें कर्मों का संन्यास करना. कर्मोंका संन्यास करके फिर निरन्तरभक्ति करनी चाहिये. ज्ञानयोग का आश्रय यह है कि हरिभक्ति से मुझको ज्ञाननिष्ठा अवश्य प्राप्त होगी ऐसे ज्ञाननिष्ठाकी आशा रखनी यही ज्ञानयोगका आश्रय करना है. इस प्रकरण में यही अर्थ है—ज्ञानयोग का आश्रय करनेका ॥५७॥

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ।
अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि ॥५८॥

मच्चित्तः १ सर्वदुर्गाणि २ मत्प्रसादात् ३ तरिष्यसि ४ अथ ५ चेत् ६ त्वं ७ अहङ्कारात् ८ न ९ श्रोष्यसि १० विनङ्क्ष्यसि ११ ॥ ५८ ॥ अ० मुझमें चित्त लगाकर १ सब दुर्गमों को २ मेरे प्रसाद से ३ तर जायगा तू ४ और ५ जो ६ तू अहङ्कारसे ८ नहीं ९ सुनेगा १० नष्ट हो जायगा तू ११ । तात्पर्य—परमेश्वर मोक्षमार्गका सुगम उपाय अपनी भक्ति बताते हैं जो वर्णाश्रमके अहङ्कारसे भक्तिका आदर न करेंगे, तो उनका पुरुषार्थ भ्रष्ट हो जायगा. विना प्रसाद प्रभुके अपने मतलबको न पहुंचेगा. हरिकी कृपा ऐसा पदार्थ है कि—कैसा ही कठिन पदार्थ हो भगवद्भक्तको सुलभ हो जाता है । भगवान् की आज्ञा माननी यही भक्ति है. चतुरताका भक्तिमें कुछ काम नहीं ॥ ५८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदहङ्कारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे।
मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति॥५९

यत् १ अहंकारम् २ आश्रित्य ३ इति ४ मन्यसे ५ न ६ योत्स्ये ७ ते ८ एष ९ व्यवसायः १० मिथ्या ११ प्रकृतिः १२ त्वाम् १३ नियोक्ष्यति १४॥५६॥ अ० जिस अहंकारको १। २ आश्रय करके ३ यह ४ तू मानता है ५ कि ❋ नहीं ६ युद्ध करूंगा मैं ७ तेरा ८ यह ९ निश्चय १० झूठा ११ है तेरा स्वभाव १२ तुझसे १३ युद्ध करावेगा १४। तात्पर्य, जिसका जो धर्म है उसको उसीका अनुष्ठान करना चाहिये. अन्यधर्मका अनुष्ठान उससे नहीं हो सकेगा. जैसे—अर्जुन क्षत्रिय हैं. भिक्षा मांगनी उससे कठिन है. क्योंकि, क्षत्रियमें रजोगुण प्रधान होता है. वह शूरतादि धर्ममेंही प्रेरता है और वही अन्तःकरणकी शुद्धिका हेतु है॥ ५९॥

स्वभावजेन कौन्तेय! निबद्धः स्वेन कर्मणा।
कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत् ६०

कौन्तेय १ स्वभावजेन २ स्वेन ३ कर्मणा ४ निबद्धः ५ यत् ६ कर्तुम् ७ न ८ इच्छसि ९ मोहात् १० अवशः ११ तत् १२ अपि १३ करिष्यसि १४॥ ६०॥ अ० हे अर्जुन! १ स्वाभाविक २ अपने ३ कर्म करके ४ बंधा हुआ ५ जो ६ युद्ध ❋ करनेको ७ नहीं ८ इच्छा करता है तू ९ अविवेकसे १० अवश हुआ ११ सोई १२। १३ युद्ध करेगा तू १४। तात्पर्य—इस समय तेरे अन्तःकरणमें सतोगुणी वृत्तिका आविर्भाव हो रहा है कि जिससे तुझको दया आ रही है. युद्ध अच्छा नहीं लगता, भिक्षा मांगना प्रिय प्रतीत होता है. जब यह वृत्ति तिरोभाव होगी रजोगुणी वृत्ति कि जो विशेष करके तेरे अन्तःकरणमें प्रधान रहती है उसका जब आविर्भाव होगा, उस समय यह दया तेरी सब जाती रहैगी; रजोगुणके वश होकर अवश्य युद्ध करेगा तू॥ ६०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन! तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥६१॥

अर्जुन १ ईश्वरः २ सर्वभूतानाम् ३ हृद्देशे ४ तिष्ठति ५ सर्वभूतानि ६ मायया ७ भ्रामयन् ८ यन्त्रारूढानि ९॥ ६१॥ उ० प्रकृतिके वश जीव है और प्रकृति ईश्वरके वश है सोई पहले कहते हैं। अ० हे अर्जुन! १ ईश्वर २ सब भूतोंके ३ हृदयमें ४ विराजमान है ५ सब भूतोंको ६ मायाकरके ७ भ्रम रहा है ८। कैसे हैं वे भूत कि जैसे❋ यन्त्रमें आरूढ ९ अर्थात् कलमें लगी हुई पुतलीको बाजीगर खिलारी नचाता है। तात्पर्य—जीव स्वतन्त्र नहीं; शास्त्रमार्गको छोड अपनी बुद्धि से बुरे भले कर्मों को नहीं जान सक्ता. श्रुति स्मृति दो ईश्वरकी आज्ञा हैं. जो दोनों को सत्य समझकर वेदोक्त मार्ग पर चलता रहेगा उसको ईश्वर सब बखेड़ों से छुड़ाकर परमानन्द प्राप्त कर देंगे और जो अपनी चतुराई चलावेगा वह बेसंदेह धोखा खावेगा॥ ६१॥

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत!।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ६२

भारत! १ सर्वभावेन २ तम् ३ एव ४ शरणम् ५ गच्छ ६ तत्प्रसादात् ७ पराम् ८ शान्तिम् ९ शाश्वतम् १० स्थानम् ११ प्राप्स्यसि १२। ॥६२॥ उ० जब कि जीव स्वतन्त्र नहीं तो उसको अवश्य परमेश्वर का आश्रय चाहिये इस हेतु से हे अर्जुन! तू भी परमेश्वरकी शरण ले। अ० हे अर्जुन! १ सब भाव करके २ अर्थात् तन, मन, धन करके❋ तिस ३ ही ४ रक्षा करनेवाले को ५ प्राप्त हो ६ अर्थात् उसी अन्तर्यामी की शरण हो❋ उन अन्तर्यामी के प्रसादसे ७ परम शान्ति को ८। ९ और❋ नित्य स्थान को १०। ११ प्राप्त होगा तू १२॥ ६२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद् गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ६३ ॥

इति १ मया २ गुह्यात् ३ गुह्यतरम् ४ ज्ञानम् ५ आख्यातम् ६ ते ७ एतत् ८ अशेषेण ९ विमृश्य १० यथा ११ इच्छसि १२ तथा १३ कुरु १४ ॥ ६३ ॥ अ० ❋ यह १ मैंने २ गुप्त से ३ अतिगुप्त ४ ज्ञान ५ कहा ६ तुझसे ७ इस ८ समस्तको ९ विचार करके १० जैसी ११ तेरी इच्छा हो १२ तैसा कर १३ । १४ । तात्पर्य—ग्रन्थको आदिसे अन्तलों भलेप्रकार विचारना चाहिये, तब ग्रन्थका तात्पर्य प्रतीत होता है. दो चार पत्र वा दो चार अध्याय के विचारनेसे वक्ताका तात्पर्य नहीं जाना जाता है. प्रत्युत मुर्ख लोग पूर्वपक्षको सिद्धान्त समझ बैठते हैं. क्योंकि, बहुत जहग पूर्वपक्ष कई २ पत्रों से होता है इसी हेतुसे साधनों को सिद्धान्त समझ बैठते हैं बहुत लोग ॥ ६३ ॥

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः।
इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम्॥६४॥

सर्वगुह्यतमम् १ मे २ परमम् ३ वचः ४ भूयः ५ शृणु ६ इति ७ दृढम् ८ मे ९ इष्टः १० असि ११ ततः १२ ते १३ हितम् १४ वक्ष्यामि १५ ॥ ॥ ६४ ॥ उ० जो तुझसे समस्त गीताशास्त्रका विचार न हो सके इस वास्ते मैं ही समस्त गीताका सार दो श्लोकोंमें कहता हूं. तू मेरा प्यारा है. तेरे हितके वास्ते वारंवार कहता हूं । अ० प्रथम तो कर्ममार्गही बतलाना गुप्त है और भक्ति मार्ग उससे भी गुप्ततर है और ज्ञाननिष्ठा सब से गुप्ततम है. ऐसे गुप्ततम १ मेरे २ परं ३ वचनको ४ फिर ५ सुन ६ अत्यन्त ७ । ८ मेरा ९ प्यारा १० है तू ११ इस वास्ते १२ तेरे १३ हितके लिये १४ कहूंगा १५ ॥ ६४ ॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥६५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मन्मना १ मद्भक्तः २ मद्याजी ३ भव ४ माम् ५ नमस्कुरु ६ माम् ७ एव ८ एष्यसि ९ ते १० सत्यम् ११ प्रतिजाने १२ मे १३ प्रियः १४ असि १५ ॥ ६५ ॥ उ० इस मंत्रमें कर्मनिष्ठाका सार कहते हैं । अ० मुझमें मनवाला १ हो अर्थात् मुझ परमेश्वरमें मन लगा और ❀ मेरा भक्त २ हो अर्थात् मेरी भक्ति कर और ❀ मेरा पूजन करनेवाला ३ हो तू ४ अर्थात् मेरा पूजन कर और ❀ मुझको ५ नमस्कार कर ६ मुझको ७ ही ८ प्राप्त होगा ९ तुझसे १० सत्य ११ प्रतिज्ञा करता हूं मैं १२ मेरा १३ प्यारा १४ है तू १५ । तात्पर्य–ज्ञाननिष्ठाका साधन कर्मनिष्ठा है. कर्मोंमें भगवद्भक्ति सार है, सो दो प्रकारकी है. अन्तरंग बाहिरंग नमस्कार पूजनादि बहिरंग है. भगवत्में मन लगाना आदि अन्तरंग यावत् परमेश्वरके स्वरूपमें भल प्रकार मन न लगे तावत् पाठ मंत्रोंका जप भगवद्भक्तोंकी सेवा शास्त्रको श्रवण करता रहे. यद्यपि ज्ञानके साधन बहुत हैं, परंतु सबमें ये तीन सार हैं. भगवद्भक्ति, साधुसेवा शास्त्र का श्रवण. इन तीनोंमें भी साधुसेवा सार है. कि जिसके प्रतापसे सब साधन हो जाते हैं. ये तीनों साधन सुगम प्रत्यक्ष फल देनेवाले हैं और इस समयमें इनकाही अनुष्ठान हो सका है. यज्ञादि कर्म और वर्णाश्रम विहित धर्मका अनुष्ठान होना कठिन है. साधुसेवादि साधनोंमें जो प्रतिबन्ध हैं, सो दिखाते हैं. बहुत जीव भगवान्से विमुख तो इस वास्ते हैं कि निराकार, एकरस, नित्यमुक्त, शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप भगवान्का तो उनकी समझमें नहीं आता. दुराग्रह, अश्रद्धा, मन्दभाग्य, कमसमझ इनसे और रामकृष्णादि साकार भगवद्रूपको मनुष्य समझते हैं और उस स्वरूपमें नाना प्रकारकी तर्क करते हैं. भगवद्भक्तिमें यही प्रतिबन्ध है. यावत् भगवान्का स्वरूप शुद्ध, सच्चिदानन्द, नित्यमुक्त, शास्त्रकी रीतिपूर्वक समयमें आवे, तावत् मूर्तिमान ईश्वर की उपासना आवश्यक है और शास्त्र के श्रवण से इस हेतु से विमुख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं कि-ब्रह्मविद्या, वेदान्तशास्त्र, उपनिषद्, सांख्य, पातञ्जलादि शास्त्र तो उनकी समझ में आते नहीं. प्रत्युत बहुतलोग यह भी नहीं जानते कि उन पोथियोंमें क्या बात है और रामायण महाभारत श्रीमद्भागवतादि ग्रन्थोंको कहानी बताते हैं! उन ग्रन्थोंके तात्पर्य को इतना तो समझतेही नहीं कि जैसे समुद्रमेंसे एक बूंद जल होता है. यावत् वेदान्तशास्त्रका अर्थ भलेप्रकार समझमें न आवे, तावत् महाभारतादि ग्रन्थोंको श्रवण करना चाहिये और साधुसेवासे इस वास्ते विमुख हैं कि साधुको कमजाति और बे-विद्या बे स्वरूप मानकर, संग-सेवा साधुओंकि नहीं करते. अनेक मान बड़ाई अहङ्कारादिमें फंसे रहते हैं. जैसे, आप सदोष हैं, साधुओंकोभी अपनीही सदृश जानते हैं. मन्द भाग होनेसे उनके शुभकर्म, पूजा, पाठ, जप, शम, दमादि वैराग्य विद्यापर दृष्टि नहीं जाती. गुण देखनेकी आंखों से अंधे हैं. कुकर्मोंसे कौवेकीसी दृष्टि उनकी हो रही है और एक बड़ा आश्चर्य यह है कि साधुको तो वेदोक्त निर्दोष तलाश करते हैं और जो पुत्र मित्रादि में हजारों दोष भरे हुये हैं उनको मोक्षका साधन समझते हैं. मूर्ख यह नहीं समझते कि निर्दोष महात्मा निर्दोषोंकोही मिलते हैं. मुझसे निर्भागोंको दर्शन भी नहीं देते और बहुत लोग ऐसी साधुसेवा करते हैं कि जहांतक उनसे हो सके साधुओंकी बुराई करनी और साधुओंको दुःख देना इसीको मोक्षका साधन समझते हैं! तात्पर्य-इस समयमें साधु बहुत हैं. हंस कीसी चाल जिनकी है उनको दीखते हैं और जिनकी कौवकीसी दृष्टि है, उनको न कभी साधु मिलेंगे; न शास्त्रार्थ इनकी-समझमें आवेगा; न भगवद्भक्ति उनसे हो सकेगी. जैसे-माता अपने पुत्रके मुखपर दुष्टोंकी दृष्टि बचनेके लिये स्याहीकी बिन्दी लगा देती है इसी प्रकार जो कदाचित किसी साधुमें कोई दोष अपने दोषसे प्रतीत हो तो उस दोषको स्याहीकी बिन्दीवत समझना चाहिये. भगवद्भक्त भगवान्के पुत्रकी सदृश हैं ॥ ६५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥६६

सर्वधर्मान् १ परित्यज्य २ माम् ३ एकम् ४ शरणम् ५ व्रज ६ अहम् ७ त्वाम् ८ सर्वपापेभ्यः ९ मोक्षयिष्यामि १० माशुच ११ ॥ ६६ ॥ उ० समस्त गीतामें कर्म्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठाका वर्णन है. कर्मनिष्ठा का सारार्थ तो पिछले मन्त्र में कहा. अब ज्ञाननिष्ठाका सार संक्षेप इस मन्त्र-में कहते हैं । अ० सब धर्मों को १ त्यागकर २ मुझ एक शरणको ३ । ४ । ५ प्राप्त हो ६ मैं ७ तुझको ८ सब पापों से ९ छुड़ादूंगा १० मत शोच कर ११ । तात्पर्य—शरीर, इन्द्रिय, प्राण और अन्तःकरण इन-के जो जो धर्म हैं, उन सब धर्मोंको त्यागकर जो आश्रय लेना चाहिये सो कहते हैं. शरण और एक, ये दोनों 'मां' शब्द के विशेषण हैं "शर-णं ग्रहरक्षित्रोः" इत्यमरः अमरकोश में 'शरण' का अर्थ 'ग्रह' अ-र्थात् आश्रय और रक्षा करनेवाला है. श्रीभगवान् कहते हैं कि—मुझको प्राप्त हो. कैसा हूं मैं कि, एक अर्थात् अद्वैत, कभी किसी काल में जिस में दूसरा नहीं और फिर कैसा हूं मैं कि, आश्रय शरण हूं वा रक्षा करनेवाला हूं. "द्वितीयाद्वै भयं भवति" दूसरेसे अवश्य भय होता है यह वेदने कहा है. इस वास्ते तू अद्वैतको प्राप्त हो. वह रक्षा करनेवाला है. वहां भय नहीं. वही आश्रय है. इस मन्त्र का तात्पर्य—बेसन्देह अ-भेदमें है और कहने—सुननेमें इसका तात्पर्यार्थ भेदमें प्रतीत होता है. जहांतक वाणी है वहांतक व्यवहारिक द्वैत है, परमार्थमें द्वैत नहीं. सिवाय इसके अक्षरार्थसे भी इस श्लोकका अर्थ अद्वैतविषय है सो भी सुनो. 'अहम्' शब्द और 'माम्' शब्द ये दोनों 'अस्मत्' शब्दके प्रयोग हैं. श्रीभगवान् स्पष्ट कहते हैं कि 'अहम्' यह शब्द अर्थात् केवल माया (अविद्या) रहित शुद्ध अहङ्कार अर्थात् 'अहम्ब्रह्मास्मि' यह महावाक्यार्थ यह निष्ठा तुझको संसारसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छुड़ावेगी. शरीरादि के जो धर्म उनके त्यागमें मत शोच कर. यह अर्थ गीताभाष्य में बहुत विस्तारपूर्व्वक सिद्धान्त अभेद अद्वैत ज्ञाननिष्ठा में किया है. क्योंकि, सब धर्मोंका त्याग धर्मनिष्ठसे नहीं हो सक्ता; ज्ञानीसेही हो सक्ता है. व्याकरणकी रीतिसे युष्मत् अस्मत् शब्दों के अर्थको और शब्द धर्म्म अर्थ धर्म्मको जो समझते हैं वे (माम्, अहम्, त्वाम्, त्वम्,) इन शब्दोंके अर्थको समझेंगे और जो किसी को यह हठ और निश्चय है कि इस मन्त्र का अर्थभी भेदमें है तो उसको उचित है कि कहे हुयेका अनुष्ठान करे. हमको भगवद्भक्ति से विरोध नहीं. भेदवादीको यदि ज्ञाननिष्ठा से विरोध है उसमें भी हमको लाभ है. क्योंकि, अज्ञानी बना रहेगा तो सेवा करेगा. ज्ञानी बन बैठेगा तो हमको क्या लाभ होगा? ज्ञाननिष्ठाका उपदेश तो दूसरे के लाभार्थ है. श्रद्धा करो वा मत करो। अश्रद्धावान्को ज्ञानका उपदेश करना निषेध करते हैं श्रीभगवान् ॥ टी० पांच श्लोकोंका अर्थ अन्यप्रकार दूसरे ढंगसे लिखते हैं. उस रीसिसे अर्थ शीघ्र समझमें आवेगा. पण्डित शङ्कर लाल विष्णुनागर ब्राह्मणकी बेटी बीबी जानकीने समस्त गीताका अर्थ उसी रीतिसे लिखा है. इस टीकाका नाम जानकीनिर्मिता प्रसिद्ध है॥६६॥

१+ २। ४+ ३। ५+ ६। ७

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।

१०। ८+ ९ ।११। १६।१२। १४। १३। १५

न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति॥६७॥

	वि०	प०		अ०	
१	१	इदम्	१	यह	१
				गीता शास्त्र	+
६	१	ते	२	तुमने	२
४	१	अतपस्काय	३	जिसको तप न हो उस बहिर्मुखको	३
अ		न	४	नहीं	४
				सुनाना चाहिये	+

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अ		न	५	न	५
४	१	अभक्ताय	६	अभक्त को	६
				जो गुरु भगवान्का	+
				भक्त न हो उसको	+
	अ	कदाचन	७	कभी	७
				सुनाना न चाहिये	
	अ	च	८	और	८
				जो	+
४	१	अशुश्रूषवे	९	शुश्रूषा टहल न करे अथवा जिसको उसकी सुनने की इच्छा न हो	९
	अ	न	१०	नहीं	१०
	१	वाच्यम्	११	कहना योग्य है	११
				अर्थात् पूर्वोक्तोंको सुनाना न चाहिये	+
अ		च	१२	और	१२
१	१	यः	१३	जो	१३
१	१	माम्	१४	मुझको	१४
				अर्थात् मेरा	+
क	१	अभ्यसूयति	१५	निन्दा करता है	१५
				उसको भी	+
अ		न	१६	नहीं	१६
				सुनाना योग्य है यह मेरी आज्ञा है	+

टी० जो मूलके अनधिकारी कहे वही इस टीका के अनधिकारी हैं ॥ ६७ ॥

उ० तपस्वी, भक्त, शुश्रूषु, जिज्ञासु, निन्दारहित इस गीताशास्त्रके पढ़ने सुनने के अधिकारी हैं. ऐसे अधिकारियोंको जो यह गीता पढ़ाते सुनाते हैं, उनकी महिमा दो श्लोकोंमें कहते हैं ॥ ६७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१ २ ३ ४ ५ + ६
य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
९ ७ ८ १० ११ ए १२ ए १३ + १४
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥६८॥

	वि०	प०		अ०	
१	१	यः	१	जो	१
२	१	इमम्	२	इस	२
२	१	परमम्	३	परम	३
२	१	गुह्यम्	४	गुप्त	४
७	ब	मद्भक्तेषु	५	मेरे भक्तों के विषय	५
क	१	अभिधास्यति	६	धारण करावेगा	६
				अर्थात् गीताका अर्थ भले प्रकार प्रेमपूर्वक विना लोभ जो भगवद्भक्तोंको समझावेगा सो	+
७	१	मयि	७	मुझमें	७
२	१	पराम्	८	परा	८
२	१	भक्तिं	९	भक्ति	९
क	१	कृत्वा	१०	करके	१०
२	१	माम्	११	मुझको	११
अ		एव	१२	ही	१२
क	१	एष्यति	१३	प्राप्त होगा	१३
१	१	असंशयः	१४	नहीं है संशय इसमें	१४

टी०—तात्पर्य गीताशास्त्रको जो पढाते हैं, वे परमभक्त महानुभाव हैं ॥६८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७ ३ + ६ २ + ४ ५
नच तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।
८ १३ १० ९ + ११ १२ १
भविता नच मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥ ६९ ॥

	वि०	प०		अ०	
७	१	भुवि	१	पृथिवी के ऊपर	१
अ		कश्चित्	२	कोई	२
५	१	तस्मात्	३	तिस से	३
				अर्थात् गीता पढ़ानेवालेसे	+
				सिवाय	+
६	१	मे	४	मुझको	४
१	१	प्रियकृत्तमः	५	अत्यन्त प्रसन्न करनेवाला	५
७	ब	मनुष्येषु	६	मनुष्यों में	६
अ		नच	७	नहीं	७
क	१	भविता	८	है	८
				और	+
५	१	तस्मात्	९	तिससे	९
				अर्थात् गीता पढ़ानेवालेसे	+
६	७	मे	१०	मुझको	१०
१	१	अन्यः	११	दूसरा अन्य	११
१	१	प्रियतरः	१२	प्यारा विशेष	१२
अ		नच	१३	नहीं.	१३

टी०—तात्पर्य—जो गीताका अर्थ जानते हैं, उनको कुछ कर्त्तव्य नहीं. वेदकी विधि उनपर है. उनको इस श्लोक के पदार्थों की इच्छा भी नहीं. ऐसे जो महात्मा किसी को विना प्रयोजन दुःख विक्षेप सहकर गीताशास्त्र पढावें सुनावें तो बेसन्देह उनसे सिवाय परमेश्वरको और कौन प्यारा लगेगा? ऐसे महात्मा भगवान्का नित्य अवतार कहलाते हैं ॥ ६९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

६ ७ १ २ ३ ५ + ४
अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।
९ ८ + १० + ११ १२ + १३ १४ १५
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥७०॥

	वि०	प०		अ०	
१	१	यः	१	जो	१
२	१	इमम्	२	इस	२
२	२	धर्म्यम्	३	धर्म के मिले हुये	३
६	२	आवयोः	४	मेरे और तेरे	४
२	१	संवादम्	५	संवादको	५
क्रि	१	अध्येष्यते	६	पढेगा	६
अ		च	७		७
३	१	तेन	८	तिसने	८
३	१	ज्ञानयज्ञेन	९	ज्ञानयज्ञसे	९
				मुझको प्रसन्न किया अर्थात् जैसा ज्ञानयज्ञसे मैं प्रसन्न होता हूं, वैसाही गीता पढ़नेवालेसे	+
१	१	अहम्	१०	मैं	१०
२	१	इष्टः	११	प्रसन्न	११
क्रि	१	स्याम्	१२	होता हूं	१२
अ		इति	१३	यह	१३
६	१	मे	१४	मेरी	१४
१	१	मतिः	१५	समझ	१५
				है	+

टी०--चकार पादपूरणार्थ। तात्पर्य--चतुर्थ अध्यायमें बारह यज्ञ प्रभुने कहे, उनमें सब यज्ञोंसे ज्ञानयज्ञको बडा कहा. क्योंकि, ज्ञानमें सब कर्मकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समाप्ति है. गीताको जो पढते हैं, उनके कर्मभी समाप्त हो जाते हैं. गीता-का पढना, पाठ करना, यही सबसे बडा कर्म है. इसी एक शुभकर्मसे भगवान् पूजा किये गये होकर प्रसन्न हो जाते हैं ॥ ७० ॥

उ० जो गीताशास्त्रको श्रवण करते हैं, उनकी स्तुति श्रीमहाराज अपने मुखसे करते हैं ॥

५ + ४ + ३ ६ + ७ १ २

श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः ।

८ ९ १० १२ + १३ १४ + ११

सोऽपि मुक्तः शुभाल्लोकान् प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥

	वि०	प०		अ०	
१	१	यः	१	जो	१
२	१	नरः	२	पुरुष	२
अ		च	३		३
१	१	अनसूयः	४	निन्दारहित	४
१	१	श्रद्धावान्	५	श्रद्धासहित	५
क	१	शृणुयात्	६	सुने	६
अ		अपि	७	भी	७
१	१	सः	८	सो	८
अ		अपि	९	भी	९
				सब झगडोंसे	+
१	१	मुक्तः	१०	छूट	१०
६	ब	पुण्यकर्मणाम्	११	धर्मात्माओंके	११
२	ब	शुभान्	१२	शुभ	१२
२	ब	लोकान्	१३	लोकोंको	१३
क	१	प्राप्नुयात्	१४	प्राप्त होगा.	१४

टी०—चकार पादपूरणार्थ ३ ॥ ७१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ! त्वयैकाग्रेण चेतसा।
कच्चिदज्ञानसंमोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय!॥ ७२॥

पार्थ! १ त्वया २ एकाग्रेण ३ चेतसा ४ कच्चित् ५ एतत् ६ श्रुतम् ७ धनञ्जय! ८ ते ९ अज्ञानसंमोहः १० कच्चित् ११ प्रनष्टः १२॥ ७२॥ उ० परम करुणाकी खानि श्रीभगवान् अर्जुनसे इस श्लोकमें यह बूझते हैं कि—हे अर्जुन! इस उपदेशसे तुम्हारे अज्ञानका नाश हुआ वा नहीं? जो न हुआ हो तो फिर दूसरे प्रकार से उपदेश करूं. यह अपनी कृपा और आचार्योंका धर्म दिखाते हैं, जबतक शिष्यका अज्ञान दूर न हो, तबतक गुरुको चाहिये कि फिर वारंवार दूसरे प्रकारसे उपदेश करें. यह आचार्योंका धर्म है। अ० हे अर्जुन! १ तुमने २ एकाग्र ३ चित्तकरके ४ कुछ ५ यह ६ कि जो मैंने उपदेश किया ❀ सुना ७ अर्थात् तुह्मारी समझ में आया वा नहीं ❀ आवृत्तिरस ❀ हे अर्जुन! ८ तुह्मारा ९ तत्वज्ञानका विपर्यय या अज्ञानसंमोह १० कुछ ११ नष्ट हुआ १२ वा नहीं? "आवृत्तिरसकृदुपदेशात्" शारीरक-भाष्यका यह सूत्र है। तात्पर्य इसका यह कि—"जबतक अज्ञानका भले प्रकार नाश न हो तबतक वारंवार वेदान्तशास्त्रका श्रवण करे." श्रवणसे अज्ञानका, मननसे संशयका और निदिध्यासनसे विपर्ययका नाश होता है॥ ७२॥

अर्जुन उवाच—

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत!।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव॥७३॥

अच्युत! १ त्वत्प्रसादात् २ मोहः ३ नष्टः ४ मया ५ स्मृतिः ६ लब्धा ७ गतसन्देहः ८ स्थितः ९ अस्मि १० तव ११ वचनम् १२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करिष्ये १३ ॥ ७३ ॥ उ० अज्ञानसंशयविपर्यय-रहित कृतार्थ हुआ अर्जुन श्रीभगवान्‌से कहता है कि-आपकी कृपा से मेरा अज्ञान, संशय, विपर्यय, असंभावना, विपरीतभावना, प्रमाणगत, प्रमेयगत सब नष्ट हुये और आपकी कृपासे मैं कृतकृत्य हुआ. अब मुझको कुछ करनेके योग्य नहीं. मैं अक्रिय असंग हूं। अ० हे अविनाशी! १ आपकी कृपासे २ मोह ३ मेरा ❋ नष्ट ४ हुआ और ❋ मुझको ५ अपने स्वरूप की स्मृति ६ प्राप्त हुई ७ अब ❋ सन्देहरहित ८ स्थित ९ हूं मैं १० आपके ११ वचनको १२ करूंगा १३ ॥ टी० चौथे अध्यायमें अर्जुनने कहा था कि, आपका जन्म तो अब हुआ है और इस जगह अविनाशी कहा यह ज्ञानका प्रताप है १। मूलाज्ञान समस्त संसारकी जड़ ३। स्मरण याद ६। कमसमझ यह समझते हैं कि-अर्जुनने यह कहा कि "आपके वचनको करूंगा" अर्थात् 'युद्ध करूंगा' और विद्वान् यह समझते हैं कि अर्जुनने यह कहा कि 'आपका वचन करूंगा' अर्थात् जो आपने कहा उसी प्रकार 'अनुष्ठान करूंगा' अर्थात् जो आपने कहा 'मुझको कुछ कर्त्तव्य नहीं; यह युद्धादि, ज्ञानियोंकी दृष्टिमें है.' इस आपके उपदेशका अनुष्ठान करूंगा. जो अर्जुन को कुछ युद्धादि कर्त्तव्य रहा तो कृतकृत्यका अर्थ क्या किया जावेगा? ॥ ७३ ॥

सञ्जय उवाच ॥

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः।
संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥ ७४ ॥

इति १ वासुदेवस्य २ महात्मनः ३ पार्थस्य ४ च ५ इमम् ६ अद्भुतम् ७ रोमहर्षणम् ८ संवादम् ९ अहम् १० अश्रौषम् ११ ॥ ७४ ॥ उ० संजय धृतराष्ट्रसे कहता है कि-अ० इसप्रकार १ श्रीकृष्णचन्द्र २

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महात्मा ३ और अर्जुन इनका ४। ५ यह ६ अद्भुत ७ रोमका हर्ष करने-वाला ८ संवाद ९ मैंने १० सुना ११ ॥ ७४ ॥

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद् गुह्यमहं परम्।
योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् ७५

एतत् १ परम् २ योगम् ३ गुह्यम् ४ स्वयम् ५ साक्षात् ६ कथयतः ७ योगेश्वरात् ८ कृष्णात् ९ व्यासप्रसादात् १० श्रुतवान् ११ अहम् १२। ॥ ७५ ॥ अ० यह १ परम २ योग ३ गुप्त ४ आप ५ साक्षात् ६ कहते हुये ७ योगेश्वर ८ श्रीकृष्णचन्द्र महाराजसे ९ व्यासजी के प्रसाद-से १० सुना ११ मैंने १२। तात्पर्य—यह ब्रह्मविद्या परमयोग है और गुप्त है. महात्मा इसको गुप्त रखते हैं. साधनचतुष्टयसंपन्नसे कहते हैं. पहले यह विद्या ब्रह्मलोकमेंही थी, मुनीश्वरोंने तप करके इसलोकमें इसका प्रचार किया है. ब्रह्मविद्याने आकाश में आकर मुनीश्वरों से यह कहा कि—"मर्त्यलोकमें तब आऊंगी मैं, कि जब तुम मुझको पुत्री की सदृश समझकर अधिकारिको दो." मुनीश्वरों ने यह वाक्य अंगीकार किया, तब ब्रह्मविद्या इसलोकमें आई. सिवाय इस द्वीपके और किसी द्वीपमें नहीं और सिवाय ब्रह्मलोकके और किसी लोकमें नहीं. जो इस वि-द्याको लालच या आशासे अनधिकारीको पढ़ाते सुनाते हैं वे अधम हैं. क्योंकि—कंगाल भी अपनी पुत्री अनधिकारीको नहीं देता. जो पुरुष लालचसे सीखते हैं इस विद्याको, सो उनकी वह विद्या भोगके लिये है, मुक्तिके लिये नहीं. जैसे—वर्णसङ्कर पुत्र इसीलोककी शोभा है ॥ ७५ ॥

राजन्! संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम्।
केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥ ७६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजन् १ इमम् २ केशवार्जुनयोः ३ पुण्यम् ४ अद्भुतम् ५ संवादम् ६ संस्मृत्य ७ च ८ संस्मृत्य ९ मुहुर्मुहुः १० हृष्यामि ११ ॥ ७६ ॥ अ० हे राजन् ! १ इस २ केशव और अर्जुन इन के ३ पुण्यरूप ४ अद्भुत ५ संवादको ६ स्मरण करके ७ फिर ८ स्मरण करके ९ वारंवार १० आनन्दित होता हूं मैं ११ । तात्पर्य—हे राजन् ! श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन इनका यह संवाद पुण्यरूप है. इसके श्रवणमात्रसे पुण्य होता है. इस वास्ते मुझको वारंवार स्मरण होता है, स्मरण करनेसे परमानन्द होता है ॥ ७६ ॥

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः ।
विस्मयो मे महान् राजन्! हृष्यामि च पुनः पुनः ॥

तत् १ हरेः २ अत्यद्भुतम् ३ रूपम् ४ संस्मृत्य ५ च ६ संस्मृत्य ७ मे ८ महान् ९ विस्मयः १० च ११ राजन् ! १२ पुनः १३ पुनः १४ हृष्यामि १५ ॥ ७७ ॥ अ० तिस १ श्रीमहाराजके २ अति अद्भुत ३ रूपको ४ अर्थात् विश्वरूपको ❋ स्मरण करके ५ फिर ६ स्मरण करके ७ मुझको ८ बडा ९ आश्चर्य १० होता है ❋ और ११ हे राजन् ! १२ क्षण क्षण प्रति १३ । १४ । मैं हर्षित होता हूं । १५ तात्पर्य—हे राजन् ! वह अद्भुत विश्वरूप श्रीमहाराजका मुझको वारंवार याद आता है और उनका जब मैं ध्यान करता हूं मेरे रोम खडे हो जाते हैं. मुझको बडा आनन्द होता हैं. वह रूप बडा आश्चर्यित है ॥ ७७ ॥

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ ७८ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे मोक्षसंन्यासयोगो नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यत्र १ योगेश्वरः २ कृष्णः ३ यत्र ४ धनुर्धरः ५ पार्थः ६ तत्र ७ श्रीः ८ विजयः ९ भूतिः १० नीतिः ११ ध्रुवा १२ मम १३ मतिः १४ ॥ ७८ ॥ अ० जिस तरफ १ योगेश्वर २ कृष्ण ४ और ❋ जिस तरफ ४ धनुषधारी ५ अर्जुन ६ हैं ❋ उसी तरफ ७ लक्ष्मी ८ विजय ९ ऐश्वर्य १० न्याय ११ है यह ❋ निश्चय १२ मेरी १३ मति १४ है ❋। तात्पर्य—संजय धृतराष्ट्रसे कहता है कि—हे राजन्! तुम्हारे पुत्रोंका जय न होगा. अपने विजयकी आशा छोडो! जिस तरफ श्रीकृष्णचन्द्र महाराज हैं, उनका विजय होगा. "जिनपर कृपादृष्टि श्रीभगवान्की है, वे सदा इस-लोकमें और परलोकमें परमानन्द भोगते हैं" यह सिद्धान्त है ॥ ७८ ॥

इति श्रीआनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां मोक्षसंन्यासयोगो नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

समस्त गीताका सार और समाप्तिका मंगलाचरण।

परमानन्द परमात्मा जीव आत्मासे अभिन्न है. परमानन्द की इच्छा-वाला सदा परमानन्दकी उपासना किया करे. परमानन्दमें सबका सम्मत है. ब्रह्मवादी ज्ञानी उपासक कर्मी विषयी बालक मूर्ख पशु सब मतवाले पंथायी सम्प्रदायी दिन रात्रि आनन्द के लिये यत्न करते हैं. सर्व कर्म—बुरे भले ईश्वरके भजन तक—सब की बोली से साधन हैं और आनन्द उनका फल है. सब यह कहते हैं कि इस बात में बडा आनन्द है कि जो हम कहते हैं इस हेतुसे आनन्द सबसे बड़ा और परात्पर पदार्थ है. सबको प्रिय है; किसी का आनन्द से वैर नहीं. बात भी वही सच्ची है कि जि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सको विद्वान् श्रुतियुक्तिसहित कहें और अनुभव समझ में आवे. बहुत लोग तो ऐसा कहते हैं कि वह बात वेदशास्त्रमें तो लिखी है; परन्तु समझमें नहीं आती और इसी वास्ते उसमें निश्चय नहीं होता. सबका अनुष्ठान करने में मन कच्चा रहता है और बहुत लोग ऐसा कहते हैं कि वह बात समझमें तो आवै है; परन्तु वेदविरुद्ध है और इसी वास्ते वह बात अच्छी नहीं समझी जाती. इस जगह वह बात लिखी जाती है कि—जो वेदोक्त भी हो और अनुभव समझमें भी आवे. जिस आनन्द के वास्ते सब यत्न करते हैं वह आनन्द अपना आत्माही है और सदा प्राप्त है. अज्ञानसे कण्ठभूषणवत् उसको अप्राप्त अपनेसे जुदा मानकर उसकी प्राप्तिके लिये नानाप्रकार के लौकिक वैदिक यत्न करते हैं. जो वह अज्ञान जाता रहै तो आनन्द सदा प्राप्त है. यह बात विद्वान्, वेदोक्त कहते हैं परन्तु यह बात किसी किसीकी समझ में, रजोगुण तमोगुण प्रधान होने से नहीं आती. वे रजोगुण तमोगुण दूर होने के लिये उनका कारण अज्ञानका स्वरूप सुनो. अज्ञान, सत्त्व—रज—तम तीन गुणोंवाला है. संसार में स्थूल सूक्ष्म जितने पदार्थ हैं सब इन तीन गुणोंका कार्य है. परमानन्द इन तीन गुणोंसे परे है. देवता, मनुष्य पशुआदि इन तीन गुणोंमें मोहित होकर तमोगुणी, रजोगुणी, सतोगुणी आनन्दको जिसका लक्षण अठारहवें अध्यायमें ३७। ३८। ३९ इन श्लोकोंमें निरूपणा हुआ है—बड़ा समझते हैं; परमानन्दको नहीं जानते. परमानन्दको ज्ञानी मुक्तमहापुरुष जानते हैं. रजोगुणी आनन्द दो प्रकारका है अच्छा और बुरा सावयय भगवत् मूर्ति वैकुण्ठ स्वर्गादिमें जो आनन्द मानते हैं, वह आनन्द अच्छा है. लौकिक पदार्थोंमें जो आनन्द मानते हैं, सो बुरा है. कोई कोई मतवाले रजोगुणी आनन्दकोही परात्पर मानते हैं और कोई मतवाले सतोगुणी आनन्दको परेसे परे मानते हैं. रजोगुणी आनन्दको क्षणिक, तुच्छ, अल्प समझते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं. यह कहते हैं कि तमोगुणी आनन्दसे परलोकजन्य रजोगुणी आनन्द अच्छा है और इसीवास्ते उसको अच्छा कहते हैं. इस बातमें लौकिक वैदिक दोनों पुरुषोंका सम्मत है और रजोगुणी आनन्दकी अवधिको जो परेसे परे मानते हैं इस बातमें केवल वैदिक मार्गवालोंका सम्मत है, यौक्तिक लोगोंका सम्मत नहीं. कभी विशेषता आनन्द के दृष्टान्त-से समझो. तमोगुणी आनन्द; रजोगुणी सतोगुणी परमानन्द. जैसे तीन घटोंमें जल है. एकमें मैला दूसरे में सामान्य करके दीखता है, तीसरे में भलेप्रकार दीखता है, ऐसेही तमोगुणी सुख प्रतीत नहीं होता. रजो-गुणी में सामान्य करके प्रतीत होता है. सतोगुण में भलेप्रकार प्रतीत होता है. तीनों गुणोंमें दर्पणमुखवत् आनन्द की छाया प्रतीत होती है. जिसकी वह छाया है, वास्तव परमानन्द वही है. सो नित्य है. जितना जल निर्मल ठहरा हुआ होगा, उतनाही सुख अच्छा दीखेगा. इसीप्रकार जितनी अन्तःकरणकी वृत्ति निर्मल और स्थिति होगी, उतनाही सुख सिवाय प्रतीत होगा. आनन्दकी प्राप्तिमें अन्तःकरण की निर्मलता और स्थिति कारण है. कोई पदार्थ सावयव इसलोक-परलोकका कारण नहीं. वृत्तिपदार्थके सम्बन्धसे भी स्थिति होती और विचारज्ञानसे भी होती है. परन्तु पदार्थके सम्बन्धसे जो स्थिति होती है [illegible] क्षणिक है, एकरस नाश होती रहती है. इसहेतुसे पदार्थ [illegible] नहीं; थोड़ी देर रहता है [illegible]-ज्ञान-योगसे जो वृत्ति स्थिति होती है उसमें [illegible]नन्द ठहरता है. परमानन्दके ज्ञानसे जब मूल अज्ञानका नाश हो जावे तब ये तीनों वृत्ति नाश हों फिर केवल परमानन्दकी प्राप्ति सदाको हो जाती है. इसी परमानन्दके वास्ते सबइसी लोक परलोक के झगड़े हैं. समस्त वेदको विधि-निषेधका विचारकर देखो, सबका तात्पर्य दुःखकी निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्तिमें है. शरीर-इन्द्रि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

य—मनसे बुरे भले जितने कर्म यत्न और विना यत्नके होते हैं, सबमें दुःख-सुख है. किसीमें दुःख बहुत; सुख थोड़ा. किसीमें सुख बहुत; दुःख थोड़ा. जिस कर्म में ४९ भाग दुःख है और ५१ भाग सुख है, वेदमें उसकी भी स्तुति है जिस कर्ममें सुख बहुत है. उसके आदिमें दुःख तनक है और पीछे सुख बहुत है और जिस कर्ममें ५१ भाग दुःख है और ४६ भाग सुख है उसकी निन्दा है. जिस कर्म में सुख कम है उसके आदिमेंही सुख प्रतीत होता है; अन्तमें दुख होता है यह व्यवस्था यहांतक है कि ९९ वा ९८ वा ९७ भाग किसी किसी कर्म में सुख है १ वा २ वा ३ भाग दुःख है और किसी किसी कर्म में ९९ व ९८ व ९७ भाग दुःख है और १ वा २ वा ३ भाग सुख है. इसी प्रकार ६०। ४०। ७०। ३०। ८०। २०। ९०। १० इत्यादि भागसे कल्पना कर लेनी. परमानन्द पूर्णसुख एकरस है, कर्म करनेसे वह नहीं प्राप्त होता; क्रियाके अभावमें प्राप्त होता है. जिस कर्म में ५१ भाग दुःख है उसकी वेदमें किसी जगह स्तुति होगी और ५२ भागकी अपेक्षा से किसी जगह उसकी निन्दा होगी. इसीप्रकार परमानन्दकी अपेक्षासे सब कर्मोंकी निन्दा है. जो परमानन्द प्राप्त है तो सतोगुणी सुख उसके सामने तुच्छ है और सतोगुणी सुखके सामने रजोगुणी सुख तुच्छ है, रजोगुणी सुखके मानने तमोगुणी सुख तुच्छ है. मूर्ख वेदोंके तात्पर्यको न समझकर सिद्धान्त—श्रुतियोंका प्रमाण दे देकर मूर्तिमान परमेश्वर श्रीकृष्णचन्द्रादि और पाषाणादि मूर्तियोंकी और तीर्थ—व्रतोंकी निन्दा करने लगते हैं. वे यह नहीं समझते कि यह उपदेश कैसे पुरुषोंके लिये है? आप तो मलमूत्रके पात्रोंमें सक्त होकर नीचोंके सामने बन्दरकी नाईं नाचते हैं और पुत्र स्त्री मित्र आदिके साथ ममता करके उनके लिये दिन रात्रि तेलीके बैलकी नाईं घूमते हैं! वहां यह नहीं समझते कि इन अनित्य दुःखदायी दुर्गन्धरूप कुपात्रोंके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्बन्धसे मुझको क्या प्राप्त है? बहुत जीव तो ज्ञाननिष्ठाकी श्रुति-स्मृतियों का अर्थ सीख सीख कर्मोंकी निन्दा करने लगते हैं और बहुत जीव ज्ञाननिष्ठाके महत्त्वको न जानकर अपनी मूर्खतासे ज्ञाननिष्ठा और ज्ञानियोंसे वैर बाँधकर दोनोंकी निन्दा करने लगते हैं! ये सब निन्दक पापात्मा, वृथा पाप और दुःखके भागी होते हैं. उनसे अनजान अच्छे हैं. सब मतवाले आपसमें लड़ते झगड़ते हैं. जैसे हो सके, दूसरेकी निन्दा न करै. वेदान्त और ज्ञाननिष्ठा और भक्ति और वेदविधिका जाननेवाला परमानन्द देवका उपासक नित्य निर्विकार परमानन्दको भोगता है. परमानन्ददेवके उपासकोंका किसीसे वैर नहीं. क्योंकि, सबको आनन्दका उपासक जानता है. वास्तव सबका इष्टदेव परमानन्ददेव है. कर्म भक्ति ज्ञान ईश्वरादि ये उसके साधन हैं. आनन्दका उपासक सब कर्मों में अपने इष्टदेव परमानन्दकोही देखता है. कोई कर्म ऐसा नहीं कि जिस में कुछ आनन्द न हो और कोई कर्म करता है वह यही समझकर करता है कि 'इसमें आनन्द मिलेगा.' यद्यपि कर्ममें यथार्थ परमानन्दकी प्राप्ति नहीं, परन्तु जैसे मित्रकी सदृश अन्यको देखकर वा उसके एक अङ्गके सदृश को देखकर वा उसकी छाया देखकर वा उसकी तसबीरको देखकर उसके वस्त्रादिको देख सुनकर उस वास्तव मित्रका स्मरण होता है, ऐसेही सब काम में परमानन्ददेवका उपासक अपने इष्टदेव परमानन्दकोही स्मरण ध्यान करता है। सब विषयी मतवालोंसे उसका सम्मत है. जो कोई किसी मतवाला उससे बूझे कि-"तुम किसके उपासक हो? तुम्हारा क्या मत है?" परमानन्द का उपासका यह उत्तर देता है-"जिसके तुम उपासक हो, उसीका मैं हूं. जो तुम्हारा मत इष्टदेव है वही मेरा मत इष्टदेव है." फिर वे लोग अपने मत इष्टदेव राम-कृष्णादिको बताते हैं, तब परमानन्दका उपासक कहता है कि-'इष्ट फल होता है,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साधन इष्ट नहीं होता. जिस परमानन्द के लिये तुम भक्ति करते हो, वही परब्रह्म परमात्मा प्रभु तुम्हारा परमानन्द इष्टदेव सेम्पूर्ण फलोंका दाता, पीछे फलमें सम्मत हो जावेगा. तुम लोग मूर्ख होकर परमानन्दको फल और ब्रह्म परात्पर न कहो.' इसप्रकार बालक और विषयी मूर्खोंके साथ भी उसका सम्मत है. क्योंकि–परमानन्द को सब चाहते हैं. परमानन्द सबका उपास्य है. इस जगह परमानन्द अपने स्वामी इष्टदेवका निरूपण और माहात्म्य संक्षेप करके कहा है. आनन्दामृतवर्षिणीमें और इस परमानन्दप्रकाशिका टीकामें भी किसी किसी जगह परमानन्दकी प्राप्तिका साधन और कहीं कहीं साक्षात् परमानन्दका स्वरूपमाहात्म्य निरूपण किया है. आनन्दगिरिके पढने–सुननेवालोंको परमानन्दकी प्राप्ति हो। परमानन्दाय नमो नमः ॥

॥ वाचकानां शुभं भवतु ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीमद्भगवद्गीता-राजतरङ्गिणी.

(छन्दोबद्ध-भाषाटीकासहित.)

यह बात किसी महाशयसे छिपी नहीं है कि, परम कारुणिक सच्चिदानन्द आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्ने जिस प्रकार जगदुपकारके लिये परम प्रिय सखा श्रीअर्जुनको १८ अध्याय गीतासे उपदेश किया है. इसमें छः २ अध्यायोंसे ज्ञानकाण्ड, उपासनाकाण्ड तथा कर्मकाण्ड वर्णित हैं. संसारमें यही एक ग्रन्थ है जिससेकि मनुष्य अर्थ, धर्म, काम, व मोक्ष इन चारों पदार्थोंका साधन कर सकता है. और ग्रन्थोंमें अन्य साधारण वक्ता रहते हैं, पर इसमें तो साक्षात् परब्रह्म परमात्मा आपही वक्ता हैं. कोई २ अनभिज्ञ मनुष्य ऐसा भी कह बैठते हैं कि, अजी ! गीताके अधिकारी तो संन्यासी आदि विरक्त ही पुरुष हैं, गृहस्थोंके योग्य यह नहीं है. सो बात नहीं. इसके अधिकारी चारों वर्ण व चारों आश्रम हैं. बल्कि, गृहस्थ ही अधिक हैं; क्योंकि रोगीही मनुष्यको औषधकी अधिक आवश्यकता रहती है, निरोगको नहीं. इस ग्रन्थमें नाना प्रकारके सदुपदेश हैं और संसार सागरसे पार उतरनेके लिये तो यह अपूर्व नौकाही है. लिखाभी है-" संसारसागरं घोरं तर्तुमिच्छति यो नरः। गीतानावं समासाद्य पारं याति सुखेन सः॥ " अर्थात्-घोर संसारसागरसे पार होनेकी इच्छावाला पुरुष इस गीतारूपी नौकासे सुखसे पार होजाता है. इस परम प्रभावशालिनी गीतादेवीका माहात्म्य मैं अल्पबुद्धि इस छोटीसी विज्ञप्तिमें क्या कह सकता हूं किन्तु सूर्य चन्द्रवत् यह स्वयं ही प्रकाशमान है। संस्कृत भाषामें होनेके कारण, इसका लाभ बड़े २ विद्वानोंकोही हो सकता है, असंस्कृतज्ञ साधारण पुरुषोंको नहीं, इसलिये भाषाटीका तथा भाषा-छन्दोबद्ध करनेकी आवश्यकता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पड़ी. आजतक हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी आदि अनेक भाषाओंमें इसका अनुवाद होचुका है. पर, हिन्दी टीका तथा अनुवादोंमें एक यह दोष घुस पड़ा है कि शैव, वैष्णव, आदि मतवादी महाशय घसीट घसीट के अपने २ अनुकूल अर्थ कर बैठे हैं. इसी लिये यथार्थ गीतार्थको निष्पक्षपात प्रकाश करनेवाली बाल और वृद्ध सबके समझने योग्य यह 'श्रीमद्भगवद्गीता राजतरङ्गिणी' दोहा, चौपाई, तथा नाना प्रकारके मनोहर छन्दोंमें बनाई गई है. इस भाषा—छन्दोबद्ध गीतामें मूल श्लोकोंका भावार्थ अक्षरशः ज्योंका त्यों आगया है. मानों स्वयंभगवान्ने ही ये दोहा आदि छन्द अपने मुखसे कहे हैं. किं बहुना, गीताका यह हिन्दी पद्यात्मक अनुवाद अपने ढँगका एक ही है. दोहा, चौपाई, छन्दोंका अर्थ विस्तारपूर्वक श्रुति, स्मृति, पुराण आदिका प्रमाण देदेकर अत्युत्तम रीतिसे भाषा वार्तिकमें किया गया है. इसमें मूलगीताके एक अक्षरका भी अर्थ नहीं छूटा है. सर्व साधारणकी सुगमताके लिये मूल्य स्वल्पही रक्खा गया है. आशा है कि धर्मज्ञ महाशय इसका संग्रह कर स्वयं लाभ उठावेंगे और हमारे परिश्रमको भी सफल करेंगे. की. १ रु. ४ आ. डा. ख. ३ आना.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

हरिप्रसाद भगीरथजीका

प्राचीन पुस्तकालय,

कालकादेवीरोड, रामवाडी—मुंबई.

Printed by Vinayak Balkrishna Paranjpe at the Native Opinion Press, Angria's Wadi, Girgaum, Bombay, and published by Brajavallabh Hariprasad Bhagirathaji, House No. 331, Kalkadevi Road, Bombay.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
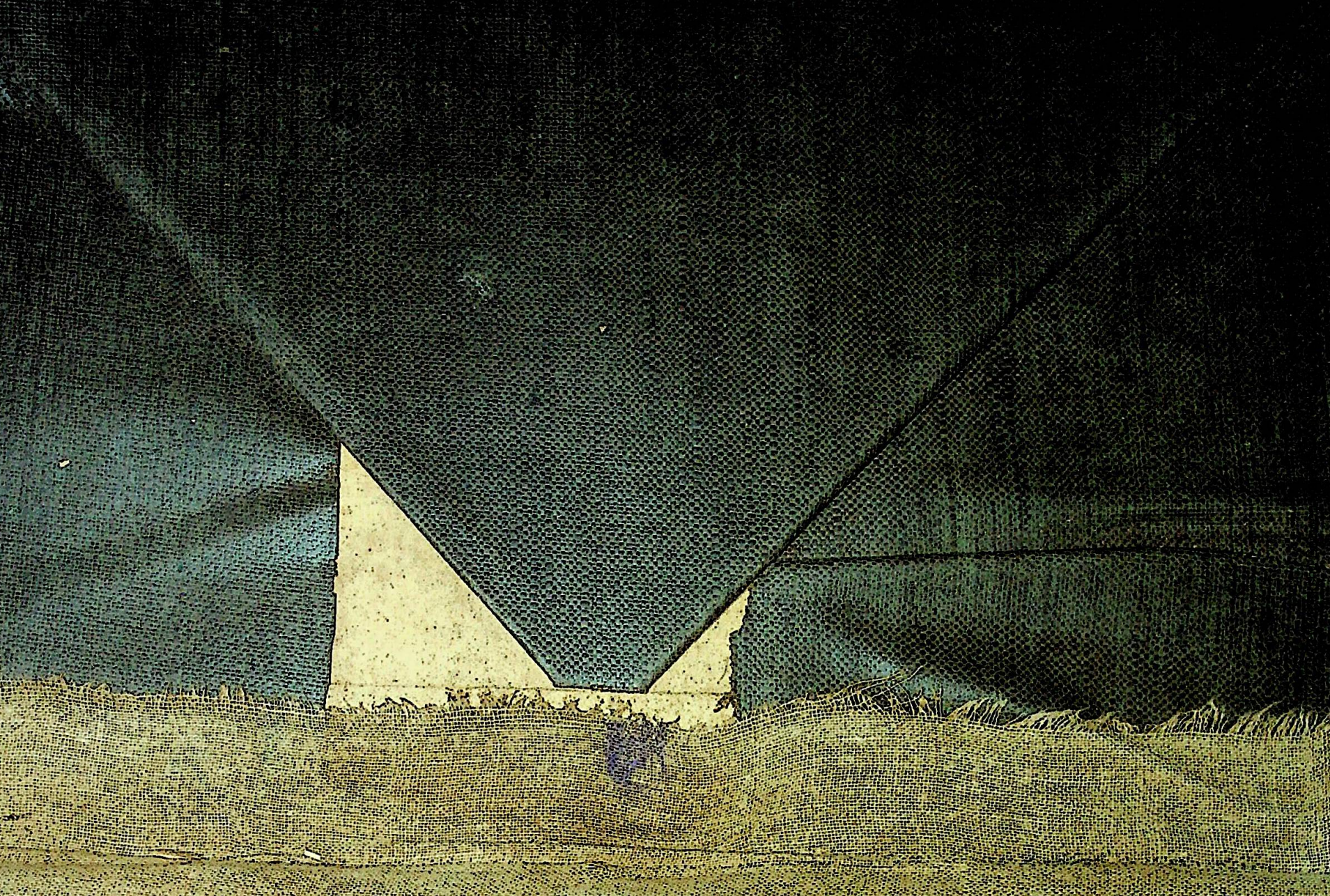
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri